विज्ञान

कक्षा–9

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

राजकीय विद्यालयों में निःशुल्क वितरण हेतु

प्रकाशक

राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर

संस्करण : 2016

© माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर
© राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर

मूल्य :

पेपर उपयोग : 80 जी.एस.एम. मैफलीथो पेपर
आर.एस.टी.बी. वाटरमार्क

कवर पेपर : 220 जी.एस.एम. इण्डियन आर्ट
कार्ड कवर पेपर

प्रकाशक : **राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल**
2–2 ए, झालाना डूंगरी, जयपुर

मुद्रक :

मुद्रण संख्या :

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रानिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।

- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाऐगी।

- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

- किसी भी प्रकार का कोई परिवर्तन केवल प्रकाशक द्वारा ही किया जा सकेगा।

पाठ्य पुस्तक निर्माण समिति

पुस्तक – विज्ञान कक्षा–9

संयोजक :– डॉ. दिलीप गेना व्याख्याता, वनस्पति शास्त्र

सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

लेखकगण :–

1. डॉ. विजय कुमार पंचोली व्याख्याता, भौतिक शास्त्र
   राजकीय महाविद्यालय, कोटा
2. डॉ. गायत्री स्वर्णकार व्याख्याता, प्राणी शास्त्र
   राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर
3. तारा चन्द्र जांगिड़, प्रधानाचार्य
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय सुरड़िया (अजमेर)
4. महेन्द्र सिंह दत्तुसलिया, प्रधानाचार्य
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय नवलगढ़ (झुझूनुं)
5. उमाशंकर शर्मा, प्रधानाचार्य
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, छोटा लाम्बा (अजमेर)
6. डॉ. पन्नालाल गेना, व्याख्याता, जीव विज्ञान
   राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय पींसागन (अजमेर)

निःशुल्क वितरण हेतु

दो शब्द

विद्यार्थी के लिए पाठ्यपुस्तक क्रमबद्ध अध्ययन, पुष्टिकरण, समीक्षा और आगामी अध्ययन का आधार होती है। विषय–वस्तु और शिक्षण–विधि की दृष्टि से विद्यालयीय पाठ्यपुस्तक का स्तर अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है। पाठ्य पुस्तकों को कभी जड़ या महिमामण्डित करने वाली नहीं बनने दी जानी चाहिए। पाठ्यपुस्तक आज भी शिक्षण–अधिगम–प्रक्रिया का एक अनिवार्य उपकरण बनी हुई है, जिसकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते।

पिछले कुछ वर्षों में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के पाठ्यक्रम में राजस्थान की भाषागत एवं सांस्कृतिक स्थितियों का प्रतिनिधित्व का अभाव महसूस किया जा रहा था, इसे दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार द्वारा कक्षा–9 से 12 के विद्यार्थियों के लिए माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा अपना पाठ्यक्रम लागू करने का निर्णय लिया गया है। इसी के अनुरूप बोर्ड द्वारा शिक्षण सत्र 2016–17 से कक्षा–9 व 11 की पाठ्यपुस्तकें बोर्ड के निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर ही तैयार कराई गई हैं। आशा है कि ये पुस्तकें विद्यार्थियों में मौलिक सोच, चिंतन एवं अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करेंगी।

प्रो. बी.एल. चौधरी
अध्यक्ष
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

प्रस्तावना

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान के नवीन पाठ्यक्रमानुसार विज्ञान कक्षा IX की यह पाठ्यपुस्तक विद्यार्थियों के सर्जनात्मक ज्ञानार्जन हेतु लिखी गई है।

पाठ्यक्रम के अनुसार पाठ्यपुस्तक में 15 अध्यायों को संकलित किया गया है। उपर्युक्त स्थानों पर नवीनतम जानकारियों को जोड़ा गया है जो पाठ्यपुस्तक की उपयोगिता तथा विषयवस्तु की विश्वसनीयता में अभिवृद्धि करेगी।

पाठ्यपुस्तक में हमारे महानतम वैज्ञानिक, उनकी उपलब्धियों, द्रव्य की प्रकृति, सजीव की संरचना व प्रमुख क्रियाएं, जैव विविधता, नक्षत्र व राशियां, पर्यावरण, स्वास्थ्य, योग का स्वास्थ्य पर प्रभाव, प्राकृतिक सम्पदा व संरक्षण आदि का समावेश किया गया है।

प्रत्येक अध्याय के अन्त में महत्वपूर्ण बिन्दु लिखे गये हैं जिससे विद्यार्थियों को अध्ययन के दौरान सुविधा रहेगी। परीक्षा की तैयारी करने की दृष्टि से वस्तुनिष्ठ, अतिलघुत्तरात्मक, लघूत्तरात्मक एवं निबन्धात्मक प्रश्नों का समावेश किया गया है।

पाठ्यपुस्तक में तकनीकी शब्दों का समावेश हिन्दी भाषा की शब्दावली के आधार पर किया गया है। पाठ्यपुस्तक में आवश्यकतानुसार चित्र, चार्ट एवं सारणियों का समावेश किया गया है। पाठ्य सामग्री की क्रमता निरन्तर बनाये रखने का प्रयास किया गया है। पाठ्य सामग्री को कक्षा–9 के विद्यार्थियों के स्तरानुकुल बनाने का प्रयास किया गया है। पुस्तक में ही कठिन वैज्ञानिक शब्दों, जिनका पुस्तक में प्रयोग किया गया है, का अंग्रेजी शब्दार्थ भी दिया गया है।

विद्वानों, लेखकों व शिक्षक साथियों के सुझाव आमंत्रित हैं। लेखक साथियों व अन्य सहयोगकत्ताओं के प्रयासों के बावजूद विषय–वस्तु में कुछ त्रुटियाँ अवश्य रह गयी होंगी जिनके निवारण में हम पाठकों से सुझाव आमंत्रित करते हैं। आपके सुझाव त्रुटियाँ के निवारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

संयोजक

निःशुल्क वितरण हेतु

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1.	भारत और विज्ञान **(Bharat and Science)**	1–6
2.	पदार्थ की संरचना एवं अणु **(Structure of matter and Molecule)**	7–12
3.	परमाणु संरचना **(Atomic Structure)**	13–20
4.	रासायनिक बंध व रासायनिक समीकरण **(Chemical Bond and Chemical Equation)**	21–28
5.	जीवन की अवधारणा **(Concept of Life)**	29–36
6.	सजीव की संरचना **(Structure of Living Organism)**	37–52
7.	जैवविविधता **(Biodiversity)**	53–68
8.	सजीवों की प्रमुख क्रियाएं **(Vital Functions of Living Organisms)**	69–102
9.	बल और गति **(Force and Motion)**	103–122
10.	**गुरूत्वाकर्षण (Gravitation)**	123–130
11.	ध्वनि **(Sound)**	131–140
12.	आकाशीय पिण्ड एवं भारतीय पंचांग **(Celestial bodies and Indian Calendar)**	141–156
13.	पर्यावरण **(Environment)**	157–168
14.	स्वास्थ्य, रोग एवं योग **(Health, Disease and Yoga)**	169–182
15.	प्राकृतिक सम्पदा एवं कृषि **(Natural Resources and Agriculture)**	183–198
	सड़क सुरक्षा शिक्षा **(Road Safety Education)**	199–211
	शब्दावली **(Glossary)**	212–215

अध्याय 1

भारत और विज्ञान

(Bharat and Science)

सम्पूर्ण विश्व विज्ञान के आविष्कारों एवं खोजों के कारण सुन्दर, सुव्यवस्थित तथा सहज प्रतीत होता है। अतः हम कह सकते है कि यह विज्ञान का युग है।

वस्तुत विज्ञान एक बहुमानवीय प्रयत्न है और मूलतः यह प्रकृति के नियमों तथा संसाधनों को उचित ढंग से समझने का साधन है।

1.1 विज्ञान का अर्थ

ऋगवेद में विज्ञान शब्द का उल्लेख है। विज्ञान शब्द संस्कृत के विज्ञानम् (वि + ज्ञा + ल्युट्) शब्द से बना हैं जिसका अर्थ हैं विशेष ज्ञान। जैसे वर्षा, यह परिणाम है, इसे अनुभव करना ज्ञान है । बादल बनने से वर्षा होने तक की प्रक्रिया का क्या व कैसे, के रुप में अध्ययन करना विशेष ज्ञान अर्थात् विज्ञान है।

अग्रेंजी का साइन्स शब्द लेटिन भाषा के सांइशिया शब्द से बना है, इसका अर्थ है जानना (to know)। विज्ञान को निश्चित शब्दों द्वारा परिभाषित करना कठिन है, किन्तु अधिक मान्य परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं –

"प्रकृति के क्रमबद्ध अध्ययन से अर्जित एवं प्रयोगों द्वारा प्रमाणित वर्गीकृत ज्ञान को विज्ञान कहते है।" विज्ञान के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है –

(अ) प्रकृति की कार्यशैली को समझना एवं उसकी पूर्ण रूप से व्याख्या करना।

(ब) प्रकृति के नियमों के अध्ययन को प्रयोग द्वारा प्रमाणित कर जानकारी प्राप्त करना।

(स) आवश्यक प्रयोग एवं प्रेक्षण लेना तथा उनके निष्कर्ष निकालकर उनका अनुप्रयोग कर प्रकृति पर नियंत्रण करना।

(द) प्रकृति में विद्यमान साधनों का समस्याओं के निराकरण में उपयोग कर मानवीय जीवन को सुखद तथा उत्कृष्ट बनाना।

(य) समाज में व्याप्त विभिन्न रीतियों एवं परम्पराओं के वैज्ञानिक कारणों को जानना।

1.2 विज्ञान की शाखाएँ

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान है। अतः इन्हें वर्गीकृत करने का प्रयास किया गया ताकि अध्ययन सुविधाजनक हो सके। मूलतः इसे प्राकृतिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान एवं तकनीकी में वर्गीकृत किया जा सकता है। परन्तु वास्तविक विज्ञान का स्वरूप तो प्राकृतिक विज्ञान में दिखाई देता है –

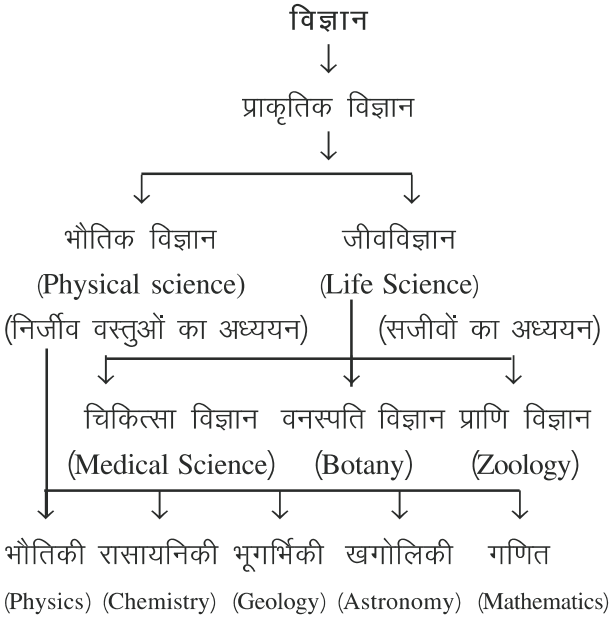

विज्ञान का सरल अध्ययन करने के लिए इसे 100 से भी अधिक शाखाओं में विभाजित किया गया है। वर्तमान युग में निम्नलिखित अत्याधुनिक शाखाओं का मानव कल्याण में विशेष योगदान है–

(i) आनुवंशिकी अभियांत्रिकी

(ii) कम्प्यूटर साइंस

(iii) सूचना तकनीकी

(iv) जैव तकनीकी

1.3 वैज्ञानिक विधि

हमारे चारों ओर होने वाली घटनाओं को वैज्ञानिक ढ़ंग से सोचना ही वैज्ञानिक विधि है। इसके निम्नांकित पद है –

(i) समस्या की पहचान करना

(ii) परिकल्पना बनाना

(iii) परीक्षण योग्य परिकल्पना बनाना

(iv) आंकड़े एकत्र करना

(v) परिकल्पनाओं का परीक्षण करना

(vi) परिणाम निकालना

(vii) पुनः परीक्षण करना

(viii) सिद्धान्त का सामान्यीकरण करना

इस प्रकार प्रत्येक समस्या का ऐसा समाधान खोजना जिसको कोई भी व्यक्ति उन्हीं परिस्थितियों में पुनः परीक्षण कर सके।

इसी विचारधारा को ध्यान में रखते हुए समाज एवं प्रकृति के विभिन्न क्षेत्रों को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करने के कारण कुछ विषयों में विज्ञान शब्द जोड़ा गया है। जैसे – सामाजिक विज्ञान, राजनीति विज्ञान आदि।

1.4 भारत में विज्ञान की परम्परा

ऐसे प्रमाण मिले है कि 3000 वर्ष ईसा पूर्व भी इस उपमहाद्वीप में विज्ञान ने बहुत उन्नति की थी। सिन्धु घाटी सभ्यता के नगर हड़प्पा और मोहें–जो–दड़ों के अवशेषों से पता चलता है कि ये शहर सुनियोजित थे और वहां जल आपूर्ति, जल–मल निकास की प्रणालियाँ बहुत विकसित थी। खेती बाड़ी, ईंट निर्माण, उद्योग व दस्तकारी में उनकी कुशलता बड़े उच्च स्तर की थी। उनके कपड़े रूई के बने होते थे।

ईसा से 2000 वर्ष पूर्व के ऐसे प्रमाण है जिसमें आर्यों की अनेक मनोवृत्तियां वैज्ञानिक थी। ऐसा समझा जाता था कि ब्रह्माण्ड का नियंत्रण एक प्राकृतिक नियम द्वारा होता है। प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान ग्रहों की स्थिति के अनुसार शुभ लग्न में, विशेष रूप से निर्मित मन्दिरों में किया जाता था। इस तरह से वे दक्ष खगोल विज्ञानी (ज्योतिषी) एवं गणित और ज्यामिति के ज्ञाता थे। उनके पंचाग का आधार सूर्य और चन्द्रमा दोनों की गतियां थी। उन्होंने कई नक्षत्रों को जान लिया था और महीने के नाम उनके आधार पर रखे थे।

ऋतुओं के परिवर्तन से अति सूक्ष्म जीवाणुओं और वंशानुवंशिक कारणों से बीमारी होती है का सिद्धान्त स्वीकार किया गया है। निदान और उपचार की आयुर्वेद पद्धति प्रचलित है। आयुर्वेद में शल्य चिकित्सा की प्रणाली अत्यन्त विकसित थी। बाद में अरबवासियों और यूनानियों ने भी आयुर्वेद को अपनाया। रोमन साम्राज्य के क्षेत्र में भारतीय दवाईयों की भी काफी मांग थी।

18वीं शताब्दी में नये–नये तत्त्वों की खोज का सिलसिला प्रारंभ हुआ इससे पूर्व केवल सात धातुओं का ज्ञान था। ये है–स्वर्ण, रजत, ताँबा, लोहा, टिन, सीसा और पारद (पारा) इन सभी धातुओं का उल्लेख प्राचीनतम संस्कृत साहित्य में उपलब्ध हैं जिनमें ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद भी सम्मिलित हैं। वेदों की प्राचीनता ईसा से हजारों वर्ष पूर्व निर्धारित की गई है। अतः हम भारत में रसायन शास्त्र का प्रारंभ ईसा से हजारो वर्ष पूर्व कह सकते हैं। पुरातात्विक प्रमाण में लोहा, ताँबा, रजत, सीसा आदि धातुओं की शुद्धता 95% से 99% तक पाई गई एवं पीतल, ताँबा जैसी मिश्र धातुएँ पाई गई जो इस बात की परिचायक है कि भारत में उच्च कोटि के धातुकर्म की प्राचीन परंपरा रही है।

ईसा से 400 वर्ष पूर्व नालन्दा, वाराणसी एवं तक्षशिला विश्वविद्यालय बहुत विख्यात थे। गणित, खगोल विज्ञान और चिकित्सा विज्ञान में अभूतपूर्व प्रगति हुई। सुश्रुत ने 26 शताब्दी पहले रोगी की कटी हुई नाक ठीक की थी। इन्हें प्लास्टिक सर्जरी का जनक कहते है। इनकी सुश्रुत संहिता का अरबी के अनुवाद किया गया 'किताब–शाशून–ऐ–हिन्दी और किताबे–सुसुरद।

20 शताब्दी पहले चरक ने चरक संहिता में कहा "जो चिकित्सक अपने ज्ञान और समझ का दीपक लेकर बीमार के शरीर को नही समझता वह बीमारी कैसे ठीक कर सकता है। उसे सबसे पहले उन सब कारणों का अध्ययन करना चाहिए जो रोगी को प्रभावित करते हैं फिर उसका इलाज करना चाहिए। ज्यादा महत्वपूर्ण यह है कि बीमारी से बचा जाये न कि इलाज किया जाये।"

ईसा से 500 वर्ष पूर्व ही कणाद ऋषि ने परमाणु सिद्धान्त प्रस्तुत कर दिया था। ईसा से 200 वर्ष पूर्व पतंजलि ऋषि ने बताया कि मनुष्य के शरीर में नाड़ियां और ऐसे केन्द्र है जिन्हें चक्र कहते है। मूलाधार, स्वादिष्ठान, मणिपूर, हृदय, अनाहत, विशुद्धि, आज्ञा एवं सहस्त्रार नामक कुल आठ चक्र है। इन्हें सक्रिय बनाये रखने के लिये आठ चरण या स्थितियां दी है। यम (सार्वजनीन नैतिक धर्मादेश), नियम (अनुशासन से अपने को शुद्ध करने का तरीका), आसन, प्राणायाम (सांस पर नियंत्रण), प्रत्याहार (मन को बाहरी चीजों से हटाना), धारणा (संकेन्द्रण), भावना (मनन या चिंतन) और समाधि (अतिचेतन स्थिति)। यह आखिरी चरण ही सबसे कठिन है। इससे व्यक्ति ऊर्जावान, आत्मनियंत्रित एवं क्षमताओं से परिपूर्ण अनुभव करता है।

1.5 विज्ञान के विकास में भारत का योगदान

आर्य भट्ट प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने कहा पृथ्वी गोल है और वह अपनी धुरी पर घूमती है जिससे दिन और रात बनते है। चन्द्रमा सूर्य के प्रकाश से चमकता है।

ब्रह्मगुप्त वह गणितज्ञ था, जिसने सबसे पहले शून्य के कार्य करने के नियम बनाये। इन्हें भास्कर जैसे प्रसिद्ध गणितज्ञ ने गणक चक्र चूड़ामणि की उपाधि दी। इन्होंने गणित की दो भिन्न शाखाएं बताई "बीजगणित एवं गणित"।

संसार को नये विकिरण (न्यू रेडियेशन) देने वाले वैज्ञानिक चन्द्रशेखर वेंकटरमन की इस खोज को रमन इफेक्ट कहा गया। 28 फरवरी, 1930 को इन्हें भौतिकी में नोबल पुरस्कार मिला था। इस दिवस को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के रुप में मनाया

जाता हैं। 'रमण इफेक्ट' वह अद्‌भुत प्रभाव है जिससे प्रकाश की प्रकृति और स्वभाव में तब परिवर्तन होता है, जब वह किसी पारदर्शी माध्यम से निकलता है। यह माध्यम ठोस, द्रव और गैसीय कुछ भी हो सकता है।' लेसर के आविष्कार के पश्चात् उसके शक्तिशाली प्रकाश विकिरण के कारण रमण इफेक्ट वैज्ञानिकों के लिए एक और महत्त्वपूर्ण साधन प्रमाणित हुआ है।'

होमी जहांगीर भाभा ने नया कण मेसोन खोजा। इन्हीं के निर्देशन में अप्सरा, सिरस व जरलीना नामक तीन परमाण्विक रिएक्टरों की स्थापना की गई। पहले भारतीय खगोलज्ञ एम.के. वेणु बप्पु (मनाली कल्लर वेणु बप्पु) के नाम से एक पुच्छल तारा (कॉमेट) का नाम बप्पू–बोक–न्युकर्क रखा गया। जगदीश चन्द्र बोस ने पौधों में संवेदनाओं की खोज की।

भारत में केमिकल उद्योग के प्रवर्तक प्रफुल्ल चंद्र रे ने 1896 में मरक्युरस नाइट्रेट की खोज की। उनकी पुस्तक 'द हिस्ट्री ऑफ हिन्दु केमेस्ट्री को बहुत ख्याति मिली।

1.6 भारतीय वैज्ञानिक

1.6.1 बीरबल साहनी (1891–1949)

डॉ. बीरबल साहनी का जन्म 14 नवम्बर, 1891 में पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान) के शाहपुर जिले के भेड़ा ग्राम में प्रो. रूचिराम साहनी के घर हुआ। पंजाब विश्व– विद्यालय लाहौर से बी.ए. पास करके वह ब्रिटेन के लन्दन विश्वविद्यालय से डी.एस.सी. की डिग्री प्राप्त की। वह प्रथम भारतीय थे, जिन्हें केम्ब्रिज से डी.एस. सी. की डिग्री मिली। लंदन की रॉयल सोसायटी ने उन्हें अपना फैलो (एफ.आर.सी.एस.) निर्वाचित कर सम्मानित एवं गौरवान्वित किया। इस अत्यन्त गौरवपूर्ण सम्मान को प्राप्त करने वाले डॉ. बीरबल साहनी पांचवे भारतीय थे।

डॉ. साहनी भारत के एक महान पुरा वनस्पति शास्त्री (पेलियो बोटेनिस्ट) थे। "प्राचीन युग की वनस्पतियों का अध्ययन इस देश के लिए एक नया विज्ञान था इसे पुरावनस्पति विज्ञान या पेलियोबॉटनी कहते है।"

डॉ साहनी ने एक नये समूह के जीवाश्म पौधों की खोज की। ये जिम्नोस्पर्म्स (नग्न बीजी) है। चीड़ तथा उनकी जाति के दूसरे पेड़ जिन्हें पेन्टोजाइलीज कहते हैं इससे सारे संसार का ध्यान इस और आकर्षित हुआ। उनके पुरा वनस्पति विज्ञान के अध्ययन ने महाद्वीपों के एक दूसरे से दूर खिसकने के सिद्धान्त को भी बल मिला है। इस सिद्धान्त के अनुसार महाद्वीप पृथ्वी की सतह पर सदा उस तरह खिसकते रहे हैं जैसे कोई नाव नदी के जल सतह पर खिसकती है।

डॉ. साहनी ने सर्वप्रथम जीवित वनस्पतियों पर अनुसंधान किया। तत्पश्चात् भारतीय वनस्पति–अवशेषों पर दुबारा जांच शुरू की। कई भारतीय वनस्पति अवशेषों का अन्वेषण किया, जिसका विस्तृत विवरण 'फिलोसोफिकल ट्रांजेक्शन' और कई अन्य पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ। उनके अन्य अनुसंधान कार्य – महाद्वीप विभाजन सिद्धान्त, दक्षिण पठार की आयु, ग्लोसीपटरिस वनस्पतियों की उत्पत्ति के पश्चात् हिमालय का उत्थान आदि कई जटिल व्यवस्थाओं के हल करने में सहायक सिद्ध हुए। इनके द्वारा स्थापित संस्था बीरबल साहनी इंस्टीट्यूट ऑफ पेलियोबॉटनी दुनिया की पहली संस्था है।

1.6.2 मेघनाथ साहा (1893–1953)

मेघनाथ साहा का जन्म 6 अक्ट्बर, 1893 में पूर्वी बंगाल (बांग्लादेश) के ढाका जिले के शाओराटोली गांव में जगन्नाथ साहा एवं भुवनेश्वरी देवी के घर में हुआ था। 13 वर्ष की आयु में स्वदेश प्रेम से भरपूर साहा ने बंग भंग के विरोध में हड़ताल में शामिल होकर गवर्नर सर बामफिल्डे फुल्लर के स्वागत समारोह को विरोध में विद्यालय से छुट्टी ली तो इनके साथ तीन विद्यार्थियों को विद्यालय से निकाल दिया गया। इन्हें भारी कीमत चुकानी पड़ी। छात्रवृत्ति बंद हो गई एवं अधिक शुल्क देकर निजी विद्यालय में प्रवेश लेना पड़ा। कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम. एस.सी. गणित में की। शरत् चन्द बोस, नेताजी सुभाष चन्द बोस इनसे तीन वर्ष पीछे थे। इनके अध्यापक सर जगदीश चन्द्र बोस, सर प्रफुल्ल चन्द्र रे एवं डी.एन.मल्लिक थे।

भौतिकी में उन दिनों ऊष्मागतिकी (थर्मोडायनेमिक्स), सापेक्षतावाद (रिलेटिविटी) और परमाणु सिद्धान्त सबसे नये विषय थे। साहा ने इन विषयों पर खूब पुस्तकें पढ़ी और बहुत अच्छी तरह पढ़ाया। सूर्य और तारों के बारे में एग्नेस क्लार्क की पुस्तक पढ़ते हुए नोट्स बनाते हुए उनके सामने तारों के तापमान, भीतरी संरचना, संयोजन की समस्या सामने आई तथा जब सूर्य का प्रकाश वायुमण्डल में स्थित जल की बूंदों से गुजरता है या प्रिज्म से गुजरता है तो स्पेक्ट्रम बन जाता है।

इन समस्याओं के समाधान हेतु साहा ने आयोनाइजेशन फारमूला (आयनीकरण सूत्र) प्रस्तुत किया। जिससे वर्ण क्रम रेखाओं की उपस्थिति समझाई जा सकती थी। इस सूत्र द्वारा खगोलज्ञ को सूर्य और दूसरे तारों का तापमान, दबाव और इनकी भीतरी संरचना का पता लगता है। तारा भौतिकी के क्षेत्र में यह एक नवीनतम खोज थी।

खगोल भौतिकी में तारों का तापमान, भीतरी संरचना और संयोजन आदि का अध्ययन करते है।

साहा इन्स्टीट्यूट ऑफ न्युक्लीयर फिजिक्स स्थापित किया एवं भारत का प्रथम साइक्लोट्रॉन लगवाया।

बाढ़ के कारणों का अध्ययन कर उन्होंने अनेक नदी घाटी परियोजनाओं के सुझाव दिये इनमे दामोदर वैली, भाँखड़ा नांगल और हीराकुण्ड शामिल है।

1.6.3 प्रोफेसर सत्येन्द्र नाथ बोस (1894–1974)

1 जनवरी 1894 को कोलकाता में पिता सुरेन्द्रनाथ बोस एवं माता अमोदिनी देवी के घर में सत्येन्द्र नाथ बोस का जन्म हुआ। कोलकाता विश्वविद्यालय से एम. एस.सी. भौतिकी में की। एस.एन. बोस ने मैडम क्यूरी एवं अल्बर्ट आइंसटीन के साथ कार्य किया।

मेक्सवेल और वोल्ट्समैन के 'अणुगतिक सिद्धान्त' के आरंभिक सांख्यिकीय विधियों को बोस द्वारा किये गये संशोधन के अनुसार फोटॉनो और इलेक्ट्रॉनों पर भी लागू किया जा सकता है। बोस का संशोधिक प्रयोग 'बोस–आइंसटीन' सांख्यिकी के नाम से विख्यात है। प्रारंभिक कणों की भीड़ के विश्लेषण के लिए इस समय केवल दो सांख्यिकी विधियाँ है, जिन्होंने सारे कणों को दो भागों मे विभाजित किया हैं, बोसोन व फर्मियोन । यह वर्गीकरण कणों के चक्रण के गुण पर आधारित हैं।

अमरीकी वैज्ञानिक एनरिको फर्मी ने पाया की अपनी धुरी पर घूम रहे इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रिनो, न्यूट्रॉन आदि कणों की चक्रण क्वांटम संख्या आधे का पूर्ण गुणज है। यानि आधा, डेढ अथवा ढाई इस तरह है। उनके नाम पर इन कणों को फर्मियोन कहते है। भारतीय वैज्ञानिक सत्येन्द्र नाथ बोस ने पाया कि फोटोन, पाइमीजोन, एल्फा कण, ग्रेविटोन आदि कणों की चक्रण क्वाटम संख्या पूर्णांकों में यानि शून्य, एक, दो अथवा तीन इस प्रकार है। उनके नाम पर इन कणों को बोसोन कहा जाता है।

पदार्थ की पांचवी अवस्था का नाम – बोस आंइसटीन कंडनसेट (B. E. C.) रखा गया, सामान्य वायु के घनत्व के एक लाख वें भाग जितने कम घनत्व वाली गैस को बहुत कम तापमान पर ठंडा करने से B E C तैयार होता है।

रसायन के क्षेत्र में काम करते हुए सल्फोनेमाइड अणु में आंतरिक परिवर्तन कर ऐसा रसायन बनाया जो आज भी आंखों की दवा 'आईड्रॉप' के रूप में प्रचलित है।

हिन्दी भाषा के प्रति समर्पण उनके इस वाक्य से समझ आता है कि जिसमें उन्होंने कहा, "अच्छा, इस देश में ऐसे भी लोग है जो उस भाषा को नहीं चाहते जिसमें उनकी माँ ने उन्हें लोरियां सुनाई और उस भाषा को चाहते है जिसमें विदेशियों ने उन्हें फटकार लगाई"। एस.एन. बोस राज्य सभा सदस्य भी रहे।

1.6.4 भास्कराचार्य प्रथम (600–680)

भास्कराचार्य प्रथम का जन्म महाराष्ट्र राज्य के प्रभानी जिला के बोरी गांव में सातवीं शताब्दी में हुआ।

भास्कराचार्य प्रथम प्रथम गणितज्ञ थे जिन्होंने सबसे पहले संख्याओं को हिन्दू दाशमिक पद्धति में लिखना आरम्भ किया। संख्याओं को अंको के स्थान पर शब्द व प्रतीक से समझाया एवं दर्शाया। जैसे संख्या 1 के लिए चन्द्रमा, संख्या 2 के लिए जुड़वां, पंख, आंखे, क्योंकि में सदा युगल में होती है। संख्या 5 के लिए पांच ज्ञानेन्द्रियाँ आदि के रूप में दर्शाया गया।

सबसे पुराना ज्ञात साहित्य के रूप में गणित एवं खगोल शास्त्र की संस्कृत गद्य के रूप में लिखी गई सबसे पुरानी पुस्तक आर्यभटीय भाष्य है। यह 629 ईसवीं में लिखी गई। भास्कराचार्य प्रथम ने महाभास्करीय एवं लघु भास्करीय नामक दो ग्रंथ लिखे। बाद में इनका अरबी अनुवाद भी किया गया।

महाभास्करीय ग्रंथ में त्रिकोणमितीय फलन ज्या य **(Sin x)** का मान निकालने का एक परिमेय व्यंजक दिया है। यह सूत्र सुन्दर एवं सहज है तथा **Sin x** का पर्याप्त शुद्ध मान प्राप्त होता है।

$$\sin x \approx \frac{16x(\pi - x)}{5\pi^2 - 4\pi(\pi - x)}$$

$$0 \le x \le \frac{\pi}{2}$$

इस सूत्र को आर्यभट्ट द्वारा दिया गया बताया है। इसमें **Sin x** के मानों की आपेक्षिक त्रुटि **1.9%** से कम है। अधिकतम विचलन $\frac{16}{5\pi} - 1 \approx 1.859\%$ जो $\mathbf{X = 0}$ पर होता है।

भास्कराचार्य प्रथम ने अभाज्य संख्या **P** के लिए एक

संबंध **1+ (P-1)** दिया जो अभाज्य संख्या **P** से भाज्य है। इसे बाद में अल–हेक्षम, फाइबोनेली ने भी सत्यापित किया। अब इसे विलसन प्रमेय के रूप में जानते है।

भास्कराचार्य प्रथम ने एक प्रमेय दिया जिसे आजकल पेल समीकरण $8x^2 - 1 = y^2$ के रूप में कहते है। भास्कराचार्य प्रथम ने एक प्रश्न खड़ा किया कि 'वो संख्याएं बताइये, जिसके वर्ग को 8 से गुणा कर एक जोड़ने पर दूसरी संख्या का वर्ग प्राप्त होता है।'

जैसे $8x^2 - 1 = y^2$ में **x=1** एवम् **y=3** है इसे संक्षेप में **(x,y) = (1,3)** लिखते है। इससे अन्य भी हल निकाले जा सकते है जैसे **(x,y)= (6,17)**

प्राचीन भारत में ऐसे अनेक महान वैज्ञानिक दार्शनिक एवं गणितज्ञ हुए है जिनके अनेकों शोध वर्तमान संसार रचना के लिए महत्वपूर्ण है एवं मील के पत्थर साबित हो रहे हैं।

1.7 वर्तमान भारत की वैज्ञानिक उपलब्धियाँ

अनेक क्षेत्रों में भारतीय वैज्ञानिकों की उपलब्धियां रही है। यदि सर्वोच्च्य सम्मान नोबल पुरस्कार को देखें तो 1930 में सी. वी.रमन, 1968 में हर गोविन्द खुराना, 1983 में सुब्रहमण्यम चन्द्रशेखर, 2009 में वेंकटस्वरमन रामाकृष्णन् को पुरस्कृत किया गया।

भारत में विकसित एवं आविष्कृत कुछ वस्तुएँ निम्नलिखित है–

बटन, काजल, कैलिको, चतुरंग, छींट, क्रेस्कोग्राफ, क्रुसिबल, इस्पात, ग्लपनी, शैम्पू, नील रंजक, चीनी का परिशोधन (रिफाइनमेन्ट) परखनली शिशु आदि।

1974 में पोकरण में भारत का पहला भूमिगत परमाणु परीक्षण सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ एवं 1998 में खातोलाई में दूसरा परीक्षण किया गया।

1975 में भारत का प्रथम कृत्रिम उपग्रह आर्यभट्ट प्रक्षेपित हुआ।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संघटन (ISRO) ने भारत में निर्मित SLV-3 से रोहिणी नामक उपग्रह का प्रक्षेपण किया। भारतीय क्रायोजैनिक इंजन का उपयोग कर 2014 में GSLV-DS का प्रक्षेपण किया गया।

22 अक्टुबर, 2008 में भारत का प्रथम चन्द्र मिशन चन्द्रयान - I लांच किया। चन्द्रमा पर यान भेजकर एवं वहां पानी की प्राप्ति का नया खोज करके इस युग में भारत ने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज की है।

24 सितम्बर, 2014 को मंगल कक्षीय मिशन (Mars Orbital Mission) लॉंच किया गया।

ISRO द्वारा भारतीय प्रक्षेपण यान पीएसएलवी सी – 29 से नौ भिन्न देशों के 23 विदेशी उपग्रहों का प्रक्षेपण 16 दिसम्बर 2015 को किया गया था। इसका प्रक्षेपण श्री हरिकोटा के सतीशधवन अन्तरिक्ष केन्द्र स्थित प्रथम लॉंच पेड से किया गया।

भारतीय योग दर्शन से प्रभावित होकर विश्व स्तर पर UNO ने 21 जून को विश्व योग दिवस मनाने का निर्णय लिया, यह भारत के लिए गौरव का विषय है।

इस प्रकार भारत ने विज्ञान के अनेक क्षेत्रों में अपनी भूमिका प्रदर्शित की है तथा अनेक भारतीय विश्व के प्रत्येक कोने में पहुँच कर अपने ज्ञान व विज्ञान से सम्पूर्ण वसुधा को लाभान्वित करने हेतु कार्य कर रहे हैं।

विज्ञान के नवीनतम क्षेत्रों में अभी भी आविष्कार व खोज की संभावनाएं है, अतः भारतीयों को इस क्षेत्र में आगे बढ़ना है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. प्रकृति के क्रमबद्ध अध्ययन से अर्जित एवं प्रयोग द्वारा प्रमाणित वर्गीकृत ज्ञान को विज्ञान कहते है।
2. किसी समस्या का चयन, परिकल्पना बनाना, परीक्षण करना, परिणाम निकालना एवं सिद्धान्त बनाकर सामान्यीकरण करना ही वैज्ञानिक विधि है।
3. ईसा से 3000 वर्ष पूर्व की हड़प्पा एवं मोहें–जो–दड़ो सभ्यता विकसित भारतीय विज्ञान का प्रमाण है।
4. प्लास्टिक सर्जरी के जनक सुश्रुत ने 26 शताब्दी पूर्व ही कटी नाक ठीक की थी।
5. ईसा से 200 वर्ष पूर्व योग ऋषि पतंजलि का योग दर्शन स्वस्थ जीवन के लिए प्रचलित था।
6. शून्य की जानकारी देने वाले ब्रह्मगुप्त भारतीय गणितज्ञ हुए है।
7. रमन प्रभाव की खोज पर सी.वी.रमन को 28 फरवरी 1930 में नोबल पुरस्कार मिला।
8. बीरबल साहनी पुरावनस्पतिशास्त्री थे।
9. खगोल भौतिकी की जानकारी मेघनाथ साहा ने दी।
10. भास्कराचार्य प्रथम द्वारा दिया गया प्रमेय वर्तमान में पेल समीकरण के नाम से चलन में है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र 1. भारत के केमिकल उद्योग के प्रर्वतक प्रफुल्लचंद्र रे ने कौनसे पदार्थ की खोज की ?

(अ) सोडियम क्लोराइड (ब) मरक्युरस नाइट्रेट

(स) शोरा (द) नौसादर ( )

प्र 2. बीरबल साहनी विज्ञान के किस क्षेत्र से संबंधित थे?
(अ) रसायन विज्ञान (ब) पेलियो बॉटनी
(स) भौतिक विज्ञान (द) कम्प्यूटर विज्ञान ( )

प्र 3. तारा भौतिकी के क्षेत्र में कार्य करने वाले प्रथम भारतीय वैज्ञानिक का नाम है ?
(अ) बीरबल साहनी (ब) सत्येन्द्रनाथ बोस
(स) आइंसटीन (द) मेघनाथ साहा ( )

प्र 4. भारत का प्रथम चन्द्र मिशन में चन्द्रयान–1 किस दिनांक को लॉच किया गया है ?
(अ) 22 अक्टूबर 2008 (ब) 5 नवम्बर 2013
(स) 15 अगस्त 2015 (द) 28 फरवरी 2015 ( )

प्र 5. प्लास्टिक सर्जरी के जनक किसे कहा गया है ?
(अ) चरक (ब) सुश्रुत
(स) कणाद (द) पंतजलि ( )

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न –

6. सुश्रुत द्वारा रचित ग्रन्थ का नाम बताइये।
7. गणक चक्र चूडामनि की उपाधि ब्रह्मगुप्त ने किस गणितज्ञ को दी?
8. राष्ट्रीय विज्ञान दिवस कब मनाया जाता है?
9. 'द हिस्ट्री ऑफ हिन्दु केमेस्ट्री' पुस्तक किसने लिखी?
10. पिछले युग की वनस्पति का अध्ययन करने वाली विज्ञान की शाखा को क्या कहते है?
11. भौतिकी में आयनीकरण सिद्धान्त किस वैज्ञानिक ने दिया?
12. भारत में प्रथम साइक्लोट्रॉन किस वैज्ञानिक की देखरेख में लगाया गया?
13. 'बोस–आइंसटीन सांख्यिकी' देने वाले भारतीय वैज्ञानिक का नाम बताइये?
14. विश्व योग दिवस कब मनाया जाता हैं ?
15. मंगल कक्षीय मिशन कब लॉच किया गया।

लघूत्तरात्मक प्रश्न :–

16. भास्कराचार्य प्रथम द्वारा किए गये दो महत्वपूर्ण कार्य लिखिए।
17. प्रो. सत्येन्द्रनाथ बोस ने किस पदार्थ का उपयोग कर आंखों की दवाई बनाई ?
18. बोसॉन किसे कहते हैं ?
19. बोस–आइंसटीन–कन्डनसेट कैसे प्राप्त की जा सकती है?
20. रमन प्रभाव क्या है ?
21. खगोल भौतिकी में किसका अध्ययन किया जाता है ?
22. होमी जहांगीर भाभा ने कौनसे तीन नाभिकीय रिएक्टरों की स्थापना की ?
23. सुश्रुत संहिता के अरबी में अनुवाद कर लिखी पुस्तकों के नाम बताइये।
24. जीव विज्ञान की तीन मुख्य शाखाओं के नाम लिखिए।
25. विज्ञान की परिभाषा दीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न :–

26. वैज्ञानिक विधि के विभिन्न पद लिखिए।
27. पतंजलि ऋषि द्वारा दिये गये योग के आठों चरण के नाम लिखिए।
28. डॉ. बीरबल साहनी के अनुसंधान किन क्षेत्रों में उपयोगी सिद्ध हुए।

उत्तरमाला

1. (ब) 2. (ब) 3. (द) 4. (अ) 5. (ब)

◆◆◆

अध्याय 2

पदार्थ की संरचना एवं अणु
(Structure of matter and Molecule)

2.1 पदार्थ या द्रव्य (Matter)

हमारे चारों ओर स्थित भिन्न–भिन्न वस्तुएँ जैसे– जल, हवा, नमक, किताब, कम्प्यूटर, आदि सभी द्रव्य या पदार्थ हैं।

प्रत्येक वस्तु जो स्थान घेरती है, जिसमें द्रव्यमान होता है एवं जिसे पाँच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा महसूस किया जा सकता है वह द्रव्य या पदार्थ कहलाता है।

जब हम कहते है कि द्रव्य का द्रव्यमान होता है इसका अर्थ है कि इसका भार होता है। एक वस्तु जितनी अधिक भारी होगी उतना ही अधिक उसका द्रव्यमान होगा। द्रव्य स्थान घेरता है इसका अर्थ है उसका आयतन होता है।

2.1.1 द्रव्य के गुणधर्म :–

1. द्रव्य के कणों के मध्य रिक्त स्थान होता है।
2. द्रव्य के कण निरन्तर गतिशील रहते है।
3. द्रव्य के कण एक–दूसरे को आकर्षित करते हैं

2.1.2 द्रव्य के प्रकार :–

द्रव्य में उपस्थित अवयवों के आधार पर इन्हें दो प्रकार में विभाजित किया गया है।

1. शुद्ध द्रव्य (Pure Matter)

ऐसे द्रव्य जिनमें एक ही प्रकार के घटक या अवयव होते हैं उन्हें शुद्ध द्रव्य कहते हैं।

जैसे– लोहा, सोना, जल, ऑक्सीजन आदि। तत्व एवं यौगिक शुद्ध द्रव्य है।

2. अशुद्ध द्रव्य (Impure Matter)

ऐसे द्रव्य जिनमें एक से अधिक प्रकार के घटक या अवयव होते हैं, उन्हें अशुद्ध द्रव्य कहते हैं।

जैसे–शीतल पेय, मिट्टी, वायु आदि। मिश्रण अशुद्ध द्रव्य है।

2.1.3 द्रव्य की अवस्थाएँ (States of matter)

द्रव्य को भौतिक अवस्थाओं के आधार पर तीन अवस्थाओं में वर्गीकृत किया जा सकता हैं –

(i) ठोस (Solid) (ii) द्रव (Liquid)

(iii) गैस (Gas)

जैसे – $H_2O_{(g)}$ गैस अवस्था – भाप (Steam)

$H_2O_{(l)}$ द्रव अवस्था – जल (Water)

$H_2O_{(s)}$ ठोस अवस्था – बर्फ (Ice)

अब वैज्ञानिक पांच अवस्थाओं पर विचार कर रहे हैं इसमें

(iv) प्लाज्मा – Plasma

(v) बोस – आइंस्टाइन कंडनसेट (BEC) भी शामिल है।

2.1.4 पदार्थ की अवस्थाओं के अभिलाक्षणिक

गुण :– पदार्थ या द्रव्य की तीनों अवस्थाओं को भिन्न–भिन्न विशिष्ट गुणों के आधार पर पहचाना जा सकता है।

1. ठोस अवस्था (Solid state)

हमारे चारों और असंख्य पदार्थ ठोस रुप में उपस्थित हैं। जैसे–लकड़ी का टुकड़ा, पत्थर, पेंसिल, पेन, कम्प्यूटर, नमक आदि।

ठोस अवस्था के निम्नलिखित अभिलाक्षणिक गुणधर्म हैं –

(i) ठोस का आकार निश्चित होता हैं।

(ii) ठोस का आयतन निश्चित होता हैं।

(iii) ठोस का घनत्व अधिक होता हैं।

(iv) ठोस में सम्पीड्यता नगण्य होती हैं।

(v) ठोस के कणों के मध्य उच्च अंतराणुक आकर्षण बल पाया जाता हैं।

(vi) ठोस के कणों में विसरण अत्यन्त कम होता है।

2. द्रव अवस्था (Liquid state)

जल, सरसों का तेल, मिट्टी का तेल, द्रव के उदाहरण है। द्रव का आयतन निश्चित होता है परन्तु इनकी आकृति निश्चित नहीं होती है ये पात्र के अनुसार आकार ले लेता है। द्रव प्रवाह कर सकते हैं। द्रव को उडेला या फैलाया जा सकता है, द्रव के गुण ठोस और गैस के मध्यवर्ती होते हैं।

द्रव अवस्था के निम्नलिखित अभिलाक्षणिक गुणधर्म हैं –

(i) द्रव का आकार अनिश्चित होता हैं।

(ii) द्रव का आयतन निश्चित होता हैं।

(iii) द्रव का घनत्व गैस से अधिक परन्तु ठोस से कम होता हैं।

(iv) द्रव में सम्पीड्यता बहुत कम होती हैं।

(v) द्रव के कणों के मध्य दुर्बल अंतराणुक आकर्षण बल पाया जाता हैं।

(vi) द्रव के कणों में विसरण गैस से कम परन्तु ठोस से

अधिक होता है।

3. गैस अवस्था (Gas state)

हमारे आस–पास उपस्थित वायु गैस अवस्था का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है, अन्य उदाहरण– ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, ऑर्गन, कार्बन डाइऑक्साइड, आदि है।

गैस अवस्था के निम्नलिखित अभिलाक्षणिक गुणधर्म हैं –

(i) गैस का आकार अनिश्चित होता हैं ये पात्र के आकार के अनुसार आकार ले लेती हैं।

(ii) गैस का आयतन अनिश्चित होता हैं ये पात्र के आकार के अनुसार आयतन ले लेती हैं।

(iii) गैस का घनत्व अत्यन्त कम होता हैं।

(iv) गैस में सम्पीड्यता अत्यधिक होती हैं।

(v) गैस के कणों के मध्य अंतराणुक आकर्षण बल नगण्य होता हैं।

(vi) गैस के कणों में विसरण अत्यधिक होता है।

अत : यह शीघ्रतापूर्वक सभी जगह फैल जाती है।

गैस के कणों के मध्य अत्यधिक दूरी होती है। अधिक दाब लगाकर एवं ताप कम करके इन्हें समीप लाया जा सकता है एवं द्रवित (liquify) किया जा सकता है। ईधंन के रूप में प्रयुक्त C.N.G. का नाम संपीडित प्राकृतिक गैस है। L.P.G. द्रवित पेट्रोलियम गैस है।

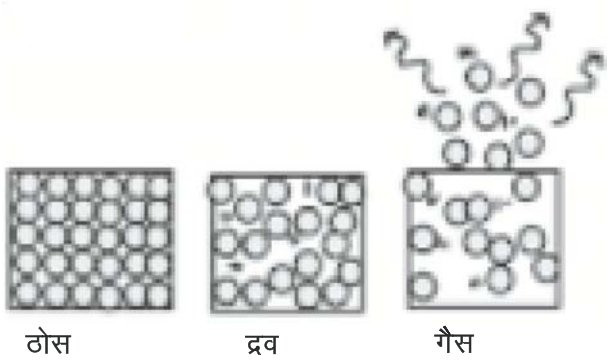

चित्र 2.1 : द्रव्य की अवस्थाएं

2.2 कणाद सिद्धान्त (Kanad Theory)

प्राचीन भारतीय एवं ग्रीक दार्शनिक द्रव्य के अज्ञात एवं अदृश्य रूपों से सदैव चकित होते रहे। पदार्थ की अविभाज्यता के मत के बारे में भारत में बहुत पहले, लगभग 500 ईसा पूर्व विचार व्यक्त किया गया था।

भारतीय दार्शनिक महर्षि कणाद ने प्रतिपादित किया था कि यदि हम द्रव्य को विभाजित करते जाएं तो हमें छोटे–छोटे कण प्राप्त होते जाऐंगे और अंत में एक सीमा आएगी जब प्राप्त कण को पुनः विभाजित नहीं किया जा सकेगा अर्थात् वह सूक्ष्मतम कण अविभाज्य रहेगा। इस अविभाज्य सूक्ष्मतम कण को उन्होंने परमाणु कहा। एक अन्य भारतीय दार्शनिक पकुधा कात्यायाम ने इस मत को विस्तृत रूप से समझाया और कहा कि ये कण सामान्यतः संयुक्त रूप में पाए जाते है, जो हमें द्रव्यों के भिन्न रूपों (तत्त्व, यौगिक, मिश्रण) को प्रदान करते है।

लगभग इसी समय लगभग 460 से 370 ई.पू. ग्रीक दार्शनिक डेमोक्रिटस एवं लियुलीपस ने सुझाव दिया था कि यदि हम द्रव्य को विभाजित करते जाए तो एक ऐसी स्थिति आएगी जब प्राप्त कण को पुनः विभाजित नहीं किया जा सकेगा। उन्होंने इन अविभाज्य कणों को परमाणु (अर्थात अविभाज्य) कहा था।

उपरोक्त सभी दार्शनिक विचारों पर आधारित थे। सन् 1808 में जॉन डाल्टन ने परमाणु सिद्धान्त प्रस्तुत किया तथा परमाणु की खोज का श्रेय इन्हें दिया गया।

डाल्टन ने द्रव्यों की विभाज्यता का विचार प्रदान किया जिसे उस समय पर दार्शनिकता माना जाता था। ग्रीक दार्शनिकों के द्वारा द्रव्यों के सूक्ष्मतम अविभाज्य कण, जिसे परमाणु नाम दिया था, उसे डाल्टन ने भी परमाणु नाम दिया। डाल्टन का यह सिद्धान्त रासायनिक संयोजन के नियमों पर आधारित था। डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त में द्रव्यमान के संरक्षण के नियम एवं निश्चित अनुपात के नियम की युक्तिसंगत व्याख्या की।

2.3 परमाणु (Atom)

डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त के अनुसार सभी द्रव्य चाहे तत्त्व, यौगिक या मिश्रण हो, सूक्ष्म कणों से बने होते है जिन्हें परमाणु कहते हैं। परमाणु अत्यन्त ही सूक्ष्मतम कण होते है। इनका आकार लगभग 10^{-10}m परास का होता है।

अधिकांश तत्त्वों के परमाणु स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में नहीं रह पाते। परमाणु, अणु एवं आयन बनाते हैं। ये अणु अथवा आयन अत्यधिक संख्या में पुंजित होकर वह द्रव्य बनाते हैं, जिन्हें हम देख सकते है, अनुभव कर सकते है, अथवा छू सकते है।

2.4 अणु (Molecule)

अणु, साधारणतया दो या दो से अधिक परमाणुओं का समूह है जो आपस में रासायनिक बंध द्वारा जुड़े होते है जिन्हें सामान्य भौतिक विधियों द्वारा पृथक नहीं किया जा सकता हैं।

अतः "किसी तत्व या यौगिक का सूक्ष्मतम कण जो स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में रह सकता है तथा उस यौगिक के सभी गुणधर्म को प्रदर्शित कर सकता है, अणु कहलाता है।" जैसे– नमक का अणु, फॉस्फोरस का अणु आदि।

2.5 तत्त्व (Element)

एक ही प्रकार के परमाणु के समूह को तत्त्व कहते है। जैसे– सोना, चाँदी, लोहा, गंधक आदि। अब तक 118 तत्त्व ज्ञात है।

किसी तत्त्व का अणु एक परमाणु या एक से अधिक परमाणुओं से मिलकर बना होता हैं जैसे– ऑर्गन, हीलियम इत्यादि अनेक तत्त्व के अणु उसी तत्त्व के केवल एक परमाणु द्वारा निर्मित होते हैं, जबकि ऑक्सीजन के दो प्रकार के अणु O_2 व O_3 होते हैं, जो क्रमशः ऑक्सीजन के दो परमाणु एवं ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं से मिलकर बनते हैं। O_2 को डाई ऑक्सीजन तथा O_3 को ओजोन कहते हैं।

किसी अणु में उपस्थित तत्त्व के परमाणुओं की संख्या को उस तत्त्व की परमाणुकता (atomicity) कहते है। ओजोन में ऑक्सीजन की परमाणुकता 3 है।

2.6 यौगिक (Compound)

दो या दो से अधिक तत्त्वों के परमाणु एक निश्चित अनुपात में रासायनिक संयोग कर जो पदार्थ बनाते हैं उसे यौगिक कहते हैं। जैसे– नमक, जल, अमोनिया, सल्फ्यूरिक अम्ल आदि।

यौगिक का सूक्ष्मतम कण जो स्वतंत्र रह सकता हैं एवं जिसमें यौगिक के सारे गुण विद्यमान हो उसे यौगिक का अणु कहते हैं। जैसे– जल, अणु सूत्र H_2O, अमोनिया, अणु सूत्र NH_3 आदि।

2.7 मिश्रण (Mixure)

दो या दो से अधिक तत्त्वों एवं यौगिकों को अनिश्चित मात्रा में मिलाने से बने पदार्थ को मिश्रण कहते हैं। इनमें अवयवों के मध्य कोई रासायनिक बंध नहीं होता है। अतः इन्हें आसान भौतिक विधियों द्वारा पृथक् किया जा सकता है।

जैसे – वायु एक मिश्रण है जिसमें N_2, O_2, CO_2, H_2O आदि अवयव पाये जाते हैं। मिश्रण को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

2.7.1 समांगी मिश्रण (Homogeneous mixture)

ऐसा मिश्रण जिनमें सभी अवयव एक ही अवस्था एवं प्रावस्था में होते हैं उसे समांगी मिश्रण कहते हैं। जैसे – वायु, विलयन आदि।

2.8.2 विषमांगी मिश्रण (Heterogeneous mixture)

ऐसा मिश्रण जिनमें सभी अवयव भिन्न–भिन्न अवस्था एवं प्रावस्था में होते हैं उसे विषमांगी मिश्रण कहते हैं।

जैसे–दूध, बादल, धुआं आदि।

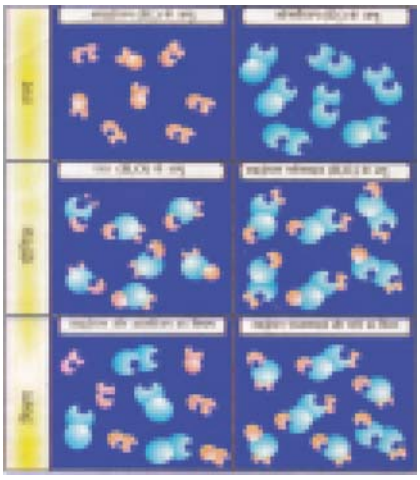

चित्र 2.2 : तत्त्व, यौगिक व मिश्रण

2.8 भौतिक और रासायनिक परिवर्तन

जब भी एक द्रव्य अपने भौतिक एवं रासायनिक गुणों को बदलता हैं, तो यह परिवर्तन कहलाता है। जैसे–रंग, गंध, अवस्था, प्रकृति, अणुसूत्र आदि। किसी भी प्रकार परिवर्तन होना एक क्रिया है। ये परिवर्तन दो प्रकार के होते है।

2.8.1 भौतिक परिवर्तन (Physical change)

ऐसे परिवर्तन जिनमें पदार्थ के रासायनिक गुण समान रहते है परन्तु भौतिक गुणों में परिवर्तन हो जाता है, इन्हें भौतिक परिवर्तन कहते हैं। जैसे– बर्फ को गर्म करने पर जल प्राप्त होता है, इसमें अवस्था ठोस से द्रव हो जाती हैं परन्तु रासायनिक दृष्टि से दोनों समान हैं अर्थात् दोनों का अणुसूत्र H_2O है।

$$H_2O_{(s)} \rightarrow H_2O_{(\ell)}$$

बर्फ जल

2.8.2 रासायनिक परिवर्तन (Chemical change)

ऐसे परिवर्तन जिनमें पदार्थ के रासायनिक गुणों में परिवर्तन हो जाता है अर्थात् परिवर्तन के द्वारा नये रासायनिक पदार्थ का निर्माण होता है, उन्हें रासायनिक परिवर्तन कहते हैं,जैसे कार्बन को ऑक्सीजन में जलाने पर कार्बन डाईऑक्साइड प्राप्त हुई । यहाँ कार्बन ठोस अवस्था में एवं ऑक्सीजन गैस अवस्था में है । प्राप्त कार्बन डाइऑक्साइड गैस अवस्था में हैं। यहाँ अवस्था के साथ–साथ रासायनिक सूत्रों में भी परिवर्तन हुआ हैं।

$$C_{(s)} + O_{2(g)} \longrightarrow CO_{2(g)}$$

कार्बन ऑक्सीजन कार्बन डाइऑक्साइड

प्रस्तुत चित्र में कागज का फटना भौतिक परिवर्तन हैं जबकि कागज का जलना रासायनिक परिवर्तन हैं।

चित्र 2.3 : भौतिक परिवर्तन रासायनिक परिवर्तन

2.9 द्रव्य की अवस्था परिवर्तन व प्रभाव

जब भी द्रव्य की अवस्था में परिवर्तन होता है तो मुख्यतः उनके कणों के मध्य की दूरी, कणों की ऊर्जा एवं कणों की स्थिति में परिवर्तन होता है।

2.9.1 तापमान का प्रभाव (Effect of Temperature)

ताप देने से कणों की गतिज ऊर्जा बढ़ जाती है। ठोस को ताप देने पर कण अधिक तेजी से कंपन करने लगते है। उष्मा के द्वारा प्रदत्त की गई ऊर्जा कणों के बीच के आकर्षण बल को पार कर लेती है। इस कारण कण अपने नियत स्थान को छोड़कर अधिक स्वतंत्र होकर गति करने लगते है। एक अवस्था ऐसी आती है, जब ठोस पिघलकर द्रव बन जाता है।

वह ताप जिस पर ठोस पिघलकर द्रव बन जाता हैं उसे पदार्थ का गलनांक (Melting point) कहते है। बर्फ का गलनांक 273.16 K है।

गलने की प्रक्रिया यानि ठोस से द्रव अवस्था में परिवर्तन को संगलन (fusion) भी कहते है।

"1 वायुमण्डलीय दाब पर 1 किलोग्राम ठोस को उसके गलनांक पर द्रव में बदलने के लिए जितनी उष्मीय ऊर्जा की आवश्यकता होती है उसे संगलन की प्रसुप्त उष्मा या गुप्त ऊष्मा (एंथैल्पी) कहते है"।

द्रव को ताप देने पर कणों की गतिज ऊर्जा बढ़ने से गैस में बदलते है। वह ताप जिस पर द्रव, गैस में बदलता है उसे क्वथनांक (Boiling Point) कहते है।

1 वायुमण्डलीय दाब पर 1 किलोग्राम द्रव को उसके क्वथनांक पर वाष्प में बदलने के लिए जितनी ऊष्मीय उर्जा की आवश्यकता होती है उसे वाष्पन की प्रसुप्त ऊष्मा या गुप्त ऊष्मा (एंथैल्पी) कहते है।

2.9.2 दाब का प्रभाव (Effect of Pressure)

दाब लगाने पर गैस के कण समीप आते हैं। इनके मध्य दूरी घटने पर गैस अवस्था द्रव में बदल जाती है परन्तु अत्यधिक दाब लगाकर द्रव को ठोस नहीं बना सकते है क्योंकि द्रव में संपीड्यता अत्यन्त कम होती है।

2.10 पदार्थों का शुद्धिकरण

प्रकृति में अधिकांश पदार्थ अशुद्ध रूप में ही पाये जाते है। अतः इनका शुद्धिकरण आवश्यक है। भिन्न–भिन्न पदार्थों के शुद्धिकरण की भिन्न – भिन्न विधियां हैं।

2.10.1 निस्यंदन (Filtration)

एक विषमांगी मिश्रण में से द्रव व ठोस को अलग करने की विधि निस्यंदन हैं।

निस्यंदन में ठोस पदार्थ फिल्टर पेपर पर एक अवशेष के रूप में एकत्र किया जाता है और द्रव निस्यंद के रूप में प्राप्त होता है। उदाहरण – रेतीले जल से जल को पृथक् करना।

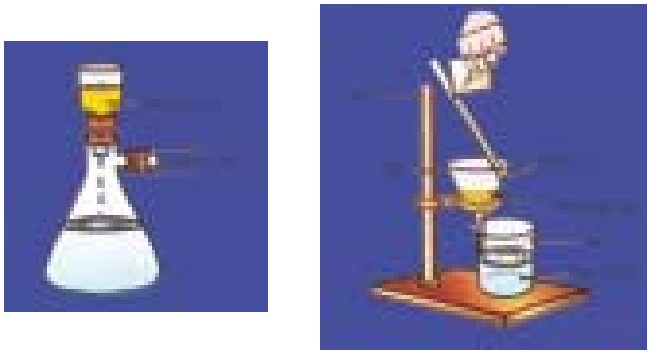

चित्र 2.4 : निस्यंदन

2.10.2 क्रिस्टलीकरण (Crystallisation)

क्रिस्टलीकरण एक संतृप्त विलयन से ठोस क्रिस्टल के बनने की प्रक्रिया है।

ठोस को द्रव से अलग करने के लिए क्रिस्टलीकरण की विधि द्रव के वाष्पन से आरंभ होती है। हालांकि क्रिस्टलीकरण में जब विलयन काफी सान्द्र हो जाता है तो वाष्पन को रोक दिया जाता है। इस प्रकार से प्राप्त सांद्र विलयन को धीरे–धीरे ठण्डा किया जाता है तो क्रिस्टल बनते है। जो निस्यंदन के द्वारा अलग किये जा सकते है। जैसे– चासनी में से शक्कर पृथक् करना, मिश्री बनाना तथा पानी व नमक के विलयन से नमक के क्रिस्टल प्राप्त करना आदि।

2.10.3 ऊर्ध्वपातन (Sublimation)

कुछ ठोस पदार्थों को गरम करने पर वे बिना द्रवित हुए सीधे वाष्प में परिवर्तित हो जाते है तथा वाष्प को ठण्डा करने पर बिना द्रव में बदले पुनः ठोस में बदल जाते हैं इस गुण को ऊर्ध्वपातन कहते हैं। जैसे नौसादर, आयोडीन, कपूर, नैफ्थलिन आदि ऊर्ध्वपातन का गुण दर्शाते हैं।

चित्र 2.5 : उर्ध्वपातन

नमक व नौसादर के मिश्रण को पृथक करना

मिश्रण को गरम करने पर नमक शेष रह जाता है एवं नौसादर वाष्पित हो जाता है। यह कीप पर ठण्डा होकर पुनः शुद्ध नौसादर ठोस रुप में बदल जाता है।

2.10.4 विभेदी निष्कर्षण (Differential extraction)

यह अमिश्रणीय द्रवों को पृथक करने कि विधि है। जैसे– तेल एवं जल ।

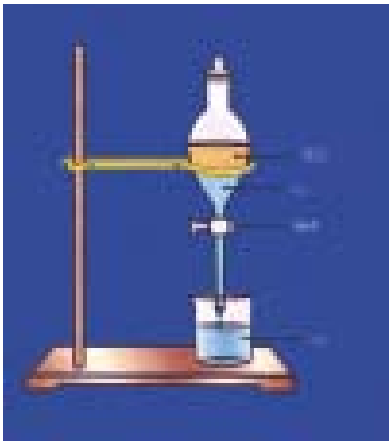

चित्र 2.6 : पृथक्कारी कीप

मिश्रण को पृथक्कारी कीप में डालने पर दोनों द्रवों की भिन्न–भिन्न परतें प्राप्त होती है। स्टॉप कॉक खोलने पर पहले भारी द्रव एवं बाद में हल्का द्रव प्राप्त होता है।

2.10.5 आसवन (Distillation) -

जब द्रव में घुलनशील ठोस उपस्थित हो तो मिश्रण को उबालने पर द्रव वाष्पित हो जाता है एवं वाष्प को ठण्डा करने पर संघनन के कारण शुद्ध द्रव प्राप्त होता है। इस प्रक्रिया को आसवन कहते है। जैसे – जल का आसवन आदि।

अशुद्ध द्रव $\xrightarrow{\text{वाष्पन}}$ वाष्प $\xrightarrow{\text{संघनन}}$ शुद्ध द्रव

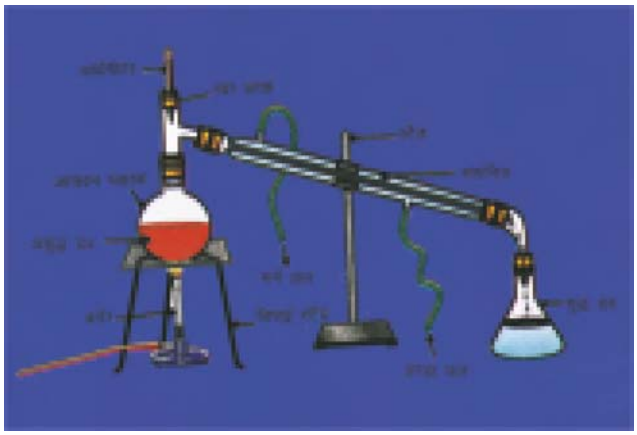

चित्र 2.7 : आसवन

2.10.6 प्रभाजी आसवन (Fractional Distillation)

दो द्रवों के क्वथनांकों में पर्याप्त अन्तर न होने की स्थिति में उन्हें साधारण आसवन द्वारा पृथक नहीं किया जा सकता । ऐसे द्रवों की वाष्प एक ही ताप परास में बन जाती है तथा साथ – साथ संघनित हो जाती है। ऐसी स्थिति में प्रभाजी आसवन की तकनीक का उपयोग किया जाता हैं।

मिश्रण को गर्म करने पर प्रत्येक द्रव उसके क्वथनांक पर वाष्पित होता है। इनकी वाष्प को प्रभाज स्तम्भ से गुजारकर संघनित करने पर भिन्न भिन्न द्रव प्राप्त होते हैं। पहले कम क्वथनांक वाला तथा बाद में अधिक क्वथनांक वाला द्रव प्राप्त होता है। उदाहरण :– पेट्रोलियम के प्रभाजी आसवन से भिन्न भिन्न अवयव जैसे पेट्रोल, डीजल, कैरोसिन, वैसलिन आदि पृथक किये जाते हैं।

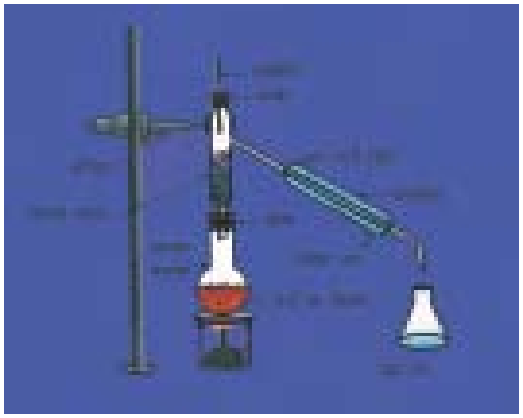

चित्र 2.8 : प्रभाजी आसवन

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. जल, वायु, पत्थर सभी द्रव्य है।
2. द्रव्य की मुख्यतः तीन भौतिक अवस्थाएं ठोस, द्रव एवं गैस

हैं।

3. महर्षि कणाद ने सर्वप्रथम परमाणु की जानकारी दी।
4. जॉन डाल्टन ने परमाणुवाद दिया।
5. परमाणुओं के निश्चित अनुपात में रासायनिक संयोग से अणु बनते है।
6. द्रव्य तत्व, यौगिक व मिश्रण के रूप में पाये जाते हैं।
7. तात्विक व यौगिक दो प्रकार के अणु होते हैं।
8. पदार्थों को अनिश्चित या निश्चित अनुपात में मिलाने पर मिश्रण बनता है, इनमें रासायनिक बंध नहीं होते है।
9. बर्फ का पानी में बदलना भौतिक परिवर्तन है, जबकि बर्फ का H_2 व O_2 में टूटना रासायनिक परिवर्तन है।
10. पदार्थों का शुद्धिकरण, क्रिस्टलन, आसवन, प्रभाजी आसवन, विभेदी निष्कर्षण, निस्यंदन, आदि द्वारा किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र 1. महर्षि कणाद ने परमाणु की जानकारी कब दी थी?
(अ) 500 ईसा पूर्व (ब) 100 ईसा पूर्व
(स) 460 ईसा पूर्व (द) 1808 इसवीं में ( )

प्र 2. ओजोन में ऑक्सीजन की परमाणुकता कितनी है ?
(अ) 1 (ब) 2
(स) 3 (द) 4 ( )

प्र 3. निम्नलिखित में से कौनसा पदार्थ कमरे के ताप पर ठोस नहीं हैं ?
(अ) नमक (ब) फिटकरी
(स) ऑक्सीजन (द) नौसादर ( )

प्र 4. वह ताप जिस पर द्रव ठोस में बदलता हैं क्या कहलाता हैं ?
(अ) गलनांक (ब) क्वथनांक
(स) हिमांक (द) संघनन ताप ( )

प्र 5. निम्नलिखित में से कौनसा विकल्प मिश्रण हैं ?
(अ) पानी (ब) पीतल
(स) लोहा (द) नमक ( )

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

6. सर्वप्रथम परमाणु की जानकारी किसने दी थी?
7. परमाणु का आकार लगभग कितना होता है?
8. जल का अणुसूत्र लिखिए।
9. तेल व जल का मिश्रण किस प्रकार का मिश्रण है?
10. रेतीले जल से जल को किस विधि से पृथक करते हैं ?
11. डाइऑक्सीजन में ऑक्सीजन की परमाणुकता बताइये।
12. एक परमाणुक अणु का एक उदाहरण दीजिए।
13. द्रव्य की वह कौनसी अवस्था हैं जिसका आकार व आयतन निश्चित होता है ?
14. C.N.G. का पूरा नाम बताइये।
15. द्रव का वाष्प में बदलने की क्रिया क्या कहलाती है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

16. गलनांक किसे कहते है? परिभाषा लिखिए।
17. वाष्पन की गुप्त उष्मा की परिभाषा लिखिए।
18. तत्त्व व यौगिक में एक अन्तर लिखिए।
19. मिश्रण क्या है? एक उदाहरण दीजिए।
20. द्रव अवस्था के चार गुणधर्म लिखिए।
21. भौतिक परिवर्तन क्या है? एक उदाहरण दीजिए।
22. गैसों के द्रवीकरण पर दाब के प्रभाव को समझाइये।
23. द्रव्य की कोई तीन विशेषताएँ लिखिए।
24. पृथक्कारी कीप से किस प्रकार के मिश्रण को अलग किया जा सकता है ?
25. यौगिक की परिभाषा लिखकर एक उदाहरण दीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

26. द्रव्य की अवस्था परिवर्तन पर ताप का प्रभाव समझाइये?
27. उर्ध्वपातन को नामांकित चित्र बनाकर समझाइये।
28. ठोस, द्रव व गैस अवस्था में तीन–2 अन्तर लिखिए।
29. भौतिक व रासायनिक परिवर्तन में दो अन्तर लिखिए।
30. आसवन द्वारा पदार्थ को शुद्धिकरण कैसे करते है? चित्र बनाकर समझाइये।

उत्तरमाला

1. (अ) 2. (स) 3. (स) 4. (स) 5. (ब)

◆◆◆

अध्याय 3

परमाणु संरचना
(Atomic Structure)

पदार्थ के रूप परिवर्तन के बारे में प्राचीन समय से ही मनुष्य जिज्ञासु रहा है, जैसे पानी में नमक डालने पर नमक दिखाई नहीं देता है लेकिन उसका स्वाद पानी में आ जाता है। कोयला जलकर थोड़ी सी राख में परिवर्तित हो जाता है । पदार्थ को पीसकर बारीक पाउडर बनाया जा सकता है। पदार्थ की अदृश्यता व विभाज्यता के बारे में ईसा पूर्व में ही ग्रीक व भारतीय दार्शनिक परिचित थे।

भारतीय दार्शनिक **महर्षि कणाद** ने में ईसा पूर्व छठी शताब्दी में बताया कि ''पदार्थ को छोटे–छोंटे कणों में विभाजित कर सकते है, परन्तु अंतिम सूक्ष्मतम् कण अविभाज्य रहेगा।'' **कणाद** ने इसे '**परमाणु** ' नाम दिया। अन्य भारतीय दर्शनशास्त्री '**कात्यायाम**' ने बताया कि ये 'कण' संयुक्त रूप से पाए जाते है जो पदार्थ को भिन्न–भिन्न रूप प्रदान करते हैं। लगभग इसी समय ग्रीक दार्शनिक '**डेमोक्रिटस एवं लियुसीपस**' ने इस अविभाज्य कण को एटॅम्स् (atoms) कहा जिसका अर्थ होता है, 'न काटे जाने वाला' या 'अविभाज्य' अर्थात् जिसे पुनः विभाजित नहीं किया जा सके। ये सभी सुझाव दर्शन पर आधारित थे, इनका कोई प्रायोगिक आधार नहीं था। सन् 1808 में वैज्ञानिक ' **जॉन डॉल्टन** ' ने रासायनिक संयोजन, द्रव्यमान संरक्षण एवं निश्चित अनुपात के नियमों के आधार पर ' परमाणु सिद्धान्त' दिया, जिसके मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं :–

1. सभी द्रव्य छोटे–छोटे कण ' परमाणुओं' से बनते हैं।
2. परमाणु अविभाज्य कण है, जिसको न तो नष्ट कर सकते हैं न ही उत्पन्न।
3. एक तत्त्व के सभी परमाणु समान होते हैं।
4. भिन्न तत्त्वों के परमाणु भिन्न–भिन्न गुणधर्म रखते हैं।
5. भिन्न–भिन्न तत्त्वों के परमाणु परस्पर पूर्णसंख्या के अनुपात में ही संयोग कर यौगिक अणु बनाते हैं।
6. रासायनिक परिवर्तन वस्तुतः परमाणुओं का संयोजन, वियोजन अथवा पुनर्विन्यास होता हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक विभिन्न प्रयोगों की श्रृंखला से स्पष्ट हुआ कि परमाणु में कुछ छोटे कण उपस्थित होते है, जिन्हें 'अवपरमाण्विक' कण (subatomic particle) कहा गया।

3.1 परमाणु के भौतिक कण एवं उनकी खोज

3.1.1 विद्युत् विसर्जन नलिकाः– एक लम्बी कांच की नलिका होती है, जिसके दोनों सिरों पर धातु इलेक्ट्रॉड लगे होते है व इससे एक निर्वात पम्प जुड़ा रहता है, जिसके द्वारा नलिका में दाब घटाया–बढ़ाया जा सकता है तथा इसके द्वारा नलिका में निर्वात भी उत्पन्न कर सकते है।

3.1.2 इलेक्ट्रॉन की खोजः– जे.जे.थॉमसन ने विसर्जन नलिका में उच्च निर्वात उत्पन्न कर धातु इलेक्ट्रोड पर उच्च वोल्टता लागू की तो देखा कि नलिका की दीवारों पर हरी प्रतिदीप्ति उत्पन्न होती है।

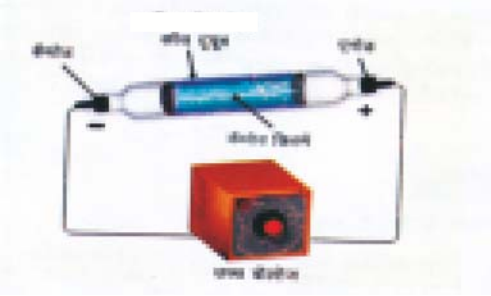

चित्र 3.1 विसर्जन नलिका में कैथोड़ किरणों का बनना

थॉमसन ने प्रयोगों के द्वारा प्रमाणित किया कि निर्वात में उच्च वोल्टता लगाने से नलिका के कैथोड़ से ऐनोड़ की तरफ विद्युत् का प्रवाह किरणों के रूप में होता है, थॉमसन ने इन किरणों को कैथोड़ किरणें कहा।

कैथोड़ किरणों के गुण :–

1. यह सीधी रेखा में गमन करती हैं।
2. यह प्रतिदीप्ति उत्पन्न करती हैं।
3. यह विद्युत् व चुम्बकीय क्षेत्रों से प्रभावित होती हैं।
4. यह जब किसी गैस से गुजरती हैं तो उसे आयनित कर देती हैं।
5. यह ऋणावेशित कणों से बनती हैं।
6. इन कणों का e/m (आवेश/द्रव्यमान) एक समान होता हैं।
7. यह वस्तुतः द्रव्य किरणें होती हैं।

जे.जे. थॉमसन के अनुसार कैथोड़ किरणें ऋणावेशित कणों से बनती हैं, उन कणों को थॉमसन ने **इलेक्ट्रॉन** नाम दिया

तथा इनका द्रव्यमान हाइड्रोजन परमाणु का 1/1837 पाया।

प्रयोगों द्वारा कैथोड़ किरणों के गुणों से यह प्रमाणित हुआ कि परमाणु में एक ऋणावेशित कण इलेक्ट्रॉन होता है, जिसे परमाणु से अलग किया जा सकता है। परमाणु विद्युत् उदासीन होता है, इसलिए परमाणु का शेष भाग जिसमें से इलेक्ट्रॉन निकाल लिया गया है, वह धनावेशित होना चाहिये।

3.1.3 प्रोटॉन की खोज :– सन् 1886 में ई. गोल्डस्टीन ने विसर्जन नलिका में छिद्रमय कैथोड़ प्रयुक्त किया तथा कम दाब व उच्च विभव पर नई प्रकार की किरणें प्राप्त की जिन्हें धन किरणें कहा गया। इन्हें **ऐनोड़ किरणें** भी कहा जाता हैं।

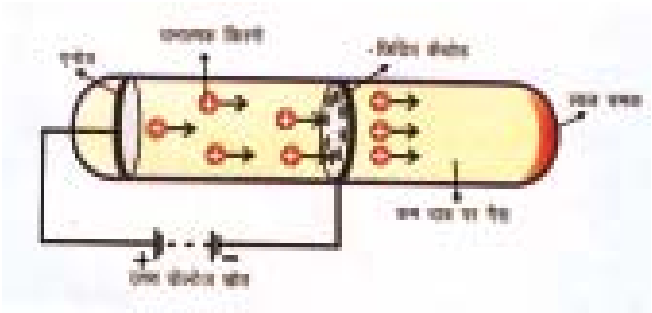

चित्र 3.2 विसर्जन नलिका में धन किरणों का बनना

धन किरणों के गुणः–

1. धन किरणें सीधी रेखा में गमन करती हैं।
2. इनका आवेश/द्रव्यमान (e/m) अनुपात नलिका में भरी हुई गैस की प्रकृति पर निर्भर करता हैं।
3. विद्युत् एवं चुम्बकीय क्षेत्रों से प्रभावित होती हैं।
4. ये धन आवेशित कणों की बनी होती हैं।
5. ये भी द्रव्य किरणें ही होती हैं।

सन् 1919 में इस धन कण की पहचान प्रोटॉन रूप में की गई तथा बताया गया कि परमाणु में इलेक्ट्रॉन के साथ ही धन आवेशित कण प्रोटॉन भी उपस्थित होता हैं। दोनों की संख्या व आवेश समान होने के कारण परमाणु उदासीन होता हैं। प्रोटॉन का द्रव्यमान इलेक्ट्रॉन से 1837 गुना अधिक होता हैं।

3.2 परमाणु का थॉमसन प्रतिरूप

परमाणु में इलेक्ट्रॉन व प्रोटॉन की उपस्थिति प्रमाणित होने के बाद थॉमसन ने 1898 में बताया कि परमाणु 10^{-10} मीटर त्रिज्या का ठोस धनावेशित गोला है, जिसमें ऋणावेशित इलेक्ट्रॉन धंसे रहते है। इसकी तुलना उसने एक मिठाई "**प्लम पुडिंग**" से की, जिसमें केक में जगह–जगह पर सूखे मेवे उपस्थित होते है। हम इसको समझने के लिये तरबूज का उदाहरण ले सकते है, जिसके गूदे को धनभाग

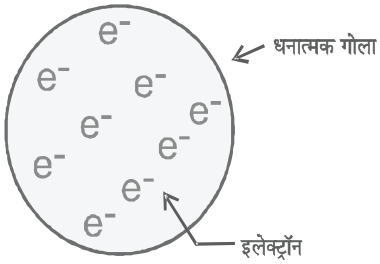

चित्र 3.3 –थॉमसन का परमाणु प्रतिरूप

व उसमें उपस्थित बीज को इलेक्ट्रॉन माना जा सकता है। इस प्रतिरूप को ' **प्लम पुडिंग** ' प्रतिरूप का नाम दिया गया।

कुछ समय बाद ही इस प्रतिरूप को खारिज कर दिया गया क्योंकि यह रदरफोर्ड के ऐल्फा कण प्रकीर्णन प्रयोग की व्याख्या नहीं कर सका।

3.3. रदरफोर्ड का प्रयोग व नाभिकीय परमाणु प्रतिरूप

अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने 1911 में सोने की पतली पन्नी अथवा पर्णिका (Foil) (100 नेनोमीटर अथवा 10^{-7} मीटर) पर ऐल्फा कणों (हीलियम के नाभिक) की बौछार की जिसके चारों ओर जिंक सल्फाइड (ZnS) का लेपन किया हुआ वृत्ताकार आवरण था। उसके इस प्रयोग से निम्नलिखित प्रेक्षण प्राप्त हुए–

1. अधिकांश कण बिना विक्षेपण के सीधे निकल गये।
2. कुछ कण 90^0 व कुछ कण 120^0 के कोण पर विक्षेपित होकर निकले ।
3. 20000 कणों मे से एक कण ऐसा भी था जो 180^0 के कोण से विक्षेपित हुआ अर्थात् पतली पन्नी से टकरा पुनः उसी मार्ग से लौट आया।

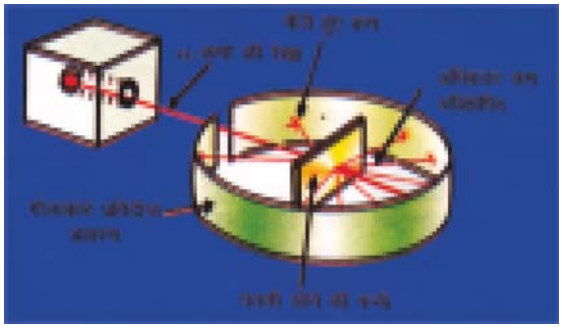

चित्र 3.4 –रदरफोर्ड का प्रकीर्णन प्रयोग

3.3.1 रदरफोर्ड ने स्वर्ण पत्र पर ऐल्फा कण प्रकीर्णन के इस प्रयोग से निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले –

1. परमाणु का अधिकांश भाग रिक्त होता हैं।
2. समस्त धन आवेश परमाणु में एक जगह पर केन्द्रित हैं।

3. धन आवेश द्वारा घेरा गया स्थान परमाणु के आयतन की तुलना में काफी कम हैं।

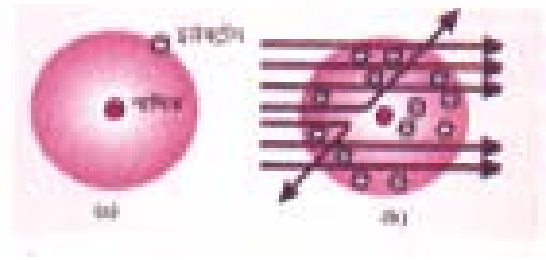

चित्र 3.5 धातु परमाणु के नाभिक द्वारा एल्फा कण प्रकीर्णन

3.3.2 इन निष्कर्षों के आधार पर रदरफोर्ड ने नाभिकीय परमाणु प्रतिरुप प्रस्तुत किया जिसके मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैः–

1. परमाणु का समस्त धन आवेश व द्रव्यमान उसके मध्य में छोटे से भाग नाभिक में केन्द्रित होता है, नाभिक की त्रिज्या 10^{-15} मीटर होती है।

2. परमाणु का अधिकांश भाग रिक्त होता है , जिसमें ऋण आवेशित इलेक्ट्रॉन नाभिक के चारों ओर वृत्ताकार पथ में तेज गति से चक्कर लगाते रहते हैं, इन वृत्ताकार पथों को ' कक्ष ' अथवा 'कोश' कहा जाता है।

3. धन आवेशित नाभिक व ऋण आवेशित इलेक्ट्रॉन के मध्य लगने वाला 'स्थिर विधुत् आकर्षण बल'' तीव्र गति से घूमते इलेक्ट्रॉन के 'अभिकेन्द्रीय बल' से संतुलित रहता है।

4. परमाणु में इलेक्ट्रॉन पर कुल ऋण आवेश नाभिक के कुल धनावेश के बराबर होने के कारण परमाणु विद्युत उदासीन होता है।

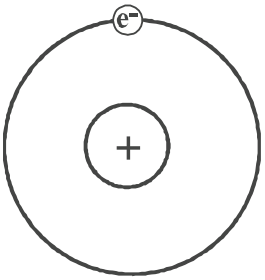

चित्र 3.6 रदरफोर्ड का परमाणु प्रतिरूप

3.3.3 रदरफोर्ड परमाणु प्रतिरूप की कमियाँ : –

1. धन आवेशित नाभिक के चारों ओर घूमता ऋण आवेशित इलेक्ट्रॉन त्वरण के कारण ऊर्जा विकिरण उत्सर्जित करेगा, जिससे ऊर्जा में लगातार कमी होगी व इलेक्ट्रॉन अन्ततः नाभिक में गिर जायेगा और परमाणु स्थायी नहीं रहेगा।

2. रदरफोर्ड परमाणु के इलेक्ट्रॉन के लिये निश्चित पथ नही बता सका।

3.4 न्यूट्रॉन की खोज

परमाणु अध्ययनों से ज्ञात हुआ कि परमाणु का द्रव्यमान उसमें उपस्थित इलेक्ट्रॉन व प्रोटॉन के कुल द्रव्यमान से अधिक है। 1920 में अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने सुझाया कि परमाणु में उदासीन कण भी उपस्थित होते परन्तु आवेश रहित होने के कारण इनकी पहचान में कठिनाई आई। 1932 में उदासीन कण न्यूट्रॉन की खोज हो गई, जिसका द्रव्यमान प्रोटॉन के द्रव्यमान के लगभग बराबर पाया गया। जेम्स चैडविक ने न्यूट्रॉन की खोज की।

3.5 बोर का हाइड्रोजन परमाणु प्रतिरूप

रदरफोर्ड परमाणु प्रतिरूप भौतिकी नियमों के अनुरूप नहीं था। 1912 में नील्स बोर ने संकल्पनाओं पर आधारित नया परमाणु प्रतिरूप दिया। क्वांटम सिद्धान्त पर आधारित बोर के हाइड्रोजन परमाणु प्रतिरूप की मुख्य अवधारणाएं निम्नलिखित हैं:–

1. हाइड्रोजन परमाणु में इलेक्ट्रॉन निश्चित त्रिज्या एवं ऊर्जा की वृत्ताकार कक्षाओं में ही गति करता है इन्हें कक्ष अथवा कोश कहा जाता हैं। इन कक्षों को 1,2,3,4...या K,L,M,N,O से प्रदर्शित करते हैं ।

2. इन कक्षों में इलेक्ट्रॉन का कोणीय संवेग (mvr), $\frac{h}{2\pi}$ या इसका गुणज होता है, यहां h प्लांक नियतांक है। (m = इलेक्ट्रॉन का द्रव्यमान, v = इलेक्ट्रॉन का वेग तथा r = कक्ष की त्रिज्या है)

3. एक निश्चित कक्षा में चक्कर लगाने पर इलेक्ट्रॉन की ऊर्जा में कोई परिवर्तन नहीं होता हैं, परन्तु उच्च कक्षा से निम्न कक्षा अथवा निम्न से उच्च कक्षा में जाने पर ऊर्जा का क्रमशः उत्सर्जन व अवशोषण होता है।

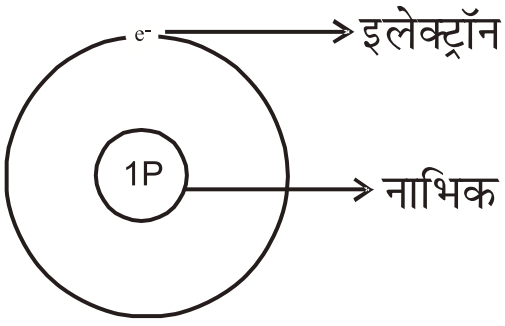

चित्र 3.7 हाइड्रोजन परमाणु प्रतिरूप

3.6 परमाणु का आकार

किसी यौगिक के विलगित परमाणु के नाभिक से बाह्यतम कोश के मध्य की दूरी को परमाण्वीय त्रिज्या कहते हैं परन्तु न तो परमाणु को विलगित कर सकते है तथा न ही नाभिक से बाह्यतम कोश की दूरी साधारण तरीके से नापी जा सकती है अतः परमाण्वीय त्रिज्या को इस प्रकार समझा सकते हैं –

3.6.1 सहसंयोजक त्रिज्या :– समान परमाणुओं द्वारा बनाए गए एकल सहसंयोजक बंध की दूरी का आधा सहसंयोजक त्रिज्या कहलाती हैं, जैसे क्लोरीन के दो परमाणुओं के नाभिकों के मध्य दूरी का आधा 99Å ही परमाण्वीय त्रिज्या माना जाता हैं। ($1Å = 10^{-8}$ सेमी)

3.6.2 धात्विक त्रिज्या :– धात्विक क्रिस्टल में उपस्थित दो परमाणुओं के मध्य की अन्तरानाभिक दूरी का आधा परमाण्वीय त्रिज्या कहलाता है।

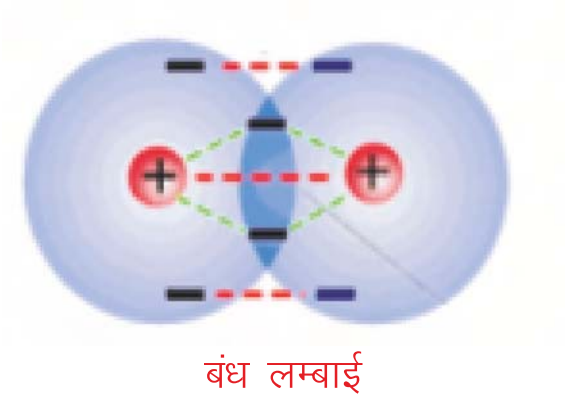

चित्र 3.8 सहसंयोजक त्रिज्या

3.7 परमाणु द्रव्यमान

डॉल्टन के परमाणु सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक तत्त्व का एक विशिष्ट परमाणु द्रव्यमान होता है, डॉल्टन के इस सिद्धान्त से स्थिर अनुपात के नियम को आसानी से समझा जा सकता है, अतः वैज्ञानिक इससे प्रेरित होकर परमाणु द्रव्यमान को मापने की ओर अग्रसर हुए तथा संयोजन नियमों के उपयोग से सापेक्ष परमाणु द्रव्यमान ज्ञात किया। व्यवहारिक रूप से परमाणु का द्रव्यमान उसमें उपस्थित प्रोटॉन, न्यूट्रॉन के कारण होता हैं। नाभिक में उपस्थित होने के कारण इन्हे न्यूक्लियॉन भी कहते हैं। परमाणु का समस्त द्रव्यमान उसके नाभिक में होता हैं। ऑक्सीजन परमाणु का द्रव्यमान 16 amu (परमाणु द्रव्यमान इकाई) उसमें उपस्थित 8 प्रोटॉन व 8 न्यूट्रॉन के कारण हैं। इसी प्रकार नाइट्रोजन परमाणु का द्रव्यमान 14 amu है। (संकेत : 7 न्यूट्रॉन+7 प्रोटॉन)

" एक परमाणु के नाभिक में उपस्थित न्यूक्लियॉन की कुल संख्या (प्रोटॉन+न्यूट्रॉन की संख्या) को द्रव्यमान संख्या कहते है।" द्रव्यमान संख्या A' से प्रदर्शित करते है। "किसी परमाणु में उपस्थित प्रोटॉन की संख्या परमाणु क्रमांक या परमाणु संख्या कहलाती है । इसे Z से प्रदर्शित करते हैं, इसे Z से निम्न प्रकार संबंधित किया जाता हैं।

$A = Z + n$

A द्रव्यमान संख्या

Z परमाणु क्रमांक / संख्या

n न्यूट्रॉन की संख्या

3.8 परमाणु भार

परमाणु संरचना के अध्ययन के साथ ही इलेक्ट्रॉन के e/m का ज्ञान हो गया था। कालान्तर में परमाणु के भार का भी निर्धारण कर लिया गया। प्रारम्भ में सबसे छोटे हाइड्रोजन परमाणु का भार एक इकाई मानकर उसके सापेक्ष अन्य तत्त्वों के परमाणुओं के भार परिकलित किये गये तथा परमाणु भार की परिभाषा दी–'किसी तत्त्व का परमाणु भार वह संख्या है जो प्रदर्शित करे कि **तत्त्व** का परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु से कितना गुणा ज्यादा भारी है।

1961 में कार्बन –12 समस्थानिक के भार के बारहवें भाग को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानक परमाणु द्रव्यमान इकाई उन माना गया, इसके अनुसार"किसी तत्त्व का परमाणु भार कार्बन–12 समस्थानिक के बारहवें भाग के सापेक्ष उस तत्त्व के सभी समस्थानिकों का औसत भार होता है।"

तत्त्व का परमाणु भार

$$= \frac{\text{तत्त्व के एक परमाणु का भार}}{\text{कार्बन–12 समस्थानिक का 1/12 भाग भार}}$$

तत्त्वों के परमाणु भार व परमाणु क्रमांक

क्र.सं.	तत्त्व	परमाणु क्रमांक	द्रव्यमान संख्या	परमाणु भार amu में
1	हाइड्रोजन	1	1	1.008
2	हीलियम	2	4	4.003
3	कार्बन	6	12	12.001
4	नाइट्रोजन	7	14	14.007
5	ऑक्सीजन	8	16	15.999
6	सोडियम	11	23	22.99
7	मैग्नीशियम	12	24	24.31
8	ऐलुमिनियम	13	27	26.98
9	क्लोरीन	17	35	35.453

परमाणु के मौलिक कणों पर आवेश व द्रव्यमानः–

कण का नाम	चिन्ह	प्रकृति	आवेश		द्रव्यमान	
			कूलाम में	इकाई में	amu में	Kg में
इलेक्ट्रॉन	e	ऋण	1.60×10^{-19}	-1	0.0005485	9.109×10^{-31}
प्रोटॉन	p	धन	1.60×10^{-19}	+1	1.007277	1.672×10^{-27}
न्यूट्रॉन	n	उदासीन	शून्य	शून्य	1.008665	1.674×10^{-27}

3.9 आवोगाद्रो संख्या

हाइड्रोजन व ऑक्सीजन की अभिक्रिया में निम्नानुसार जल बनता हैः–

$$2H_2 + O_2 \longrightarrow 2H_2O$$

इस अभिक्रिया में हाइड्रोजन के दो अणु ऑक्सीजन के एक अणु से अभिक्रिया कर जल के दो अणु बनाते हैं। अभिक्रिया में भाग लेने वाले पदार्थों की मात्रा आसानी से ज्ञात की जा सकती हैं तथा इनकी मात्रा को इसके अणु अथवा परमाणुओं की संख्या से आसानी से अभिलक्षित कर सकते हैं। इसलिए पदार्थ की मात्राओं का ज्ञान सुविधाजनक करने के लिये एक नई इकाई 'मोल' प्रस्तावित की गई। मोल अवधारणा के अनुसार "किसी पदार्थ के एक मोल का द्रव्यमान उसके ग्राम परमाणुभार अथवा ग्राम अणुभार के बराबर होता है।" **इस परिभाषा के अनुसार** :–

1 मोल पदार्थ का भार

18 ग्राम जल (H_2O)

17 ग्राम अमोनिया (NH_3)

44 ग्राम कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2)

12 ग्राम कार्बन (C)

24 ग्राम मैग्नीशियम (Mg)

सभी पदार्थों के एक मोल में उसके कणों (परमाणु, आयन, अणु) की संख्या निश्चित होती है जिसे **आवोगाद्रो संख्या** कहते है, तथा इसका मान **6.022×10^{23}** होता है। 18 ग्राम जल में 6.022×10^{23} अणु जल के अथवा ऑक्सीजन के 6.022×10^{23} परमाणु व हाइड्रोजन के $2 \times 6.022 \times 10^{23}$ परमाणु उपस्थित होते है। यह नाम इटली के वैज्ञानिक **एमीडियो आवोगाद्रो** के सम्मान में रखा गया हैं।

मोल अवधारणा को इस उदाहरण से समझ सकते है–

उदाहरण – जल 2.5 मोल में ऑक्सीजन व हाइड्रोजन के परमाणुओं व जल के अणु की संख्या ज्ञात कीजिए–

हल :– H_2O के 1 मोल में अणुओं की संख्या

= आवोगाद्रो की संख्या

$= 6.022 \times 10^{23}$

अतः जल के 2.5 मोल में अणुओं की संख्या

$= 2.5 \times 6.22 \times 10^{23}$

$= 15.55 \times 10^{23}$ जल के अणु

जल के एक अणु में हाइड्रोजन परमाणुओं की संख्या = 2

जल के 1 मोल में हाइड्रोजन परमाणुओं की

संख्या $= 2 \times 6.022 \times 10^{23}$ परमाणु

अतः 2.5 मोल जल में हाइड्रोजन परमाणुओं की

संख्या $= 2.5 \times 2 \times 6.022 \times 10^{23} = 30.11 \times 10^{23}$

परमाणु हाइड्रोजन के

जल के एक अणु में ऑक्सीजन परमाणुओं

की संख्या =1

जल के एक अणु में ऑक्सीजन परमाणुओं की

संख्या $= 1 \times 6.022 \times 10^{23}$

अतः जल के 2.5 मोल में ऑक्सीजन परमाणुओं की

संख्या $= 2.5 \times 1 \times 6.022 \times 10^{23} = 15.055 \times 10^{23}$

सामान्य ताप व दाब पर पदार्थ के एक मोल का आयतन 22.4 लीटर होता हैं, अर्थात NTP पर प्रत्येक गैस के 22.4 लीटर का भार उसके अणुभार के बराबर होता हैं। इसका उपयोग भार सम्बन्धी गणनाओं में होता हैं।

3.10 परमाणु की स्थिति

परमाणु में इलेक्ट्रोन नाभिक के चारों ओर निश्चित कक्षाओं में ही नाभिक के चक्कर लगाते हैं, ये कक्षाएं बोर द्वारा K,L,M,N,O अथवा 1,2,3,4,5 से निरूपित की गई। प्रत्येक कक्षा में इलेक्ट्रॉन की संख्या $2n^2$ होती है, यहाँ 'n' कक्ष की संख्या है, इसके अनुसार, बोर की अवधारणा के अनुसार बाह्यतम् कोश में

कक्षा	कक्षा का नाम	इलेक्ट्रोनों की संख्या
1	K	$2 \times 1^2 = 2$
2	L	$2 \times 2^2 = 8$
3	M	$2 \times 3^2 = 18$
4	N	$2 \times 4^2 = 32$
5	O	$2 \times 5^2 = 50$

इलेक्ट्रॉन की अधिकतम संख्या आठ (8) हो सकती है, इसके अनुसार आवर्त सारिणी के प्रथम 18 तत्त्वों के परमाणुओं में इलेक्ट्रॉन वितरण निम्नानुसार होगा–

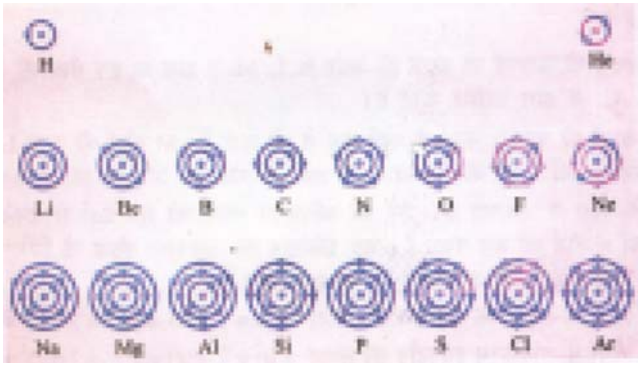

क्र. सं.	नाम तत्व	प्रतीक	परमाणु क्रमांक	इलेक्ट्रॉनिक विन्यास
1	हाइड्रोजन	H	1	1
2	हीलियम	He	2	2
3	लीथियम	Li	3	2,1
4	बेरिलियम	Be	4	2,2
5	बोरॉन	B	5	2,3
6	कार्बन	C	6	2,4
7	नाइट्रोजन	N	7	2,5
8	ऑक्सीजन	O	8	2,6
9	फ्लुओरीन	F	9	2,7
10	निऑन	Ne	10	2,8
11	सोडियम	Na	11	2,8,1
12	मैग्नीशीयम	Mg	12	2,8,2
13	ऐलुमिनियम	Al	13	2,8,3
14	सिलिकन	Si	14	2,8,4
15	फॉस्फोरस	P	15	2,8,5
16	सल्फर	S	16	2,8,6
17	क्लोरीन	Cl	17	2,8,7
18	ऑर्गन	Ar	18	2,8,8
19	पोटैशियम	K	19	2,8,8,1
20	कैल्सियम	Ca	20	2,8,8,2

3.11 समस्थानिक

डॉल्टन के परमाणु सिद्धान्त के अनुसार एक तत्त्व के सभी परमाणु समान होते हैं परन्तु बाद में वैज्ञानिकों के द्वारा इसे सही नहीं पाया गया , उन्होनें पाया कि एक ही तत्त्व परमाणुओं की द्रव्यमान संख्या अलग–अलग हो सकती है। इसका उदाहरण हाइड्रोजन परमाणु है, जिसकी तीन प्रकार की परमाणु स्पीशीज होती है, इसमें हाइड्रोजन 99.98% ड्यूटीरियम 0.15% तथा ट्राइटियम सूक्ष्म मात्रा में उपस्थित होती हैं।

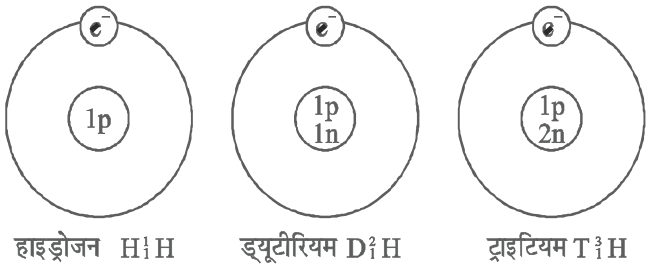

चित्र 3.10 हाइड्रोजन के समस्थानिक

इन परमाणुओं में देखा गया कि बहुतायत में उपलब्ध हाइड्रोजन के नाभिक में केवल एक प्रोटॉन होता है, जबकि ड्यूटीरियम के नाभिक में एक प्रोटॉन व एक न्यूट्रॉन भी होता है तथा ट्राइटियम के नाभिक में एक प्रोटॉन व दो न्यूट्रॉन होते हैं, अतः पाया गया कि इनका परमाणु क्रमांक एक है पर द्रव्यमान संख्या क्रमशः 1, 2 व 3 है। इसका उदाहरण से हम समस्थानिक को इस प्रकार परिभाषित करते हैं "एक ही तत्त्व के परमाणु जिनका परमाणु क्रमांक समान लेकिन द्रव्यमान संख्या भिन्न–भिन्न होती है, समस्थानिक कहलाते हैं।

अन्य उदाहरणों में क्लोरीन के दो समस्थानिक क्लोरीन–35 व क्लोरीन–37, कार्बन के दो समस्थानिक कार्बन–12 व कार्बन–14

तथा ऑक्सीजन की तीन ऑक्सीजन–16, ऑक्सीजन–17 व ऑक्सीजन–18 होते हैं।

3.11.1 समस्थानिकों के उपयोग :–

1. यूरेनियम समस्थानिक को परमाणु भट्टी में ईधन के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

2. रेडियोधर्मी समस्थानिक विभिन्न रोगों के उपचार में प्रयुक्त होते हैं जैसेः आयोडीन–131, घेंघा रोग व कोबाल्ट–60 कैंसर के उपचार हेतु काम मे लेते हैं।

3. रासायनिक अभिक्रियाओं की क्रियाविधि का अध्ययन करने के लिये समस्थानिक काम में लिए जाते हैं।

4. मानव के रक्त संचरण के अध्ययन हेतु सोडियम–24 उपयोग में लेते हैं।

3.12 समभारिक

भिन्न–भिन्न तत्त्वों के परमाणु जिनकी द्रव्यमान संख्या समान होती है, परन्तु परमाणु क्रमांक भिन्न–भिन्न होते है, समभारिक कहलाते हैं, जैसेः कैल्सियम तथा आर्गन दोनों की द्रव्यमान संख्या 40 होती है, परन्तु दोनों का परमाणु क्रमांक क्रमशः 18 व 20 होते हैं। इसी प्रकार कार्बन–14 व नाइट्रोजन–14 दोनों की द्रव्यमान संख्या 14 होती है अतः ये दोनों समभारिक है। इस प्रकार के परमाणुओं में न्यूट्रॉन व प्रोटॉन की संख्या का योग तो समान होता है, परन्तु दोनों में प्रोटॉन की संख्या अलग–अलग होती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. परमाणु के मूलभूत कण इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन व न्यूट्रॉन होते हैं।
2. परमाणु में ऋणावेशित कण इलेक्ट्रॉन हैं।
3. इलेक्ट्रॉन व प्रोटॉन पर आवेश का संख्यात्मक मान समान होता है पर चिह्न विपरीत होता है।
4. न्यूट्रॉन की खोज जेम्स चैडविक ने की ।
5. 1 मोल मे 6.022×10^{23} कण होते है इसे आवोगाद्रो संख्या N_A कहते है।
6. 1 मोल गैस का NTP पर आयतन 22.4 लीटर होता है।
7. किसी कोश में अधिकतम इलेक्ट्रॉन की संख्या ज्ञात करने का सूत्र $2n^2$ है।
8. परमाणु क्रमांक समान तथा द्रव्यमान संख्या भिन्न –भिन्न हो तो उन्हें समस्थानिक (isotope) कहते है।
9. परमाणु क्रमांक भिन्न–भिन्न तथा द्रव्यमान संख्या समान हो उन्हें समभारिक (isobar) कहते है।
10. हाइड्रोजन के तीन समस्थानिक प्रोटियम, ड्यूटीरियम तथा ट्राइटियम हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. परमाणु सरंचना का 'प्लम पुडिंग' प्रतिरूप दिया थाः–
   (अ) नील्स बोर ने (ब) थॉमसन ने
   (स) अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने (द) गोल्ड स्टीन ने
2. न्यूट्रॉन के खोज कर्त्ता थेः–
   (अ) सी.वी.रमन (ब) रदरफोर्ड
   (स) जे.जे.थॉमसन (द) जेम्स चैडविक
3. परमाणु का आकार होता हैः–
   (अ) 10^{-6} cm. (ब) 10^{-15} cm.
   (स) 10^{-2} cm. (द) 10^{-8} cm.
4. हाइड्रोजन के समस्थानिक ड्यूटीरियम में न्यूट्रॉन की संख्या होती हैः–
   (अ) एक (ब) दो
   (स) तीन (द) एक भी नहीं

अतिलघुउत्तरात्मक प्रश्न

5. समस्थानिक किसे कहते है?
6. समभारिक तत्त्व किसे कहते है?
7. परमाणु में उपस्थित मूल कणों के नाम लिखिए।
8. परमाणु भार को परिभाषित कीजिए।
9. परमाणु क्रमांक किसे कहते है।
10. न्यूट्रॉन पर आवेश बताइए।
11. आवोगाद्रो संख्या का मान लिखिए ।
12. प्रोटॉन के खोजकर्ता का नाम लिखिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

13. विसर्जन नलिका क्या है ? सचित्र समझाइए।
14. थॉमसन के परमाणु प्रतिरूप को समझाइए
15. मोल अवधारणा क्या है? समझाइए।
16. डॉल्टन के परमाणु सिद्धान्त के मुख्य बिन्दु लिखिए।
17. कैथोड़ किरणों के गुणधर्म बताइए।
18. परमाणु की सहसंयोजक त्रिज्या को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

19. रदरफोर्ड के स्वर्णपत्र कण प्रकीर्णन के प्रेक्षणों पर आधारित

परमाणु प्रतिरुप की विवेचना कीजिए।

20. नील्स बोर के परमाणु प्रतिरूप की मुख्य अवधारणा लिखिए एवं इसके आधार पर सोडियम व पोटैशियम तत्त्व के परमाणु सरंचना को चित्रित कीजिए।

21. धन किरणें क्या है ? इन्हें कैसे प्राप्त किया जा सकता है? इनके गुणधर्म भी लिखिए।

आंकिक प्रश्न

22. एक तत्त्व के समस्थानिक में न्यूट्रॉन की संख्या 9 हैं तथा द्रव्यमान संख्या का मान 17 हैं। तो तत्त्व का नाम व परमाणु क्रमांक बताइए।

23. NTP पर 22.4 लीटर नाइट्रोजन का भार ग्रामों में बताइए।

24. कार्बन के 1.5 मोल में कार्बन के कितने परमाणु उपस्थित होते हैं ?

25. 9 ग्राम जल में उपस्थित कुल परमाणुओं की संख्या बताइए।

उत्तरमाला

1. (ब), 2. (द), 3. (द), 4. (अ)

◆◆◆

अध्याय 4

रासायनिक बंध व रासायनिक समीकरण
(Chemical Bond and Chemical Equation)

4.1 प्रतीक (Symbol)

तत्त्वों के रासायनिक नाम को न्यूनतम अंग्रेजी अक्षरों में प्रतीक द्वारा व्यक्त करते हैं। प्रारम्भ में तत्त्वों के नाम उनके व्युत्पत्त स्थान तथा कुछ के नाम उनके विशिष्ट रंग से लिये गये थे यथा स्वर्ण (Gold) उसके रंग से तथा कॉपर (Copper) उसके प्राप्ति स्थान साइप्रस (Cyprus) से लिये गये। डॉल्टन प्रथम वैज्ञानिक थे जिन्होने प्रतीक का प्रयोग तत्त्व की एक निश्चित मात्रा अर्थात तत्त्व के एक परमाणु को प्रदर्शित करने के लिये किया।

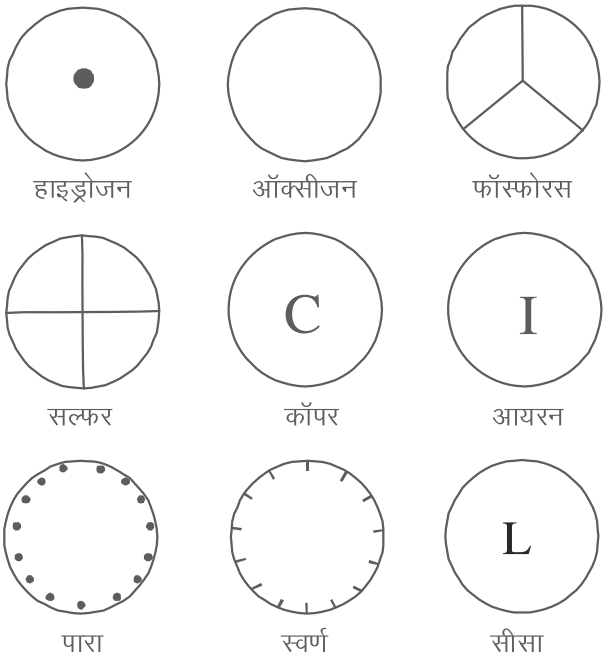

चित्र सं. 4.1 डॉल्टन द्वारा प्रदत्त तत्त्वों के प्रतीक

बर्जीलियिस ने तत्त्वों के प्रतीक के लिये नई प्रणाली विकसित की जिसमें तत्त्वों के नाम के एक अथवा दो अक्षर प्रयुक्त होते थे। IUPAC (International Union of Pure and Applied Chemistry) भी इसी आधार को मानते हुये तत्त्व के प्रतीक की स्वीकृति प्रदान करती है, इसके अनुसार

4.1.1 तत्त्व को उसके अंग्रेजी नाम के प्रथम अक्षर से व्यक्त करते हैं जैसेः

हाइड्रोजन	Hydrogen	H
ऑक्सीजन	Oxygen	O
कार्बन	Carbon	C
नाइट्रोजन	Nitrogen	N

4.1.2 कई तत्त्वों के नाम एक ही अक्षर से शुरू होने पर एक तत्त्व के लिये प्रथम अक्षर तथा अन्य के लिये प्रथम अक्षर के साथ दूसरा अन्य अक्षर भी लेते है जिसका प्रथम अक्षर अंग्रेजी वर्णमाला से केपिटल लेते हैं तथा दूसरा अक्षर छोटे अक्षर (Small Letter) के रुप में लिखा जाता हैं। जैसे –

बोरॉन	Boron	B
बेरिलियम	Beryllium	Be
बेरियम	Barium	Ba
बिस्मिथ	Bismuth	Bi
कार्बन	Carbon	C
कैल्सियम	Calcium	Ca
कोबाल्ट	Cobalt	Co
क्लोरीन	Chlorine	Cl
क्रोमियम	Chromium	Cr

4.1.3 कुछ तत्त्वों के प्रतीक उनके लेटिन नाम से लिये गये है, जैसेः–

सोडियम	Natrium	Na
सिल्वर	Argentum	Ag
सोना	Aurum	Au
कॉपर	Cuprum	Cu
पोटैशियम	Kallium K	
आयरन	Ferrum	Fe

4.1.4 परमाणु क्रमांक 100 से ऊपर वाले तत्त्वों के प्रतीक तीन अक्षरों में उनके संख्यात्मक नाम से लिये है, जैसेः–

संख्या	1	2	3	4	5	6	7	8	9	0
नाम	अन	बाई	ट्राई	क्वाड	पेन्ट	हेक्स	सेप्ट	ऑक्ट	इन	निल

सभी अंको के नामो को जोड़कर अन्त में इयम जोड़ते है। तत्त्व के प्रतीक में सभी अंको के नाम का पहला अक्षर लिखते है।

परमाणु क्रमांक	नाम	प्रतीक
101	अन–निल–अनियम	**Unu**
102	अन–निल–बाइयम	**Unb**
103	अन–निल–ट्राइयम	**Unt**
104	अन–निल–क्वाडियम	**Unq**

4.2 आयन (Ion)

तत्त्वों के परमाणुओं में ऋण–आवेशित कण इलेक्ट्रॉन तथा धन आवेशित कण प्रोटॉन बराबर संख्या में होने के कारण परमाणु विद्युत् उदासीन होता है। परमाणु अपने बाह्यतम् कक्ष में इलेक्ट्रॉन त्यागकर अथवा ग्रहण कर आवेशित हो जाता है, इन आवेशित कणों को आयन कहते हैं। आवेश के आधार पर आयन दो प्रकार के होते हैं –

1. धन आयन 2. ऋण आयन

4.2.1 धनायन (Cation) :– तत्त्व के विलगित गैसीय परमाणु के संयोजकता कोश से इलेक्ट्रॉन निकलने से धनायन बनता है, इस क्रिया में ऊर्जा अवशोषित होती है।

$A_{(g)}$ + ऊर्जा $\longrightarrow$ $A^+ + e^-$

धातु परमाणु धन आयन

विलगित गैसीय परमाणु से इलेक्ट्रॉन निकालने के लिये आवश्यक ऊर्जा आयनन एन्थैल्पी कहलाती है।

धनायन का आकार अपने संगत परमाणु से सदैव छोटा होता है क्योंकि बाह्यतम कोश के इलेक्ट्रॉन हटने से नाभिक और इलेक्ट्रॉनों के मध्य आकर्षण बल बढ़ जाने से आकार घट जाता है। सामान्यतः धातु परमाणु ही धनआयन बनाते है। धातु परमाणु एक संयोजक, द्वि संयोजक, त्रि संयोजक, चतुः संयोजक व पंच संयोजक धनायन बनाते हैं।

4.2.2 ऋणायन (Anion) :– तत्त्व के विलगित गैसीय परमाणु के बाह्यतम कोश में एक या अधिक इलेक्ट्रॉन जुड़ने से बने ऋण आवेशित कण को ऋणायन कहते है। इस क्रिया में प्रथम इलेक्ट्रॉन जुड़ने से ऊर्जा विमुक्त होती है, जिसे **इलेक्ट्रॉन लब्धि एंथैल्पी** कहते है। किसी तत्त्व के ऋणायन का आकार अपने संगत परमाणु से सदैव बड़ा होता है क्योंकि ऋणायन में इलेक्ट्रॉनों के मध्य प्रतिकर्षण बल बढ़ने से इलेक्ट्रॉन अभ्र फैल जाता है। सामान्यतः अधातु परमाणु ऋणायन बनाते हैं।

4.3 मूलक (Radical)

आयनिक पदार्थ, अम्ल व क्षारक जल में विलेय होकर आयनों में अपघटित हो जाते हैं जो अभिक्रिया में एक इकाई की तरह भाग लेते हैं , इन्हें **मूलक** कहते है। मूलक दो प्रकार के होते हैं:–

(1) **सरल मूलक :–** जो एक ही प्रकार के परमाणुओं से बनते हैं।

उदाहरण :– Na^+,Mg^{2+} , Cl^-, Br^- ,

(2). संयुक्त मूलक :– दो या दो से अधिक परमाणुओं का समूह जिस पर कोई निश्चित आवेश होता है, संयुक्त मूलक कहलाते हैं। उदाहरणः– NO_3^-, NH_4^+ आदि।

4.3.1 आवेश के आधार पर भी मूलकों को दो भागों में वर्गीकृत करते हैं:–

(1). क्षारीय मूलकः– ये धातु धनायन या धन आवेशित मूलक होते हैं। धात्विक भस्मों से प्राप्त होने के कारण इन्हें भास्मिक मूलक भी कहते हैं।

उदाहरणः– Na^+,Mg^{2+}, NH_4^+, आदि।

(2). अम्लीय मूलकः– अधातु ऋणायन व ऋण आवेशित मूलकों को अम्लीय मूलक कहते है,

उदाहरणः– Cl^-, Br^-, NO_3^- आदि।

एक परमाण्वीय धन आयन

एक संयोजक	द्वि संयोजक
सोडियम Na^+	बेरियम Ba^{2+}
पोटैशियम K^+	कैल्सियम Ca^{2+}
सिल्वर Ag^+	मैग्नीशियम Mg^{2+}
क्यूप्रस Cu^+	जिंक Zn^{2+}
मर्क्यूरस Hg_2^{2+}	मैगनीज Mn^{2+}
	फैरस Fe^{2+}
	क्यूप्रिक Cu^{2+}
	मर्क्यूरिक Hg^{2+}
	स्टेनस Sn^{2+}
	लैड Pb^{2+}

त्रि संयोजक	बहु संयोजक
ऐलुमिनियम Al^{3+}	स्टैनिक Sn^{4+}
क्रोमियम Cr^{3+}	आर्सेनिक As^{5+}
फैरिक Fe^{3+}	

एक परमाणवीय ऋणायन

एक संयोजक	द्वि संयोजक	त्रिसंयोजक
क्लोराइड Cl^-	ऑक्साइड O^{2-}	नाइट्राइड N^{3-}
ब्रोमाइड Br^-	सल्फाइड S^{2-}	फॉस्फाइड P^{3-}
आयोडाइड I^-		
फ्लुओराइड F^-		

बहु परमाणवीय ऋणायन

एक संयोजक	द्वि संयोजक	त्रिसंयोजक
हाइड्रॉक्साइड OH^-	कार्बोनेट CO_3^{2-}	फास्फेट PO_4^{3-}
साइनाइड CN^-	सल्फेट SO_4^{2-}	

नाइट्रेट NO_3^- सल्फाइट SO_3^{2-}

परमैंगनेट MnO_4^-

एसीटेट CH_3COO^-

* आयन पर उपस्थित आवेश उसकी संयोजकता प्रदर्शित करता है।
* ऋण आवेश के अन्त में सामान्यतः एट (ate) आइट (ite) व आइड (ide) पश्चलग्न लगाते हैं।
* धन आयन के अन्त में इयम (ium) लगाया जाता है।
* परिवर्तनशील संयोजकता होने पर कम आवेश युक्त आयन के लिये '**अस**' व अधिक के लिये '**इक**' प्रयुक्त होता है।

4.4 संयोजकता (Valency)

बोर के परमाणु प्रतिरूप के अनुसार परमाणु के अंतिम कक्ष में अधिकतम आठ (8) इलेक्ट्रॉन होते है। 18 वें वर्ग के उत्कृष्ट तत्त्वों के बाह्यतम् कक्ष पूर्ण रूप से भरे होते हैं और ये रासायनिक रूप से सामान्यतः अक्रिय होते हैं, दूसरे शब्दों में इनकी संयोजन क्षमता शून्य होती है।

सक्रिय तत्त्वों के परमाणु अन्य तत्त्वों के परमाणुओं से मिलकर अणु बनाने की प्रवृत्ति, अपने बाह्यकोश में आठ इलेक्ट्रॉन भरने का प्रयास माना जाता है। सन् 1916 में **कॉसेल–लुईस** ने "**अष्टक नियम**" दिया, जिसके अनुसार "परमाणु के बाह्यतम् कोश में अष्टक पूर्ण करने के लिये एक परमाणु से दूसरे परमाणु में इलेक्ट्रॉन का स्थानान्तरण अथवा सहभाजन होता हैं तथा दो परमाणु आपस में संयोजित हो जाते हैं।

प्रत्येक तत्त्व के परमाणु की एक निश्चित संयोजन क्षमता होती है, जिसे **संयोजकता कहते** हैं, परमाणु अपने बाह्यतम् कोश में अष्टक पूरा करने के लिये जितने इलेक्ट्रॉन का साझा या स्थानान्तरण कर लेता है, वही तत्व की संयोजन–क्षमता या संयोजकता होती है। उदाहरण के लिये सोडियम, मैग्नीशियम व ऐलुमिनियम प्रत्येक के परमाणुओं के बाह्यतम् कक्ष में क्रमशः 1,2 व 3 इलेक्ट्रॉन होते हैं, जिन्हें त्यागकर ये अंतिम कक्ष में अष्टक प्राप्त कर लेते है, इसलिये इनकी संयोजकता क्रमशः 1,2 व 3 होती हैं।

ऑक्सीजन व फ्लुओरिन के बाह्यतम् कक्षों में इलेक्ट्रॉन की संख्या क्रमशः 6 व 7 होती है, बाह्यतम् कक्ष में अष्टक पूर्ण करने के लिये क्रमशः 2 व 1 इलेक्ट्रॉन ग्रहण करना अधिक आसान है, अतः इनकी संयोजकता का परिकलन आठ में से क्रमशः 6 व 7 घटाकर किया जा सकता है, जिससे ऑक्सीजन की संयोजकता 2 व फ्लुओरिन की संयोजकता 1 प्राप्त होती हैं। कुछ अपवाद में अष्टक का पालन नहीं होता है ,जिसका अध्ययन उच्च कक्षाओं में करेंगे।

4.4.1. परिवर्तनशील संयोजकता :– कुछ तत्त्वों की संयोजकता निश्चित न होकर एक से अधिक होती हैं इसे **परिवर्तनशील संयोजकता** कहते हैं। कुछ तत्त्वों की परिवर्तनशील संयोजकता इस प्रकार हैः–

तत्त्व	प्रतीक	संयोजकता
कॉपर	Cu	1 व 2
पारा	Hg	1 व 2
टिन	Sn	2 व 4
लोहा	Fe	2 व 3
फॉस्फोरस	P	2 व 5
लैड	Pb	2 व 4

4.5 अणुसूत्र (Molecular Formula)

अणु दो या दो से अधिक परमाणुओं का समूह हैं जो रासायनिक बंध द्वारा जुड़े है। अणु किसी तत्त्व अथवा यौगिक का वह सूक्ष्मतम् कण है जो उनके सभी गुणधर्मों को प्रदर्शित करता है, तथा जिसका स्वतन्त्र अस्तित्त्व संभव हैं।

तत्त्वों के प्रतीकों का वह संयोजन जो किसी तत्त्व या यौगिक के एक अणु को प्रदर्शित करता है, **अणुसूत्र** कहलाता है।

अणुसूत्र से हम निम्नलिखित जानकारी प्राप्त करते हैंः–

(1) पदार्थ के रासायनिक नाम का पता लगता है, जैसे KCl का पोटैशियम क्लोराइड है।

(2) यौगिक के अवयवी तत्त्वों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है, जैसे H_2O में दो तत्त्व, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन उपस्थित हैं।

(3) अणु में कुल परमाणुओं की संख्या की जानकारी मिलती है, जैसे H_2SO_4 में दो परमाणु हाइड्रोजन, एक सल्फर व चार ऑक्सीजन परमाणु है।

(4) परमाणु भार ज्ञात होने पर अणुसूत्र से अणुभार ज्ञात किया जा सकता है।

सरल यौगिकों के अणुसूत्रः सामान्यतः सरलतम द्विअंगी अकार्बनिक यौगिकों के अणुसूत्र उनके संगठक तत्त्व के प्रतीक या मूलक एवं उनकी संयोजकताओ से ज्ञात किये जाते है।

जब एक तत्त्व किसी दूसरे तत्त्व से संयोग करता है तो वे अपनी संयोजकताओं के व्युत्क्रम अनुपात में संयोग करते है अतः अणुसूत्र लिखते समय पहले धन मूलक बांयी ओर तथा ऋण मूलक दांयी ओर लिखकर उनकी संयोजकताएं उनके ऊपर लिखते हैं तत्पश्चात् उनकी संयोजकताओं को व्युत्क्रम रूप में लिखकर–अणुसूत्र प्राप्त करतें है। आवश्यक होने पर संयोजकताएं

सरल अनुपात में लिखी जाती है।

बहु परमाण्विक आयनों के सूत्र को कोष्ठक में लिखकर बाहर नीचे उनकी संख्या लिखते हैं।

जैसे – $Al_2(SO)_3$

$(NH_4)_2 CO_3$

1.हाइड्रोजन फ्लुओराइड का सूत्र निम्न प्रकार से प्राप्त करते

है :–

संयोजकता 1 1

प्रतीक H F

अतः अणुसूत्र HF होगा।

2. हाइड्रोजन सल्फाइड

संयोजकता 1 2

प्रतीक H S

अतः अणुसूत्र H_2S होगा।

3. केल्शियम क्लोराइड

संयोजकता 2 1

प्रतीक Ca Cl

अतः अणुसूत्र $CaCl_2$ होगा।

4. कैल्सियम ऑक्साइड

संयोजकता 2 2

प्रतीक Ca O

अतः अणुसूत्र Ca_2O_2 के स्थान पर CaO होगा।

संयोजकताएं समान होने पर सरल अनुपात में सरलीकृत सूत्र लिखते है।

4.5.2 कुछ बहुपरमाणुक आयनों वाले यौगिकः

1. बेरियम सल्फेट

संयोजकता 2 2

प्रतीक Ba SO_4

अतः अणुसूत्र $BaSO_4$ होगा।

2. कैल्सियम हाइड्रॉक्साइड

संयोजकता 2 1

प्रतीक Ca OH

अतः अणुसूत्र $Ca(OH)_2$ होगा।

3. एलुमिनियम सल्फेट

संयोजकता 3 2

प्रतीक Al SO_4

अतः अणुसूत्र $Al_2 (SO_4)_3$ होगा।

4. अमोनियम कार्बोनेट

संयोजकता 1 2

प्रतीक NH_4 CO_3

अतः अणुसूत्र $(NH_4)_2 CO_3$ होगा।

4.6. रासायनिक बंध (Chemical Bond)

किसी अणु के अवयवी कणों (आयन, परमाणु) के मध्य उपस्थित आकर्षण बल जो उन्हें एक साथ बाँधे रखता है, **रासायनिक बंध** कहलाता हैं।

परमाणु अष्टक व्यवस्था पूर्ण करने के लिये इलेक्ट्रॉन का साझा अथवा स्थानान्तरण करते हैं, ऐसा करके परमाणु एक–दूसरे से संयोग कर अणु का निर्माण करते हैं। बंध बनने पर अणु की कुल ऊर्जा पृथक–पृथक परमाणुओं की कुल ऊर्जा से कम होती है। ऊर्जा में यह कमी अणु को परमाणु से अधिक स्थायी बनाती है अर्थात ऊर्जा जितनी कम होगी, अणु उतना ही ज्यादा स्थायी होगा। रासायनिक बंध कई प्रकार के होते है यथाः आयनिक बंध, सहसंयोजक बंध, उपसहसंयोजक बंध, धात्विक बंध आदि।

4.6.1 आयनिक बंध :– धन विद्युती तत्त्व सोडियम का इलेक्ट्रॉनिक विन्यास 2,8,1 होता है, इसके बाह्यतम कोश में एक इलेक्ट्रॉन होता है, जिसे ऊर्जा प्रदान कर आसानी से हटाया जा सकता है, यह ऊर्जा **आयनन एन्थैल्पी** कहलाती है।

$Na_{(g)}$ + आयनन एन्थैल्पी $\longrightarrow$ $Na^+ + e^-$

(2,8,1) (2,8)

इसके विपरीत क्लोरीन (2,8,7) के बाह्यकोश में एक इलेक्ट्रॉन जोड़कर स्थायी विन्यास (2,8,8) प्राप्त कर सकते है, ऐसा करने पर निर्गमित ऊर्जा को इलेक्ट्रॉन लब्धि एंथैल्पी कहते

हैं।

$Cl + e^- \longrightarrow Cl^-$ + इलेक्ट्रॉन लब्धि एंथैल्पी

(2,8,7) (2,8,8)

जब सोडियम परमाणु क्लोरीन के साथ अभिक्रिया करता है तो सोडियम परमाणु एक इलेक्ट्रॉन त्यागता हैं तथा क्लोरीन परमाणु एक इलेक्ट्रॉन ग्रहण कर लेता हैं। इलेक्ट्रॉन के स्थानान्तरण के फलस्वरूप दो विपरीत आवेश युक्त आयन प्राप्त होते हैं जिनके मध्य परस्पर स्थिर विद्युत् आकर्षण बल लगता हैं जो दोनों को एक साथ बनाए रखता हैं। फलतः दोनों आयनों के मध्य एक रासायनिक बंध निर्मित हो जाता है। विपरीत आवेश युक्त आयनों के मध्य उपस्थित स्थिर विद्युत् आकर्षण बल को **आयनिक बंध** कहते है। इसे विद्युत् संयोजक बंध भी कहा जाता है।

आयनिक बंध युक्त यौगिक,आयनिक यौगिक कहलाते है।

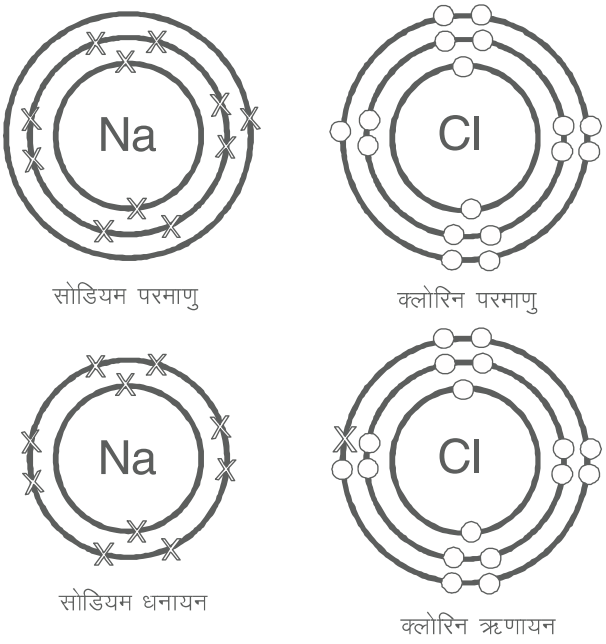

चित्र 4.1 एक सोडियम परमाणु तथा क्लोरीन परमाणु के मध्य आयनिक बन्ध द्वारा NaCl अणु का बनना।

आयनिक यौगिकों के क्रिस्टल में आयन इस प्रकार व्यवस्थित रहते हैं कि प्रत्येक धनायन कुछ निश्चित ऋणायनों द्वारा घिरा होता है तथा ऋणायन,धनायनों द्वारा घिरा होता है, फलस्वरूप संकुलित आकृति बनती है जैसे सोडियम क्लोराइड के क्रिस्टल में प्रत्येक सोडियम धनायन (Na^+) छः क्लोराइड आयनों Cl^- तथा एक क्लोराइड आयन छः सोडियम आयनों से घिरा होता है। इन आयनों को आपस में बांधने वाला आकर्षण बल पूर्ण व शुद्ध रूप से स्थिर विद्युत् आकर्षण बल ही होता हैं । समान संख्या में धन व ऋण आयन होने से क्रिस्टल विद्युत् उदासीन होता है।

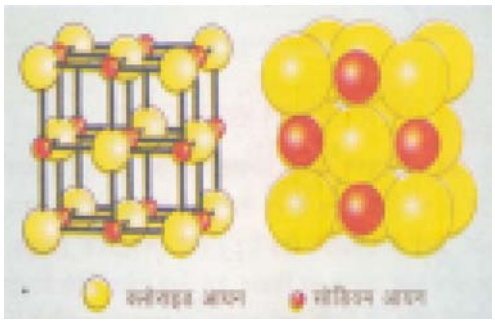

चित्र 4.2 सोडियम क्लोराइड में आयनों की व्यवस्था

आयनिक यौगिकों के गुण :–

1. प्रकृति – आयनिक यौगिक सामान्यतः क्रिस्टलीय ठोस, कठोर व भंगुर होते है।

2. गलनांक व क्वथनांक :–आयनिक क्रिस्टल में आवेशित आयनों के मध्य प्रबल आकर्षण बल होने के कारण इन्हें तोड़ने के लिये अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है, अतः इनके गलनांक व क्वथनांक सामान्यतः उच्च होते हैं।

3. विलेयता:– आयनिक यौगिक ध्रुवीय विलायकों (जैसे जल) में विलेय होते है तथा अध्रुवीय विलायकों (जैसे बैंजीन, ईथर)में अविलेय रहते हैं।

4. चालकता – आयनिक यौगिक ऊष्मा के सुचालक होते है तथा गलित अवस्था में विद्युत चालकता दर्शाते हैं।

5. आयनिक यौगिक आयनिक अभिक्रियाएं प्रदर्शित करते हैं जो तीव्र गति से होती हैं।

4.6.2 सहसंयोजक बंधः आयनिक यौगकों के अतिरिक्त ऐसे यौगिक भी होते हैं, जिनके अणुओं में आयन नहीं होते हैं जैसे– जल।

इसी प्रकार अधातु तत्त्वों के अणुओं में भी आयनिक बंध नहीं होता है। जब दो परमाणु ऐसे बंध से जुड़ते हैं जिसकी उत्पत्ति आबंधित परमाणुओं के मध्य एक या एक से अधिक संयोजकता इलेक्ट्रॉन की साझेदारी द्वारा सम्पन्न होती हैं तो उसे सहसंयोजकबंध कहते हैं। एक–एक इलेक्ट्रॉन की साझेदारी से एकल बंध, दो–दो इलेक्ट्रॉन की साझेदारी से द्वि बंध तथा तीन–तीन की साझेदारी से त्रिबंध बनता है। जब दो या दो से अधिक परमाणु संयुक्त होते हैं तो अष्टक प्राप्त करने के लिये बाह्यकक्ष के इलेक्ट्रॉन साझा कर इलेक्ट्रॉन युग्म बनाते है इस प्रकार बने बंध को **सहसंयोजक बंध** कहते है। वे यौगिक जिनमें सहसंयोजक बंध उपस्थित होते है, **सहसंयोजक यौगिक** कहलाते है।

(i) एकल बंध (Singal Bond)

क्लोरीन का इलेक्ट्रॉनिक विन्यास 2,8,7 होता है, क्लोरीन परमाणु की सुगमता से इलेक्ट्रॉन ग्रहण करने की प्रवृति होती है। क्लोरीन के परमाणु अपने संयोजकता कोश के एक–एक इलेक्ट्रॉन के परस्पर साझे से अपने–अपने अष्टक को पूर्ण करते है, साझे द्वारा उत्पन्न इलेक्ट्रॉन युग्म दोनों क्लोरीन परमाणुओं के नाभिकों के ठीक मध्य में स्थित होता है तथा इस पर दोनों परमाणुओं के नाभिकों का संयुक्त प्रभाव होता है।

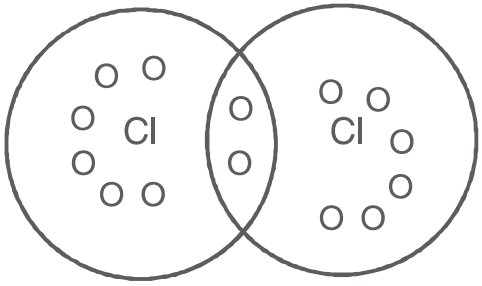

Cl–Cl

(ii) द्वि बंध (Double Bond)

जब दो परमाणुओं के मध्य दो इलेक्ट्रॉनो का साझा होता हैं। तो द्विबंध होता हैं जैसे आक्सीजन में इस प्रकार से बंध बनता है।

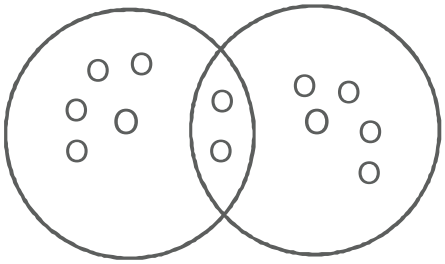

O = O

(iii) त्रिबंध (Tripal Bond) यदि तीन – तीन इलेक्ट्रॉन का साझा दो परमाणुओं के मध्य होता हैं तो त्रिबंध बनता हैं जैसे नाइट्रोजन अणु में इस प्रकार बंध बनता हैं

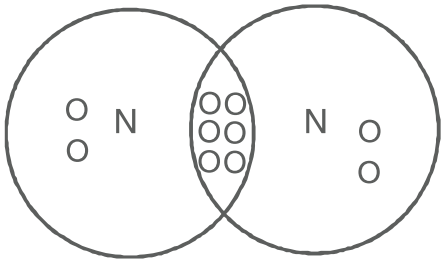

N≡N

सहसंयोजक यौगिकों के गुण :–

1. भौतिक अवस्था : ये यौगिक गैस, द्रव व ठोस तीनों अवस्थाओं में पाए जाते हैं । सामान्यतः मृदु होते हैं।

अपवाद : हीरा व रेत

2. गलनांक व क्वथनांक : सामान्यतः इनके गलनांक व क्वथनांक कम होते हैं ।

3. विलेयता :– अध्रुवीय व कार्बनिक विलायकों मे विलेय होते हैं।

4. चालकता–विद्युत व ताप के कुचालक होते हैं।

(अपवाद– ग्रेफाइट)

5. संहसंयोजक यौगिक सामान्यतः आणविक अभिक्रियाएं दर्शाते हैं जो मंद गति से होती हैं।

4.6.3 **उपसहसंयोजक बंध :–** वे सहसंयोजक बंध जिनके ' बंध इलेक्ट्रॉन–युग्म ' के दोनों इलेक्ट्रॉन एक ही परमाणु द्वारा दिये जाते है, परन्तु साझेदारी दोनों परमाणुओं के मध्य होती है, उपसहसंयोजक बंध कहलाता है, जैसे : ओजोन अणु का निर्माण।

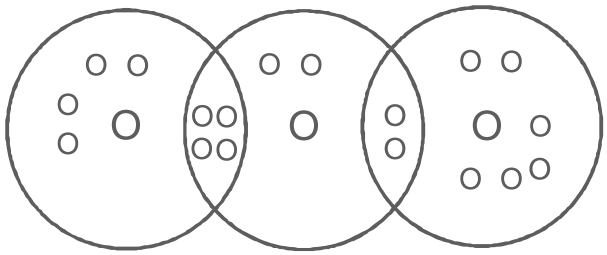

O = O ⟶ O

नाइट्रिक अम्ल का अणु

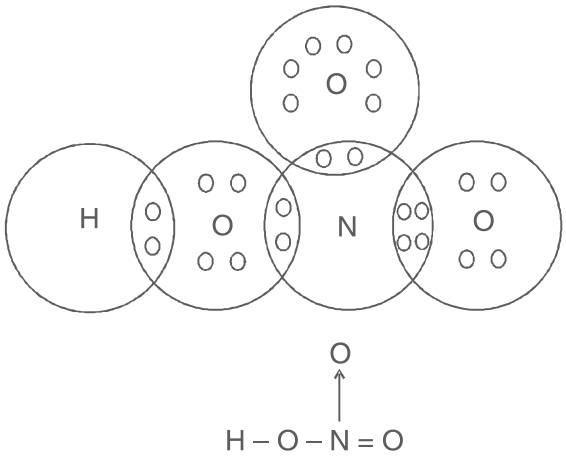

उपसहसंयोजक बंध बनने के लिये आवश्यक शर्तें :–

1. एक परमाणु के पास अष्टक पूर्ण होने के बाद कम से कम एक एकाकी इलेक्ट्रॉन युग्म होना चाहिये।

2. दूसरे परमाणु में कम से कम एक इलेक्ट्रॉन युग्म की कमी होनी चाहिये।

4.7 रासायनिक समीकरण (Chemical Equation)

किसी अभिक्रिया को अणुसूत्रों व प्रतीकों के रूप में प्रदर्शित करना रासायनिक समीकरण कहलाता है। जैसेः कैल्सियम ऑक्साइड (चूना) से जल की क्रिया करवाने पर कैल्सियम हाइड्रॉक्साइड बनता है, इस क्रिया को सूत्रों द्वारा इस प्रकार प्रकट करते है :–

$$CaO + H_2O \longrightarrow Ca(OH)_2$$

क्रियाकारक क्रियाफल (उत्पाद)

क्रिया में भाग लेने वाला पदार्थ अभिकारक अथवा क्रियाकारक तथा अभिक्रिया के फलस्वरूप बने पदार्थ को उत्पाद अथवा क्रियाफल कहते हैं।

4.7.1 रासायनिक समीकरण को लिखना :–

1. रासायनिक समीकरण में बांयी तरफ क्रियाकारक तथा दांयी तरफ उत्पाद लिखे जाते है ,तथा मध्य में तीर का निशान उत्पाद की तरफ इंगित करते हुये लगाया जाता है।

2. अभिक्रिया मे एक से अधिक अभिकारक अथवा क्रियाफल होने पर उनके मध्य धन (+) का चिह्न लगाया जाता है, जैसे उपर्युक्त अभिक्रिया में $CaO+H_20$ लिखा गया है।

3. अभिकारक व क्रियाफल में उपस्थित भिन्न–भिन्न तत्त्वों के परमाणुओं की संख्या, अणुओं की संख्या को घटा–बढ़ा कर बराबर की जाती है, इस क्रिया को समीकरण का संतुलन करना कहते हैं।

4.7.2 रासायनिक समीकरण की विशेषताएं :– किसी अभिक्रिया के रासायनिक समीकरण से निम्नलिखित जानकारी मिलती है :–

1. अभिक्रिया के क्रियाकारकों व क्रियाफलों के बारे में पता चलता हैं।

2. रासायनिक समीकरण संतुलित होने पर क्रिया के अभिकारक व उत्पाद के अणुओं की संख्या की जानकारी प्राप्त होती हैं।

3. समीकरण पदार्थों की समतुल्य मात्राएं दर्शाता है।

4. यदि क्रियाकारक व उत्पाद गैसीय अवस्था में हों तो उनके आयतन का पता चलता हैं।

4.7.3 रासायनिक समीकरण की सीमाएं :–

1. अभिकारक व उत्पाद की भौतिक अवस्था के बारे में समीकरण से कोई जानकारी नहीं मिलती है।

2. क्रियाकारक व उत्पाद की सान्द्रता के बारे में जानकारी नहीं मिलती है।

3. अभिक्रिया के उत्क्रमणीय या अनुत्क्रमणीय होने का ज्ञान नहीं होता है।

4. अभिक्रिया के ऊष्माक्षेपी अथवा ऊष्माशोषी होने का पता नहीं लगता है।

5. अभिक्रिया किस ताप और दाब पर होगी ,इस बात की जानकारी नहीं मिलती है।

6. अभिक्रिया की पूर्णता की जानकारी नहीं मिलती है।

इन कमियों को इस प्रकार से दूर किया जाता हैः–

1. भौतिक अवस्था प्रकट करने के लिये कोष्ठक में ठोस के लिये (s) द्रव के लिये (l) तथा गैस के लिये (g) लिखते हैं यथाः–

$$CaCO_{3\,(S)} \longrightarrow CaO_{(s)} + CO_{2\,(g)}$$

2. उत्क्रमणीयता के लिये $\rightleftharpoons$ प्रयुक्त करते है।

3. ऊष्माशोषी अभिक्रिया के लिये ऋण (–) चिन्ह लगाकर और ऊष्माक्षेपी अभिक्रिया के लिये धन (+) चिन्ह लगाकर ऊष्मा की मात्रा लिखते है यथाः–

$$SO_{2(g)} + O_{2(g)} \longrightarrow SO_{3(g)} + 694.6kJ$$

$$H_{2(g)} + I_{2(g)} \longrightarrow 2HI\,(g) - 53.6\ kJ$$

4. ताप व दाब प्रकट करने के लिये तीर के निशान पर उनकी मात्रा लिखी जाती है यथाः–

$$N_2 + 3H_2 \underset{200\ atm}{\overset{723K}{\rightleftharpoons}} 2NH_3$$

5. उत्प्रेरक एवं अन्य जानकारी तीर के निशान के ऊपर नीचे दर्शाते हैं ।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. बर्जीलियिस ने तत्त्वों के प्रतीक के लिए नई प्रणाली विकसित की ।
2. सोडियम का लेटिन नाम नेट्रीयम हैं।
3. यौगिक के एक अणु में उपस्थित भिन्न–भिन्न तत्त्वों के परमाणुओं की वास्तविक संख्या अणुसूत्र से ज्ञात होती है।
4. दो आयनों के मध्य लगने वाला आकर्षण बल आयनिक बन्ध कहलाता है।
5. आयनिक यौगिक कठोर एवं भंगुर होते हैं।
6. दो परमाणुओं द्वारा समान संख्या में इलेक्ट्रॉनो के साझा करने से सहसंयोजक बन्ध बनता है।
7. उपसंहसंयोजक बन्ध को तीर के निशान से दर्शाते हैं।
8. सहसंयोजक बन्ध को डेश (–) से दर्शाते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सोडियम का प्रतीक है:–
   (अ) S (ब) Si
   (स) Na (द) Ni
2. कार्बोनेट मूलक का सूत्र है:–
   (अ) CO_2 (ब) CO_3^{2-}
   (स) CO_3^{1-} (द) CO
3. सोडियम क्लोराइड में उपस्थित बंध का नाम है–
   (अ) आयनिक बंध (ब) सहसंयोजक बंध
   (स) धात्विक बंध (द) हाइड्रोजन बंध
4. निम्नलिखित में से परिवर्तनशील संयोजकता प्रदर्शित करने वाला तत्त्व है:–
   (अ) Na (ब) Ca
   (स) K (द) Cu
5. कैल्सियम ऑक्साइड का सूत्र है:–
   (अ) Ca_2O_2 (ब) CaO_2
   (स) CaO (द) Ca_2O
6. तत्त्वों की आधुनिक प्रतीक प्रणाली के जन्मदाता थे:–
   (अ) बर्जीलियस (ब) जॉन डाल्टन
   (स) रदरफोर्ड (द) नील्स बोर
7. निम्नलिखित में से सहसंयोजक बंध युक्त अणु है:–
   (अ) H_2O (ब) NaCl
   (स) CaO (द) $CaCO_3$
8. Fe निम्नलिखित में से किसका प्रतीक है –
   (अ) लोहे का (ब) ताँबे का
   (स) सोने का (द) चाँदी का

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

9. मूलक किसे कहते है?
10. आयनिक बंध को परिभाषित कीजिए ?
11. पोटैशियम का प्रतीक व लेटिन नाम बताइए ?
12. अणुसूत्र की परिभाषा लिखिए?
13. कैल्सियम कार्बोनेट का सूत्र लिखिए?
14. एक त्रिसंयोजी अम्लीय मूलक का सूत्र लिखिए?
15. ऋणायन किसे कहते है?
16. संयोजकता किसे कहते है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

17. धनायन का आकार अपने संगत परमाणु से छोटा होता है? समझाइए।
18. परिवर्तनशील संयोजकता को उदाहरण सहित समझाइए।
19. उपसहसंयोजक बंध किसे कहते है ? एक उदाहरण दीजिए?
20. आयनन ऊर्जा को समझाइए।
21. द्विबन्ध व त्रिबन्ध को उदाहरण सहित समझाइए।

निबन्धात्मक प्रश्न

22. सहसंयोजक व आयनिक यौगिकों में अंतर स्पष्ट कीजिए।
23. निम्नलिखित के अणुसूत्र लिखिए–
   (I) सोडियम कार्बोनेट
   (II) जिंक सल्फाइड
   (III) ऐलुमिनियम ऑक्साइड
   (IV) फैरिक सल्फेट
   (V) बेरियम क्लोराइड
   (VI) मैग्नीशियम कार्बोनेट
24. समीकरण संतुलित कीजिए:–
   (i) $KClO_3 \longrightarrow KCl+0_2$
   (ii) $BaCl_2+AgNO_3 \longrightarrow AgCl+Ba(NO_3)_2$
   (iii) $Mg+HCl \longrightarrow MgCl_2+H_2$
   (iv) $NaOH+Cl_2 \longrightarrow NaCl+NaOCl+H_2O$

उत्तरमाला

(1) स, (2) ब, (3) अ, (4) द, (5) स, (6) अ,
(7) अ, (8) अ

◆◆◆

अध्याय – 5
जीवन की अवधारणा
(Concept of Life)

5.1 सजीव व निर्जीव में प्रमुख अन्तर
(Major Differences between Living and Non-Living)

हम अपने दैनिक जीवन में सजीव और निर्जीव दोनों को देखते हैं। कभी–कभी इन दोनों के बीच में अन्तर करना आसान होता है और कभी यह कठिन होता है। हमारे घर व आसपास के वातावरण के अन्दर हमारे द्वारा चीजों को सजीव व निर्जीव के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है जैसे फर्नीचर, रेडियो, टेलीविजन व इमारतें आदि को निर्जीव श्रेणी में तथा पौधों व जीव जन्तुओं को सजीवों की श्रेणी में रखा जाता है। कुछ लक्षणों के आधार पर हम सजीवों व निर्जीवों में अन्तर स्थापित कर सकते हैं:– (चित्र 5.1)

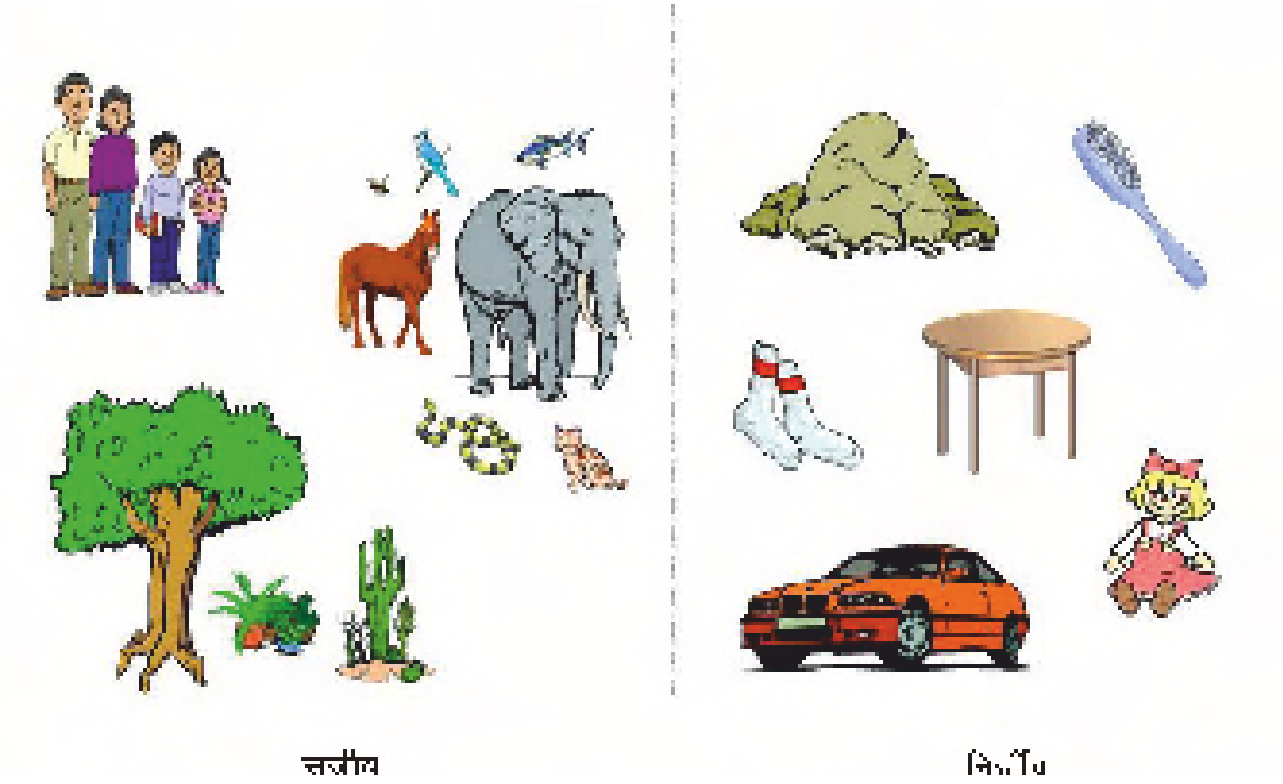

चित्र 5.1 : सजीव व निर्जीव में अन्तर

5.2 जीवन की उत्पत्ति संबंधी विभिन्न परिकल्पनाएं
(Various Hypothesis Related to Origen of Life)

जीव–विकास के सिद्धांत के अनुसार अमीबा सदृश किसी सरलतम एककोशिकीय जीव से ही विभिन्न प्रकार के एककोशिकीय तथा बहुकोशिकीय जीव–जन्तुओं का विकास हुआ है तथा इस विकास में लाखों–करोड़ों वर्षों का समय लगा।

जीवन की उत्पत्ति के संदर्भ में कई वैज्ञानिकों ने अपने–अपने मत एवं परिकल्पनाएं दी जो इस प्रकार हैं:–

(1) स्वतः जनन (Spontaneous Generation)

प्राचीन समय में धारणा थी कि सूर्य की किरणों द्वारा नदी के कीचड़ के गरम होने से मेंढक, सांप, चूहे और घड़ियाल आदि स्वतः ही उत्पन्न हो जाते हैं। **वॉन हेल्मौन्ट** का कहना था कि

सारणी : सजीव व निर्जीव के बीच अन्तर

लक्षण	सजीव	निर्जीव
(1) प्रजनन	इनमें प्रजनन पाया जाता है। सजीवों का यह बहुत विशिष्ट लक्षण है, वे अपने ही समान जीव उत्पन्न करने में सक्षम होते हैं। जिस कारण जीवों की उत्तरजीविता बनी रहती है।	निर्जीव प्रजनन प्रदर्शित करने में सक्षम नहीं होता है।
(2) वृद्धि एवं विकास	सजीव विकास प्रदर्शित करते हैं। वृद्धि सजीवों का विशिष्ट लक्षण है, जन्तुओं में निश्चित आयु तक तथा पादपों में जीवन पर्यंत वृद्धि पायी जाती है।	कोई विकास नहीं होता है। निर्जीव वृद्धि नही दर्शाते हैं।
(3) कोशिका संरचना संगठन	इनमें कोशिकाएं पायी जाती हैं, ऊतकों व अंगों का एक निश्चित संगठन उपस्थित होता है।	कोई कोशिकीय संगठन नहीं पाया जाता है।
(4) श्वसन	श्वसन पाया जाता है। सजीवों में कार्बनिक पदार्थों के ऑक्सीकरण द्वारा ऊर्जा प्राप्त की जाती है, इस क्रिया को श्वसन कहा जाता है।	श्वसन नहीं पाया जाता है। श्वसन की आवश्यकता नहीं होती है।
(5) पोषण	पोषण पाया जाता है क्योंकि सजीवों में ऊर्जा प्राप्ति के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। पादप प्रकाश संश्लेषण के द्वारा भोजन स्वयं निर्मित करते हैं तथा जन्तु अपने भोजन के लिए पादप व जन्तु दोनों पर निर्भर रहता है।	निर्जीव में पोषण नहीं पाया जाता है, निर्जीवों को ऊर्जा प्राप्ति की आवश्यकता नहीं होती है।
(6) उपापचय	इनमें उपापचय पाया जाता है। अपचय व उपचय क्रियाएं पाई जाती है।	उपापचय प्रक्रिया नहीं होती है।
(7) उत्सर्जन	उत्सर्जन पाया जाता है। शरीर के अवांछित पदार्थों को शरीर से बाहर त्याग करना सजीवों का प्रमुख लक्षण है।	उत्सर्जन नहीं पाया जाता है।
(8) प्रतिक्रिया	प्रतिक्रिया पाई जाती है, सजीव उत्तेजनाओं के प्रति अनुक्रिया प्रदर्शित करते हैं जैसे किसी गरम पदार्थ पर हाथ पड़ जाने पर हम तुरन्त हाथ हटा लेते हैं।	निर्जीवों में उत्तेजनाओं के प्रति अनुक्रिया नहीं पायी जाती है।
(9) गमन	सजीवों द्वारा अपने किसी शरीर के किसी भाग को गति कराने का कार्य या स्थान परिवर्तन करना या चलने–फिरने को गमन कहते हैं। सजीवों में गमनांग पाये जाते हैं।	इनमें स्वयं की कोई गति या गमन नहीं होता है।

पसीने से भीगी कमीज़ और गेहूं के भूसे को एक साथ रखने से 21 दिन में चूहे स्वतः ही उत्पन्न हो जाते हैं।

(2) कॉसमोजोइक सिद्धांत (Cosmozoic Theory)

यह सिद्धांत **लीबिग**, **केल्विन** तथा **आरिनियस** ने दिया तथा **फ्रांसीसी क्रिक** एवं **लेसली ऑरगेल** ने इसका समर्थन किया। इस सिद्धांतानुसार माना गया कि पृथ्वी पर प्रथम जीव ब्रह्माण्ड के किसी ग्रह से सूक्ष्म बीजाणुओं की बौछार के रूप में आया और पृथ्वी का अनुकूलित वातावरण मिलने पर बढ़ता चला

गया, इसी से ही जीवन की शुरूआत हुई परन्तु कई वैज्ञानिकों ने इसे नहीं माना क्योंकि अंतरिक्ष से जीवित अवस्था में कोई जीव पृथ्वी पर नहीं पहुंच सकता।

से बांध दिया। कुछ दिनों बाद रेडी ने देखा कि पहले जार में मक्खियों व अन्य कीटों के लारवी उत्पन्न हो गए, दूसरे जार पर मक्खियां नहीं थी और तीसरे जार पर मक्खियों ने मलमल के

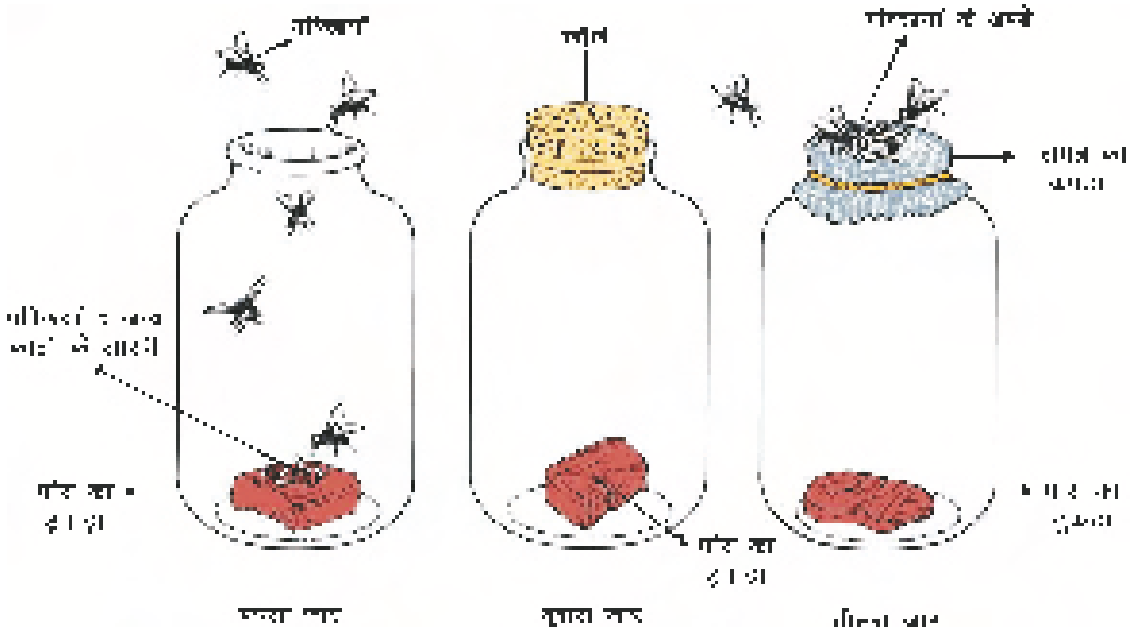

चित्र 5.2 : फ्रान्सिसको रेडी का प्रयोग

(3) जैव–जनन वाद (Theory of Biogenesis)

जीव–जनन वाद इटली के **फ्रेन्सिसको रेडी** ने सन् 1668 में दिया तथा स्वतः जनन वाद को गलत सिद्ध किया। इसके अनुसार जीव की उत्पत्ति जीव से ही संभव है। उन्होंने सांप, मछली आदि के मांस को पानी में डालकर उबाला, ताकि उसमें उपस्थित सभी जीव मर जायें। फिर इस मांस को उन्होंने अलग–अलग जार में रखा। पहले जार को खुला छोड़ा, दूसरे जार का मुंह कॉर्क से तथा तीसरे जार का मुंह मलमल के कपड़े टुकड़े पर अण्डे दे दिये। उनमें से केवल कुछ अण्डे ही मलमल के टुकड़े से छन कर जार के अन्दर पहुंचे तथा लारवी में विकसित हो गए। इससे उन्होंने निष्कर्ष निकाला जीवों की उत्पत्ति जीवों द्वारा ही होती है (चित्र 5.2)।

लुई पाश्चर ने भी स्वतः जनन को अपने प्रयोग द्वारा नकार दिया (चित्र 5.3)। उन्होंने 'S' आकार की नली वाला फ्लास्क लिया जिसमें शर्करा का घोल व यीस्ट के पाउडर को डालकर

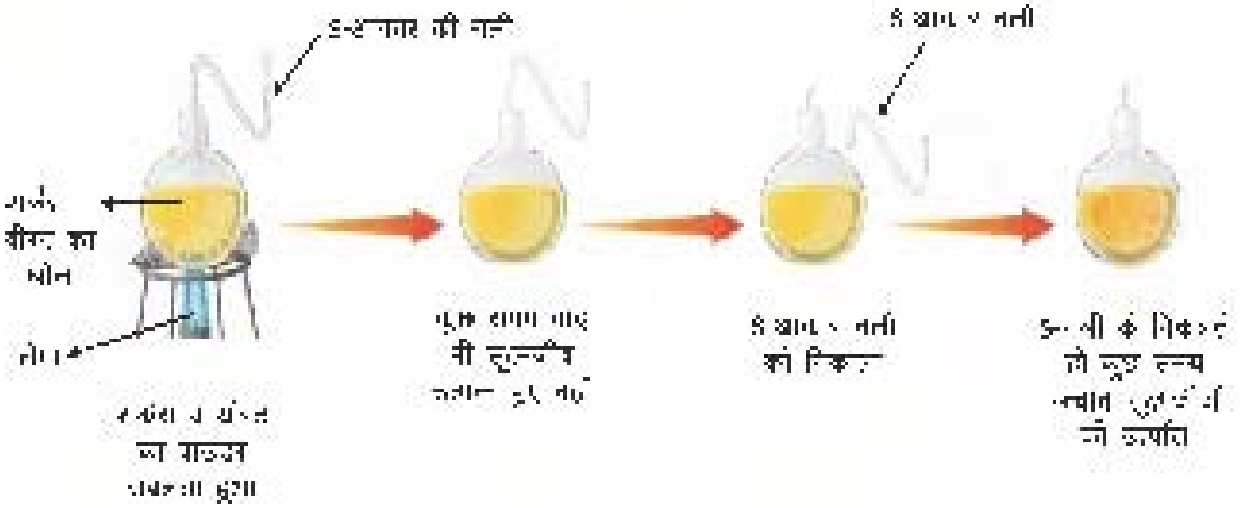

चित्र 5.3 : लुई पाश्चर द्वारा प्रयोग जिसने स्वतः जनन वाद को गलत सिद्ध किया।

उसे उबाला तथा फिर उसे ठण्डा होने रख दिया। उसमें काफी समय बाद में ना तो सूक्ष्मजीव उत्पन्न हुए और ना ही घोल खराब हुआ तथा प्लास्क की 'S' नली को हटाने पर कुछ ही दिनों में सूक्ष्मजीव उत्पन्न हो गये तथा घोल में से गंध भी आने लग गई।

(4) ऑपेरिन का सिद्धांत (Operin Theory)

रूस के प्रसिद्ध जीव–रसायनज्ञ **ए. आई. ऑपेरिन** ने अपनी खोजों के आधार पर 1924 में जीवन की उत्पत्ति के संदर्भ में परिकल्पना को प्रतिपादित किया। इस परिकल्पनानुसार आदिकालीन पृथ्वी पर केवल कार्बनिक यौगिक उपस्थित थे जो समुद्रों के जल में घुलनशील अवस्था में थे। इन्हीं सरल कार्बनिक यौगिकों से धीरे–धीरे विशिष्ट या जटिल यौगिकों का निर्माण हुआ अंत में इन्हीं जटिल यौगिकों के समुच्चय से ही ऐसी रचना का विकास हुआ जिसमें जीवन के लक्षण विद्यमान थे। जीव की उत्पत्ति की पूरी प्रक्रिया को आपेरिन द्वारा 7 चरणों में विभाजित किया।

(i) प्रथम चरण – वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी की आयु 5–6 अरब साल है। इसकी उत्पत्ति गरम कॉस्मिक धूल व गैसों के पिण्ड से हुई जो उस समय ब्रह्माण्ड में तीव्र गति से चक्कर लगा रहा था। इस पिण्ड के कई भागों में बंट जाने से ग्रहों का निर्माण हुआ। पृथ्वी उन्हीं ग्रहों में से एक थी। आदिकालीन पृथ्वी का तापमान 5000-6000°C था। इसमें हाइड्रोजन, कार्बन, ऑक्सीजन अणु प्रचुर मात्रा में थे। इन्हीं की आपसी क्रियाओं द्वारा जल, अमोनिया व मीथेन जैसे यौगिकों का निर्माण हुआ। समय के साथ–साथ पृथ्वी का तापमान कम होता चला गया जिसमें यौगिक तरल व ठोस रूप में आने लगे और बादलों का निर्माण प्रारंभ हुआ। वर्षा के पानी से गैसीय अमोनिया व मीथेन समुद्र के पानी में एकत्रित होते चले गये तथा कुछ खनिज नदियों के जल द्वारा समुद्र के जल में पहुंचने लगे। अंत में इन्हीं यौगिकों के रासायनिक संश्लेषण द्वारा प्रथम जीव का उद्‌भव हुआ।

(ii) द्वितीय चरण – हाइड्रोजन के बाहुल्य के कारण पृथ्वी का प्रारम्भिक वातावरण अपचायक था। करोड़ों वर्ष बाद पृथ्वी का तापमान कम होने के साथ मीथेन के संघनन के द्वारा सरल हाइड्रोकार्बन का निर्माण होने लगा। इन्हीं सरल कार्बन अणुओं से जटिल कार्बनिक अणुओं का निर्माण हुआ जैसे शर्कराएं, ग्लिसरीन, वसा अम्ल, एमीनो अम्ल, पिरिमिडिन व प्यूरीन। कई यौगिकों के ठोस पदार्थ में बदलने से पृथ्वी की सतह कठोर होने लगी। इस तरह स्थल मण्डल का निर्माण हुआ।

(iii) तृतीय चरण – रासायनिक संश्लेषण द्वारा बने विभिन्न कार्बनिक यौगिक जैसे शर्कराएं, ग्लिसरीन, एमीनो अम्ल, वसीय अम्ल, प्यूरीन व परिमिडिन आदि यौगिक–समूह जल में गरम सूप की तरह उबलने लगे और इन्हीं के आपसी संयोग से कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन एवं न्यूक्लिक अम्लों जैसे अधिक जटिल कार्बनिक यौगिकों का निर्माण प्रारंभ हुआ जो जीवन के उद्‌भव की आधारशिला बनी।

(iv) चतुर्थ चरण – कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन तथा न्यूक्लिक अम्लों की परस्पर अभिक्रियाओं के फलस्वरूप न्यूक्लिओप्रोटीन्स और अन्य जटिल दीर्घ अणुओं का निर्माण हुआ। कुछ विशिष्ट न्यूक्लिओप्रोटीन्स में अनुलिपिकरण की क्षमता थी जिसके फलस्वरूप जनन संभव हो सका। अनुलिपिकरण के फलस्वरूप न्यूक्लिओप्रोटीन्स में तेजी से वृद्धि हुई तथा प्रतिस्पर्धा भी प्रारम्भ हुई। कुछ न्यूक्लिओप्रोटीन्स में उत्परिवर्तन हुआ और नये न्यूक्लिओप्रोटीन्स का निर्माण हुआ। इस प्रकार न्यूक्लियोप्रोटीन्स में उद्‌विकास का प्रक्रम स्थापित हो गया।

(v) पांचवा चरण – इस चरण में प्रथम कोशिका का उद्‌भव हुआ। समुद्री जल में उपलब्ध खाद्य पदार्थों की कमी होने पर न्यूक्लियोप्रोटीन्स के बीच प्रतिस्पर्धा प्रारंभ हो गयी। उत्परिवर्तनों

के कारण नये बने न्यूक्लियोप्रोटीन्स के चिपचिपे होने के कारण वे प्रोटीन समूहों में इकट्ठे होने लगे तथा इन्हें पोषक पदार्थ निरंतर मिलते रहने पर यह इसी अवस्था में रहे।

(vi) छठा चरण – इस चरण में आदि जीवों में पोषण विधियों के आधार पर विकास प्रारंभ हुआ। परजीवी मृतजीवी, रसायन संश्लेषी तथा प्रकाशसंश्लेषी आदि जीवों का निर्माण हुआ।

(vii) सातवां चरण – प्रकाशसंश्लेषी जीवों की संख्या में क्रमिक वृद्धि के फलस्वरूप समुद्र व वायुमण्डल में प्रयुक्त ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ने लगी। मुक्त O_2 ने मीथेन व अमोनिया के साथ क्रिया की जिसके फलस्वरूप CO_2 तथा N_2 गैस बनी। इन्हीं सब क्रियाओं से आदिकालीन वायुमण्डल आधुनिक वायुमण्डल में परिवर्तित हो गया। ऑपेरिन के परिकल्पना का प्रायोगिक परिणाम मिलर के प्रयोग द्वारा प्रमाणित हुआ।

मिलर का प्रयोग (Miler Experiment)

शिकागो के वैज्ञानिक **स्टेनले मिलर** ने सन् 1952 में आज से 3 या 4 अरब वर्ष पूर्व आद्ययुग में पृथ्वी पर विद्यमान परिस्थितियों को उत्पन्न कर जीवन के उद्‌भव को समझाया। मिलर ने अपने प्रयोग के उपकरण में मीथेन, अमोनिया एवं हाइड्रोजन का मिश्रण भर दिया और फ्लास्क में निरंतर पानी को उबालते रहे। वाष्प संघनित्र द्वारा द्रवित होती रही। इस प्रकार गैसों का मिश्रण बनने लगा। एक सप्ताह बाद मिलर ने फ्लास्क के अन्दर लाल रंग का पदार्थ देखा। रासायनिक विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि इसमें एलानिन, ग्लाइसीन, ग्लिसरीन व अन्य कार्बनिक पदार्थ थे। इस

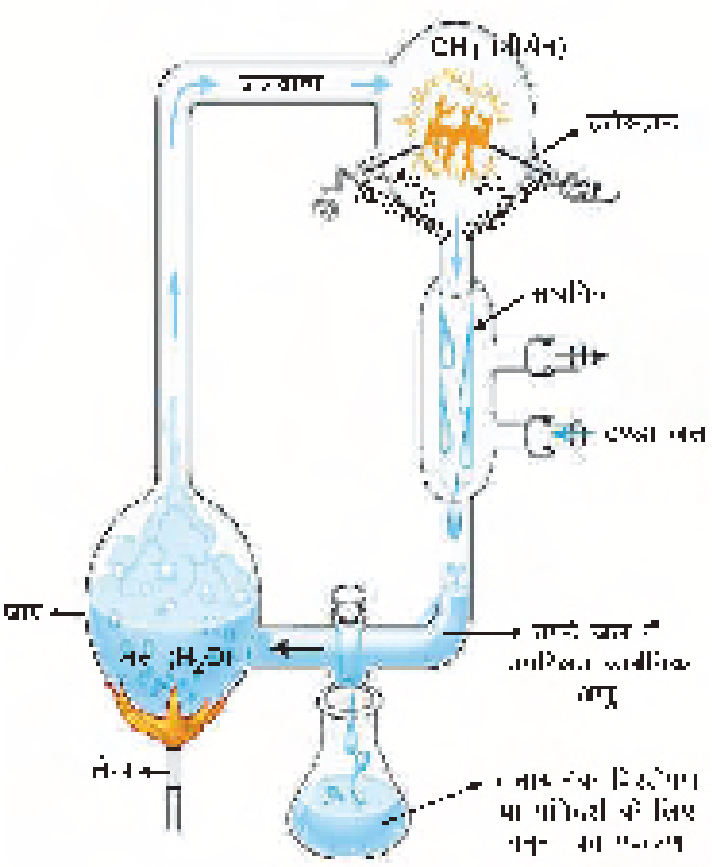

चित्र 5.4 : मिलर ने प्रारम्भिक पृथ्वी के वातावरण को प्रयोग द्वारा समझाया

प्रयोग से यह निष्कर्ष निकला कि आज से 3–4 अरब वर्ष पूर्व पृथ्वी पर जीवन का उद्भव इसी प्रकार से हुआ होगा (चित्र 5.4)।

5.3 बाह्य अंतरिक्ष में जीवन की खोज

(Search of life in Extraterrestial Environment)

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रारम्भिक दौर में एक बिन्दु के रूप में था। **एडबीन हब्बल** ने बताया कि अंतरिक्ष में जब हम देखते हैं तो पाते हैं कि आकाशगंगाएं व ग्रह एक दूसरे से दूर होते जा रहे हैं। हमारे सौर मण्डल के उन ग्रहों पर जीवन की संभावना है जहाँ पर अभी भी आदिकालीन पृथ्वी की तरह स्थितियाँ बनी हुई हैं। किन्तु अधिकतर ग्रहों पर ताप या तो बहुत अधिक अथवा बहुत कम है जो जीवन के अनुकूल नहीं माना जाता है तथा कुछ ग्रहों पर तो वायुमण्डल ही नहीं है जिसके कारण वहाँ कभी भी जीवन का उद्भव होना नहीं माना जाता है।

बुध ग्रह सूर्य के अधिक निकट होने के कारण बेहद गर्म है जिसके कारण वहाँ पर जीवन संभव नहीं है। शुक्र ग्रह पर वायुमण्डल CO_2 के घने बादलों का बना हुआ है जिसके कारण वहाँ का तापमान 200-300°C तक होता है इसीलिए वहाँ पर जीवन संभव नहीं है। बृहस्पति, शनि व अन्य ग्रहों पर वायुमण्डल में हाइड्रोजन, हीलियम, मीथेन तथा अमोनिया आदि के घने बादल छाए हुए हैं जो कि आदिकालीन पृथ्वी समान है। परन्तु इन ग्रहों पर अति निम्न तापमान (–200 से –400°F) होने के कारण जीवन संभव नहीं है। मंगल ग्रह हमारे सौरमण्डल का एकमात्र ग्रह है जिस पर जीवन की संभावना व्यक्त की जा रही है। इस ग्रह के बारे में कहा जाता है कि यहां कंपकंपा देने वाली ठण्ड, धूल भरी आंधी का बवण्डर उठता रहता है। यहां पृथ्वी के समान जीवन तो नहीं है लेकिन इस ग्रह की भौगोलिक स्थिति काफी अच्छी है। यहां गर्मियों में तापमान 30-50°C तक तथा सर्दियों में –133°C तक चला जाता है। मंगल पर सौर परिवार का सबसे बड़ा पर्वत है तथा बड़ी–बड़ी घाटियाँ हैं। मंगल पर एक साल पृथ्वी के 687 दिनों के बराबर है। 1960 के दशक में पहली बार अंतरिक्ष यान यहां भेजा गया था। इस ग्रह पर CO_2 का सबसे बड़ा हिस्सा है, O_2 केवल 0.13% ही उपस्थित है। मंगल ग्रह पर गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी की तुलना में काफी कम है परन्तु फिर भी अन्य ग्रहों की तुलना में मंगल ग्रह पृथ्वी के काफी समान प्रतीत होता है (चित्र 5.5)।

भारत के मार्स आर्बिटर मिशन (MOM) ने भी सितम्बर 2014 में सफलता दर्ज कर ली है। हम दुनिया का ऐसा पहला देश बन गए है जिसने पहले ही प्रयास तथा बहुत ही कम लागत

चित्र 5.5 : सौरमण्डल

में इस मिशन में सफलता प्राप्त की है। यह मंगलयान मंगल के वातावरण में मीथेन गैस की मात्रा मापेगा व स्त्रोत भी पता लगायेगा। मंगल की सतह का तापमान व मौजूद खनिजों का पता लगायेगा। हाइड्रोजन व ड्यूटीरियम की मात्रा तथा बाहरी

5.4 पृथ्वी जैसे ग्रह का अर्थ व उनकी खोज

(Search of New Planet like Earth)

पृथ्वी जैसे ग्रह से तात्पर्य है कि वह गर्मी में पानी को तरल

चित्र 5.6 : भारत ने मार्स आर्बिटर मिशन (MOM) के तहत अंतरिक्ष यान को भेजा जो मंगल ग्रह के चारों ओर चक्कर लगाता हुआ।

हिस्सों में जो कण मिलेंगे उनकी जांच करेगा (चित्र 5.6)। सौरमण्डल में चन्द्रमा ही पृथ्वी के सबसे निकट है। यहाँ पर जल व वायुमण्डल दोनों का अभाव होने के कारण जीवन संभव नहीं है।

अवस्था में रखने के लिए पर्याप्त हो तथा तापमान व वातावरण भी पृथ्वी समान हो। कई खोजों के बाद पृथ्वी के समान ग्रह ढूंढा है जिसे पृथ्वी का "बड़ा भाई" कहा गया तथा इसे **केपलर–452b** (Kepler–452b) नाम दिया गया। यह पृथ्वी से 1400 प्रकाश वर्ष दूर है। यह पृथ्वी से 60% बड़ा है तथा हमारे सूर्य के

चित्र 5.7 : पृथ्वी व उसके जैसे ग्रह केपलर–**452b** व केपलर–**186f**

समान केपलर 452 तारा है जो सूर्य से 1.5 बिलियन वर्ष बड़ा है व उससे 20% चमकदार और गर्म भी है। केपलर–452b पर हमारी ही पृथ्वी के समान कक्षा व समान मात्रा व लम्बाई में उसके सूर्य का प्रकाश साल भर मिलता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि यहां पृथ्वी की तरह ही चट्टानें, समुद्र व वातावरण है। इस ग्रह की सतह भी चट्टानी प्रतीत हो रही है जो पूरी तरह पृथ्वी समान लग रही है।

वहीं दूसरी तरफ एक और ग्रह जिसे **केपलर–186f** (Kepler–186f) नाम दिया गया है, यह ग्रह भी पृथ्वी समान माना जा रहा है। इसे **17 अप्रेल 2014** में ही खोजा गया है। पृथ्वी समान ग्रह वैज्ञानिकों के द्वारा इसलिए खोजा जा रहा है ताकि भविष्य में जब पृथ्वी रहने लायक ना रहे तो हम यहां के जीवन को बचा कर वहां स्थानान्तरित कर अपनी जाति की उत्तरजीविता बनाये रख सके (चित्र 5.7)।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. जीव–विकास के सिद्धांत के अनुसार अमीबा सदृश किसी सरलतम एककोशिकीय जीव से ही विभिन्न प्रकार के एककोशिकीय तथा बहुकोशिकीय जीव–जन्तुओं का विकास हुआ है।

2. जीव–जनन वाद इटली के **फ्रेन्सिसको रेडी** ने सन् 1668 में दिया तथा स्वतः जनन वाद को गलत सिद्ध किया।

3. **लुई पाश्चर** ने भी स्वतः जनन को अपने प्रयोग द्वारा नकार दिया।

4. जीव की उत्पत्ति की पूरी प्रक्रिया को आपेरिन द्वारा 7 चरणों में विभाजित किया।

5. शिकागो के वैज्ञानिक **स्टेनले मिलर** ने पृथ्वी पर विद्यमान परिस्थितियों को उत्पन्न कर जीवन के उद्भव को समझाया।

6. मिलर ने अपने प्रयोग के उपकरण में मीथेन, अमोनिया एवं हाइड्रोजन का मिश्रण भर दिया और फ्लास्क में निरंतर पानी को उबालते रहे।

7. सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रारम्भिक दौर में एक बिन्दु के रूप में था।

8. बुध ग्रह सूर्य के अधिक निकट होने के कारण बेहद गर्म है जिसके कारण वहाँ पर जीवन संभव नहीं है।

9. शुक्र ग्रह पर वायुमण्डल CO_2 के घने बादलों का बना हुआ है जिसके कारण वहाँ का तापमान 200-300°C तक होता है इसीलिए वहाँ पर जीवन संभव नहीं है।

10. बृहस्पति, शनि व अन्य ग्रहों पर वायुमण्डल में हाइड्रोजन, हीलियम, मीथेन तथा अमोनिया आदि के घने बादल छाए हुए हैं जो कि आदिकालीन पृथ्वी समान है। परन्तु इन ग्रहों पर अति निम्न तापमान (–200 से –400°F) होने के कारण जीवन संभव नहीं है।

11. मंगल ग्रह हमारे सौरमण्डल का एकमात्र ग्रह है जिस पर जीवन की संभावना व्यक्त की जा रही है।

12. मंगल ग्रह पर गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी की तुलना में काफी कम है परन्तु फिर भी अन्य ग्रहों की तुलना में मंगल ग्रह पृथ्वी के काफी समान प्रतीत होता है।

13. भारत के मार्स आर्बिटर मिशन (MOM) ने भी सितम्बर 2014 में सफलता दर्ज कर ली है। हम दुनिया का ऐसा पहला देश बन गए है जिसने पहले ही प्रयास तथा बहुत ही कम लागत में इस मिशन में सफलता प्राप्त की है।

14. सौरमण्डल में चन्द्रमा ही पृथ्वी के सबसे निकट है। यहाँ पर जल व वायुमण्डल दोनों का अभाव होने के कारण जीवन संभव नहीं है।

15. कई खोजों के बाद पृथ्वी के समान ग्रह ढूंढा है जिसे पृथ्वी का ''बड़ा भाई'' कहा गया तथा इसे **केपलर–452b** (Kepler–452b) नाम दिया गया।

16. **केपलर–452b** (Kepler–452b) के पश्चात् एक और पृथ्वी समान ग्रह की खोज हुई जिसे **केपलर–186f** (Kepler–186f) नाम दिया गया है, यह ग्रह भी पृथ्वी समान माना जा रहा है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. पृथ्वी के पश्चात् हमारे सौरमण्डल में कौनसे ग्रह पर जीवन सम्भव है।
   (अ) बुध (ब) बृहस्पति (स) शुक्र (द) मंगल
2. निम्न में से कौनसा गुण निर्जीवों में नहीं पाया जाता है–
   (अ) प्रजनन (ब) विकास
   (स) वृद्धि (द) उपरोक्त सभी
3. ऑपेरिन के सिद्धांत द्वारा जीव की उत्पत्ति को कितने चरणों में विभाजित किया गया है–
   (अ) 5 (ब) 6 (स) 7 (द) 8
4. जीव जननवाद किसके द्वारा दिया गया है–
   (अ) ऑपेरिन (ब) फ्रान्सिसको रेडी
   (स) वॉन हैल्मौन्ट (द) लीबिग
5. 17 अप्रेल 2014 को पृथ्वी समान खोजे गये ग्रह का नाम है–
   (अ) केपलर–186f (ब) केपलर–452a
   (स) केपलर–186g (द) केपलर–452b

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

6. स्वतः जननवाद को किस वैज्ञानिक द्वारा खण्डित किया गया?
7. पृथ्वी से समानता दर्शाने वाले दो ग्रह कौनसे है?
8. कॉसमोजोइक सिद्धांत किस वैज्ञानिक द्वारा प्रतिपादित किया गया?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

9. सजीव व निर्जीव में अन्तर को उदाहरण सहित समझाइए?
10. मिलर के प्रयोग को चित्र द्वारा समझाइये।
11. जीव जननवाद का वर्णन कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न

12. जीवन की उत्पत्ति से सम्बन्धित सभी परिकल्पनाओं के नाम बताइये तथा उनमें से किसी एक का वर्णन कीजिए?
13. जीव के उत्पत्ति संबंधित ओपेरिन के सिद्धान्त को समझाइये।

उत्तर सारणी

प्रश्न	1	2	3	4	5
उत्तर	द	द	स	ब	अ

अध्याय 6

सजीव की संरचना
(Structure of Living Organism)

6.1 जीवन का आधार–कोशिका
(Basis of Life – cell)

जीवों का शरीर कोशिकाओं से बना होता है। जीवों के शरीर में होने वाली समस्त क्रियाएं भी कोशिकाओं के द्वारा ही होती है। स्पष्ट है कि प्रत्येक जीव का शरीर सूक्ष्म इकाइयों से बना होता हैं, जिन्हें **कोशिका (Cell)** कहते हैं। अतः कोशिका ही जीवों की मुख्य संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई है।

सर्वप्रथम 1665 ई. में अंग्रेज वैज्ञानिक **रार्बट हुक** ने साधारण सूक्ष्मदर्शी से कार्क की पतली काट में खाली स्थान या गुहाओं को देखा और उन्हें **कोशिका (Cell)** नाम दिया। वास्तव में हुक द्वारा अवलोकन की गई कोशिकायें मृत कोशिकाएँ थी। सन् 1674 ई. में **ल्यूवेन हॉक** ने विकसित सूक्ष्मदर्शी द्वारा जीवित कोशिकाओं का अध्ययन किया। कोशिका से सम्बन्धित विज्ञान की शाखा को कोशिका विज्ञान **(Cytology)** कहते हैं।

वे जीव जिनका शरीर केवल एक कोशिका का बना होता है, **एककोशिक जीव (Unicellular organisms)** कहलाते हैं, जैसे ***अमीबा, क्लेमाइडोमोनास*** तथा अनेक कोशिकाओं से बने जीव **बहुकोशिक जीव (Multicellular organisms)** कहलाते हैं।

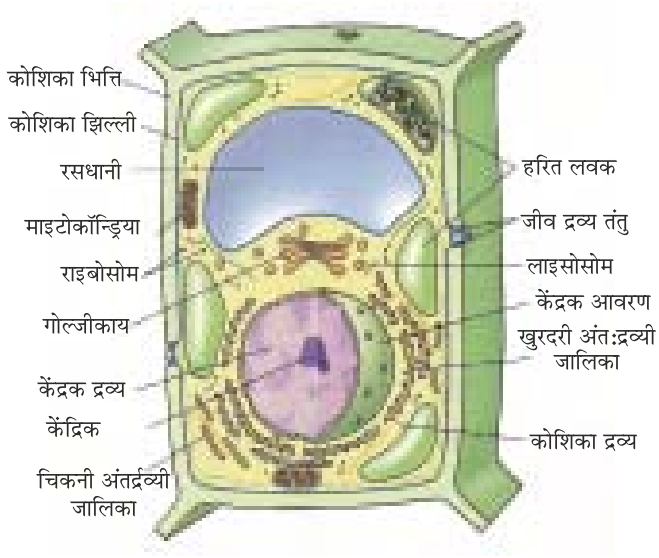

चित्र 6.1 पादप कोशिका

एककोशिक जीवों में सभी जैव क्रियाएँ जैसे पोषण, श्वसन, उत्सर्जन, वृद्धि एवं जनन शरीर की एक कोशिका द्वारा ही की जाती है, परन्तु बहुकोशिक जीवों में विभिन्न कार्यों के लिये विभिन्न प्रकार के कोशिका समूह मिलते हैं, जिन्हें **ऊतक (Tissue)** कहते हैं।

अधिकांश कोशिकाएँ सूक्ष्म होती हैं तथा केवल सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही देखी जा सकती है। इनका औसत व्यास 0.5 माइक्रॉन से 20 माइक्रॉन तक होता है, कुछ कोशिकाऐं काफी बड़ी होती है, जैसे शुतुरमुर्ग के अण्डे का व्यास लगभग 100 सेमी. से 150 सेमी. तक हो सकता है। कोशिकाओं की आकृति जीवों के शरीर में उनके कार्य के आधार पर भिन्न–भिन्न होती है।

6.2 कोशिका सिद्धान्त व उसके अपवाद
(Cell theory and its exceptions)

19वीं शताब्दी में हुई खोजों से वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि समस्त जन्तुओं व पादपों का शरीर, कोशिकाओं का बना होता है। यह कोशिकाएँ समस्त जैव–क्रियाओं एवं जैविक लक्षणों के लिये उत्तरदायी हैं। इसी आधार पर सन् 1838–39 में जन्तु वैज्ञानिक **थियोडोर श्वान** व पादप वैज्ञानिक **मैथियास श्लीडन** ने कोशिका सिद्धान्त प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार :–

1. प्रत्येक जीव का शरीर एक या अनेक कोशिकाओं का बना होता है।

2. कोशिका सभी जैव क्रियाओं की मूलभूत इकाई है। सजीवों में होने वाली समस्त क्रियायें कोशिका के अन्दर ही होती है।

3. कोशिका आनुवंशिकी की इकाई है, क्योंकि इनके केन्द्रक में आनुवंशिक पदार्थ पाया जाता है।

4. नई कोशिकाएँ पूर्व उपस्थित कोशिकाओं से बनती हैं।

आधुनिक खोजों के आधार पर कोशिका सिद्धान्त पूर्णतः तर्क संगत प्रतीत नहीं होता क्योंकि विषाणुओं में कोशिकीय रचना ही नहीं होती; सभी जीव कोशिकीय नहीं होते और सभी कोशिकाओं में एक स्पष्ट केन्द्रक नहीं होता जैसे **जीवाणु व नीले–हरे शैवालों** में केन्द्रकीय पदार्थ के चारों ओर केन्द्रकीय झिल्ली का अभाव होता है तथा केन्द्रकीय पदार्थ कोशिकाद्रव्य में विसरित रहता है।

6.3 कोशिका की संरचना (Structure of Cell)

कोशिका का सूक्ष्मदर्शी से अध्ययन करने पर पाया गया कि एक प्रारुपिक यूकेरियोटिक कोशिका में निम्न घटक होते हैं।

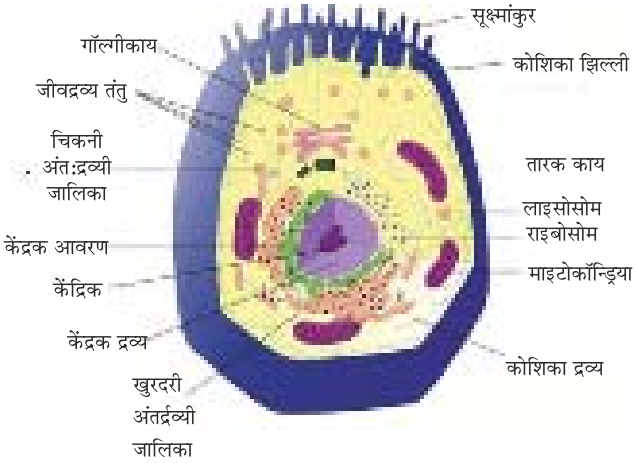

चित्र 6.2 जन्तु कोशिका

1. **कोशिका कला (Cell Membrane)**
2. **कोशिकाद्रव्य (Cytoplasm)**
3. **केन्द्रक (Nucleus)**

6.3.1 कोशिका कला (Cell membrane) :–

कोशिका कला कोशिका के जीवद्रव्य का सबसे बाहरी सजीव आवरण है जो कोशिका को बाह्य वातावरण से पृथक करता हैं। विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं में इसकी मोटाई 75–105Å तक होती है। यह एक त्रिस्तरीय आवरण है जो प्रोटीन व फास्फोलिपिड अणुओं की बनी होती हैं।

कोशिका कला कोशिका में प्रवेश करने वाले व बाहर जाने वाले पदार्थों पर नियन्त्रण रखती है। यह कुछ पदार्थों को अन्दर व बाहर आने जाने देती है, तथा अन्य पदार्थों की गति को रोकती है, इसलिये इसे **चयनात्मक पारगम्य** झिल्ली भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त कोशिका झिल्ली जन्तु कोशिका को निश्चित आकृति प्रदान करती है तथा जीवद्रव्य की सुरक्षा करती है।

पादप कोशिकाओं में कोशिका कला के चारों ओर एक निर्जीव परत पायी जाती है, जिसे **कोशिका भित्ति (Cell wall)** कहते हैं। कोशिका भित्ति सेल्यूलोज, हेमीसेल्यूलोज, पेक्टिन तथा पॉलीसैकेराइडस की बनी होती है। कोशिका भित्ति की उपस्थिति के आधार पर पादप कोशिका को जन्तु कोशिका से विभेदित किया जाता है। कोशिका भित्ति पादप कोशिका को निश्चित आकृति व अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करती है। जन्तु कोशिका में भित्ति का अभाव होता हैं।

6.3.2 कोशिकाद्रव्य (Cytoplasm) :–

कोशिका कला तथा केन्द्रक के मध्य उपस्थित पदार्थ को कोशिकाद्रव्य कहते हैं। कोशिकाद्रव्य में तरल पदार्थ में कई सजीव संरचनाएँ (कोशिकांग) तथा निर्जीव संरचनाएँ पायी जाती हैं। तरल पदार्थ में जल, ग्लाइकोजन, वसा व अन्य पदार्थ पाये जाते हैं। कोशिका में पाये जाने वाले कोशिकांग निम्न हैं।

1. माइटोकॉन्ड्रिया (Mitochondria) :– माइटोकॉन्ड्रिया केवल यूकेरियोटिक कोशिकाओं में पाये जाते हैं तथा प्रोकेरियोटिक कोशिकाओं मे नहीं पाये जाते हैं। माइटोकॉन्ड्रिया कोशिका के लिये आवश्यक शक्ति (ऊर्जा) उत्पन्न करने का कार्य करता है इसलिये इसे कोशिका का **शक्ति गृह (Power house)** भी कहा जाता है। एक ही जीव की विभिन्न कोशिकाओं में इनकी संख्या अलग–अलग होती है, जिन कोशिकाओं को ऊर्जा की अधिक आवश्यकता होती है, उनमें माइटोकॉन्ड्रिया की संख्या अधिक होती है। माइटकॉन्ड्रिया की खोज **कोलीकर** नामक वैज्ञानिक ने 1880 में की थी। इसे माइटोकॉन्ड्रिया नाम **बेन्दा** ने दिया।

माइटोकॉन्ड्रिया दोहरी झिल्ली युक्त कोशिकांग हैं। बाह्य झिल्ली चिकनी व समतल होती है तथा आन्तरिक झिल्ली में इसकी गुहा की ओर अंगुली के समान वलन निकले रहते हैं। इन वलनों को **क्रिस्टी** कहते हैं। क्रिस्टी की सतह पर असंख्य सवृन्त कण लगे होते हैं। इन कणों को **ऑक्सीसोम** कहते हैं। क्रिस्टी के मध्य भाग को **आधात्री या मेट्रिक्स (Matrix)** कहते हैं।

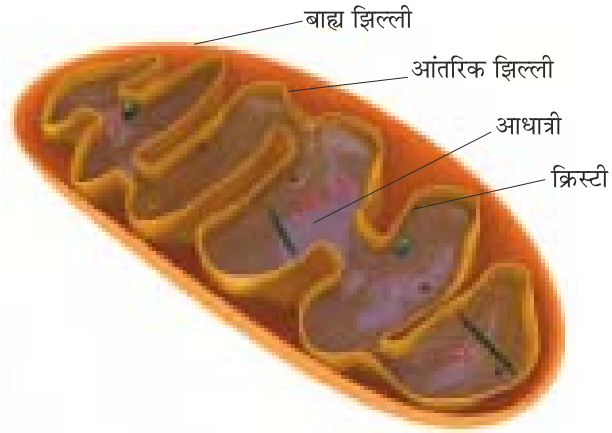

चित्र 6.3 माइटोकॉन्ड्रियॉन

मेट्रिक्स में 65-70 % प्रोटीन, 25 % फास्फोलिपिड तथा 0.5 % RNA पाया जाता है। इसके अतिरिक्त माइटोकॉन्ड्रिया में DNA व राइबोसोम भी होते है। माइटोकॉन्ड्रिया मे पाये जाने वाले एन्जाइम श्वसन में खाद्य पदार्थों का आक्सीकरण करते हैं।

2. लवक (Plastids) :– लवक पादप कोशिकाओं में पाये जाते है। लवकों में विभिन्न प्रकार के वर्णक मिलने के कारण

भिन्न–भिन्न रंग के दिखाई पड़ते हैं। विभिन्न प्रकार के वर्णकों की उपस्थिति के आधार पर लवक कई प्रकार के होते हैं, जैसे **हरितलवक, वर्णीलवक व अवर्णीलवक।** हरितलवक कोशिका का वह कोशिकांग है जहाँ प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा कार्बोहाइड्रेट का संश्लेषण होता है।

हरितलवक (Chloroplast) दोहरी झिल्ली युक्त कोशिकांग हैं, इन झिल्लियों को क्रमशः बाह्यझिल्ली व अन्तः झिल्ली कहते हैं। अन्तः झिल्ली से घिरे हुए भीतर के स्थान को **पीठिका** या **स्ट्रोमा (Stroma)** कहते हैं। स्ट्रोमा में एक जटिल झिल्ली तंत्र होता है, जिसे **थाइलेकोइड (Thylakoids)** कहते हैं। थाइलेकोइड दो प्रकार से विन्यासित रहते है। तस्तरी समान थाइलेकोइड सिक्कों के चट्टे के रूप में व्यवस्थित रहते हैं, जिन्हें **ग्रेना (grana)** कहते हैं, तथा दो ग्रेना को जोडने वाली थाइलेकोइड **इन्टर ग्रेनम (Inter granum)** कहलाती है।

थाइलेकोइड की झिल्ली व **पीठिका (Stroma)** में प्रकाश संश्लेषण से सम्बन्धित एन्जाइम पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त स्ट्रोमा में DNA व राइबोसोम भी पाये जाते हैं।

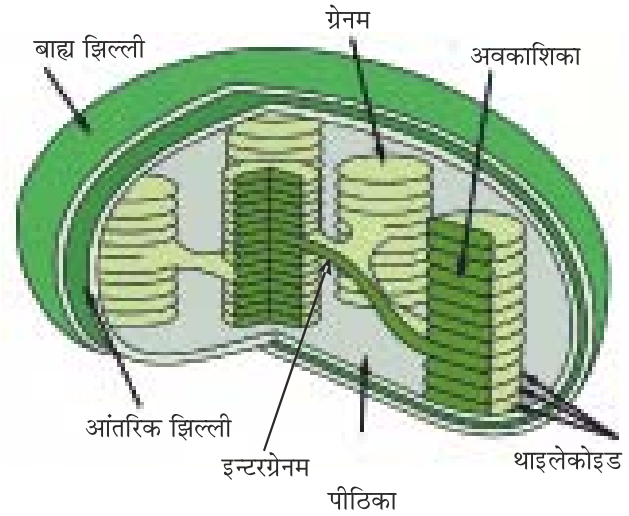

चित्र 6.4 हरितलवक

3. लाइसोसोम (Lysosome) :– लाइसोसोम की खोज **डी. ड्यूवे** ने की थी। लाइसोसोम एकल झिल्ली युक्त, थैलीनुमा कोशिकांग हैं। इसमें कणीय द्रव्य भरा होता है, जिसमें कई **जल अपघटनी** एन्जाइम पाये जाते हैं, जो शर्करा, वसा, प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्ल का अपघटन कर सरल अणुओं में तोड़ देते हैं। लाइसोसोम क्षतिग्रस्त व मृत कोशिकांगों व कोशिकाओं के अपघटन का कार्य करते हैं। लाइसोसोम की झिल्ली के फटने पर एन्जाइम उस कोशिका का पाचन कर देते हैं, जिसमें लाइसोसोम स्थित था, इस कारण इन्हें **आत्मघाती थैलियाँ (Suicidal bags)** भी कहा जाता है।

4. अंतर्द्रव्यी जालिका (Endoplasmic Reticulum) :– कोशिका के केन्द्रक तथा कोशिका कला के मध्य सूक्ष्मनलिकाओं की जालिका को अन्तर्द्रव्यी जालिका कहते हैं। इसकी भित्ति एक झिल्ली की होती है। अन्तर्द्रव्यी जालिका दो प्रकार की होती हैं। **खुरदरी अन्तर्द्रव्यी जालिका** की सतह पर राइबोसोम पाये जाते है, तथा यह प्रोटीन संश्लेषण का कार्य करते हैं। **चिकनी अन्तर्द्रव्यी जालिका** की सतह पर राइबोसोम का अभाव होता हैं तथा यह वसा व लिपिड अणुओं के संश्लेषण का कार्य करती है।

अन्तर्द्रव्यी जालिका कोशिकाद्रव्य के विभिन्न क्षेत्रों तथा कोशिका द्रव्य व केन्द्रक के मध्य पदार्थों के परिवहन का कार्य करती है. इसके अतिरिक्त यह गॉल्जीकाय का निर्माण करती है।

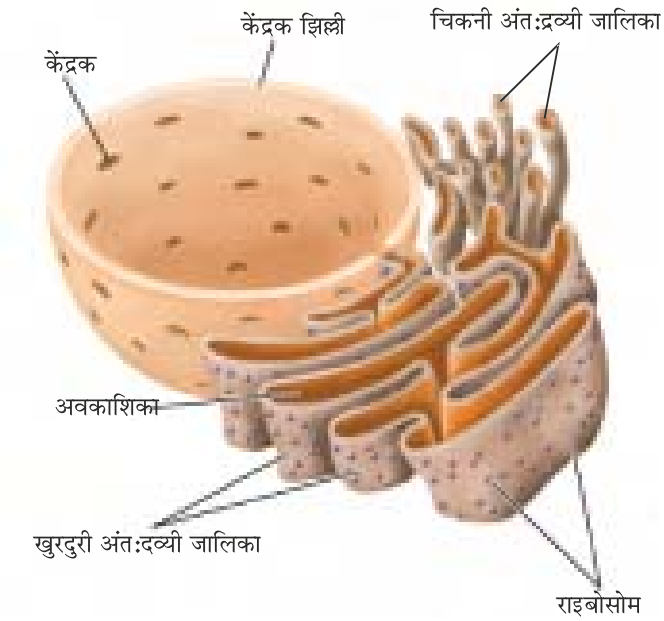

चित्र 6.5 अन्तर्द्रव्यी जालिका

5. राइबोसोम (Ribosome) :– इसकी खोज **क्लाड** ने की थी तथा **पैलेड** ने इनको राइबोसोम का नाम दिया। राइबोसोम कोशिकाद्रव्य में स्वतन्त्र रूप में तथा खुरदरी अन्तर्द्रव्यी जालिका पर दाने के रूप में पाये जाते हैं। राइबोसोम के चारों ओर झिल्ली नहीं पायी जाती है। ये **RNA** व प्रोटीन के बने होते हैं। यूकेरियोटिक कोशिकाओं मे **80S** तथा प्रोकेरियोटिक कोशिकाओं में **70S** प्रकार के राइबोसोम पाये जाते हैं। राइबोसोम प्रोटीन संश्लेषण का कार्य करते हैं।

6. गॉल्जीकाय (Golgi body) :– इसकी खोज **केमिलो गॉल्जी (Camilo Golgi, 1898)** द्वारा की गई थी। यह कोशिका के केन्द्रक के पास चपटी नलिकाओं के रूप में पायी जाती है। गाल्जीकाय में **आशय, रिक्तिकायें** व **कुण्डिकायें** तीन प्रकार की

संरचनाएँ पायी जाती है। यह कोशिका मे शर्करा, प्रोटीन व पेक्टिन के संश्लेषण व स्रवण का कार्य करती हैं।

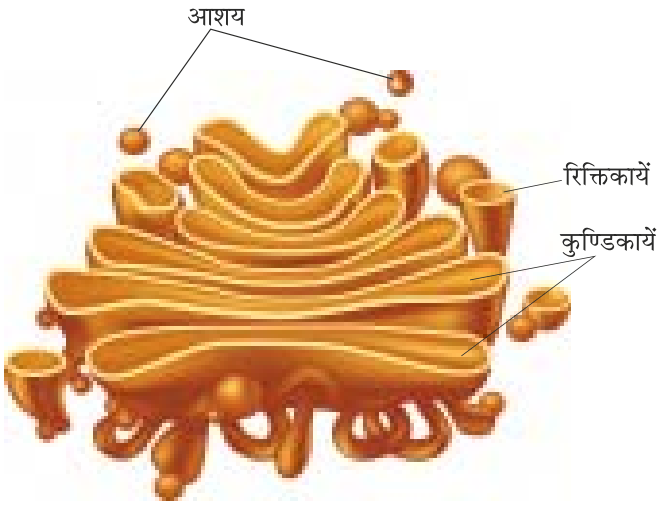

चित्र 6.6 गॉल्जीकाय

7. तारककाय (Centrosome) :– यह मुख्य रूप से जन्तु कोशिकाओं में केन्द्रक के निकट तारे समान आकृति में पायी जाती है। प्रत्येक तारककाय में दो **तारककेन्द्र (Centrioles)** होते है, तथा दोनों तारककेन्द्र एक–दूसरे के लम्बवत रहते हैं। तारककाय की खोज **वॉन बेन्डेन** ने की थी।

तारककाय जन्तु कोशिकाओं में कोशिका विभाजन के समय तर्कु तन्तुओं का निर्माण करती है। यह शुक्राणु की पूँछ का निर्माण करती है। तथा सूक्ष्म जीवों में पाये जाने वाले गमन अंगों जैसे **कशाभिका (Flagella)** व **पक्ष्माभ (Cilia)** का आधार बिन्दू बनाती है।

8. रिक्तिका (Vacuole) :– कोशिका के कोशिकाद्रव्य में सूक्ष्म अथवा बड़ी बुलबुले समान संरचनाएँ रिक्तिकायें कहलाती हैं। रिक्तिका एक झिल्ली द्वारा आवृत होती है, जिसे **टोनोप्लास्ट (Tonoplast)** कहते हैं। रिक्तिका में उपस्थित द्रव को **कोशिका रस (Cell sap)** कहते हैं। कोशिका रस में जल, उत्सर्जी पदार्थ व अन्य अनुपयोगी उत्पाद पाये जाते हैं। रिक्तिका कोशिका को **स्फीत (Turgid)** बनाये रखती है तथा जल व अन्य अनुपयोगी पदार्थों का संग्रह करती है। पादप कोशिका में रिक्तिका बड़ी होती है।

उपरोक्त कोशिकागों के अतिरिक्त कोशिका में **सूक्ष्मकाय (Microbodies)**, **परआक्सीसोम (Peroxysomes)** भी पाये जाते हैं।

6.3.3 केन्द्रक (Nucleus) :– केन्द्रक की खोज **रार्बट ब्राऊन (Robert Brown)** ने 1831 में की थी। यह कोशिका का सबसे महत्वपूर्ण कोशिकांग है। साधारणतः एक कोशिका में एक ही केन्द्रक पाया जाता है। कुछ कोशिकाओं मे एक से अधिक केन्द्रक भी पाये जाते है। मानव की परिपक्व लाल रक्त कणिकाओं व पादप की परिपक्व चालनी नलिकाओं में केन्द्रक का अभाव होता है।

जन्तु कोशिका में केन्द्रक गोलाकार व मध्य में तथा पादप कोशिका में बड़ी रिक्तिका की उपस्थिति के कारण केन्द्रक कोशिका की परिधि की ओर पाया जाता हैं।

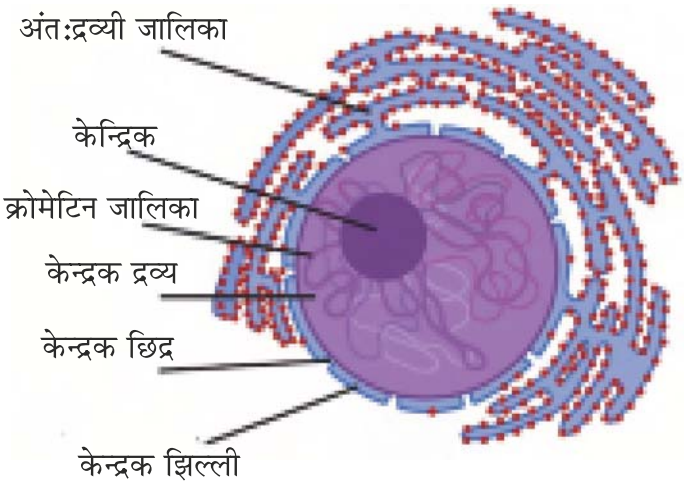

चित्र 6.7 केन्द्रक

केन्द्रक के चारों ओर दोहरी **केन्द्रक झिल्ली** पायी जाती है। केन्द्रक झिल्ली में सूक्ष्म केन्द्रक छिद्र होते हैं, जिनके द्वारा कोशिकाद्रव्य व केन्द्रकद्रव्य के मध्य पदार्थों का आदान–प्रदान होता है। केन्द्रक में तरल **केन्द्रकद्रव्य (Nucleoplasm)** पाया जाता है। इस द्रव्य में प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्ल तथा अन्य कार्बनिक यौगिक पाये जाते हैं। केन्द्रक में उपस्थित एक या अधिक सूक्ष्म गोलाकार संरचनाओं को **केन्द्रिक (Nucleolus)** कहते हैं। केन्द्रकद्रव्य में पतले धागे सदृश्य संरचानाओं का जाल पाया जाता है, जिसे क्रोमेटिन जालिका कहते हैं। कोशिका विभाजन के समय क्रोमेटिन धागे कुण्डलित होकर अपेक्षाकृत मोटे दिखाई देते हैं, जिन्हें **गुणसूत्र (Chromosome)** कहते हैं। केन्द्रक कोशिका का मुख्य नियन्त्रक अंग है।

6.4 पादप व जन्तु कोशिकायें (Plant and Animal cells)

पादप व जन्तु कोशिकाओं की मूल संरचना समान होती है फिर भी कई संरचनात्मक लक्षण ऐसे हैं जिनके द्वारा इनमें अन्तर किया जा सकता है।

		पादप कोशिका	जन्तु कोशिका
1	कोशिका भित्ति	पादप कोशिका में कोशिका झिल्ली के चारों ओर सेल्यूलोज की बनी निर्जीव कोशिका भित्ति पायी जाती है।	जन्तु कोशिका में कोशिका भित्ति का अभाव होता है।
2	हरित–लवक	पादप कोशिका मे प्रकाश संश्लेषी अंगक हरितलवक पाये जाते हैं।	जन्तु कोशिका में हरितलवक नहीं पाये जाते।
3	रिक्तिकाएं	पादप कोशिका में एक या दो बड़ी रिक्तिकाएँ पाई जाती है।	जन्तु कोशिका में रिक्तिकाएँ छोटी अथवा अनुपस्थित होती हैं।
4	तारक काय	पादप कोशिका में तारक काय अनुपस्थित होते हैं।	जन्तु कोशिका में तारक काय पाये जाते हैं।
5	गाल्जीकॉय	पादप कोशिका में गाल्जीकॉय कम विकसित होते हैं।	जन्तु कोशिका में गाल्जीकॉय विकसित व सक्रिय होते है।
6	संचित भोजन	पादप कोशिका मे संचित भोजन **मण्ड (Starch)** के रूप में पाया जाता है।	जन्तु कोशिका मे संचित भोजन **ग्लाइकोजन** के रूप में पाया जाता है।

6.5 कोशिका चक्र (Cell Cycle)

कोशिका विभाजन की प्रक्रिया में जनक कोशिका के विभाजन से सन्तति कोशिका उत्पन्न होती है। तथा सन्तति कोशिका पुनः विभाजित होकर नई कोशिकाओं को उत्पन्न करती है। किसी कोशिका के निर्माण से लेकर उसके विभाजन होने तक की विभिन्न अवस्थाओं को **कोशिका चक्र (Cell cycle)** कहते हैं।

कोशिका चक्र के मुख्य भाग निम्न है।

1. अन्तरावस्था (Interphase) कोशिका चक्र के इस भाग में कोशिका विभाजन के लिये आवश्यक पदार्थों का संश्लेषण होता है। इसे कोशिका विभाजन की तैयारी की प्रावस्था भी कहते हैं।

अन्तरावस्था की निम्न प्रावस्थायें हैं।

(क) प्रथम वृद्धि काल (First growth period Or G-I प्रावस्था) :– इस प्रावस्था में कोशिका चक्र के पूर्ण होने का 30-40% समय लगता है। इस प्रावस्था मे कोशिका वृद्धि करती है, तथा DNA के संश्लेषण के लिये आवश्यक प्रोटीन व RNA का संश्लेषण होता है।

(ख) संश्लेषी काल (Synthetic period Or S प्रावस्था) :– इस प्रावस्था में कोशिका चक्र के पूर्ण होने का 20-30% समय लगता है। इस प्रावस्था में DNA का संश्लेषण होता है।

(ग) द्वितीय वृद्धि काल (Second growth period Or G-II प्रावस्था) :– इस प्रावस्था में कोशिका चक्र के पूर्ण होने का 10-20% समय लगता है। इस प्रावस्था में कोशिका के लिये आवश्यक प्रोटीन का संश्लेषण होता है।

2. विभाजन प्रावस्था (M - Phase) इसमें कोशिका चक्र के पूर्ण होने का 5 - 10% समय लगता है। इस प्रावस्था में कोशिका के केन्द्रक विभाजन से दो केन्द्रक बनते हैं तथा बाद में कोशिकाद्रव्य विभाजन द्वारा दो सन्तति कोशिकायें बन जाती है।

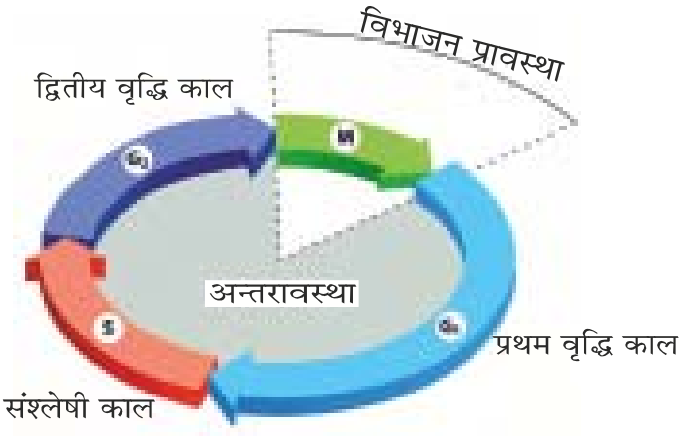

चित्र 6.8 कोशिका चक्र

6.6 कोशिका विभाजन (Cell division)

नव कोशिका की उत्पति सदैव पूर्ववर्ती कोशिका से होती है। इस पूर्ववर्ती कोशिका को मातृ कोशिका (Mother cell) या जनक कोशिका (Parental cell) कहते हैं। प्रत्येक बहुकोशिक जीव के जीवन का प्रारम्भ एक कोशिकीय निषेचित अण्ड युग्मनज (Zygote) द्वारा होता है। इस कोशिका के विभाजन व विभेदन से भ्रूण बनता है तथा बारम्बार कोशिका विभाजन द्वारा भ्रूण बहुकोशिक जीव में परिवर्धित हो जाता है। इसी प्रकार जन्तुओं व पादपों के जननांगों में जनन मातृ कोशिका से नर व मादा युग्मक (gametes)

बनते हैं। इस प्रकार कोशिका विभाजन द्वारा बहुकोशिकीय शरीर का बनना व युग्मकों का बनना आदि लक्ष्यों की पूर्ति होती है। वृद्धि करते हुए अंगों में परिपक्वन अवस्था के बाद जीव में कोशिका विभाजन की गति धीमी होकर अन्ततः अवरूद्ध हो जाती है।

कोशिका विभाजन की प्रक्रिया में कोशिका का केन्द्रक व कोशिकाद्रव्य विभाजित होते हैं, परन्तु ये दोनों दो पृथक–पृथक प्रक्रियाएं हैं। केन्द्रक विभाजन के तत्काल पश्चात् कोशिका विभाजन का होना आवश्यक नहीं है।

कोशिका विभाजन के प्रकार :– कोशिका विभाजन के दौरान बनने वाली पुत्री कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या के आधार पर कोशिका विभाजन दो प्रकार का होता है।

I. समसूत्री या सूत्री कोशिका विभाजन (Mitosis) :-

सूत्री कोशिका विभाजन जनन कोशिकाओं को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की कायिक कोशिकाओं (Somatic cells) में होता है। पादप कोशिकाओं में इस प्रकार का विभाजन सामान्य रूप से विभज्योत्तक कोशिकाओं में होता है। कोशिका विभाजन की इस प्रक्रिया में एक जनक कोशिका, दो सन्तति कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है तथा सन्तति कोशिका में गुणसूत्रों की संख्या जनक कोशिका के बराबर होती है, इसलिये इसे **समविभाजन** भी कहते हैं। समसूत्री विभाजन में होने वाली घटनाओं को निम्न अवस्थाओं में विभक्त किया गया है।

अ. अन्तरावस्था (Interphase)

ब. केन्द्रकविभाजन (Karyokinesis)

स. कोशिकाद्रव्य विभाजन (Cytokinesis)

(अ) अन्तरावस्था (Interphase) :– यह दो क्रमिक विभाजनों के मध्य की वह अवधि है जब कोशिका स्वयं को विभाजन के लिये तैयार करती है। इस अवधि में कोशिकाद्रव्य व केन्द्रक दोनों में सक्रिय उपापचय हो रहा होता है और कोशिकाएँ उन सभी आवश्यक पदार्थों का संश्लेषण एवं संग्रह करती हैं, जिनकी कोशिका विभाजन के समय आवश्यकता होती है।

(ब) केन्द्रक विभाजन (Karyokinesis)- इस अवस्था में केन्द्रक दो पुत्री केन्द्रकों में विभाजित हो जाता है। अध्ययन में सुविधा हेतु इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को चार प्रावस्थाओं (Phases) में विभक्त किया गया है। ये प्रावस्थायें क्रमशः पूर्वावस्था (Prophase), मध्यावस्था (Metaphase), पश्चावस्था (Anaphase) व अंत्यावस्था (Telophase) है।

1. पूर्वावस्था (Prophase) :– समसूत्री विभाजन का प्रारम्भ पूर्वावस्था से होता है। इस अवस्था में – 1. केन्द्रक के गुणसूत्री पदार्थ का संघनन होने से यह पतले महीन स्पष्ट धागों में रूपान्तरित हो जाता है तथा ये गुणसूत्री धागे लम्बाई में छोटे व अधिक मोटे दिखाई देते हैं और **गुणसूत्र** कहलाते हैं। 2. पूर्वावस्था के अन्तिम चरण में प्रत्येक गुणसूत्र के दोनों अर्ध गुणसूत्र (क्रोमेटिड) अधिक स्पष्ट हो जाते हैं तथा दोनों अर्धगुणसूत्र केवल **गुणसूत्रबिन्दु** अथवा **सेन्ट्रोमियर (Centromere)** पर ही परस्पर जुड़े रहते हैं। 3. केन्द्रिक व केन्द्रकीय झिल्ली इस प्रावस्था के अन्तिम चरण में धीरे–धीरे अस्पष्ट होते हुये अन्ततः विलुप्त हो जाती है। 4. जन्तु कोशिका में तारककाय विभाजित होकर दो पुत्री तारककेन्द्र बनाती है, तथा प्रत्येक पुत्री तारक केन्द्र ध्रुव निर्धारण करती है।

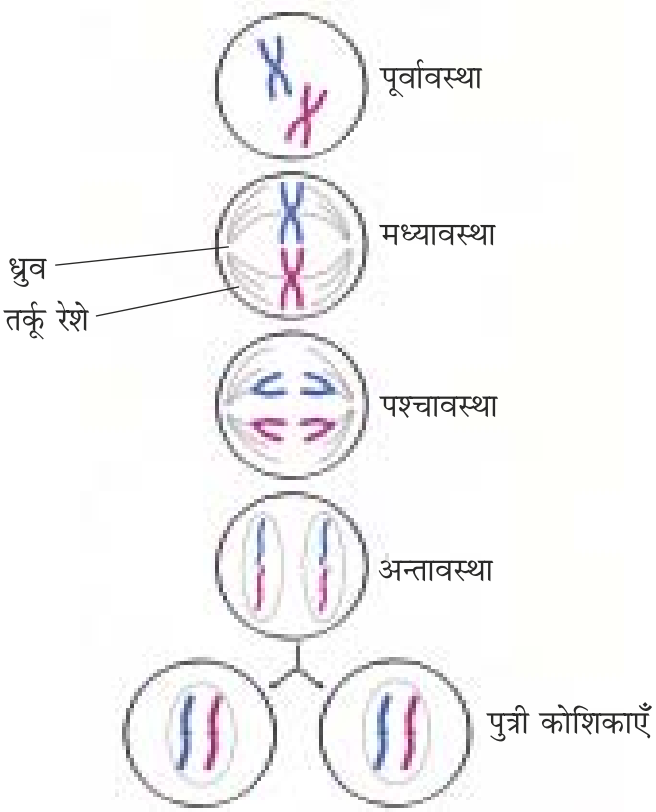

चित्र 6.9 समसूत्री विभाजन की प्रावस्थाएं

2. मध्यावस्था (Metaphase) – 1. तर्कु रेशों (Spindle fibres) का बनना व तर्कु के मध्यवर्ती क्षेत्र में गुणसूत्र का विन्यास इस प्रावस्था की मुख्य घटनाएं है। प्रत्येक तारक केन्द्र से तारक किरणें (Astral rays) निकली रहती है, ये किरणें मिलकर तर्कु रेशों (Spindle fibres) का निर्माण कर देती है। 2. गुणसूत्र केन्द्रक की परिधि से तर्कु के मध्यवर्ती क्षेत्र की ओर गमन करके तर्कु तन्तु पर इस प्रकार अभिविन्यस्त हो जाते है कि उनके

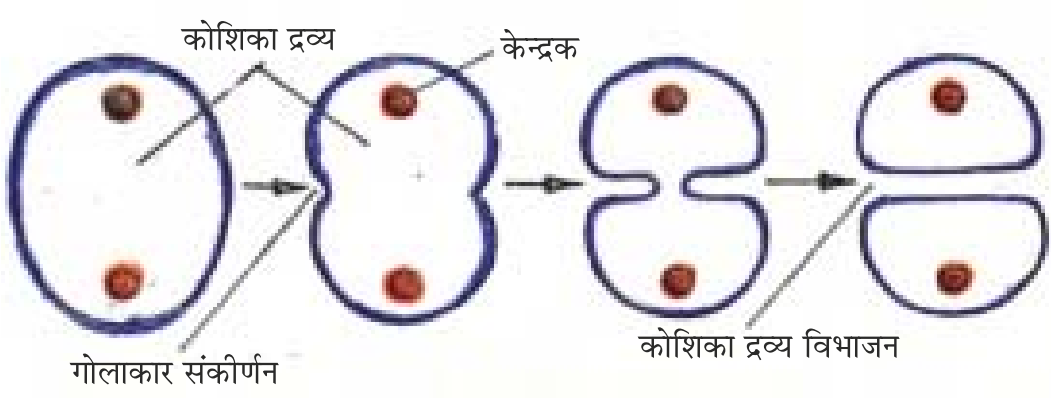

चित्र 6.10 विदलन विधि

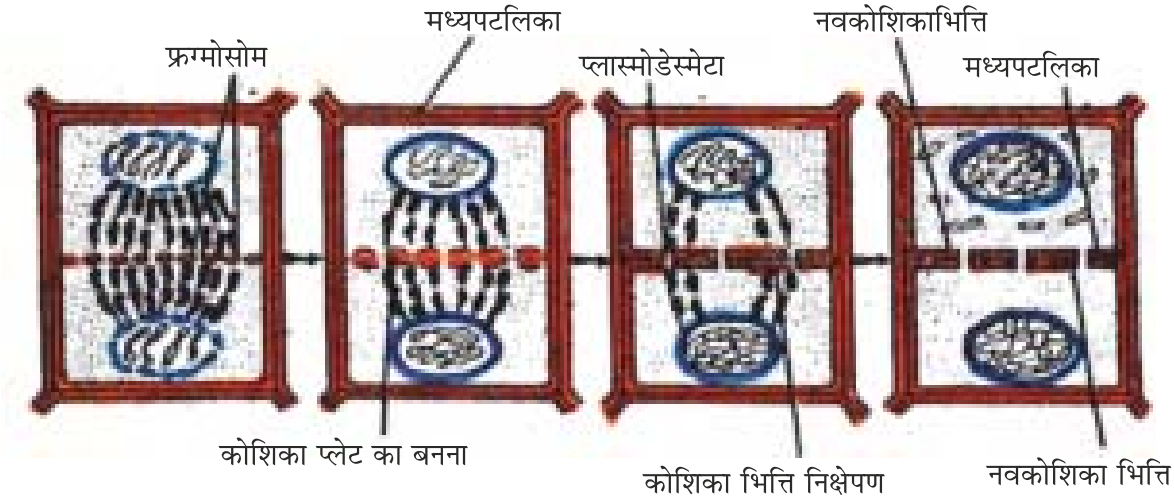

चित्र 6.11 कोशिका पटलिका विधि

गुणसूत्रबिन्दु या सेन्ट्रोमियर मध्यवर्ती भाग में स्थित रहें और गुणसूत्र की भुजायें ध्रुवों की ओर अभिविन्यस्त रहें।

3. पश्चावस्था (Anaphase) :– 1. प्रत्येक गुणसूत्रबिन्दु या सेन्ट्रोमियर विभाजित होता है, जिससे एक गुणसूत्र के दोनों क्रोमेटिड (अर्धगुणसूत्र) पृथक हो जाते है, जिन्हें अब पुत्री गुणसूत्र कहते हैं। 2. पुत्री गुणसूत्र एक–दूसरे से पृथक होकर विपरीत ध्रुवों की ओर अभिगमन करते हैं। पुत्री गुणसूत्रों का ध्रुवों की ओर अभिगमन तर्कुतन्तुओं के संकुचन से नियंत्रित होता है। जिसे **पश्चावस्था अभिगमन (Anaphasic movement)** कहते हैं। 3. ध्रुवों की ओर अभिगमन में सर्वप्रथम सेन्ट्रोमियर ध्रुव की ओर खिंचता है इस कारण इस प्रावस्था में पुत्री गुणसूत्र की दोनों भुजाएं मध्यवर्ती क्षेत्र की ओर व सेन्ट्रोमियर ध्रुवों की ओर सम्मुख रहते हैं।

4. अन्त्यावस्था (Telophase) :– 1. पुत्री गुणसूत्र दोनों ध्रुवों पर पहुंचकर अकुण्डलित होकर जालिका बनाते हैं, इस प्रकार प्रत्येक ध्रुव पर गुणसूत्रों का समूह बन जाता हैं। 2. प्रत्येक गुणसूत्रीय समूह के चारों ओर केन्द्रीय आवरण परिवर्धित होने से प्रत्येक जनक कोशिका में दो सन्तति केन्द्रक बन जाते हैं तथा प्रत्येक केन्द्रक में केन्द्रिक का भी परिवर्धन होने लगता है।

स. कोशिकाद्रव्य विभाजन (Cytokinesis) :– कोशिका के केन्द्रक के विभाजन के बाद कोशिकाद्रव्य का विभाजन होता है। जन्तु कोशिका व पादप कोशिका में कोशिकाद्रव्य विभाजन की विधियाँ अलग–अलग होती है।

1. विदलन विधि (Cleavage Method):– विभाजनशील जन्तु कोशिका के मध्य भाग में खाँच (Furrow) बनना प्रारम्भ होती है। यह खाँच केन्द्रीय भाग की ओर बढ़ती जाती है व जनक कोशिका को दो सन्तति कोशिकाओं में बाँट देती है।

2. कोशिका पटलिका विधि (Cell Plate Method) :– विभाजनशील पादप कोशिका के मध्य में विभिन्न पदार्थों के जमा होने से पटलिका बनने लगती है जो केन्द्र से परिधि की ओर बढ़ती है। पटलिका के दोनों ओर सेल्यूलोज जमा होने से कोशिका भित्ति बन जाती है।

समसूत्री विभाजन का महत्व (Significance of mitosis) समसूत्री विभाजन द्वारा शरीर की वृद्धि व शरीर के अंगों की मरम्मत होती है। निम्न श्रेणी के जीवों में इस विभाजन द्वारा अलैंगिक जनन होता है।

II. अर्धसूत्री विभाजन (Meiosis)

अर्धसूत्री विभाजन लैंगिक जनन के समय द्विगुणित जनन कोशिकाओं में होता है, जिसके फलस्वरूप अगुणित युग्मक बनते हैं। इस विभाजन के फलस्वरूप बनी सन्तति कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या जनक कोशिका की तुलना में आधी होती है।

अर्धसूत्री विभाजन के चरण :– अर्धसूत्री विभाजन दो चरणों में पूरा होता है। इस विभाजन में कोशिका दो बार विभाजित होती है, जिससे एक द्विगुणित जनक कोशिका से चार अगुणित सन्तति कोशिकायें बनती हैं।

1. अर्धसूत्री विभाजन प्रथम (Meiosis I)
2. अर्धसूत्री विभाजन द्वितीय (Meiosis II)

(1) अर्धसूत्री विभाजन प्रथम (Meiosis I)

इस विभाजन में समसूत्री विभाजन की भांति कोशिका विभाजन से पूर्व अन्तरावस्था होती है। अन्तरावस्था में कोशिका विभाजन के लिये आवश्यक पदार्थों का संश्लेषण होता है। उसके बाद कोशिका विभाजन की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। अर्धसूत्री विभाजन प्रथम में जनक कोशिका के विभाजन से दो कोशिकाएं बनती है तथा बनने वाली कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या जनक कोशिका की आधी रह जाती है। इसलिये इसे **न्यूनकारी विभाजन (Reductive division)** भी कहते हैं। इस विभाजन की निम्न प्रावस्थायें हैं।

(अ) पूर्वावस्था प्रथम (Prophase I) :– समसूत्री विभाजन की पूर्वावस्था की तुलना में यह प्रावस्था लम्बी अवधि की व जटिल घटनाओं वाली होती है। पूर्वावस्था प्रथम में समसूत्री विभाजन की पूर्वावस्था के समान गुणसूत्रों का संघनन, तारककाय का विभाजन, केन्द्रिक व केन्द्रक झिल्ली का लुप्त होना आदि घटनाएं होती है। इन घटनाओं के अतिरिक्त समान जीन रखने वाले समजात गुणसूत्रों के क्रोमेटिड आपस में कुण्डलित हो जाते हैं, जिससे क्रोमेटिड के भागों का आपस में आदान प्रदान होता है। इस घटना को **जीनविनिमय (Crossing over)** कहते हैं। जीन विनिमय की घटना के फलस्वरूप क्रोमेटिड्स में जीनों के नये समूह बन जाते हैं। पूर्वावस्था प्रथम में समजात गुणसूत्रों में होने वाले जीन विनिमय के कारण अगली पीढ़ी के लक्षणों में भिन्नता उत्पन्न हो जाती है।

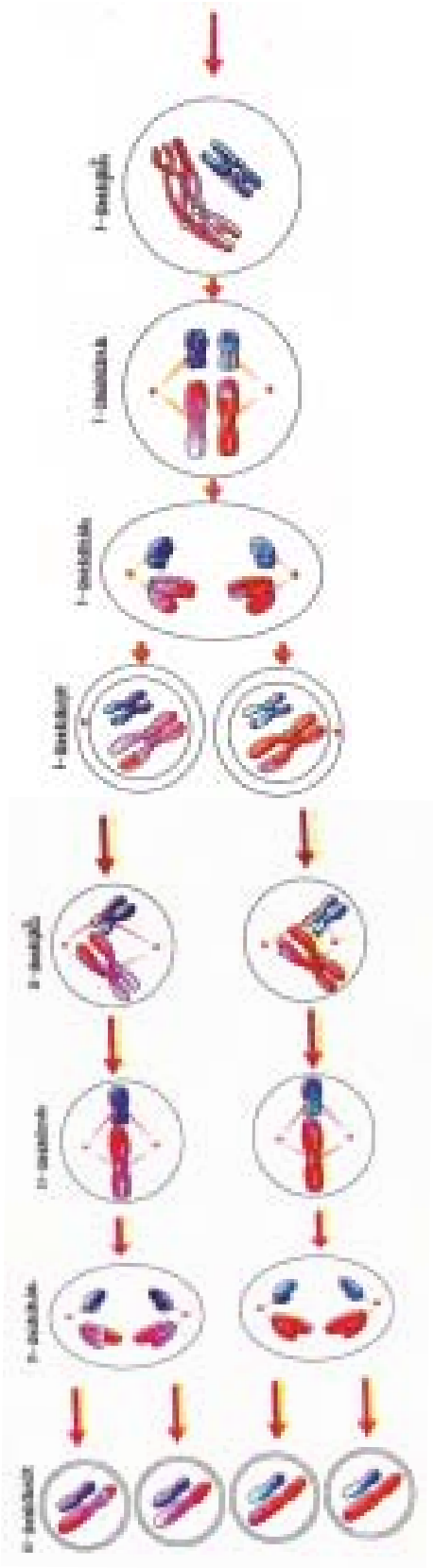

चित्र 6.12 अर्द्धसूत्री विभाजन की प्रावस्थाएं

(अ) मध्यावस्था प्रथम (Metaphase I) :– इस प्रावस्था में ध्रुव व तर्कु तन्तु बन जाते हैं तथा गुणसूत्र मध्य पट्टिका के दोनों ओर एक–एक समूह में जमा हो जाते हैं। इस प्रावस्था में दोनों गुणसूत्रों के गुणसूत्रबिन्दु (Centromere) ध्रुवों की ओर तथा गुणसूत्रों की भुजाएं मध्य पटलिका की ओर अभिविन्यासित होती है।

(ब) पश्चावस्था प्रथम (Anaphase I) :– इस प्रावस्था में समसूत्री विभाजन की पश्चावस्था के समान यहाँ सेन्ट्रोमियर का विभाजन नहीं होता है। तर्कु तन्तुओं के संकुचन से पूर्ण गुणसूत्र अपने ध्रुव की ओर गमन करता है तथा पश्चावस्था प्रथम के अन्त तक प्रत्येक ध्रुव पर गुणसूत्रों का एक–एक समूह बन जाता है।

(स) अन्त्यावस्था प्रथम (Telophase I) :– इस प्रावस्था में गुणसूत्र अकुण्डलित होकर क्रोमेटिन जाल में बदल जाते हैं। प्रत्येक ध्रुव पर क्रोमेटिन जाल के चारों ओर केन्द्रक झिल्ली व केन्द्रिक बन जाने से प्रत्येक ध्रुव पर एक–एक अगुणित केन्द्रक बन जाते हैं। अन्त्यावस्था के पश्चात कोशिकाद्रव्य विभाजन समसूत्री विभाजन के कोशिकाद्रव्य विभाजन की तरह ही होता है, जिससे प्रत्येक द्विगुणित कोशिका से दो अगुणित सन्तति कोशिकाएं बन जाती है।

(2) अर्द्धसूत्री विभाजन द्वितीय (Meiosis II)

अर्द्धसूत्री विभाजन प्रथम के फलस्वरूप बनी दोनों अगुणित सन्तति कोशिकाओं में समसूत्री विभाजन के समान एक ओर विभाजन होता है जिसे **अर्द्धसूत्री विभाजन–द्वितीय** कहते है।

अर्द्धसूत्री विभाजन–द्वितीय में प्रत्येक अगुणित सन्तति कोशिका से दो सन्तति कोशिकाएं बनती हैं। इस प्रकार अर्द्धसूत्री विभाजन में एक द्विगुणित जनक कोशिका से चार अगुणित सन्तति कोशिकाएं बनती हैं। इस विभाजन में पूर्वावस्था लम्बी अवधि की नहीं होती है।

अर्द्धसूत्री विभाजन का महत्व (Significance of Meiosis) :– अर्द्धसूत्री विभाजन द्वारा लैंगिक जनन करने वाले जीवों की कायिक कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या पीढ़ी दर पीढ़ी समान बनी रहती है। अर्द्धसूत्री विभाजन की पूर्वावस्था मे जीनविनिमय की घटना से आनुवंशिक गुणों के नये–नये संयोग बनते हैं। इससे जीवों में आनुवंशिक विभिन्नताएं उत्पन्न होती है, जो जैव विकास का आधार है।

6.7 अकोशिक जीव–वाइरस या विषाणु (Acellular organism-virus)

वाइरस को अपूर्ण कोशिका माना गया है। इसको कोशिका की संज्ञा नहीं दी जा सकती क्योंकि इनमें कोशिका के चार लक्षणों में से एक ही लक्षण मिलता है। इसमें केवल आनुवंशिक पदार्थ DNA अथवा RNA होता है जिसके कारण वाइरस में **जनन, वंशानुगति** तथा **उत्परिवर्तन** की क्षमता होती है। वाइरस में कोशिकाकला, उपापचय यंत्रावली तथा जैव रसायन यन्त्रावली नहीं होती। ये केवल जीवित प्रणाली में ही जनन कर सकते हैं।

सजीव कोशिका के अन्दर पहुंचकर उसकी जैव संश्लेषण यंत्रावली से ये प्रोटीन व न्यूक्लिक अम्ल का संश्लेषण करते हैं। जिससे इनकी संख्या में वृद्धि होती है। वाइरस परजीवी है, ये जन्तुओं, पेड़–पौधों व जीवाणु की कोशिकाओं में पाये जाते हैं। पोषक कोशिका के बाहर वाइरस निष्क्रिय रहते हैं। उन्हें रासायनिक यौगिकों के क्रिस्टलीय कणों के समान बड़े–बड़े कणों के रूप में बोतलों में भरकर रखा जा सकता है।

वाइरस की संरचना :– वाइरस इतने सूक्ष्म होते हैं कि इनको केवल इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी द्वारा ही देखा जा सकता है। ये आकार में 30 nm से 300 nm तक होते हैं।

वाइरस के प्रत्येक कण को **विरिऑन (Virion)** कहते है। प्रत्येक कण के चारों ओर प्रोटीन का खोल होता है इसे **केप्सिड (Capsid)** कहते हैं। इसके प्रोटीन खोल के मध्य में न्यूक्लिक अम्ल DNA अथवा RNA होता है।

पोषण के आधार पर वाइरस को तीन श्रेणियों में बाँटा गया है।

1. प्राणी वाइरस (Animal Virus) :– प्राणी वाइरस जन्तु कोशिकाओं में परजीवी के रूप में पाये जाते हैं। इनमें आनुवंशिक पदार्थ प्रायः DNA तथा कभी–कभी RNA भी होता है। ये गोलाकार या षटभुजाकार होते हैं। चेचक, पोलियो, इन्फ्लुएन्जा आदि रोग मनुष्य में वाइरस के कारण ही उत्पन्न होते हैं।

2. पादप वाइरस (Plant Virus) :– ये पादप कोशिकाओं के परजीवी हैं। इनमें सामान्यतः RNA आनुवंशिक पदार्थ होता है। तम्बाकू मोजेक रोग का कारण वाइरस ही है।

3. जीवाणुभोजी (Bacteriophage) :– जीवाणुओं पर परजीवी वाइरस को **जीवाणुभोजी (Bacteriophage)** कहते हैं। जीवाणुभोजी में आनुवांशिक पदार्थ DNA पाया जाता है। T_4 जीवाणुभोजी जो **एशेरिकिया कोलाई** जीवाणु का परजीवी है। इसमें एक षटभुजाकार सिर, एक छोटी ग्रीवा, एक कॉलर तथा एक लम्बी बेलनाकार पूँछ होती है। सिर में द्विवलयकी चक्रिय DNA होता है।

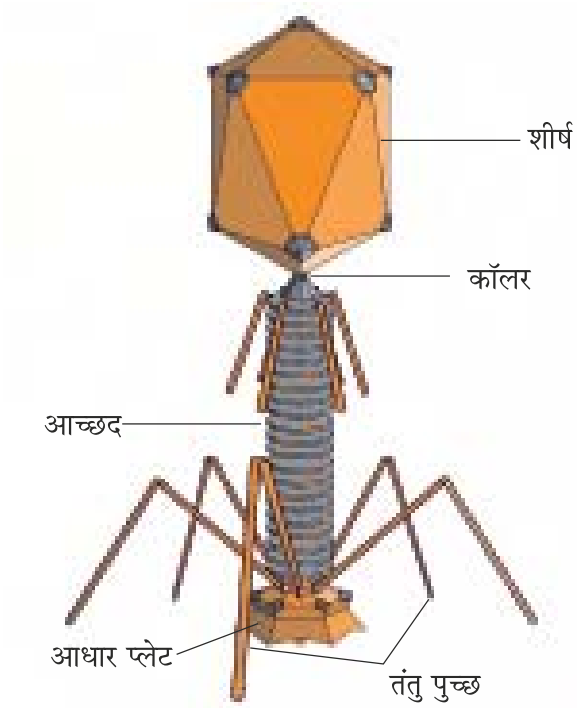

चित्र 6.13 जीवाणुभोजी

6.8 बहुकोशिय जीवों की रचना (Structure of multicellular organisms)

आपने इसी अध्याय में अध्ययन किया कि एककोशिक जीवों के शरीर में एक कोशिका द्वारा ही जीवों में होने वाली सभी क्रियाएं जैसे पोषण, उत्सर्जन, जनन आदि होती है। बहुकोशिक जीवों में कोशिकाएं सम्मिलित रूप से विभिन्न प्रकार के ऊतक (Tissue) बनाती है। ऊतक सम्मिलित रूप से अंग व अंगों के मिलने से शरीर के विभिन्न तंत्र (System) बनते हैं। अब हम पादपों व जन्तुओं में पाये जाने वाले विभिन्न ऊतकों का अध्ययन करेंगे।

6.9 ऊतक (Tissue)

"कोशिकाओं का समूह जिनकी उत्पत्ति (Origin) परिवर्धन (Development) व कार्य (Function) समान हो **ऊतक (Tissue)** कहलाता है।"

6.10 जन्तु व वनस्पति ऊतकों के प्रमुख प्रकार (Mojor types of Animal & Plant Tessues)

एक ही प्रकार का ऊतक एक विशिष्ट कार्य करता है। ऊतकों को उनके परिवर्धन की अवस्था के आधार पर दो प्रमुख समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

I. पादप ऊतक (Plant Tissue)

II. जन्तु ऊतक (Animal Tissue)

I. पादप ऊतक (Plant Tissue)

पादप ऊतक निम्न प्रकार के होते हैं–

1. विभज्योतक (Meristematic Tissue)
2. स्थायी ऊतक (Permanent Tissue)

1. विभज्योतक (Meristematic Tissue) :– पादपों में ये ऊतक सक्रिय वृद्धि वाले क्षेत्रों में पाये जाते है। विभज्योतक ऐसी जीवित कोशिकाओं का समूह है जिनमें विभेदन पूर्ण नहीं होता है। कोशिकाएँ विभाजन क्षमता युक्त होती हैं और नई कोशिकाएँ बनाती है। इनकी कोशिकाएं गोलाकार, अण्डाकार होती है। कोशिकाओं के मध्य अन्तरकोशिकी स्थान (Intercellular space) नहीं पाया जाता है। इस ऊतक की कोशिकाओं का जीवद्रव्य गाढ़ा व केन्द्रक बड़ा होता है, तथा कोशिका भित्ति पतली होती है। पादप में स्थिति के आधार पर विभज्योतक तीन प्रकार के होते हैं –

चित्र 6.14 विभज्योतक

(क) शीर्षस्थ विभज्योतक (Apical Meristem) :– यह स्तम्भ व मूल के शीर्ष भाग में पाया जाता है तथा इस ऊतक के फलस्वरूप पादप की लम्बाई में वृद्धि होती है।

(ख) अन्तर्वेशी विभज्योतक (Intercalary Meristem):– यह वास्तव में शीर्ष विभज्योतक का ही भाग है, परन्तु स्थायी ऊतकों के बीच में आ जाने से यह शीर्ष विभज्योतक से अलग हो जाता है। यह ऊतक घास व अन्य एक बीजपत्री पादपों की पर्व

के आधार पर स्थित होते है। इनके कारण पादप के स्तम्भ के पर्व की वृद्धि होती है।

(ग) पार्श्वीय विभज्योतक (Lateral Meristem) :– यह ऊतक स्तम्भ व जड़ के पार्श्व भाग में स्थित होते हैं। इस ऊतक की क्रिया के फलस्वरूप स्तम्भ व जड़ की मोटाई में वृद्धि होती है।

2. स्थायी ऊतक (Permanent Tissue) :–

स्थायी ऊतक ऐसी कोशिकाओं का समूह होता है, जिनमे विभाजन की क्षमता सामान्यतः नष्ट हो जाती है, तथा वृद्धि कर निश्चित आकार व आकृति की हो जाती है व पादप शरीर के विशेष कार्य को करती है। स्थायी ऊतक दो प्रकार के होते हैं।

1. सरल ऊतक 2. जटिल ऊतक

(क) सरल ऊतक (Simple Tissue) समान उत्पति, आकार, व कार्य करने वाली एक ही प्रकार की कोशिकाओं से सरल ऊतक बनता है।

सरल स्थायी ऊतक निम्न प्रकार के होते है।

1. मृदूतक 2. स्थूलकोणोतक
3. दृढ़ोतक

1. मृदूतक (Parenchyma) :– यह पादपों में बहुतायत से पाया जाने वाला ऊतक है। इसकी कोशिकायें समव्यासीय व गोलाकार होती है। कोशिकाओं के मध्य अन्तर कोशिकीय स्थान पाये जाते हैं। कोशिका भित्ति पतली व सेल्यूलोज की बनी होती है। मृदूतक पादप के कोमल भागों मे पाये जाते हैं तथा खाद्य संग्रह का कार्य करते हैं। जब मृदूतक कोशिकाओं में हरितलवक होते हैं तब इन्हें **हरितऊतक (Chlorenchyma)** कहते हैं, व यह प्रकाश संश्लेषण का कार्य करता है।

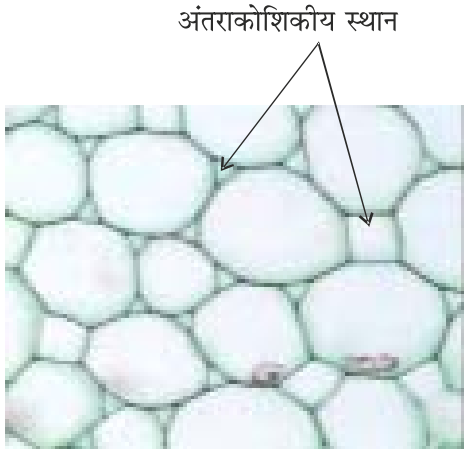

चित्र 6.15 मृदूतक

2. स्थूलकोण ऊतक (Collenchyma) इस ऊत्तक की कोशिकाएँ गोलाकार, अण्डाकार या बहुभुजाकार होती है। इन कोशिकाओं में अन्तर कोशिकीय स्थल के सामने के कोणों पर कोशिका भित्ति अधिक मोटी होती है। यह मोटाई कोणों पर **सेल्यूलोज** व **पेक्टिन** के जमाव के कारण होती है। यह ऊतक पादप अंगों को लचकमय दृढता (Flexible strength) प्रदान करता है।

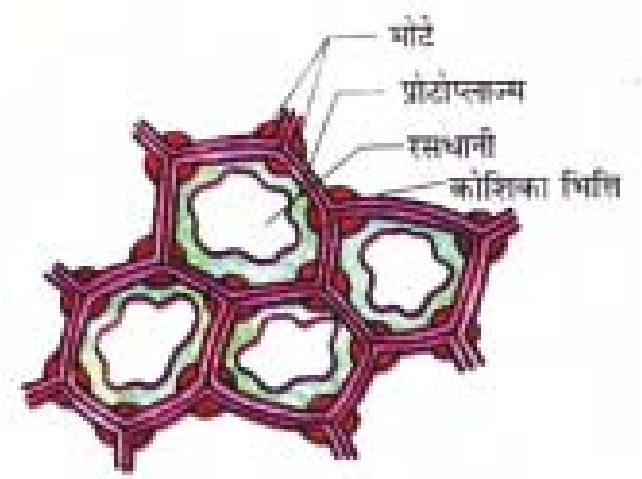

चित्र 6.16 स्थूल कोण ऊतक

3. दृढ़ोतक (Sclerenchyma) :– इस ऊत्तक की कोशिकाएँ प्रायः लम्बी, सँकरी व नुकीले सिरों वाली होती हैं। कोशिका भित्ति पर **लिग्निन (Lignin)** का अधिक जमाव होने के कारण कोशिका भित्ति समान मोटाई की काफी मोटी हो जाती है। प्रौढ़ अवस्था में इन कोशिकाओं में जीवद्रव्य नही रहता। यह ऊतक पादप के कठोर भागों में पाया जाता है तथा यान्त्रिक सामर्थ्य प्रदान करता है।

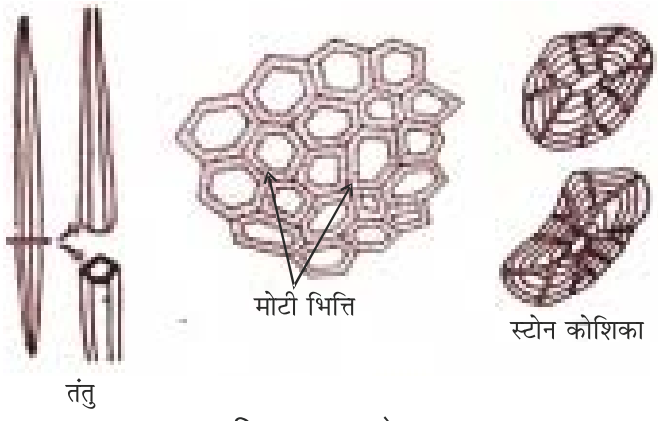

चित्र 6.17 दृढोतक

(ख) जटिल ऊतक (Complex Tissue) :– जटिल ऊतक में एक से अधिक प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं। ये सभी

कोशिकाएँ मिलकर एक इकाई के समान कार्य करती हैं। इस ऊतक की सभी कोशिकायें एक–दूसरे से सहयोग कर विशेष कार्य करती है। जटिल ऊतक दो प्रकार के होते हैं।

1. जायलम 2. फ्लोयम

1. जायलम (Xylem) :– जायलम का मुख्य कार्य जल व खनिज लवणों का चालन करना है।

जायलम में चार प्रकार की कोशिकायें होती है।

(i) वाहिनिकायें (ii) वाहिकायें

(iii) जायलम तन्तु (vi) जायलम मृदूतक

इन चार प्रकार की कोशिकाओं मे से जायलम मृदूतक कोशिकायें ही जीवित होती है अन्य सभी मृत होती है।

वाहिनिका लम्बी व नुकीले सिरों वाली संकरी कोशिका है। इनकी भित्तियां कठोर व लिग्नीकृत होती है। इनमें **जीवद्रव्यक (Protoplast)** नहीं होता और यह मृत होती है। वाहिका बेलनाकार व चौड़ी गुहा वाली कोशिका है जो एक–दूसरे से जुड़कर नलिकाकार संरचना बनाती है। इनकी भित्ति भी लिग्नीकृत होती है, यह भी मृत होती है।

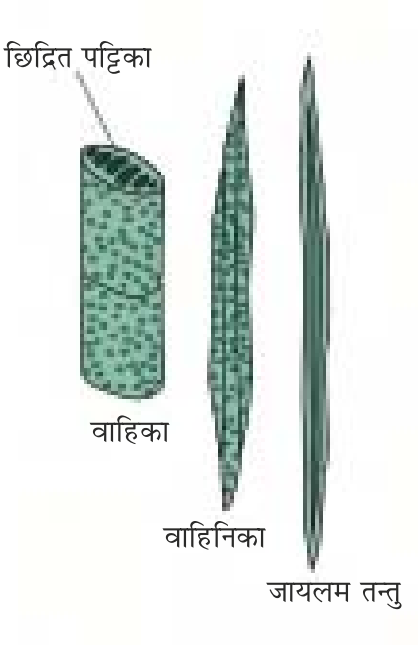

चित्र 6.18 जायलम

जायलम तन्तु लम्बी कोशिकायें होती हैं तथा इनमें लिग्निन का स्थूलन अधिक होने के कारण गुहिका कम हो जाती है। यह भी मृत होती है, जायलम मृदूतक सामान्य मृदूतक के समान होता है।

2. फ्लोयम (Phloem) :– फ्लोयम का मुख्य कार्य खाद्य पदार्थों का तने व जड़ों की ओर संवहन करना है।

फ्लोयम में चार प्रकार की कोशिकायें पायी जाती है।

1. चालनी नलिकायें 2. सह कोशिकायें

3. फ्लोयम रेशे 4. फ्लोयम मृदूतक

चालनी नलिका कोमल भित्ति, बड़ी कोशिका गुहा वाली, जीवित संरचना है। इन कोशिकाओं की लम्बाई अधिक व चौड़ाई कम होती है। चालनी नलिका बनाने वाली कोशिकाओं के सिरे की भित्ति छिद्रित होती है। इस प्रकार पूरी नलिका में जहां–जहां अनुप्रस्थ पट्टिकायें लगी होती हैं। इन पर बहुत से छिद्र उपस्थित होने के कारण इन पट्टिकाओं को **चालनी पट्टिकायें (Sieve plates)** कहते हैं। चालनी नलिका की कोशिकाओं में केन्द्रक नहीं होता है। चालनी नलिकाओं में पादपों के खाद्य पदार्थों का घुलित अवस्था में स्थानान्तरण होता है। प्रत्येक चालनी कोशिका के पास मृदूतकी कोशिका होती है, जिसमें सघन जीवद्रव्य व बड़ा केन्द्रक पाया जाता है। उसे **सहकोशिका (Companion Cell)** कहते हैं। सहकोशिका चालनी नलिका पर नियन्त्रण रखती है।

फ्लोयम में मिलने वाले रेशे दृढोतक के बने होते हैं तथा भित्ति लिग्नीकृत होती है। ये रेशे यांत्रिक शक्ति प्रदान करते हैं। फ्लोयम मृदूतक सामान्य मृदूतक के समान ही होता है।

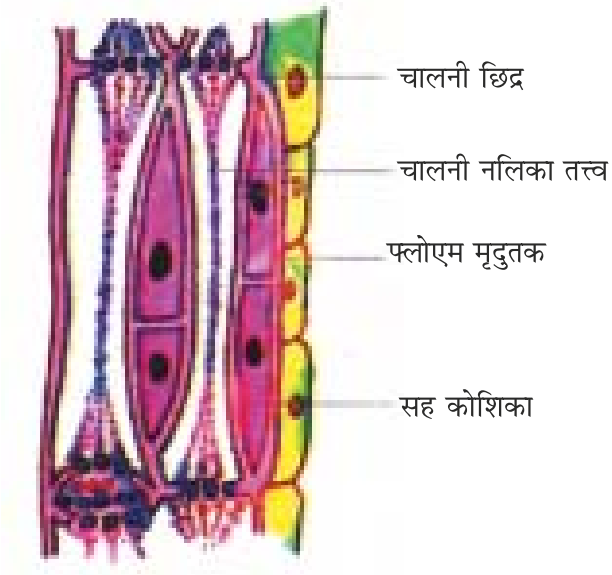

चित्र 6.19 फ्लोयम

II. जन्तु उतक (Animal Tissue) बहुकोशिकीय जन्तुओं में कार्य व संरचना के आधार पर मुख्यतः चार प्रकार के ऊतक पाये जाते हैं।

1. उपकला ऊतक 2. संयोजी ऊतक

3. पेशी ऊतक 4. तंत्रिका ऊतक

1. उपकला ऊतक (Epithelium Tissue) :– उपकला ऊतक जन्तुओं के शरीर का आवरण का निर्माण करता है जो एक

ओर से देह तरल तथा दूसरी ओर वातावरण के सम्पर्क में रहता है। उपकला ऊतक सरल उपकला व संयुक्त उपकला प्रकार का होता है। सरल उपकला एक स्तर का बना होता है यह देहगुहा, वाहिनियों का स्तर बनाता है। सरल उपकला कोशिकाओं के रूपान्तरण के आधार पर अलग–अलग प्रकार का होता है। चपटी कोशिकाओं वाला शल्की उपकला, घन के आकार की कोशिकाओं वाला घनाकार उपकला व लम्बी व पतली कोशिकाओं वाला स्तम्भाकार उपकला कहलाता है। तथा संयुक्त उपकला दो या अधिक स्तरों का बना होता है। जन्तुओं की त्वचा एक संयुक्त उपकला है।

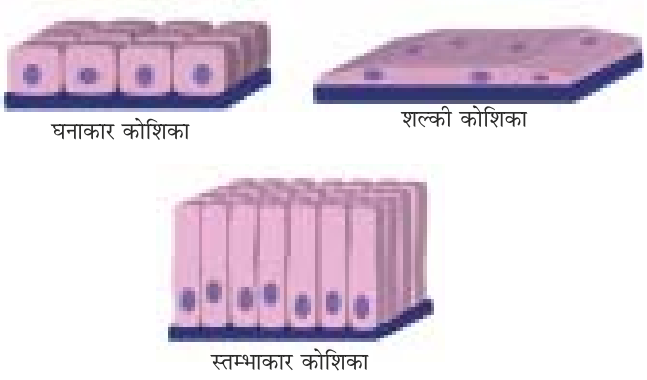

चित्र 6.20 उपकला ऊतक

2. संयोजी ऊतक (Connective Tissues) :– यह शरीर के अन्य ऊतकों व अंगों को एक–दूसरे से जोड़ने वाला ऊतक है, इसलिये इसे संयोजी ऊतक कहते हैं। संयोजी ऊतक में कोमल ऊतक, उपास्थि, अस्थि, वसीय ऊतक व रक्त सम्मिलित हैं।

चित्र 6.21 संयोजी ऊतक

रक्त को छोडकर सभी संयोजी ऊतकों में कोशिका संरचनात्मक प्रोटीन स्त्रावित करती है, जिसे **कोलेजन तंतु** कहते हैं। यह कोलेजन तंतु ऊतक को शक्ति, प्रत्यास्थता व लचीलापन प्रदान करते हैं। कोशिका पॉलिसैकेराइडस् भी स्त्रावित करती हैं, जो कोशिका व तन्तु के बीच में आधात्री का कार्य करता है। उपास्थि मनुष्य में नाक की नोंक, बाह्य कर्ण सन्धियों आदि में पायी जाती है। अस्थि खनिज युक्त ठोस संयोजी ऊतक है, यह शरीर के कोमल अंगों का संरचनात्मक ढांचा बनाता है, तथा ऊतकों को सहारा व सुरक्षा देती है।

वसा ऊतक एक शिथिल संयोजी ऊतक है जो त्वचा के नीचे स्थित होता है, इस ऊतक की कोशिकाओं में वसा का संग्रहण होता है। रक्त एक तरल संयोजी ऊतक है, जिसमें प्लाज्मा, लाल रक्त कणिकाऐं, श्वेत रक्त कणिकाऐं व बिम्बाणु पाये जाते है, रक्त शरीर में विभिन्न पदार्थों के परिवहन का कार्य करता है।

3. पेशी ऊतक (Muscular Tissues) :– पेशी ऊतक लम्बे व बेलनाकार तन्तुओं से बना होता है जो एक–दूसरे के समानान्तर व्यवस्थित रहते हैं। प्रत्येक तन्तु कई सूक्ष्म तंतुकों (Fibril) का बना होता है, जिसे **पेशी तंतुक (Myofibril)** कहते हैं।

समस्त पेशी तंतु उद्दीपन के कारण समन्वित रूप से संकुचित होते हैं तथा पुनः असंकुचित हो जाते हैं। पेशीय ऊतक की क्रिया द्वारा शरीर व उसके अंग वातावरण के उद्दीपन के फलस्वरूप गति करके अनुक्रिया करते हैं।

पेशीय ऊतक तीन प्रकार के होते हैं।

क. कंकाल पेशी ख. चिकनी पेशी

ग. हृदय पेशी

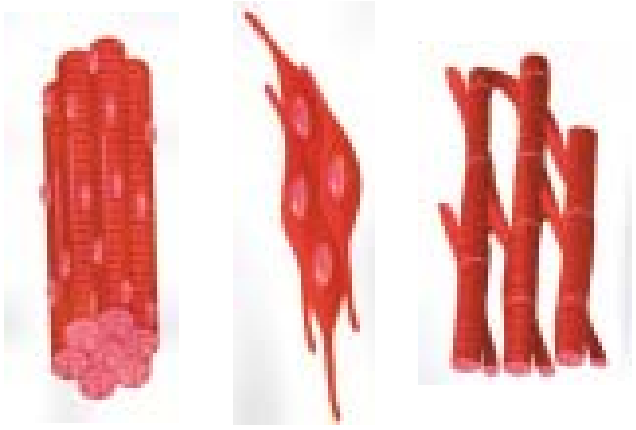

चित्र 6.22 पेशीय ऊत्तक

क. कंकाल पेशी (Skeletal muscle) :– यह पेशियाँ मुख्य रूप से कंकाल की अस्थियों से जुड़ी रहती हैं। इस पेशी में धारियों की उपस्थिति के कारण इन्हें रेखित पेशी भी कहते हैं। कंकाल पेशी की क्रियाओं का तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक नियन्त्रण होता है अतः इन्हें ऐच्छिक पेशियाँ भी कहते हैं। यह पेशी गमन व शरीर के अंग संचलन में सहायक होती है।

ख. चिकनी पेशी (Smooth muscle) :– यह पेशियाँ शरीर के आन्तरिक अंगों जैसे आहारनाल, जनन्मार्ग की भीतरी भित्ति में स्थित होती हैं, इनमें धारियों की अनुपस्थिति के कारण इसे अरेखित पेशी कहते हैं तथा तंत्रिका तंत्र के ऐच्छिक नियन्त्रण में नहीं होने के कारण इसे अनैच्छिक पेशी भी कहते हैं।

ग. हृदय पेशी (Cardiac muscle) :– यह हृदय की पेशी है, धारियों की उपस्थिति के कारण ये रेखित होती है, परन्तु तंत्रिका तंत्र के ऐच्छिक नियंत्रण में नहीं होने के कारण यह अनैच्छिक पेशी है।

4. तंत्रिका ऊतक (Nervous Tissues) तंत्रिका ऊतक उद्दीपन के फलस्वरूप शरीर की अनुक्रिया के नियन्त्रण के लिये उत्तरदायी होता है। तंत्रिका ऊतक विशिष्ठ प्रकार की कोशिकाओं से बनता है, जिन्हें तंत्रिका कोशिका (Neuron) कहते हैं। तंत्रिका कोशिका उद्दीपन को ग्रहण करती है तथा इनका संचरण करती है।

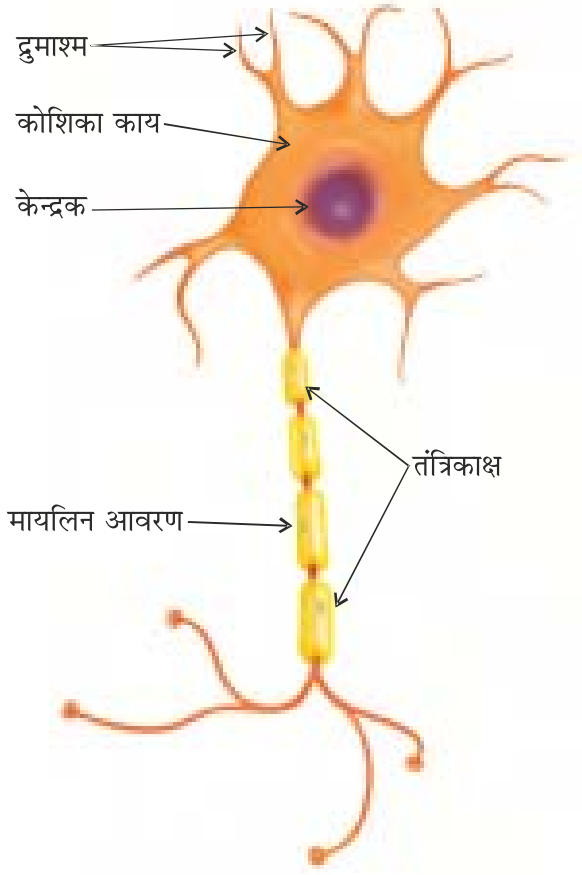

चित्र 6.23 तंत्रिका कोशिका

तंत्रिका कोशिका कोशिका काय, दूमाश्म व तंत्रिकाक्ष से मिलकर बनती है। तंत्रिका कोशिका में उद्दीपन विद्युत व रासायनिक संकेतों के रूप में संचरित होते हैं, जिन्हें **आवेग (Impulse)** कहते हैं।

6.11 अंग व तंत्रों की संरचना
(Structure of organs and systems)

इस अध्याय में हमने अब तक विभिन्न प्रकार के ऊतकों व उनमें स्थित कोशिकाओं के प्रकार का अध्ययन किया। अब हम पादप व जन्तुओं के विभिन्न अंगों या भागों में पाये जाने वाले ऊतकों व तंत्रों की रचना व कार्यो का अध्ययन करेंगे।

रचना व स्थिति के आधार पर पादपों में ऊतक तंत्र तीन प्रकार के होते हैं।

1. बाह्य त्वचीय ऊतक तंत्र
2. भरण ऊतक तंत्र
3. संवहनी ऊतक तंत्र

1. बाह्य त्वचीय ऊत्तक तंत्र (Epidermal tissue system) :– बाह्य त्वचीय ऊतक तंत्र पौधों का सबसे बाहरी आवरण है। इसके अन्तर्गत बाह्य त्वचीय कोशिकायें, रन्ध्र व रोम आते हैं। बाह्य त्वचा की कोशिकायें लम्बी तथा एक–दूसरे से सटी हुई होती हैं। इसकी कोशिकायें मृदूतक की बनी होती है। बाह्य त्वचा की बाहरी सतह पर मोम की परत पायी जाती है, जिसे **क्यूटिकल (Cuticle)** कहते है। पादपों की बाह्य त्वचा पर रन्ध्र पाये जाते हैं, जो वाष्पोत्सर्जन तथा गैसों के विनिमय कार्य करते हैं। बाह्य त्वचा की कोशिकाओं पर अनेक रोम होते हैं। जड़ों पर पाये जाने वाले रोम, **मूल रोम** कहलाते हैं, ये एक कोशिकीय होते हैं। तने पर पाये जाने वाले रोम **त्वचा रोम** कहलाते हैं, ये बहुकोशिकीय होते हैं। मूलरोम जल व खनिज लवणों के अवशोषण का कार्य करते हैं तथा त्वचा रोम स्त्रावी हो सकते हैं तथा वाष्पोत्सर्जन को कम करते हैं।

2. भरण ऊतक तंत्र (Ground tissue system) :– बाह्य त्वचा तथा संवहन बंडल के बीच का ऊतक भरण ऊतक कहलाता है। भरण ऊतक में मृदूतक, स्थूलकोण ऊतक व दृढ़ोतक पाये जाते हैं।

3. संवहनी ऊतक तंत्र (Vascular tissue system) :– संवहनी ऊतक तंत्र में जायलम व फ्लोयम पाये जाते हैं। दोनो मिलकर संवहन बंडल बनाते हैं, जो पादप में विभिन्न पदार्थों जैसे जल, खनिज लवण, खाद्य के परिवहन का कार्य करता है।

जन्तुओं में भी पादपों के समान ऊतक आपस में मिलकर ऊतक, तंत्र, अंग व अंगतंत्र की रचना करते हैं। जन्तुओं में ऊतकों के मिलने से तंत्रिका तंत्र, उपकला तंत्र, पेशीय तंत्र, पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र, उत्सर्जन तंत्र, जनन् तंत्र आदि बनते हैं।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. कोशिका जीवों के शरीर की संरचनात्मक व क्रियात्मक इकाई है।
2. मानव शरीर की सबसे लम्बी कोशिका तंत्रिका कोशिका है।
3. जन्तु कोशिका की कोशिका झिल्ली प्रोटीन व लिपिड अणुओं की बनी होती है।
4. पादप कोशिका की कोशिका भित्ति सेल्यूलोज, हेमीसेल्यूलोज, पेक्टिन व पॉलीसैकेराइड की बनी होती है।
5. माइटोकॉन्ड्रिया को कोशिका का शक्ति गृह भी कहते हैं।
6. लाइसोसोम को आत्मघाती थैलियाँ भी कहते हैं।
7. पादप कोशिका में कोशिकाद्रव्य विभाजन कोशिका पटलिका विधि द्वारा होता है जबकि जन्तु कोशिका में विदलन विधि द्वारा होता है।
8. पादप कोशिका में संचित भोजन मंड के रूप में तथा जन्तु कोशिका में ग्लाइकोजन के रूप में पाया जाता है।
9. किसी कोशिका के निर्माण से लेकर उसके विभाजन होने तक की विभिन्न अवस्थाओं को कोशिका चक्र कहते हैं।
10. अर्द्धसूत्री विभाजन द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी जीवों में गुणसूत्रों की संख्या समान बनी रहती है।
11. पादपों के तने में शीर्ष विभज्योतक के कारण लम्बाई में तथा पार्श्व विभज्योतक द्वारा मोटाई में वृद्धि होती है।
12. पादपों में जायलम व फ्लोयम संवहन ऊतक पाये जाते हैं।
13. जन्तुओं मे उपकला ऊतक, संयोजी ऊतक, पेशी ऊतक व तंत्रिका ऊतक पाये जाते हैं।
14. रक्त एक तरह का संयोजी ऊतक है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. कोशिका के किस कोशिकांग को आत्मघाती थैली के नाम से जाना जाता है?
   (अ) माइटोकॉन्ड्रिया (ब) लाइसोसोम
   (स) राइबोसोम (द) गाल्जीकाय
2. कोशिका के किस कोशिकांग को कोशिका का शक्ति गृह कहते है?
   (अ) माइटोकॉन्ड्रिया (ब) लाइसोसोम
   (स) राइबोसोम (द) केन्द्रक
3. केन्द्रक की खोज किस वैज्ञानिक ने की थी?
   (अ) राबर्ट ब्राऊन (ब) राबर्ट हुक
   (स) ल्यूवेन हॉक (द) श्लाइडन
4. कोशिका चक्र की किस प्रावस्था में DNA का संश्लेषण होता है।
   (अ) G – 1 प्रावस्था (ब) S प्रावस्था
   (स) M प्रावस्था (द) G – 2 प्रावस्था
5. पादपों मे लचकमय दृढता प्रदान करने वाला ऊतक है–
   (अ) मृदूतक
   (ब) स्थूलकोण ऊतक
   (स) दृढ़ोतक
   (द) उपरोक्त में से कोई नहीं
6. सर्वप्रथम जीवित कोशिका का अवलोकन करने वाले वैज्ञानिक का नाम लिखिए।
7. किन्हीं दो एक–कोशिकीय जीवों के नाम लिखिए।
8. मानव शरीर की सबसे लम्बी कोशिका का नाम लिखिए।
9. पादप कोशिका में कोशिका भित्ति का क्या कार्य है?
10. वर्णक के आधार पर पादपों में कौन–कौनसे लवक पाये जाते है?
11. कोशिका में राइबोसोम का क्या कार्य है?
12. जीवों की कायिक कोशिकाओं में किस प्रकार का कोशिका विभाजन होता है?
13. अर्धसूत्री विभाजन को न्यूनकारी विभाजन क्यों कहते हैं?

14. पादपों में कोशिका विभाजन के दौरान कोशिका द्रव्य विभाजन किस विधि द्वारा होता है।

15. स्थूलकोण ऊतक की कोशिकाओं की कोशिका भित्ति पर किस पदार्थ का निक्षेपण होता है।

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. एक कोशिकीय व बहुकोशिकीय जीव किसे कहते हैं? उदाहरण दीजिए।
2. कोशिका सिद्धान्त को समझाइये।
3. माइटोकॉन्ड्रिया की संरचना व कार्य समझाइये।
4. जन्तु कोशिका व पादप कोशिका में चार अन्तर लिखिए।
5. लाइसोसोम को आत्मघाती थैलियाँ क्यों कहा जाता है?
6. केन्द्रक की संरचना व कार्य का वर्णन कीजिए।
7. कोशिका चक्र को समझाइये।
8. पादप व जन्तु कोशिका में कोशिका द्रव्य विभाजन की विधियों को समझाइये।
9. समसूत्री विभाजन की मध्यावस्था का चित्र बनाकर समझाइये।
10. कोशिका विभाजन के सन्दर्भ में पश्चावस्था अभिगमन को समझाइये।
11. अर्द्धसूत्री विभाजन का महत्व लिखिए।
12. जाइलम की संरचना व कार्य को समझाइये।
13. तंत्रिका कोशिका का नामांकित चित्र बनाइये।
14. जन्तुओं में पायी जाने वाली विभिन्न पेशियों का वर्णन कीजिए।
15. वाइरस की संरचना समझाइये तथा जीवाणुभोजी का नामांकित चित्र बनाइये।

निबंधात्मक प्रश्न

1. पादप कोशिका का नामांकित चित्र बनाकर इसके निम्न कोशिकांगों की संरचना व कार्यों का वर्णन कीजिए।

   (अ) हरितलवक

   (ब) अन्तर्द्रव्यी जालिका

   (स) माइटोकॉन्ड्रिया

   (द) केन्द्रक
2. समसूत्री विभाजन क्या है? समसूत्री विभाजन की विभिन्न प्रावस्थाओं का सचित्र वर्णन कीजिए।
3. ऊतक किसे कहते हैं? पादपों में पाये जाने वाले सरल ऊतकों का सचित्र वर्णन कीजिए।
4. जन्तुओं में पाये जाने वाले विभिन्न ऊतकों का वर्णन कीजिए।
5. टिप्पणी लिखिए।

   1. संवहन बंडल 2. तंत्रिका ऊतक

   3. जीवाणुभोजी 4. दृढ़ोतक

उत्तर :– 1 – ब, 2 – अ, 3 – अ, 4 – ब, 5 – ब

◆◆◆

अध्याय 7

जैवविविधता
(Biodiversity)

7.1 जैवविविधता का अर्थ एवं महत्व
(Meaning and Significance of Biodiversity)

हमारे चारों ओर कई प्रकार के जीव समूह पाये जाते हैं। सभी जीवधारी एक–दूसरे से किसी न किसी रूप में भिन्न हैं। पृथ्वी पर जहाँ एक ओर सूक्ष्मदर्शी से देखे जाने वाले जीवाणु, जिनका आकार कुछ माइक्रॉन तक होता है, वहीं दूसरी ओर 30 मी. लम्बी नील व्हेल तथा कैलिफोर्निया के 100 मी. लम्बे रेड वुड पेड़ भी पाये जाते हैं। कुछ चीड के वृक्ष सैकड़ों वर्षों तक जीवित रहते हैं, जबकि कुछ कीटों का जीवन काल कुछ ही दिनों का होता है। हमारे चारों ओर जीवों की इस असीमित विभिन्नता को **जैवविविधता (Biodiversity)** कहते हैं।

जैव विविधता से तात्पर्य, विभिन्न जीव रूपों में पाई जाने वाली विविधता से है। यह किसी क्षेत्र विशेष में पाये जाने वाले विभिन्न जीवरूपों को इंगित करता है। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी पर जीवों की लगभग 1 करोड़ जातियाँ पाई जाती हैं, जबकि हमें सिर्फ 20 लाख जातियों की ही जानकारी है। पृथ्वी पर कर्क रेखा व मकर रेखा के बीच के क्षेत्र में पौधों व जन्तुओं में काफी विविधता पाई जाती है। अतः यह क्षेत्र **वृहद् जैवविविधता क्षेत्र (मेगा बायोडाइवर्सिटी क्षेत्र)** कहलाता है।

7.2 वर्गीकरण की आवश्यकता
(Need of Classification)

पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी जीवों में समानता व असमानता तथा कुछ विशिष्ट लक्षणों के आधार पर उनका वर्गीकरण किया गया है, ताकि जीवों की पहचान करने, अध्ययन करने व उनके उपयोग की जानकारी प्राप्त हो सके। यहां जीव के लक्षण से तात्पर्य उस जीव का कोई विशिष्ट रूप या विशिष्ट कार्य है, जिसके आधार पर उन्हें अन्य जीवों से विभेदित किया जा सकता है।

7.3 जन्तुओं व पादपों के प्रमुख समूह
(Major groups of animals and plants)

अर्नेस्ट हैकेल (1894), रॉबर्ट व्हिटेकर (1959) और कार्ल वोस (1977) नामक जैव वैज्ञानिकों ने सभी जीवों को विभिन्न जगत (Kingdom) में विभाजित करने का प्रयास किया। ये जगत जीवों की कोशिकीय संरचना, पोषण के स्रोत व शारीरिक संगठन के आधार पर बनाये गये।

व्हिटेकर की पंच जगत अवधारणा में पांच जगत है, **मोनेरा, प्रोटिस्टा, फंजाई, प्लांटी** और **ऐनिमेलिया**। पुनः विभिन्न स्तरों पर जीवों को उप समूहों में वर्गीकृत किया गया है, जैसे फाइलम (डिवीजन), वर्ग (क्लास), गण (आर्डर), कुल (फैमिली), वंश (जीनस)।

7.3.1. मोनेरा (Monera) :– ये प्रोकेरियोटिक जीव हैं। इन जीवों में संगठित केन्द्रक और कोशिकांग नहीं पाये जाते हैं। पोषण के स्तर के आधार पर ये स्वपोषी अथवा विषमपोषी दोनों हो सकते हैं। जनन संयुग्मन द्वारा होता है। उदाहरण : **जीवाणु, नील–हरित शैवाल (साइनो– बैक्टीरिया) माइकोप्लाजमा।**

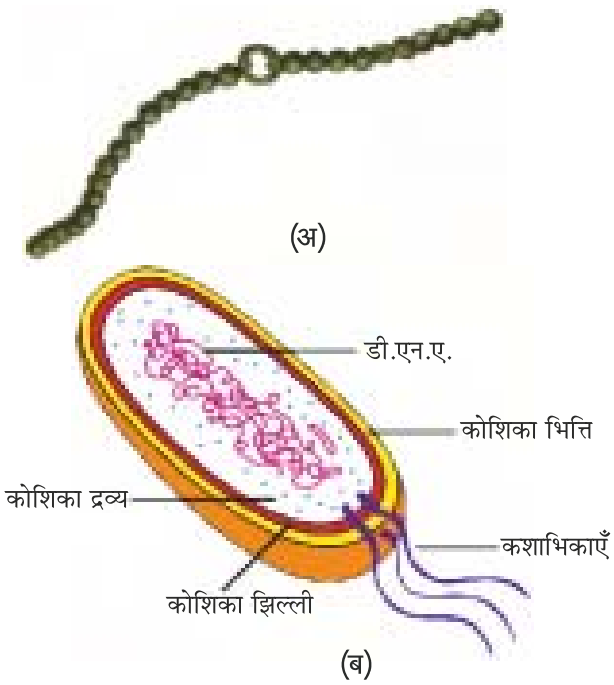

चित्र 7.1 मोनेरा जगत के प्राणी

(अ) *नॉस्टॉक* (ब) जीवाणु

7.3.2. प्रोटिस्टा (Protista) :– इसमें एककोशिक, यूकेरियोटिक जीव आते है। यूकेरियोटिक होने के कारण इनकी कोशिका में सुसंगठित केन्द्रक एवं झिल्लीबद्ध कोशिकांग पाये जाते हैं। इस वर्ग के जीवों में गमन के लिए सिलिया, फ्लैजिला

नामक संरचनायें पायी जाती हैं। ये अलैंगिक जनन, कोशिका संलयन एवं लैंगिक जनन युग्मनज बनने की विधि द्वारा करते हैं।

उदाहरण : **एककोशिक शैवाल, डायटम, प्रोटोजोआ।**

(अ)

(ब)

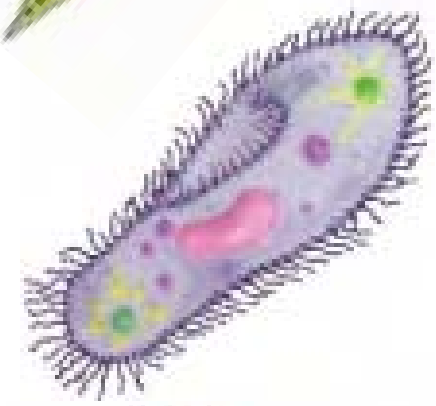

(स)

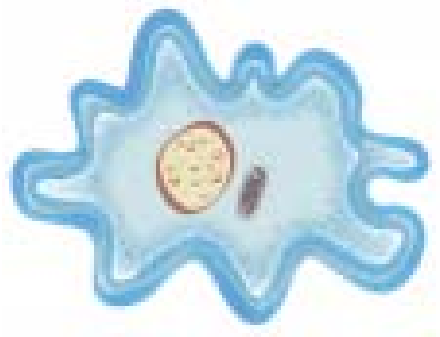

चित्र 7.2 प्रोटिस्टा जगत के प्राणी

(अ) *पैरामीशियम* (ब) *यूग्लीना* (स) *अमीबा*

7.3.3 फंजाई (Fungi) :– ये विषमपोषी, यूकेरियोटिक जीव हैं। अधिकांश फंजाई परपोषित होती है। यह पोषण के लिये सड़े–गले कार्बनिक पदार्थों को अवशोषित कर लेती है अतः इन्हें **मृतजीवी** भी कहते हैं। कुछ फंजाई सजीव पौधों और जन्तुओं पर पोषण के लिये निर्भर रहती है, उन्हें **परजीवी** कहते हैं। इस प्रकार की फंजाई पादपों व जन्तुओं में रोग का कारण होती है। कवकों की कुछ प्रजातियां नील हरित शैवालों (साइनोबेक्टिरिया) के साथ स्थायी सम्बन्ध बनाती है, जिसे **सहजीविता (Symbiosis)** कहते हैं। ऐसे सहजीवी जीवों को **लाइकेन (Lichen)** कहते हैं।

फंजाई तंतुमयी होती है, लेकिन यीस्ट जो एककोशिक है, इसका अपवाद है। ये पतली लम्बी धागों की तरह की संरचनाएँ होती है जिन्हें **कवकतन्तु (माइसीलियम)** कहते हैं। फंजाई की कोशिका भित्ति काइटिन तथा पॉलिसेकैराइड की बनी होती है। फंजाई में कायिक जनन विखण्डन तथा मुकुलन विधि द्वारा, अलैंगिक जनन बीजाणु द्वारा व लैंगिक जनन ऐस्को बीजाणु, बेसिडियों बीजाणु द्वारा होता है। उदाहरण : **यीस्ट, मशरूम।**

चित्र 7.3 फंजाई (मशरूम)

7.3.4. प्लांटी (Plantae) :– इसमें कोशिका भित्ति युक्त बहुकोशिक यूकेरियोटिक जीव आते हैं। ये स्वपोषी होते हैं और प्रकाश संश्लेषण द्वारा अपना पोषण स्वंय करते हैं। पादप शरीर के प्रमुख घटकों के विभेदन, पादप शरीर में जल व अन्य पदार्थों को संवहन करने वाले ऊतकों, बीज धारण क्षमता के आधार पर पादपों को क्रमशः **थैलोफाइटा, ब्रायोफाइटा, टेरिडोफाइटा, अनावृतबीजी** व **आवृतबीजी प्रभागों (Division)** में विभाजित किया गया है।

(अ) थैलोफाइटा (Thallophyta) :– इस प्रभाग के पौधों की शारीरिक संरचना में पादप शरीर जड, तना व पत्ती में

विभेदित नहीं होता है, ऐसा पादप शरीर **थैलस (Thallus)** कहलाता है। जैसे :– **शैवाल।**

शैवाल (Algae) कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक जनन करते है। कायिक जनन विखण्डन द्वारा, अलैंगिक जनन बीजाणुओं द्वारा व लैंगिक जनन दो युग्मकों के संलयन से होता है। उदाहरण– *क्लैमाइडोमोनास, वालवॉक्स, कारा*।

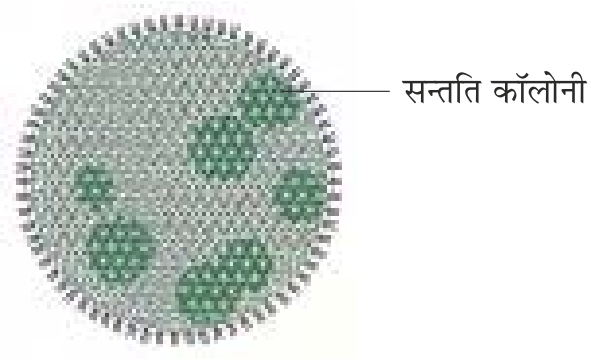

चित्र 7.4 थैलोफाइटा

(अ) *वॉलवाक्स* (ब) *क्लैमाइडोमोनॉस* (स) *कारा*

(ब) ब्रायोफाइटा (Bryophyta) :– इस प्रभाग के पौधों को पादप जगत का **उभयचर (जलस्थलचर)** भी कहा जाता है, क्योंकि ये भूमि पर भी जीवित रह सकते हैं, परन्तु लैंगिक जनन के लिये जल पर निर्भर रहते हैं। इन पादपों में वास्तविक मूल, तना तथा पत्तियाँ नहीं होती। इनमें मूलसम, पत्तीसम तथा तनासम संरचनाएँ होती हैं। ये एक कोशिकीय अथवा बहुकोशिकीय मूलाभासों द्वारा आधार से जुड़े रहते हैं।

ब्रायोफाइट में लिवरवर्ट व मॉस आते हैं, जिनमें अलैंगिक जनन थैलस के विखण्डन अथवा विशिष्ठ संरचना गेमा द्वारा होता है, तथा लैंगिक जनन युग्मकोद्भिद् के पुंधानी व स्त्रीधानी से उत्पन्न पुमणु व अंड के संयोजन से होता है।

उदाहरण : *मार्कैन्शिया, फ्यूनेरिया*।

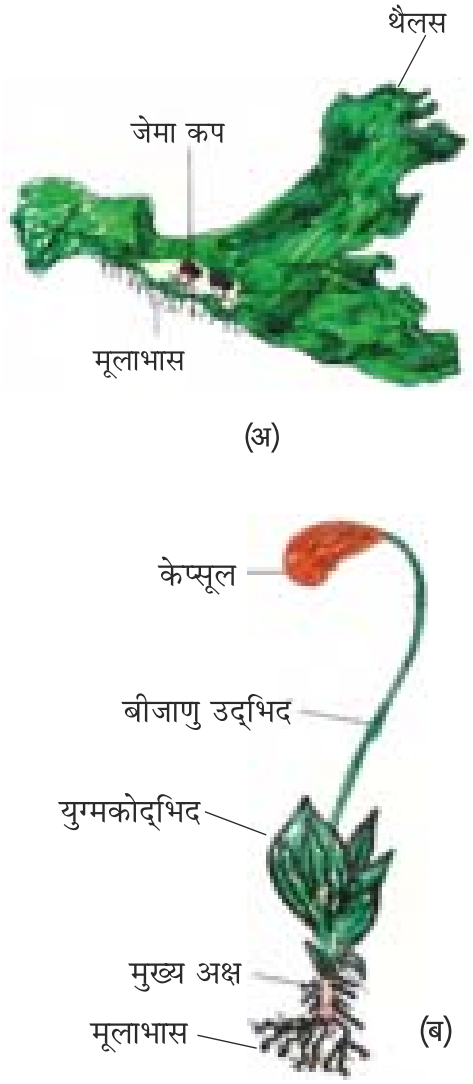

चित्र 7.5 ब्रायोफाइटा

(अ) लिवरवर्ट – *मार्कैन्शिया*

(ब) मॉस – *फ्यूनेरिया*

(स) टेरिडोफाइटा (Pteridophyta) :– इस प्रभाग के पादपों का शरीर जड़, तना व पत्ती में विभेदित होता है। इनके शरीर में जल व अन्य पदार्थों के संवहन के लिये संवहन ऊतक जायलम व फ्लोयम पाये जाते हैं। ये सामान्यतः नम स्थानों पर पाये जाते हैं।

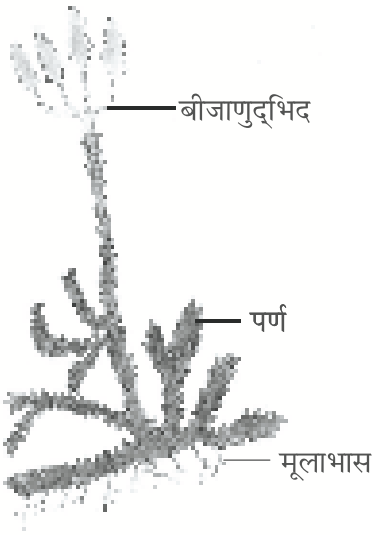

(अ)

(ब)

चित्र 7.6 टेरिडोफाइटा

(अ) *सिलेजीनेला* (ब) *इक्वीसिटम*

थैलोफाइटा, ब्रायोफाइटा व टेरिडोफाइटा में जननांग अप्रत्यक्ष होते हैं तथा इनमें फल व बीज उत्पन्न करने की क्षमता नहीं होती है, अतः ये **क्रिप्टोगेम्स (Cryptogams)** कहलाते हैं। परन्तु टेरिडोफाइटा प्रभाग के पादपों मे संवहन ऊतक की उपस्थिति के कारण ये **संवहनी क्रिप्टोगेम्स (Vascular cryptogams)** कहलाते हैं। टेरिडोफाइटा प्रभाग के पादपों में बीजाणु द्वारा तथा पुंधानी व स्त्रीधानी से उत्पन्न पुमणु व अण्ड के संयोजन द्वारा जनन होता है। उदाहरण : *मार्सीलिया, सलेजीनेला, इक्वीसिटम*।

(द) अनावृतबीजी (Gymnosperm) जिम्नोस्पर्म (जिम्नोस – अनावृत, नग्न**;** स्पर्मा–बीज) ऐसे पौधे हैं, जिनमें बीजाण्ड अण्डाशय से ढके हुए नहीं होते और ये निषेचन से पूर्व तथा बाद में भी अनावृत रहते हैं। इन्हें **नग्नबीजी पादप** भी कहा जाता है। जिम्नोस्पर्म मध्यम अथवा लम्बे वृक्ष तथा झाड़ियाँ होती है। इनमें मूसला मूल पायी जाती है तथा कुछ पादपों की जडें कवक से सहयोग कर लेती है जिसे **कवकमूल** कहते हैं जैसे *पाइनस*। जबकि कुछ पादपों में छोटी विशिष्ठ मूल नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले साइनोबैक्टीरिया के साथ सहयोग कर लेती है जिसे **प्रवाल मूल** कहते हैं। जैसे *साइकस*। जिम्नोस्पर्म में जनन बीजाणु द्वारा तथा शुक्राणु व अण्ड के संयोजन से होता है। उदाहरण : *साइकस, पाइनस*।

चित्र 7.7 अनावृतबीजी (*साइकस*)

(य) आवृतबीजी (Angiosperm) एन्जियोस्पर्म (एंजियो– ढका हुआ, स्पर्मा – बीज) ऐसे पौधे हैं, जिनमें बीज फलों के अन्दर ढके होते हैं। अर्थात् इनके बीजों का विकास अण्डाशय के अन्दर होता है, जो बाद में फल बन जाता है। इन्हें **पुष्पी पादप** भी कहा जाता है।

इन पादपों में भोजन का संचय या तो बीजपत्रों में होता है या फिर भ्रूणपोष में होता है। बीजपत्रों की संख्या के आधार पर एक बीजपत्र वाले पौधों को **एक बीजपत्री (Monocot)** और दो बीज पत्र वाले पौधों को **द्विबीजपत्री (Dicot)** कहा जाता है। इन पादपों में कायिक जनन तथा नर युग्मक व मादा युग्मक के संयोजन द्वारा लैंगिक जनन होता है। उदाहरण : **सरसों, आम, बरगद**।

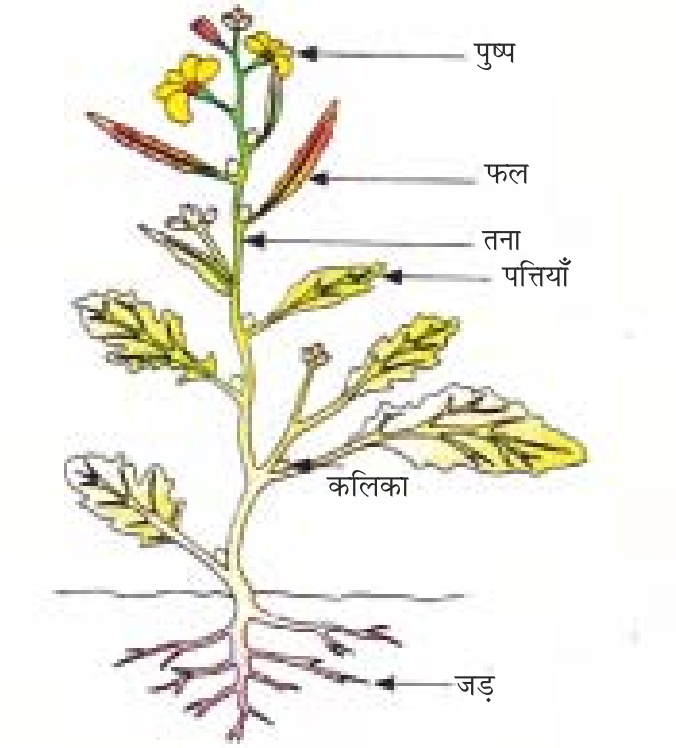

7.3.5. एनिमेलिया (Animalia) इस जगत में यूकेरियोटिक, बहुकोशिक और विषमपोषी जीवों को रखा गया है। इनकी कोशिकाओं में कोशिका भित्ति नहीं पायी जाती हैं। अधिकतर जन्तु चलायमान होते हैं। नोटोकॉर्ड की उपस्थिति के आधार पर ऐनिमेलिया कौ दो समूहों में विभक्त किया गया है, **अपृष्ठवंशी व पृष्ठवंशी।**

(अ) अपृष्ठवंशी या नॉन–कॉर्डेटा (Non-chordata) :– इस समूह के जन्तुओं में कशेरूक दण्ड का अभाव होता है। शारीरिक संरचना एवं विभेदीकरण के आधार पर इन्हें अलग–अलग संघों में वर्गीकृत किया गया है।

1. पोरीफेरा (Porifera) पोरीफेरा का अर्थ–छिद्रधारी जीव है। ये अचल जीव हैं, जो किसी आधार से चिपके रहते हैं। इनके पूरे शरीर पर अनेक छिद्र पाये जाते हैं, जिन्हें **ऑस्टिया** कहते हैं।

(अ)

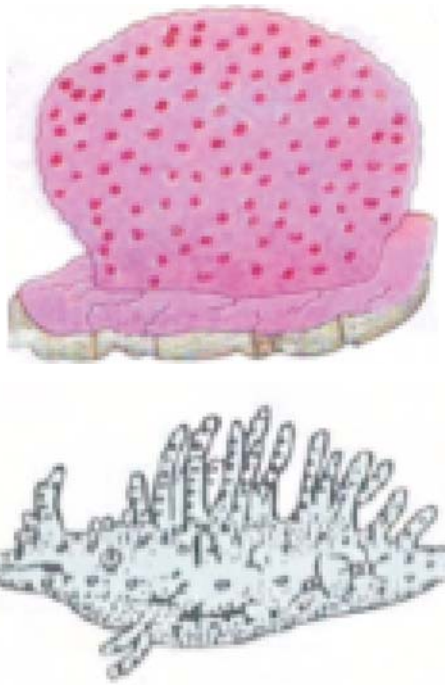

(ब)

(स)

चित्र 7.9 पोरीफेरा

(अ) *साइकॉन* (ब) *यूस्पांजिया* (स) *स्पांजिला*

जल इन छिद्रों द्वारा शरीर की केन्द्रीय स्पंज गुहा में प्रवेश करता है, तथा बडे रन्ध्र ऑस्कुलम द्वारा बाहर निकलता है। जल परिवहन का यह पथ भोजन जमा करने, श्वसन तथा उत्सर्जन में सहायक होता है। इनका शरीर बाह्य कंकाल से ढका होता है जो कंटकों एवं स्पंज तंतु (स्पॉन्जिन तंतु) का बना होता है। इनका शारीरिक संगठन कोशिकीय स्तर का होता है। इन्हें सामान्यतः स्पंज कहते है। ये जलीय आवास में पाये जाते हैं। उदाहरण : *साइकॉन, स्पांजिला, यूप्लेक्टेला, युस्पांजिया।*

2. निडेरिया (Cnidaria) ये जलीय जंतु हैं, इनका शारीरिक संगठन ऊतकीय स्तर का होता है।

(अ)

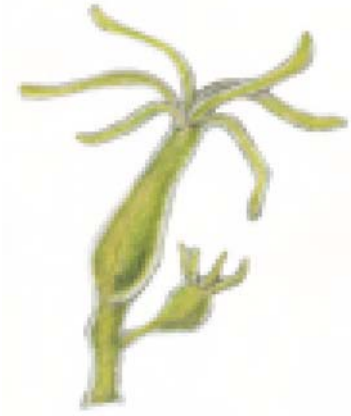

(ब)

(स)

चित्र 7.10 सीलेन्ट्रेटा

(अ) *हाइड्रा* (ब) समुद्री एनीमोन (स) जैलीफिश

इस संघ के जन्तुओं का शरीर द्विकोरकी एवं अरीय सममित होता है। इनमें एक देह गुहा पायी जाती है। इन जन्तुओं के स्पर्शक अथवा शरीर में अन्य स्थानों पर दंश कोशिकाएँ पायी जाती हैं, इसे **सीलेन्ट्रेटा (Coelentrata)** संघ भी कहते हैं। उदाहरण : *हाइड्रा,* **समुद्री एनीमोन, जेलीफिश ।**

3. प्लेटीहैल्मिन्थिज (Platyhelminthes) इस संघ के जन्तु पृष्ठाधार रूप से चपटे होते हैं। इन्हें सामान्यतः चपटे कृमि भी कहा जाता है। इस संघ के अधिकांश जन्तु मनुष्य तथा अन्य प्राणियों में परजीवी के रूप में पाये जाते हैं। इनका शारीरिक संगठन अंग स्तर का होता है। इनका शरीर त्रिकोरकी व द्विपार्श्व–सममित होता है। इनमें वास्तविक देह गुहा का अभाव होता है। उदाहरण : *टीनिया* **(फीता कृमि),** *लिवरफ्लूक, प्लेनेरिया*।

(अ)

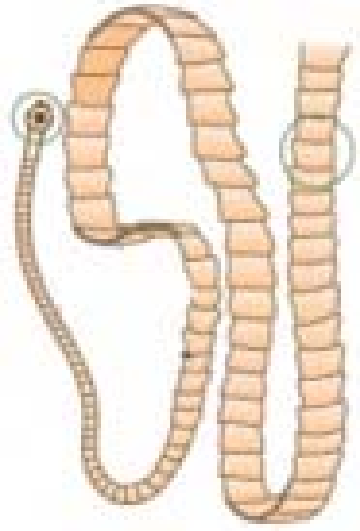

(ब)

चित्र 7.11 प्लेटीहैल्मिन्थिज

(अ) फीता कृमि (ब) *लिवरफ्लूक*

4. एस्केहैल्मिन्थीज (Aschelminthes) इस संघ के जन्तुओं का शरीर बेलनाकार होता है, इसलिये इन्हें **गोल कृमि** भी कहते हैं। ये मुक्तजीवी, जलीय अथवा परजीवी होते हैं। ये द्विपार्श्व सममित, त्रिकोरकी तथा कूटप्रगुही प्राणी होते हैं। इनका शारीरिक संगठन अंग–तंत्र स्तर का होता है। उदाहरण : *एस्केरिस, वुचेरेरिया*।

चित्र 7.12 एस्केहैल्मिन्थीज (*एस्केरिस*)

5. ऐनेलिडा (Annelida) :– इस संघ के जन्तु जलीय अथवा स्थलीय, स्वतंत्र जीवी तथा कभी–कभी परजीवी होते हैं। ये जन्तु द्विपार्श्व सममित, त्रिकोरकी व प्रगुही होते हैं तथा इनमें वास्तविक देह गुहा पायी जाती है। इनका शरीर स्पष्ट खण्डों में विभक्त होता है। उत्सर्जन के लिये इनमें **वृक्कक (नेफ्रिडिया)** पाये जाते है। उदाहरण : **जोंक, केंचुआ, नेरिस।**

(अ)

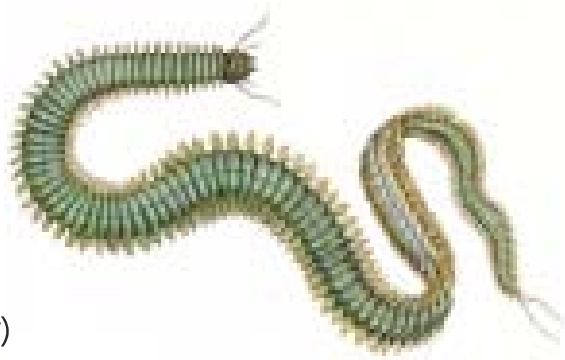

(ब)

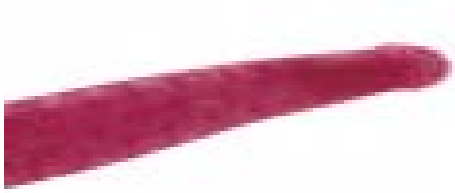

चित्र 7.13 एनेलिडा

(अ) नेरीस (ब) जोंक

6. **आर्थ्रोपोडा (Arthropoda)** आर्थ्रोपोडा का अर्थ (आथ्रो–संधित, पोडास–उपांग) अर्थात् इन जन्तुओं में संधित उपांग पाये जाते हैं।

(अ)

(ब)

(स)

(द)

चित्र 7.14 आर्थोपोडा

(अ) घरेलू मक्खी (ब) टिडडा (स) केंकडा (द) बिच्छू

जन्तु जगत में सबसे अधिक जन्तु इस संघ के पाये जाते हैं, तथा पृथ्वी पर सभी स्थानों पर पाये जाते हैं। ये द्विपार्श्व सममित, त्रिकोरकी व प्रगुही प्राणी हैं। इनमें खुला परिसंचरण तंत्र पाया जाता है। शरीर खण्ड युक्त होता है, तथा सिर, वक्ष व उदर में विभाजित होता है। इस संघ में कीट वर्ग प्रमुख है। अधिकांश कीटों में पंख उपस्थित होते हैं। इनमें उत्सर्जन मैलपिगी नलिकाओं द्वारा होता है। शरीर काइटिन के बाह्य कंकाल से ढका रहता है। उदाहरण : **घरेलु मक्खी, झींगा, तिलचट्टा, तितली, टिड्डा, बिच्छु।**

7. मोलस्का (Mollusca) :– इस संघ के जन्तु स्थलीय अथवा जलीय होते हैं। शारीरिक संगठन अंग–तन्त्र स्तर का होता है। इनका शरीर कोमल होता है। कुछ प्राणियों में शरीर कठोर कैल्सियम के कवच से ढ़का रहता है। ये द्विपार्श्व सममित, त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी हैं। इनका शरीर आंशिक खंडित होता है जिससे सिर, पेशीयपाद तथा आंतरांग होते हैं। उदाहरण : **घोंघा, सीप,** ***ऑक्टोपस*****।**

(अ)

(ब)

(स)

चित्र 7.15 मोलस्का
(अ) घोंघा (ब) *ऑक्टोपस* (स) सीप

8. इकाइनोडर्मेटा (Echinodermata) इस संघ के जन्तुओं में कैल्सियम युक्त अन्तःकंकाल पाया जाता है तथा इन जन्तुओं की त्वचा कांटों से आच्छादित होती है। इसलिये इनका नाम इकाइनोडर्मेटा (शूल युक्त शरीर) है। ये मुक्त जीवी समुद्री जन्तु हैं। ये जन्तु अरीय सममित, त्रिकोरकी व प्रगुही होते हैं। शारीरिक संगठन अंग–तंत्र स्तर का होता है। जल संवहन तंत्र इन जन्तुओं की विशिष्टता है, जो गमन, भोजन पकड़ने व श्वसन में सहायक है। उदाहरण : **तारा मछली, समुद्री अर्चिन, समुद्री खीरा, भंगुरतारा।**

(अ)

(ब)

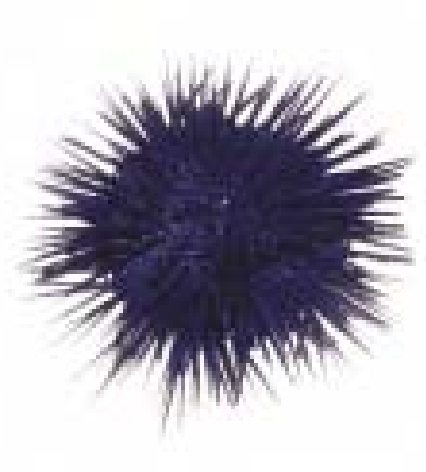

(स)

चित्र 7.16 इकाइनोडर्मेटा
(अ) तारा मछली (ब) समुद्री अर्चिन (स) समुद्री खीरा

(ब) पृष्ठवंशी या कार्डेटा (Chordata) :– इस समूह के जन्तुओं में नोटोकॉर्ड, वास्तविक मेरूदण्ड एवं अन्तः कंकाल पाया जाता है। ये द्विपार्श्व सममित, त्रिकोरकी व देहगुहा वाले जन्तु हैं। इनमें ऊतकों एवं अंगों का जटिल विभेदन पाया जाता है।

पृष्ठवंशी जन्तुओं को पाँच वर्गों में विभक्त किया गया है।

1. मत्स्य (Pisces) इस वर्ग के प्राणी समुद्र और अलवणीय जल दोनों जगहों पर पाये जाते हैं। इनकी त्वचा शल्कों से आवरित रहती है। शरीर धारा रेखीय होता है। श्वसन के लिये क्लोम (गिल्स) पाये जाते हैं, जो जल में घुलित आक्सीजन का उपयोग करते हैं। ये असमतापी होते हैं तथा अण्डे देते हैं। हृदय द्विकोष्ठीय होता है। कंकाल अस्थि व उपास्थि दोनों का बना होता है। उदाहरण : **रोहू, कुत्तामछली, विद्युतमछली, आरा मछली।**

(अ)

(ब)

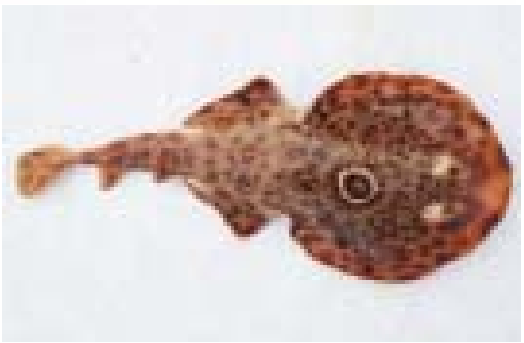

(स)

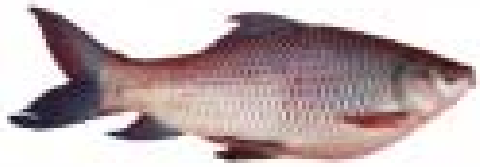

चित्र 7.17 मत्स्य वर्ग

(अ) कुत्ता मछली (ब) विद्युत मछली (स) रोहू

2. उभयचर (Amphibia) इस वर्ग के जन्तु जल व स्थल दोनों स्थानों पर रह सकते हैं। इनकी त्वचा पर शल्कों का अभाव होता है तथा श्लेष्म ग्रन्थियाँ पायी जाती हैं। श्वसन क्लोम, फेफड़ों तथा त्वचा द्वारा होता है। ये असमतापी प्राणी हैं, तथा अण्डे देते हैं। हृदय त्रिकोष्ठीय (दो आलिन्द, एक निलय) होता है। उदाहरण : **मेंढक, *सेलामेण्डर*।**

(अ)

(ब)

चित्र 7.18 उभयचर (अ) *सेलामेण्डर* (ब) मेंढक

3. सरीसृप (Reptiles) इस वर्ग के जन्तु अधिकांशः स्थलीय प्राणी हैं। रेंगकर गमन करने के कारण इन्हें सरीसृप कहा जाता है। इनका शरीर शल्कों से आवरित होता है। श्वसन फेफड़ों द्वारा होता है। ये असमतापी जन्तु हैं, तथा अधिकांशतः अण्डे देने वाले प्राणी हैं। अण्डे कठोर कवच से ढके रहते हैं। हृदय सामान्यतः त्रिकोष्ठीय (दो आलिन्द, एक निलय) होता है। उदाहरण : **सर्प, छिपकली, मगरमच्छ, कछुआ, वृक्ष छिपकली।**

(अ)

(ब)

(स)

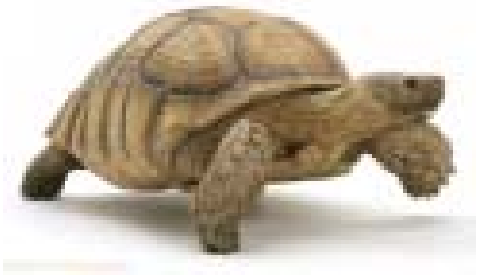

चित्र 7.19 सरीसृप

(अ) सर्प (ब) मगरमच्छ (स) कछुआ

4. पक्षी (एवीज) (Aves) :– इस वर्ग में सभी पक्षियों को रखा गया है।

(अ)

(ब) (स)

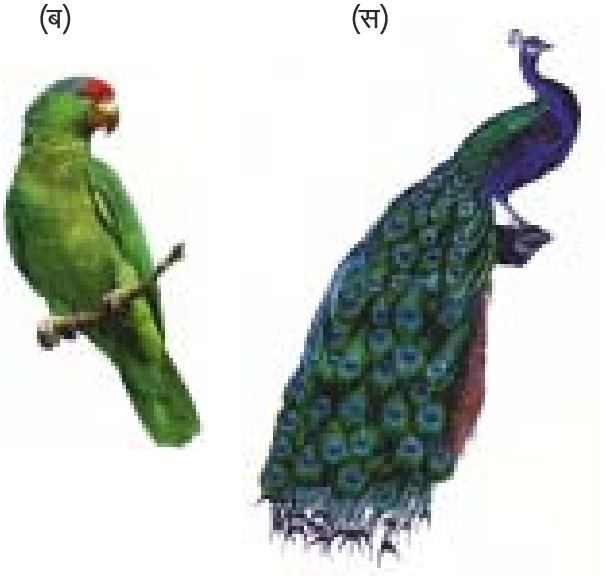

चित्र 7.20 एवीज (अ) शुतुरमुर्ग (ब) तोता (स) मोर

इनका मुख्य लक्षण शरीर पर पंखों की उपस्थिति तथा उडने की क्षमता है **(शुतुरमुर्ग को छोडकर)**। इनमें चोंच पायी जाती है, श्वसन फेफड़ों द्वारा होता है। ये समतापी जन्तु हैं तथा अण्डे देते हैं। इनका हृदय चतुष्कोष्ठीय (दो आलिन्द व दो निलय) होता है। अन्तः कंकाल की अस्थियाँ लम्बी व खोखली होती है। उदाहरण : **चील, तोता, मोर, शुतुरमुर्ग।**

5. स्तनधारी (Mammalia) इस वर्ग के जन्तु सभी प्रकार के वातावरण मे पाये जाते हैं। इस वर्ग के सभी जन्तुओं में सन्तति के पोषण के लिये **स्तनग्रन्थियाँ (दुग्ध ग्रन्थियाँ)** पायी जाती हैं। इनका हृदय चतुकोष्ठीय (दो आलिन्द, दो निलय) होता है।

(अ)

(ब)

(स)

चित्र 7.21 स्तनधारी वर्ग

(अ) *डकबिल प्लेटीपस* (ब) कंगारू (स) चमगादड़

इस वर्ग के जन्तु समतापी है तथा शिशुओं को जन्म देने वाले होते हैं, हालांकि कुछ जन्तु उसके अपवाद हैं जैसे **एकिडना अण्डे देता है और कंगारू अविकसित बच्चों को जन्म देता है** जो **मार्सूपियम** नामक थैली में तब तक लटके रहते हैं, जब तक कि उनका पूर्ण विकास नहीं हो जाता है। उदाहरण : **मानव, *डकबिल प्लेटीपस,* कंगारू, चमगादड।**

7.4 आवास के अनुसार पर जन्तु व पादप अनुकूलन (Adaptation of Animals and plants on the basis of habitat)

सामान्यतः पृथ्वी के समस्त भागों में पादप व जन्तु पाये जाते हैं, किन्तु सभी स्थानों पर वातावरण कभी भी समान प्रकार का नहीं होता है। सभी जीवधारी (पादप व जन्तु) वातावरण के साथ प्रतिक्रिया करते हैं। पादप व जन्तु विशेष अंगों, विशेष गुणों (आकारिकीय, कार्यिकीय, व्यवहारिक) व विशेष क्रियाओं द्वारा उस वातावरण विशेष में जीवित रहने व जनन करने के योग्य बनते हैं, जिन्हें **अनुकूलन** कहते हैं। जीवों में अनुकूलन पर्यावरण के कारण उत्पन्न होते हैं तथा आनुवंशिक (Genetic) गुणों पर भी निर्भर होते हैं।

7.4.1 पादपों के आवास एवं अनुकूलन (Habitat and adaptation of plants) :–

वातावरण में जल की उपलब्धता व पादपों को जल की आवश्यकता के आधार पर पादप निम्न प्रकार के होते हैं।

1. जलोद्भिद् (Hydrophytes)
2. मरूद्भिद् (Xerophytes)
3. समोद्भिद् (Mesophytes)
4. शीतोद्भिद् (Cryophytes)
5. लवणमृदोद्भिद् (Halophytes)

1. जलोद्भिद (Hydrophytes) :– ऐसे पादप जो जल में या अत्यन्त जल वाली मृदा में पाये जाते हैं उन्हें जलोदभिद

पादप कहते हैं। उदाहरण : *वेलिसनेरिया, आइकोर्निया, सेजिटेरिया, रेननकुलस, हाइड्रिला,* कमल, सिंघाडा आदि।

जलोद्भिद पादपों मे अनुकूलन :–

1. पादपों में मूल का प्रमुख कार्य जल अवशोषण करना होता है परन्तु जलीय पादपों के चारों ओर जल की प्रचुरता के कारण मूल तंत्र अल्पविकसित होता है, तथा जल का अवशोषण पादप सतह द्वारा ही किया जाता है।

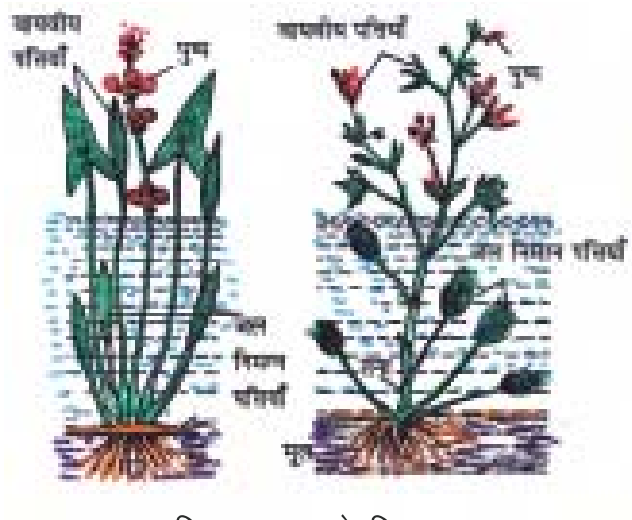

चित्र 7.22 जलोद्भिद् पादप

(अ) *सेजीटेरिया* (ब) *रेननकुलस*

2. कुछ पादपों जैसे **सिंघाडा (*Trapa*)** की जड़ें प्रकाश संश्लेषण करने के लिये हरे रंग की होती है, जिसे **स्वांगीकारी जड़ें (Assimilatory roots)** कहते हैं।

3. जड़ों में प्रायः मूल रोम अनुपस्थित होते हैं तथा मूल रोम के स्थान पर **मूल कोटरिकायें (Root Pockets)** पायी जाती है।

4. कुछ पादपों जैसे **लेमना (*Lemna*)** में जड़ सन्तुलन बनाने का कार्य करती है।

5. जलीय पादपों में तना, कोमल, पतला व लचीला होता है।

6. जल की सतह पर तैरने वाले पादपों की पत्तियाँ चौड़ी तथा जल निमग्न पादपों की पत्तियां कटी–फटी व रिबन के समान होती है।

7. जलीय पादपों में परागण, फल व बीजों का प्रकीर्णन जल के द्वारा ही होता है, इस कारण बीज व फल भार में हल्के होते हैं।

8. जलीय पादपों के पर्ण, स्तम्भ व मूल की आन्तरिक संरचना में वायु प्रकोष्ठ (Air chambers) पाये जाते हैं।

9. जलीय पादपों की कोशिकाओं की परासरण सान्द्रता (Osmotic concentration) कम होती है।

10. जलीय पादपों में यांत्रिक ऊतक (Mechanical tissues) व संवहन ऊतकों (Vascular tissues) की कमी होती है।

2. मरूद्भिद (Xerophytes) शुष्क आवास अथवा जलाभाव में पाये जाने वाले पादपों को मरूद्भिद या शुष्कोद्भिद पादप कहते हैं। उदाहरण : **नागफनी, थोर, केक्टस आदि।**

अनुकूलन :– मरूद्भिद पादप अपने विशेष गुणों के कारण पहचाने जाते हैं। ये विशेष गुण निम्न हैं –

1. मरूद्भिद पादप जलाभाव वाले स्थानों पर पाये जाते हैं। अतः जल का अवशोषण करने के लिये इनकी जड़ें सुविकसित व भूमि में गहराई तक जाती हैं।

2. जड़ों में जल के अवशोषण के लिये मूल रोम व जड़ की सुरक्षा के लिये मूलगोप (Root cap) पाया जाता है।

3. मरूद्भिद् पादपों का तना काष्ठीय होता है तथा तने पर बहुकोशिक रोम पाये जाते हैं। कुछ पादपों जैसे **आक (*Calotropis*)** के तने पर मोम और सिलिका का आवरण पाया जाता है।

चित्र 7.23 मरूद्भिद पादप

4. कुछ मरूद्भिद पादपों में तना हरा होता है जो जल संग्रह तथा प्रकाश संश्लेषण का कार्य करता है। जैसे ग्वार पाठा (*Aloevera*)

5. मरूद्भिद पादपों में पत्तियों की सतह द्वारा जल की हानि को रोकने के लिये गीष्म ऋतु में पत्तियां झड़ जाती है

तथा कुछ पादपों जैसे **नागफनी (*Opuntia*)** में पत्तियां काटों में रूपान्तरित हो जाती है।

6. शुष्क आवास के पादपों में पत्ती की सतह पर वाष्पोत्सर्जन को कम करने के लिये मोम की परत पायी जाती है, तथा रन्ध्र पत्ती की नीचे की सतह पर पाये जाते हैं तथा **गर्ती रन्ध्र (Sunken Stomata)** पाये जाते हैं।

7. मरूद्भिद् पादपों के फलों व बीजों के चारों ओर कठोर आवरण पाया जाता है।

8. मरूद्भिद् पादपों की कोशिकाओं की परासरण सान्द्रता (Osmotic concentration) अधिक होती है।

3. लवणमृदोदभिद (Halophytes) लवणयुक्त मृदा या दलदल में पाये जाने वाले पादप लवणमृदोद्भिद् पादप कहलाते हैं।

लवणीय मृदा में सोडियम क्लोराइड, मैग्नीशियम क्लोराइड व मैग्नीशियम सल्फेट जैसे घुलनशील लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। ऐसी मृदा में पाये जाने वाले पादपों को **मेंग्रोव वनस्पति (Mangroove vegetation)** भी कहते हैं।

उदाहरण : ***राइजोफोरा, सालसोला*** **इत्यादि।**

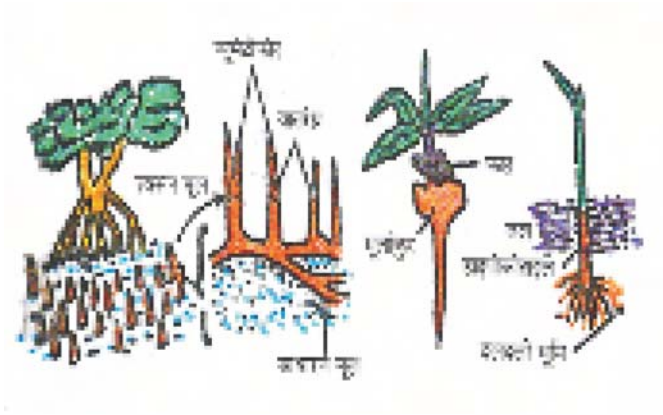

चित्र 7.24 लवणमृदोद्भिद पादप

अनुकूलन :–

1. इन पादपों की जड़ें कम गहराई तक जाने वाली होती है इसलिये इन पादपों में **स्तम्भ मूल (Stem roots)** परिवर्धित होकर दलदल में प्रवेश करके पादप को अतिरिक्त सहारा व स्थिरता प्रदान करती है।

2. दलदल युक्त मृदा में जलाक्रांत के कारण आक्सीजन का अभाव होता है, तथा पादपों की सामान्य जड़ों को श्वसन के लिये आक्सीजन उपलब्ध नहीं हो पाती है। अतः इन पादपों की जड़ों की कुछ शाखायें भूमि से ऊपर निकल जाती हैं, तथा ऋणात्मक गुरूत्वानुवर्ती (Negative geotropic) होती हैं। इन जड़ों के शीर्ष पर सूक्ष्म रन्ध्र पाये जाते हैं, जिनके द्वारा ये आक्सीजन लेकर मूल तंत्र की आक्सीजन की कमी की पूर्ति करती है। इन जड़ों को श्वसन मूलें (Respiratory roots) या **न्यूमेटोफोर (Pneumatophore)** कहते हैं।

3. इन पादपों के तने क्लोराइड आयनों के संग्रह के कारण गूदेदार होते हैं।

4. इन पादपों की पत्तियां छोटी, मांसल व चमकीली सतह वाली होती हैं।

5. इन पादपों में बीज का अंकुरण फल के भीतर ही प्रारम्भ हो जाता है, तथा बीज से बीजपत्राधार व मूलांकुर बनने के पश्चात् नवोद्भिद (Seedling) उर्ध्वाधर स्थिति में भूमि पर गिर जाता है, जिससे मूलांकुर सीधा कीचड़ में घुस जाता है। इस प्रकार के अंकुरण को **सजीव प्रजक या जरायुज (Vivipary)** अंकुरण कहते हैं।

4. शीतोद्भिद (Cryophytes) :– शीत प्रदेशों तथा बर्फीली भूमि पर उगने वाली वनस्पति को शीतोद्भिद् पादप कहते हैं। उदाहरण : ***साल्मोनेला,*** **मॉस, लाइकेन।**

अनुकूलन :– शीत आवास में अधिकांशतः पादप शाक, मॉस व लाइकेन होते हैं, जो बर्फ के पिघलने पर उगते हैं तथा अल्प अवधि में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेते हैं। अर्थात् ये पादप अल्पकालिक होते हैं।

साल्मोनेला एक पुष्पी पादप है जो बर्फ के नीचे दबा रहता है तथा पुष्पन के समय उत्पन्न उष्मा से बर्फ के पिघलने से पादप का केवल पुष्प ही बाहर निकला रहता है।

5. समोद्भिद् (Mesophytes) :– सामान्य जल, आर्द्रता व ताप वाले आवास में पाये जाने वाले पादप समोद्भिद् पादप कहलाते है। इस आवास में पादप की वृद्धि व जनन के लिये सभी परिस्थितियां आदर्श होती है।

इन पादपों में मूलतंत्र सुविकसित तथा मूलरोम व मूल गोप सहित होता है। तना, वायवीय शाखित, मोटा व कठोर होता है। पत्तियाँ चौड़ी व पत्ती की दोनों सतहों पर रन्ध्र पाये जाते हैं। पादप पूर्ण रूप से विकसित व पादप की कार्यिकीय प्रणाली सामान्य होती है। **उदाहरण : उद्यान पौधे** व **फसली पौधें।**

7.4.2 जन्तुओं के आवास एवं अनुकूलन (Habitat and adaptation of animals) :–

प्रकृति में जन्तु जल, स्थल, वायु (नभ) आदि आवासों में पाये जाते हैं। आवास के आधार पर जन्तुओं को निम्नानुसार वर्गीकृत किया गया है।

1. जलचर 2. स्थलचर 3. नभचर

1. जलचर :– जलीय आवास में पाये जाने वाले जन्तु जलचर कहलाते हैं। इनमें से कुछ जन्तु अलवणीय जल में, कुछ लवणीय जल में तथा कुछ उभयचर होते हैं। इन जन्तुओं में उनके आवास में अनुकूलित रहने के लिये विशेषतायें पायी जाती हैं, जो निम्न हैं –

(क) इन जन्तुओं का शरीर धारा रेखीय होता है, जिससे ये जल में आसानी से तैर सकते हैं।

(ख) इन जन्तुओं में पंख या फिन पाये जाते हैं, जो तैरने में सहायता प्रदान करते हैं तथा शरीर का सन्तुलन बनाये रखते हैं।

(ग) जलीय जन्तुओं में श्वसन के लिये **गलफड़े (Gills)** पाये जाते हैं तथा जल में घुलित आक्सीजन का उपयोग करते हैं।

(घ) इन जन्तुओं की अस्थियां हल्की एवं स्पंजी होती हैं तथा गर्दन अनुपस्थित या कम विकसित होती है।

(ड.) इनके शरीर पर शल्क व श्लेष्मा ग्रन्थियां पायी जाती हैं।

(च) समुद्री आवास (लवणीय आवास) में पाये जाने वाले जन्तुओं में लवणों को शरीर से बाहर निकालने के लिये **लवण उत्सर्जक ग्रन्थियां** पायी जाती हैं।

(छ) उभयचर जन्तु जैसे **सेलामेण्डर** में गलफडों द्वारा व फुफ्फुसीय श्वसन, दोनों होता है।

उदाहरण : **मछली, मेंढक, समुद्री–कछुआ आदि।**

(अ)

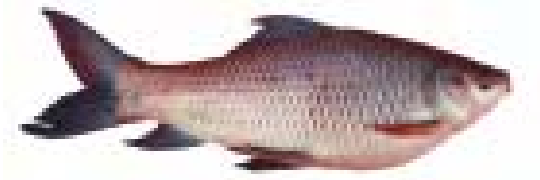

(ब)

चित्र 7.25 जलचर
(अ) मछली (ब) मेंढ़क

2. स्थलचर :– स्थल पर पाये जाने वाले जन्तु स्थलचर कहलाते हैं। स्थल पर वातावरण में भिन्नता के आधार पर जन्तुओं को निम्न वर्गो में विभाजित किया जा सकता है।

(क) मरुस्थलीय जन्तु :– स्थल पर शुष्क आवास में पाये जाने वाले जन्तु शुष्कआवासीय या मरुस्थलीय जन्तु कहलाते हैं।

मरूस्थलीय आवास में पाये जाने वाले जन्तुओं में विशेष लक्षण विकसित होते हैं, जिससे वे उस आवास में आसानी से जीवित रह सकें। ये अनुकूलन निम्न हैं –

1. इन जन्तुओं के पाद मरूस्थल में चलने, दौड़ने व खोदने के लिये रूपान्तरित होते हैं। जैसे :– **ऊंट** के पैर गद्दीदार होते हैं।

2. इन जन्तुओं के शरीर का रंग भूरा मिट्टी जैसा होता है, जिससे उनकी शिकारी जन्तु से सुरक्षा होती है।

(अ)

(ब)

चित्र 7.26 मरूस्थलीय जन्तु
(अ) ऊँट (ब) मोलॉक

3. इन जन्तुओं का मल ठोस व मूत्र गाढ़ा होता है तथा शरीर पर स्वेद ग्रन्थियां अनुपस्थित या कम विकसित होती हैं।

4. शरीर में जल का संरक्षण करने के लिये कुछ जन्तुओं जैसे *फ्राइनोसोमा* के शरीर पर शल्क पाये जाते हैं।

5. कुछ जन्तुओं जैसे मोलॉक की त्वचा पानी प्राप्त करने के लिये आर्द्रताग्राही होती है।

6. मिट्टी के कणों से सुरक्षा हेतु नासाछिद्र छोटे होते हैं तथा वाल्व द्वारा सुरक्षित रहते हैं। जैसे – **ऊँट**।

7. इन जन्तुओं में जल संग्राहक अंग उपस्थित होते हैं जो कि जल भण्डारण का कार्य करते हैं। जैसे – **ऊँट**।

उदाहरण : **ऊँट, *फ्राइनोसोमा,* जंगली चूहा, मोलॉक आदि।**

(ख) शीत आवासीय जन्तु :– कम तापमान व बर्फीले क्षेत्रों में पाये जाने वाले जन्तु शीत आवासीय जन्तु कहलाते हैं। शीत आवास में तापक्रम अत्यधिक कम होता है तथा ठण्डी व शुष्क हवाऐं चलती हैं। वर्ष के अधिकांश समय पृथ्वी पर बर्फ पायी जाती है। ऐसे आवास में पाये जाने वाले जन्तुओं की त्वचा पर ठण्ड से रक्षा के लिये घने बाल पाये जाते हैं तथा शिकारी जन्तुओं से रक्षा के लिये इनका रंग सफेद होता है।

उदाहरण : **ध्रुवीय खरगोश, मस्क बैल** आदि।

(अ)

(ब)

(स)

चित्र 7.27 शीत आवासीय जन्तु
(अ) मस्क बैल (ब) ध्रुवीय खरगोश (ब) ध्रुवीय भालू

3. नभचर :– वायु में उडने वाले जन्तु नभचर या वायवीय जन्तु कहलाते हैं। इन जन्तुओं में निम्न अनुकूलन पाये जाते हैं –

1. इन जन्तुओं की अस्थियाँ खोखली व हल्की होती हैं।

2. इनके अग्रपाद पंखों में रूपान्तरित होकर उड़ने में सहायता करते हैं।

3. इनकी दृष्टि स्थलीय जन्तुओं की तुलना में अधिक तीव्र होती है।

4. इनका शरीर परों (पिच्छों) से ढका रहता है जो शरीर का ताप नियत बनाये रखते हैं।

5. इनकी पूँछ शरीर का सन्तुलन बनाये रखने में सहायक होती है।

6. इन जन्तुओं में भोजन ग्रहण करने के लिये चोंच पायी जाती है।

7. शरीर बेलनाकार होता है।

उदाहरण : **चिडिया, बाज, तोता, कौआ, मोर** आदि।

(अ)

(ब)

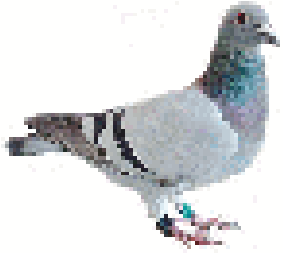

(स)

चित्र 7.28 नभचर जन्तु

(अ) चिडिया (ब) कबूतर (ब) तोता

7.5 द्विनाम पद्धति (Binomial Method)

पृथ्वी पर लाखों पादप व जन्तु पाये जाते हैं। इन पादपों व जन्तुओं को उनके पाये जाने वाले स्थान पर स्थानीय नाम से जाना पहचाना जाता है। ये स्थानीय नाम एक ही देश के विभिन्न स्थानों के अनुसार बदलते रहते हैं। इसी प्रकार इन पादपों व जन्तुओं के नाम भिन्न–भिन्न भाषाओं में अलग–अलग होते हैं। इसलिये जब कोई एक भाषा में किसी जीव की बात कर रहा हो तो दूसरी भाषा जानने वाला समझ नहीं पाता है। इस समस्या का समाधान वैज्ञानिकों ने सभी जीवों (पादप व जन्तु) को एक वैज्ञानिक नाम देकर किया। प्रत्येक जीव का एक वैज्ञानिक नाम होता है, जिससे वह उसी नाम से पूरे विश्व मे जाना जाता है। इस प्रक्रिया को नाम पद्धति कहते हैं।

पादपों के वैज्ञानिक नाम के सर्वमान्य नियम ''इन्टरनेशनल कोड ऑफ बोटेनिकल नोमेनक्लेचर (ICBN) तथा जन्तुओं के ''इन्टरनेशनल कोड ऑफ जूलोजीकल नोमेनक्लेचर (ICZN) में दिये गये हैं।

नाम पद्धति के लिये हम जिस वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करते हैं, उसे **द्विनाम पद्धति** कहते हैं इस नामकरण पद्धति को **कैरोलस लीनियस** ने सुझाया था। यह पद्धति पूरे विश्व में जीवों के नामकरण की सर्वमान्य पद्धति है तथा इसका उपयोग सम्पूर्ण विश्व के जीवविज्ञानी करते हैं, इस पद्धति के अनुसार –

1. प्रत्येक जीव के वैज्ञानिक नाम के दो घटक होते है – प्रथम वंश नाम तथा दूसरा जाति नाम।

2. वैज्ञानिक नाम प्रायः **लेटिन भाषा** में होते हैं, परन्तु जब हाथ से अंग्रेजी भाषा में लिखते हैं तब दोनों शब्दों को अलग–अलग **रेखांकित** किया जाता है।

3. पहला अक्षर जो वंश नाम को बताता है वह अंग्रेजी भाषा के बड़े अक्षर में होना चाहिये जब कि जाति नाम में छोटा अक्षर होना चाहिए।

उदा. आम का वैज्ञानिक नाम ***Mangifera indica*** है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. वातावरण के अनुसार किसी जन्तु अथवा पादप को अपने विशेष अंगों एवं विशेष क्रियाओं द्वारा अनुकूल बनाने की क्रिया को **अनुकूलन** कहते है।
2. पादप जगत को पाँच प्रभाग **थैलोफाइटा, ब्रायोफाइटा, टेरिडोफाइटा, अनावृतबीजी** व **आवृत बीजी** में वर्गीकृत किया गया है।
3. द्विनाम पद्धति के जनक कैरोलस लिनियस है। द्विनाम पद्धति में प्रथम नाम वंश को तथा द्वितीय नाम जाति को प्रदर्शित करता है।
4. जन्तु जगत को पृष्ठवंशी व अपृष्ठवंशी दो समूहों में वर्गीकृत किया गया है।
5. पादपों को आवास के आधार पर जलोदभिद, मरूद्भिद, लवणमृदोद्भिद, शीतोद्भिद व समोद्भिद में वर्गीकृत किया गया है।
6. पंचजगत अवधारणा **व्हीटेकर** ने दी थी। इसके अनुसार पृथ्वी पर जीवों के पांच जगत **मोनेरा, प्रोटिस्टा, फन्जाई, प्लांटी** व **ऐनिमेलिया** हैं।
7. जन्तुओं को आवास के आधार पर **जलचर, उभयचर, स्थलचर,** व **नभचर** में वर्गीकृत किया गया हैं।
8. लवणमद्दोदभिद पादपों को **मेग्रोव वनस्पति** भी कहते हैं। इनमें श्वसन मूल या न्यूमेटोफोर पायी जाती है।
9. जलचर जन्तु गलफड़ों द्वारा व स्थलचर जन्तु फेफड़ों व त्वचा द्वारा श्वसन करते हैं।
10. जलीय पादपों की कोशिका की परासरण सान्द्रता कम तथा मरूस्थलीय पादपों की परासरण सान्द्रता अधिक होती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सबसे अधिक विकसित पादपों का प्रभाग है।

   (अ) ब्रायोफाइटा (ब) आवृतबीजी

   (स) अनावृतबीजी (द) थैलोफाइटा

2. निम्न में से बीजों का जरायुज अंकुरण किन पादपों में पाया जाता है।

(अ) जलोद्भिद (ब) समोद्भिद

(स) शुष्कोद्भिद (द) लवणमृदोद्भिद

3. पत्तियों में गर्तीरन्ध्र पाया जाना, अनुकूलन है।

(अ) मरूद्भिद (ब) लवणमृदोद्भिद

(स) जलोद्भिद (द) समोद्भिद

4. किस पादप वर्ग के पादप संवहनी क्रिप्टोग्म्स कहलाते हैं।

(अ) टेरिडोफाइटा (ब) ब्रायोफाइटा

(स) अनावृतबीजी (द) कोई नहीं

5. आर्थ्रोपोडा वर्ग का जन्तु है।

(अ) जोंक (ब) फीता कृमि

(स) घरेलू मक्खी (द) तारा मछली

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :–

6. द्विनाम पद्धति के जनक का नाम लिखिए।
7. मेंढक किस जन्तु वर्ग का जन्तु है?
8. अनुकूलन किसे कहते है?
9. पंच जगत अवधारणा का प्रतिपादन किसने किया था?
10. नील हरित शैवाल (साइनोबैक्टीरिया) किस प्रभाग का सदस्य है?
11. लाइकेन क्या है?
12. अनावृतबीजी पादपों के दो उदाहरण दीजिए।
13. ऐसे जन्तु का नाम लिखिए जिसमें श्वसन क्लोम, फेफड़ों व त्वचा तीनों द्वारा होता है?
14. ऐसे स्तनधारी का नाम लिखिए जो अण्डे देता है?
15. मेंग्रोव वनस्पति किस आवास में पायी जाती है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न :–

1. लवणमृदोद्भिद पादपों में पायी जाने वाली दो विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. जलीय जन्तुओं में पाये जाने वाले अनुकूलन लिखिए।
3. शीत आवास की विशेषतायें बताइये।
4. स्तनधारी वर्ग के जन्तुओं के लक्षण लिखिए।
5. आर्थ्रोपोडा वर्ग के जन्तुओं के लक्षण लिखिए।
6. अनावृत बीजी पादपों में कवकमूल व प्रवाल मूल का कार्य बताइये।
7. लाइकेन में सहजीविता को समझाइये।
8. टेरिडोफाइटा वर्ग के पादपों को संवहनी क्रिप्टोगैम्स क्यों कहते है?
9. मरूद्भिद पादपों में पाये जाने वाले अनुकूलनों का वर्णन कीजिए।
10. मृतजीवी किसे कहते हैं?
11. ब्रायोफाइटा व टेरिडोफाइटा वर्ग के पादपों में दो समानतायें बताइये।
12. एकबीजपत्री व द्विबीजपत्री पादप किसे कहते हैं?
13. पृष्ठवंशी व अपृष्ठवंशी जन्तुओं में दो अन्तर बताइये।
14. लवणमृदोदभिद पादपों में न्यूमेटोफोर का क्या कार्य है?
15. सिंघाडा में स्वांगीकारी जड़ का क्या कार्य है?
16. नभचर जन्तुओं के अनुकूलन बताइये।

निबन्धात्मक प्रश्न :–

1. आवास के आधार पर पादपों का वर्गीकरण कर प्रत्येक आवास के पादपों में पाये जाने वाले अनुकूलनों का वर्णन कीजिए।
2. द्विनाम पद्वति के अनुसार जीवों के नामकरण के नियम लिखिए।
3. जलीय आवास व मरूस्थलीय आवास में पाये जाने वाले जन्तुओं की विशेषतायें व उदाहरण दीजिए।
4. आवृतबीजी व अनावृत बीजी पादपों मे पाये जाने वाली विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. टिप्पणी लिखिए।
   1. मेंग्रोव वनस्पति
   2. जलस्थल चर
   3. लवण उत्सर्जक ग्रन्थियां
   4. लाइकेन
   5. सजीव प्रजक अंकुरण
   6. स्तम्भ मूल

उ. 1–ब, 2–द, 3–अ, 4–अ, 5–स

◆◆◆

अध्याय – 8
सजीवों की प्रमुख क्रियाएं
(Major Activities of Living Organisms)

8.1 पोषण की अवधारणा और महत्व
(Concept of Nutrition and its importance)

जीवों के भोजन ग्रहण करने की प्रक्रिया **पोषण** (Nutrition) कहलाती है। भोजन में उपस्थित पोषक तत्वों के कारण शारीरिक वृद्धि होती है तथा विभिन्न रासायनिक क्रियाओं हेतु ऊर्जा प्राप्त होती है यह **पोषण (Nutrition)** कहलाता है। उन सभी भोज्य पदार्थों को जिनसे सजीव ऊर्जा प्राप्त करते हैं और नये कोशिकीय पदार्थों का संश्लेषण करते हैं, वे **पोषक पदार्थ (Nutrients)** कहलाते हैं।

सभी सजीव प्राणियों को शरीर की विभिन्न जटिल रासायनिक क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए भोजन एवं उसमें विद्यमान पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। भोजन में उपस्थित पोषक तत्वों की सहायता से ही सजीवों की वृद्धि, टूट–फूट की मरम्मत, विकास, रोगों से रक्षा, नियंत्रण एवं प्रजनन कार्य संभव होता है। अगर शरीर को भोजन नहीं मिले तो सभी शारीरिक क्रियाएं व कार्य बंद हो जाएंगे।

सजीवों का शरीर गाड़ी के इंजन के समान है जैसे इंजन को चलाने के लिए ईंधन की आवश्यकता होती है उसमें जब तक ईंधन डालते जाए, इंजन चलता रहेगा और बंद करने पर इंजन कार्य करना बंद कर देता है। इसका कारण यह है कि इंजन को चलाने के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है जो कि उसे ईंधन से प्राप्त होती है। इंजन की भांति ही हमारे शरीर को कार्य करने के लिए शक्ति की आवश्यकता होती है जो हमारे शरीर को भोजन तथा पोषक पदार्थों द्वारा प्राप्त होती है। शरीर का तापमान बनाये रखने के लिए भी भोजन तथा पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। जीवों के शरीर में निरन्तर वृद्धि होती रहती है। इस वृद्धि के लिए हमें पोषण की आवश्यकता होती है।

8.2 पोषण के प्रकार
(Type of Nutrition)

पोषण विधि के आधार पर सजीवों को दो मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है (अ) स्वपोषणी (Autotrophs) (ब) विषमपोषी (Heterotrophs)

(अ) स्वपोषी (Autotrophs)– हरे पौधों में क्लोरोफिल नामक पदार्थ होता है। अतः ये वातावरण से कार्बन–डाई–ऑक्साइड, जल, सौर ऊर्जा आदि लेकर स्वयं अपना भोजन बनाते हैं, इन्हें **स्वपोषी (Autotrophs)** कहते हैं, कुछ जीवाणु जैसे –सल्फर जीवाणु नाइट्रीकारी जीवाणु एवं लौह जीवाणु भी स्वपोषी हैं। ये गंधक, नाइट्रोजन व लौह यौगिकों का ऑक्सीकरण करके उससे प्राप्त ऊर्जा से अपना भोजन स्वयं बना लेते हैं, इन्हें **रसायन संश्लेषी स्वपोषी** कहते हैं।

(2) परपोषी / विषमपोषी (Heterotrophs) – प्राणी जो स्वयं अपना भोजन नहीं बना सकते हैं और दूसरों जीवों पर अपने भोजन के लिए निर्भर रहते हैं **विषमपोषी / परपोषी** कहलाते हैं। इस प्रकार के पोषण को परपोषण कहते हैं। जो निम्न प्रकार के हैं –

(a) प्राणीसमभोजी पोषण (Holozoic Nutrition) – वे प्राणी जो अन्य प्राणियों या उनके द्वारा निर्मित कार्बनिक पदार्थों को ग्रहण करते हैं **प्राणीसमभोजी** सजीव कहलाते हैं। इन्हें आहार स्त्रोत के आधार पर निम्नानुसार वर्गीकृत किया गया है–

(i) शाकाहारी (Herbivores) – वे जन्तु जो भोजन के लिए पौधों पर प्रत्यक्ष निर्भर रहते हैं, **शाकाहारी** कहलाते हैं। उदाहरण बकरी, गाय, हिरण आदि।

(ii) मांसाहारी (Carnivores) – सजीव जो दूसरे जन्तुओं का भक्षण कर भोजन प्राप्त करते हैं **मांसाहारी** कहलाते हैं।

मांसाहारी जन्तु – उदाहरण शेर, चीता आदि। कुछ पादप **कीटाहारी** हैं जैसे – घट पादप, *युट्रिकुलैरिया, ड्रोसेरा* आदि।

(iii) सर्वाहारी (Omnivorous) – वे जन्तु जो पौधों एवं प्राणी दोनों को भोजन के रूप में ग्रहण करते हैं, **सर्वाहारी** कहलाते हैं उदाहरण – चूहे, सुअर, मनुष्य आदि।

(b) परजीवी (Parasites) – वे प्राणी जो अन्य सजीव प्राणियों और पादपों के शरीर के बाहर या भीतर रहकर उनसे आहार प्राप्त करते हैं, **परजीवी** कहलाते हैं। सामान्य रूप से परजीवी दो प्रकार के होते हैं–

- **बाह्य परजीवी** (Ectoparasite) – परजीवी जो अपना पोषण, परपोषी की त्वचा से चिपक कर प्राप्त करते हैं **बाह्य परजीवी** कहलाते हैं। उदहारण – जूँ, मच्छर, खटमल (प्राणी), अमरबेल (पादप)।
- **अंतःपरजीवी** (Endoparasite) – परजीवी जो अपना पोषण परपोषी के दैहिक अंगों में जैसे आंत, देहगुहा, यकृत, रुधिर

चित्र 8.1: जीवों में विभिन्न प्रकार का पोषण

आदि में प्रवेश कर प्राप्त करते हैं। उदाहरण – यकृत कृमि, फीता कृमि, *प्लाज्मोडियम* आदि।

(c) सहजीवी (Symbiosis) – इस प्रकार के पोषण में भिन्न प्रकार की जातियां साथ रहती हैं। इसमें दोनों ही जातियों को लाभ प्राप्त होता है तथा किसी को भी हानि नहीं पहुंचती है। यह **सहजीविता** कहलाती है तथा वे जीव **सहजीवी** कहलाते हैं। उदाहरण – शैवाल तथा कवक दोनों मिलकर लाइकेन का निर्माण करते हैं। ये अपना जीवन, जीवनपर्यंत साथ गुजारते हैं।

(d) मृतोपजीवी पोषण (Saprobic Nutrition) – वे सजीव जो पौधों या जन्तुओं के क्षयमान (Decaying) अर्थात् सड़ते–गलते ऊतकों से आहार प्राप्त करते हैं **मृतोपजीवी** कहलाते हैं। उदाहरण जीवाणु (Microbes), कवक (Fungi) व कुछ प्रोटोजोआ प्राणी।

8.3 पादपों में पोषण
(Nutrition In Plants)

प्रत्येक सजीव प्राणी को जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। भोजन से ऊर्जा प्राप्त होती है जिससे वह जीवन की समस्त क्रियाओं का संचालन करता है। यदि शरीर को भोजन नहीं मिले तो हमारे शरीर की सभी क्रियाएँ एवं कार्य बंद हो जायेंगे। पादपों में भोजन निर्माण की प्रमुखतम विधि प्रकाशसंश्लेषण है।

8.3.1 प्रकाशसंश्लेषण (Photosynthesis)

पर्यावरण में संतुलन के दृष्टिकोण से पादपों में प्रकाश संश्लेषण एक महत्वपूर्ण क्रिया है। इस क्रिया द्वारा पादप, वातावरण में उपस्थित कार्बन–डाई– ऑक्साइड को प्रकाश की उपस्थिति में पर्णहरित (Chlorophyll) की सहायता से भोजन बनाते हैं और बदले में जीवनदायी गैस ऑक्सीजन उपलब्ध कराते हैं।

पौधे और जंतुओं की ऊर्जा प्राप्त करने की विधि में बहुत अंतर है। जंतु अपना भोजन स्वयं नहीं बना सकते, वे अपना भोजन हरे पेड़–पौधों से प्राप्त करते हैं। इसके विपरीत हरे पेड़ पौधे सूर्य से प्राप्त प्रकाश का प्रयोग कर उसे रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। यह ऊर्जा एड़िनोसिन ट्राइफॉस्टफेट (ATP) तथा अपचयित निकोटिनामाइड एडिनीन डाई फॉस्फेट (NADPH) के रूप में संचित रहती है। पौधे इस ऊर्जा का उपयोग कार्बन–डाई–ऑक्साइड के अपचयन में करते हैं। सम्पूर्ण क्रिया के फलस्वरूप कार्बोहाइड्रेट प्राप्त होते हैं जिनसे सभी प्राणी भोजन लेते हैं।

हरे पौधों द्वारा प्रकाश ऊर्जा को अवशोषित कर उसे रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करने की क्रिया को **प्रकाशसंश्लेषण** कहते हैं।

8.3.2 प्रकाशसंश्लेषी वर्णक
(Photosynthetic Pigment)

सभी प्रकाशसंश्लेषी जीव, प्रकाश ऊर्जा को लेकर उसे रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। यह कार्य वर्णकों द्वारा किया जाता है। ये वर्णक विशिष्ट कोशिकांगों में व्यवस्थित रहते हैं, जो कोशिकाद्रव्य में बिखरे होते हैं। **हेकल** नामक वैज्ञानिक ने इन्हें **प्लास्टिड्स (Plastids; लवक)** नाम दिया। ये कवकों तथा प्रोकेरियोट्स जैसे जीवाणु तथा नील हरित शैवालों को छोड़कर सभी पादप कोशिकाओं में पाये जाते हैं।

हरित लवक (Chloroplasts)– ये हरे रंग के लवक होते हैं। इनका हरा रंग इनमें पाये जाने वाले वर्णक पर्णहरित (Chlorophyll) के कारण होता है। पौधों तथा पत्तियों का हरा रंग इन्हीं के कारण होता है। इनका कार्य प्रकाश संश्लेषण द्वारा भोजन का निर्माण करना होता है हरितलवक में दो स्पष्ट क्षेत्र होते हैं– पीठिका या स्ट्रोमा (Stroma) एवं ग्रेना (Grana)

(i) **स्ट्रोमा–** यह हरितलवक की पीठिका बनाता है। इसमें प्रोटीन संश्लेषण करने वाले राइबोसोम बिखरे रहते हैं। प्रकाश संश्लेषण की अप्रकाशिक अभिक्रिया स्ट्रोमा के इसी भाग में होती है।

(ii) **ग्रेना–** हरित लवक के इस भाग में प्रकाश संश्लेषण की प्रकाशिक अभिक्रिया सम्पन होती है। प्रत्येक हरितलवक में 40–60 ग्रेना पाये जाते हैं। ग्रेनम क्षेत्र में पट्टलिकाएँ सिक्कों के ढेर की भांति एक दूसरे पर व्यवस्थित रहती हैं इन्हें **थायलेकॉइड्स** कहते हैं।

उच्च पौधों में हरित लवक में चार प्रकार के वर्णक पाये जाते हैं दो प्रकार के हरे वर्णक जिन्हें क्लोरोफिल a तथा b कहते हैं तथा नारंगी एवं पीले रंग के वर्णक जिन्हें क्रमशः कैरोटीन एवं जैन्थोफिल कहते हैं।

8.3.3 प्रकाशसंश्लेषण की क्रियाविधि
(Mechanism of Photosynthesis)

कार्बन डाई ऑक्साइड तथा जल, प्रकाश संश्लेषण के दो प्रमुख कच्चे पदार्थ हैं। पौधों के पर्णहरित तथा अन्य वर्णक प्रकाश ऊर्जा का अवशोषण कर इसका रासायनिक उर्जा के रूप में रूपान्तरण कर देते हैं। प्रकाश संश्लेषण की समग्र क्रिया को निम्नलिखित समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{पर्णहरित}]{\text{प्रकाश}} C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 6O_2 \uparrow$$

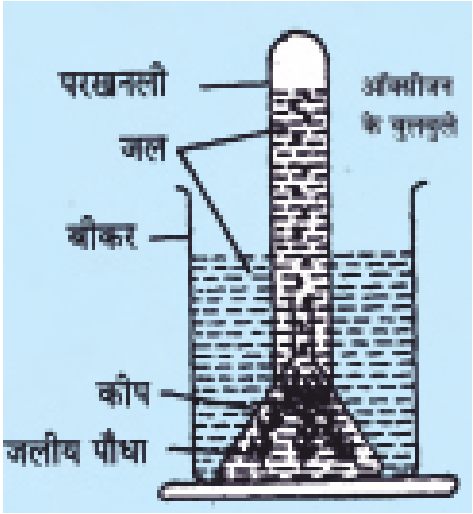

चित्र 8.2 प्रकाशसंश्लेषण में ऑक्सीजन निकलती है

प्रकाशसंश्लेषण की क्रिया मुख्य रूप से दो चरणों में सम्पन्न होती है–

(i) प्रकाश अभिक्रिया

(ii) अप्रकाशिक अभिक्रिया

(i) प्रकाश अभिक्रिया (Light Reaction)

इस क्रिया के अंतर्गत सूर्य की विकिरण ऊर्जा का रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तन होता है। इसमें निम्नलिखित मुख्य क्रियाएं हैं–

(1) कुछ निश्चित तरंग दैर्ध्यों के प्रकाश का पर्णहरित (Chlorophyll) द्वारा अवशोषण

(2) पर्णहरित का उत्तेजन (Excitation)

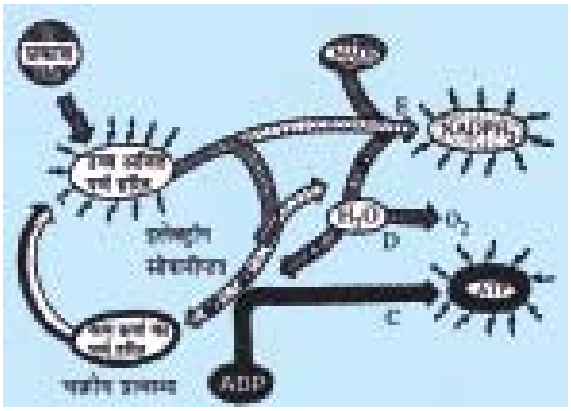

चित्र 8.3 : प्रकाश अभिक्रिया

(3) जल का प्रकाशिक अपघटन (Photolysis)

(4) ऑक्सीजन का निकलना तथा

(5) रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तन जिसके अंतर्गत ATP के रूप में ऊर्जा का संग्रह और NADPH का निर्माण या संश्लेषण।

यह चरण प्रकाश ऊर्जा पर निर्भर करता है, अतः इसे प्रकाश अभिक्रिया (Light reaction) अथवा प्रकाश–रासायनिक अभिक्रिया (Photo chemical reaction) कहते हैं।

यह क्रिया क्लोरोप्लास्ट के अंदर स्थित थाइलेकॉइड की झिल्ली में होती है।

(ii) अप्रकाशिक अभिक्रिया

(Dark Reaction)

प्रकाश संश्लेषण की इस क्रिया में संश्लेषण होता है जिसके फलस्वरूप कार्बन डाई ऑक्साइड से कार्बोहाईड्रेट का निर्माण होता है। इस क्रिया के लिए प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती है, इसलिए इसे अप्रकाशिक अभिक्रिया भी कहते हैं।

यह क्रिया हरितलवक के स्ट्रोमा भाग में होती है।

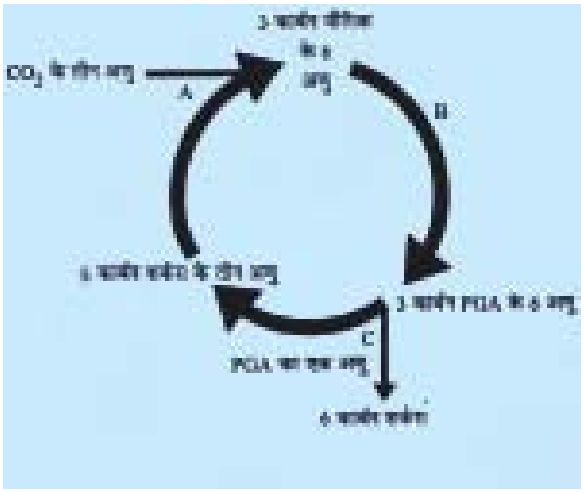

चित्र 8.4 : अप्रकाशिक अभिक्रिया

इस क्रिया में कार्बन डाई ऑक्साइड का स्थिरीकरण एवं अपचयन होता है। जिसके फलस्वरूप प्रथम उत्पाद PGA (फास्फोग्लिसरीक अम्ल) तीन कार्बन अणु का होने के कारण इसे C_3 चक्र कहते हैं। अथवा इसे केल्विन चक्र भी कहते हैं।

8.3.4 प्रकाशसंश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक

प्रकाशसंश्लेषण की क्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है। **बाह्य कारक** एवं **आन्तरिक कारक**।

(I) बाह्य कारक (External factors)

इसमें सूर्य प्रकाश, कार्बन डाई ऑक्साइड सान्द्रता, ऑक्सीजन, ताप व जल सम्मिलित हैं।

(II) आन्तरिक कारक (Internal factors)

इसमें पर्णहरित एक महत्वपूर्ण कारक है।

8.3.5 जीवाण्वीय प्रकाशसंश्लेषण

(Bacterial Photosynthesis)

जीवाण्वीय प्रकाशसंश्लेषण एक विशिष्ट प्रकार की प्रकाशसंश्लेषण प्रक्रिया है, जो कुछ प्रमुख प्रकार के जीवाणुओं में सम्पन्न होती है। इस क्रिया के अन्तर्गत भी सूर्य ऊर्जा के

उपयोग से कार्बन डाई–ऑक्साइड का अपचयन होता है। उदाहरण – नीले हरे जीवाणु, बैंगनी जीवाणु।

8.4 भोजन के प्रमुख घटक

भोजन में पाये जाने वाले जटिल रासायनिक पदार्थ जो कि शरीर में होने वाली विभिन्न प्रकार की क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए एवं स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए उचित मात्रा में अति आवश्यक होते हैं, **भोजन के घटक** या **पोषक तत्व** (Nutrients) कहलाते हैं।

पोषक तत्वों को निम्नलिखित 6 वर्गों में विभाजित किया गया है–

(1) कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrate)
(2) वसा (Fat)
(3) प्रोटीन (Protein)
(4) खनिज लवण (Mineral salts)
(5) विटामिन (Vitamin)
(6) जल (Water)

यद्यपि जल में किसी भी तरह के पोषक तत्व विद्यमान नहीं होते हैं, फिर भी चूंकि यह विभिन्न शारीरिक क्रियाओं हेतु आवश्यक है अतः जल भी पोषक घटक में शामिल किया जाता है। एक अन्य पदार्थ जो कि पोषक तो नहीं है लेकिन हमारे भोजन में इसका होना आवश्यक है। उसे **रूक्षांश (Roughage)** या **आहारी रेशे** कहते हैं। जंतुओं के भोजन में यह अधिकांशतः अपचनीय पादप–कोशिका भित्तियों वाला भाग है। यह भोजन पचने के बाद, बचे अपशिष्ट भाग को शरीर के बाहर निकालने में सहायक है।

8.5 जन्तुओं में पोषण

वनस्पतियाँ वायुमण्डल से प्राप्त CO_2 को प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया से शर्करा में परिवर्तित करती हैं, तथा जन्तु इन्हीं वनस्पतियों को या वनस्पति खाने वाले दूसरे जन्तुओं से पोषण लेकर ऊर्जा प्राप्त करते हैं।

8.6 पाचन (Digestion)

8.6.1 पाचन का अर्थ

परपोषी जीव – जन्तु जो भोजन पादपों से प्राप्त करते हैं वह अविसरणीय (Non Diffusable) अवस्था में होता है, पाचक रसों की सहायता से इन्हें विसरणीय (Diffusable) सरल यौगिकों में परिवर्तित किया जाता हैं। इस क्रिया को पाचन (Digestion) कहा जाता है। इन क्रियाओं को करने हेतु विशिष्ट अंग होते हैं जिन्हें **पाचन अंग** (Digestive organ) कहते हैं एवं यह तंत्र **पाचन तंत्र** (Digestive system) कहलाता है।

8.6.2 पाचन की आवश्यकता

खाद्य पदार्थों में अनेक प्रकार के पोषक तत्व एवं अणु उपस्थित होते हैं जिनका उपयोग नये ऊतकों के निर्माण एवं पुराने ऊतकों की मरम्मत हेतु किया जाता है। चूंकि यह पोषक तत्व जन्तुओं द्वारा स्वयं नहीं बनाये जा सकते अतः पादप द्वारा बनाये गये पोषण को पाचन द्वारा अपघटित करके जन्तुओं द्वारा अवशोषित किया जाता है। इसी कारण पाचन क्रिया द्वारा भोजन को सरल उत्पादों में रूपांतरित किया जाता है जिसे पाचन कहते हैं।

8.6.3 मनुष्य में पाचन तंत्र के प्रमुख भाग

पाचन तंत्र को मुख्यतः दो भागों में विभक्त किया गया है–

(1) आहार नाल (Alimentary canal)
(2) सम्बन्धित ग्रंथियां (Associated glands)

आहार नाल मुखगुहा से शुरू होकर ग्रसनी, ग्रासनली, आमाशय, छोटी आंत, बड़ी आंत से होते हुए मलद्वार पर खत्म होती है। दूसरी ओर लार ग्रंथियां, अग्नाशय तथा यकृत आदि सम्बन्धित ग्रंथियां हैं ।

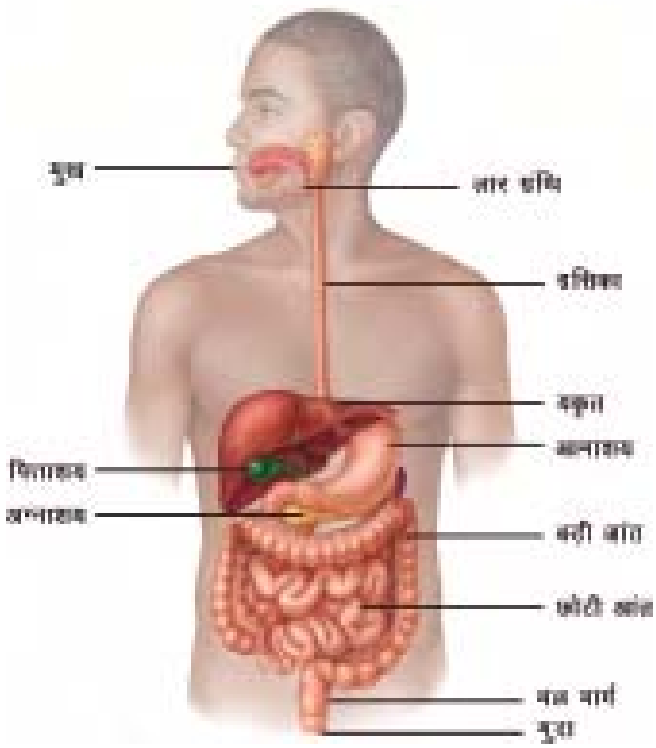

चित्र 8.5 : मुनष्य में पाचन तंत्र

(1) **आहारनाल** (Alimentary canal) – आहारनाल को निम्नलिखित भागों में बांटा जाता है

(i) **मुखगुहा** (Buccal cavity) – मुंह के अन्दर पाई जाने वाली गुहा बाहर से ऊपरी एवं निचले होंठ (Lip) द्वारा रक्षित होती है। मुखगुहा में जबड़े पाये जाते हैं जिनमें दांत स्थित होते हैं जो भोजन

को काटने, तोड़ने, कुतरने एवं चबाने के लिए होते हैं।

मुखगुहा में मांसल जीभ (Tongue) पाई जाती है जिस पर स्वाद कलिकाएं उपस्थित होती है, जो स्वाद का ज्ञान करने में सहायक होती हैं। मुखगुहा में लार ग्रंथियां (Salivary gland) भी पायी जाती है जिनसे लार (Saliva) स्त्रावित होता है जिसमें एमाइलेज (Amylasel/ptylin) एन्जाइम पाया जाता है जो माण्ड (Starch) को माल्टोज में परिवर्तित कर देता है। इसके अतिरिक्त, लार भोजन को गीला एवं लुग्दी समान बनाता है, व मुंह में एन्टीसेप्टिक का कार्य करता है।

(ii) ग्रसनी (Pharynx) – मुखगुहा एवं ग्रासनली के बीच स्थित ग्रसनी का कार्य भोजन को निगलना होता है।

(iii) ग्रासनली (Oesophagus) – छोटी एवं संकरी नली जो ग्रसनी को आमाशय से जोड़ती है। ग्रासनली द्वारा कोई पाचक एन्जाइम स्त्रावित नहीं किया जाता है। यह भोजन को आमाशय तक पहुंचाती है।

(iv) आमाशय (Stomach) – आहारनाल का सबसे फैला हुआ थैली सदृश्य भाग अंग्रेजी के 'J' अक्षर समान दिखाई देता है। यह डायफ्राम के नीचे उदरगुहा के बांई (Left) ओर स्थित होता है।

आमाशय में भोजन के पहुंचते ही जठर रस का स्त्रवण होता है जिसे आमाशय रस भी कहते हैं।

आमाशय रस (Gastric juice) – आमाशय के अस्तर से स्त्रावित रंगहीन, खट्टा द्रव्य जिसमें 90% जल व 0.5% हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) तथा पेप्सीन, रेनीन एवं लाइपेज एन्जाइम होते हैं। इसका pH 0.9-1.5 होता है।

आमाशय का कार्य

1. भोजन को संग्रह करके रखता है।
2. प्रोटीन का सर्वप्रथम पाचन यहाँ प्रारम्भ होता है।
3. आमाशय के हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) भोजन को अम्लीय बनाने के साथ भोजन के साथ आये जीवाणुओं को मार डालता है, पेप्सीन HCl के साथ मिलकर प्रोटीन अणुओं को पेप्टोन एवं प्रोटीओजेज में बदल देता है, रेनीन दूध में पाये जाने वाले प्रोटीन कैसीनोजन को कैसीन में बदल देता है। जिसका पेप्सीन द्वारा पाचन होता है।
4. आमाशय ग्लुकोज, पानी, एल्कोहल एवं कई प्रकार की दवाइयों को अवशोषित भी करता है।

(v) छोटी आंत (Small intestine) – अत्यधिक घुमावदार एवं ऐंठी हुई नली जो आमाशय एवं बड़ी आंत के बीच में फैली होती है। इसकी लम्बाई लगभग 22 फीट तक होती है। लम्बाई अत्यधिक होने के बावजूद इसके बड़ी आंत से कम व्यास के कारण इसे छोटी आंत कहा जाता है। यह नलिका तीन भागों में विभक्त होती है–

1. **ड्योडीनम** (Duodenum) – यह छोटी आंत का प्रारम्भिक भाग है जो 'C' आकार की 25 से.मी. लम्बी नली है। इसमें पित्त एवं अग्नाशयी ग्रंथियों की नलिकाएं खुलती है।
2. **जेजुनम** (Jejunum) – यह बीच का कुण्डलित भाग है। इसका काम भोजन का पाचन एवं अवशोषण करना है। यह भाग आंत्रीय रस का स्त्रावण करता है।
3. **इलियम** (Ileum) – छोटी आंत का पश्च भाग तीन मीटर लम्बा होता है तथा सीकम के पास समाप्त होकर बड़ी आंत से जुड़ता है। इसमें कई पाचक ग्रंथियां पाई जाती है एवं यह अवशोषण भी करता है।

छोटी आंत का कार्य

1. छोटी आंत के ड्योडिनम में अग्नाशय (Pancreas) द्वारा स्त्रावित पाचक रस (Pancreatic juice) आता है। जिसकी वजह से छोटी आंत में पाचन का माध्यम क्षारीय होता है जिसका pH 7.1 से 8.2 तक होता है। इसमें मुख्यतः एमाइलेज, माल्टेज, सुक्रेज, लाइपेज (Pancreatic lipase), काइमोट्रीप्सीनोजन एवं ट्रिप्सीनोजन एन्जाइम होते हैं।
2. छोटी आंत में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन एवं वसा का पूर्ण रूप से पाचन हो जाता है। ये सभी यौगिक अपने सरलतम अवयवों में अपघटित हो जाते हैं।
3. छोटी आंत पचे हुए भोजन का अवशोषण भी करती है। यह आंतों में उपस्थित अंकुरों (Microvilli) द्वारा होता है।

आंत्र रस का नाम एवं कार्य

आंत्र की भित्ति में पाई जाने वाली पाचक ग्रंथियों में स्त्रावित रस को आंत्रीय रस या सकस एन्ट्रीकस (Succus entricus) कहते हैं, जिनमें निम्न एन्जाइम पाये जाते हैं–

1. **पेप्टीडेज** (Peptidase) – यह प्रोटीन के पेप्टोन पर क्रिया कर अमीनो अम्ल में बदलता है।
2. **माल्टेज** (Maltase) – माल्टोज पर क्रिया कर उसे ग्लुकोज में बदलता है।
3. **सुक्रेज** (Sucrase) – यह सुक्रोज शर्करा को ग्लुकोज व फ्रक्टोज में बदलता है।
4. **लैक्टेज** (Lactase) – यह दूध शर्करा पर क्रिया करके उसे ग्लुकोज व गैलेक्टोज में बदल देता है।
5. **लाइपेज** (Lipase) – वसा पर कार्य कर वसीय पदार्थों को वसीय अम्ल एवं ग्लिसरोल में परिवर्तित करता है।
6. **एन्टरोकाइनेज** (Enterokinase) – यह एन्जाइम अग्नाशय

द्वारा स्त्रावित निष्क्रिय ट्रिप्सिनोजन को सक्रिय ट्रिप्सिन में बदल देता है।

(vi) बड़ी आंत (Large intestine) – छोटी आंत का इलियम भाग बड़ी आंत के कॉलन से आकर जुड़ता है। इसे तीन भागों में बांटा गया है–

1. **कॉलन** (Colon) – बड़ी आंत का प्रारम्भिक भाग जिसके अन्दर की सतह पर सूक्ष्म अंकुर (Microvilli) नहीं होते हैं तथा गोबलेट कोशिका (Goblet cell) म्यूकस स्त्रावित करती है।

2. **सीकम** (Caecum) – 10 सेन्टीमीटर लम्बी नली जो कॉलन से जुड़ी होती है, इसके अंत में **अपेन्डिक्स** (Appendix) पाया जाता है।

3. **मलाशय** (Rectum) – आहार नाल का अंतिम भाग लम्बी नली के रूप में होता ई इसके अंतिम छोर में वृत्ताकार छिद्र होता है जिसे **मलद्वार** (Anus) कहते हैं। बड़ी आंत में कोई महत्वपूर्ण पाचन क्रिया नहीं होती है।

बड़ी आंत का कार्य

1. यह जल खनिज एवं औषध का अवशोषण करती है।
2. श्लेष्म का स्त्रावण करके मलद्वार को चिकना बनाकर अपचित पदार्थों का बाह्य निकास आसान बनाता है।

8.7 जीवों में पाचन की प्रमुख जानकारी

1. अमीबा में पाचन – प्रोटोजोआ संघ का यह प्राणी जल में पाया जाता है। अमीबा के एककोशिकीय होने के कारण पोषण के लिए अमीबा में पाचन अंग अनुपस्थित होते हैं। अमीबा जैसे ही भोजन के सम्पर्क में आता है कुटपादों द्वारा भोज्य पदार्थों के चारों ओर खाद्य धानी का निर्माण कर लेता है। भोज्य पदार्थ युक्त खाद्यधानी के अमीबा के शरीर में जाते ही उपापचयी रसों का स्त्रवण होने लग जाता है जिससे धीरे– धीरे भोज्य पदार्थ का पाचन हो जाता है।

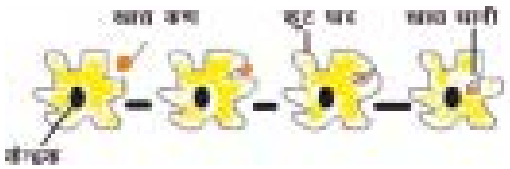

चित्र 8.6 : अमीबा में पाचन

2. यूग्लीना में पाचन – युग्लीना में स्वपोषी या पादप समपोषी (Holophytic) और मृतपोषी प्रकार का पोषण होता है इस प्रकार की दोहरी पोषण विधि मिश्रपोषी पोषण (Mixotropic nutrition) कहलाती है।

3. केंचुए में पाचन – केंचुओं का भोजन मृत कार्बनिक पदार्थ होता है। यह मिट्टी के साथ विशेषकर वनस्पति को खाता है। केंचुआ अपनी ग्रसनी की पम्पिंग क्रिया द्वारा अपना भोजन लेता है। पहले यह अपने मुख को मिट्टी में दबाता है। फिर ग्रसनी की भित्ति की संकुचनशील चुषण क्रिया द्वारा मिट्टी के कणों को मुख प्रकोष्ठ में खींच लेता है। ग्रसनी से शरीर भित्ति तक फैले पेशीय डोरों की क्रिया द्वारा ग्रसनी की इस क्रिया को बल मिलता है।

केंचुए की आहारनाल एक पूर्ण और सीधी नली होती है जो शरीर की सम्पूर्ण लम्बाई में फैली रहती है। मुख और गुदा क्रमशः इसके अगले व पिछले छिद्र होते हैं।

8.8 श्वसन (Respiration)

8.8.1 श्वसन का अर्थ एवं आवश्यकता

वायवीय जीवों को जीवित रहने हेतु ऑक्सीजन (O_2) की आवश्यकता होती है क्योंकि ऑक्सीजन ही कार्बनिक भोज्य पदार्थों का ऑक्सीकरण या विघटन करके ऊर्जा प्रदान करते हैं। पोषक पदार्थों के ऑक्सीकरण की यह प्रक्रिया **कोशिकीय श्वसन** कहलाती है। पादप श्वसन में ऑक्सीजन का अर्न्तग्रहण रंध्रों द्वारा किया जाता है, जो बाद में कोशिका स्तर पर श्वसन में काम आती है। जबकि जंतुओं में इस कार्य हेतु श्वसनांगों का जटिल तंत्र कार्य करता है।

सजीव कोशिकाओं को निरन्तर ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए जीव श्वसन क्रिया करता है। श्वसन में उत्पन्न कार्बनडाईऑक्साइड गैस (CO_2) को कोशिकाओं से बाहर निकालना आवश्यक होता है। श्वसन प्रत्येक जीवित कोशिका का प्रमुख लक्षण है। यह क्रिया दिन व रात चलती रहती है तब भी जब हम कोई भी कार्य नहीं करते। इस क्रिया में शर्करा या ग्लुकोज का ऑक्सीकरण होता है जिसके फलस्वरूप कार्बनडाईऑक्साइड एवं जल बनते हैं तथा ऊर्जा का निष्कासन होता है। ऊर्जा ATP (ऊर्जा मुद्रा) के रूप में संचित होती जाती है। इस ऊर्जा का उपयोग सजीवों द्वारा शरीर को सुचारू रूप से चलाने के काम आता है। श्वसन क्रिया ऑक्सीजन की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति दोनों में हो सकती है।

आप श्वसन की तुलना दहन से कर सकते हैं–

(i) दोनों में कार्बनिक यौगिक अपघटित होते हैं और ऊर्जा निकलती है।

(ii) दोनों में कार्बन डाई ऑक्साइड और जल बनता है।

(iii) दोनों को जलने के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है।

किन्तु श्वसन व दहन में अंतर है जिसे निम्नलिखित सारणी स्पष्ट किया जा सकता है–

श्वसन (Respiration)	दहन (Combustion)
1. यह सामान्य ताप पर (37^0C) कार्य करता है	1. दहन के लिए उच्च ताप की आवश्यकता होती हैं।
2. यह मंद प्रक्रिया है।	2. यह तेज प्रक्रिया है।
3. भोजन के आक्सीकरण में कई अवस्थाऐं होती है।	3. इसमें ईंधन सीधा ही कार्बनडाई ऑक्साइड व पानी बनाता है।
4. इसमें एन्जाइम्स का नियंत्रण होता है।	4. इसमें एन्जाइम्स का नियंत्रण नहीं होता है।
5. इसमें ऊर्जा ATP के रूप में संचित रहती है।	5. इसमें ऊर्जा, उष्मा व कभी–कभी प्रकाश के रूप में मुक्त होती है।

8.8.2 पादप श्वसन

पादपों में जन्तुओं के समान गैसीय विनिमय हेतु विशिष्ट अंग नहीं होते, बल्कि उनमें इस उद्देश्य हेतु रन्ध्र तथा वातरन्ध्र पाये जाते हैं। पादपों में गैस परिवहन बहुत कम होता है। अतः आदान–प्रदान की माँग बहुत कम होती है। इसके अतिरिक्त पादपों की अधिकांश कोशिकाओं की सतह वायु के सम्पर्क में होती है, अतः ऑक्सीजन उपलब्धता की कोई समस्या नहीं होती।

पादप कोशिकाऐं इस तरह से भोजन बनाती है कि ग्लूकोस अणु के अपचय से निकलने वाली संपूर्ण ऊर्जा, उष्मा के रूप में बाहर न निकल जाए। इसके लिए कोशिकीय श्वसन एक बहुचरणीय प्रक्रम होता है ताकि अधिकतम ऊर्जा को एटीपी (ATP) में परिवर्तित किया जा सके।

जीवों में दो प्रकार का कोशिकीय श्वसन पाया जाता है–

(1) अवायवीय श्वसन या अनॉक्सीश्वसन (Anaerobic respiration)

(2) वायवीय श्वसन या ऑक्सीश्वसन (Aerobic respiration)

(1) अवायवीय श्वसन

(Anaerobic respiration)

इस प्रकार के श्वसन में ऑक्सीजन की आवश्यकता नहीं होती है इस प्रकार का श्वसन यीस्ट (Yeast), जीवाणुओं, परजीवियों तथा कुछ निम्न स्तर के जंतुओं में होता है जिन्हें वायु मण्डल की स्वतंत्र ऑक्सीजन नहीं मिल पाती है। इस प्रकार ऑक्सीजन की कमी अथवा अनुपस्थिति में ग्लूकोस, एथिल ऐल्कोहोल (Ethyl alcohol) अथवा लैक्टिक अम्ल (Lactic acid) में परिवर्तित हो जाता है और कम मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होती है। इस क्रिया को शर्करा किण्वन (Sugar fermentation) भी कहते हैं।

(क) $C_6H_{12}O_6 \rightarrow 2C_3H_6O_3 + \text{ऊर्जा}$

ग्लूकोस लेक्टिक अम्ल (पेशियों तथा जीवाणुओं द्वारा)

(ख) $C_6H_{12}O_6 \rightarrow 2C_2H_5OH + 2CO_2 + \text{ऊर्जा}$

ग्लूकोस एथिल ऐल्कोहोल (यीस्ट द्वारा)

(2) वायवीय श्वसन

(Aerobic respiration)

इस प्रकार के श्वसन में ऑक्सीजन की आवश्यकता होती हैं। इस प्रकार के श्वसन में वायुमण्डल की ऑक्सीजन की उपस्थिति में ग्लूकोस का अपघटन होता है जिसके फलस्वरूप कार्बनडाई ऑक्साइड, जल तथा अधिक मात्रा में ऊर्जा निकलती है।

इस प्रकार का श्वसन अधिकांश पादपों व जन्तुओं में पाया जाता है। इस प्रकार के श्वसन में पौधा अपने वातावरण से ऑक्सीजन लेता है और बदले में कार्बन डाई–ऑक्साइड छोड़ता है।

8.8.3 जीवों में श्वसन क्रिया

जंतुओं में पर्यावरण से ऑक्सीजन लेने और CO_2 के निकास के लिये विभिन्न अंगों का विकास हुआ। स्थलीय जन्तु वायुमंडल से O_2 लेते हैं (जैसे मनुष्य फुफ्फुस द्वारा) परन्तु जो जीव जल में रहते हैं जैसे मछली, ये जल में विलेय O_2 का श्वसन क्लोम (Gill) द्वारा अवशोषण करते हैं, क्योंकि जल में विलेय आक्सीजन की मात्रा वायु में O_2 की मात्रा की तुलना में बहुत कम है। इसलिये जलीय जीवों की श्वास दर स्थलीय जीवों की अपेक्षा द्रुत होती है।

एककोशिकीय जीव जैसे *अमीबा, पैरामिशियम* आदि कोशिका झिल्ली द्वारा विसरण (Diffusion) से गैस का आदान प्रदान करते है। इसी प्रकार पोरिफेरा जैसे– (Sponges), सिलेन्ट्रेटा जैसे– (Hydra) आदि जन्तुओं द्वारा नम देहभित्ति द्वारा गैस का आदान–प्रदान किया जाता है।

जैसे–जैसे जीवों का आकार बढ़ता गया, विशिष्टीकृत श्वसन अंगों की जरूरत पड़ी। इन सभी अंगों में एक रचना होती है। जो उस सतही क्षेत्रफल को बढ़ाती है। केंचुए में श्वसन तंत्र, अमीबा तथा हाइड्रा की तुलना में अधिक जटिल होता है। केंचुए की त्वचा से स्त्रावित श्लेष्मा बाह्य सतह को नम बनाये रखता है। इस नम सतह द्वारा O_2 व CO_2 गैसों का विनिमय होता है।

कीटों में श्वसन विशेष नलिकाओं द्वारा होता है। उदाहरण – तिलचट्टे (Cockroach)

क्र.सं.	अनॉक्सीश्वसन (Anaerobic Respiration) (अवायवीय)	ऑक्सीश्वसन (Aerobic Respiration) (वायवीय)
(1)	ऑक्सीजन (O_2) की अनुपस्थिति में	O_2 की उपस्थिति में होता है।
(2)	श्वसनीय पदार्थों का अपूर्ण आक्सीकरण होता है।	श्वसनीय पदार्थों का पूर्ण आक्सीकरण होता है।
(3)	कम ऊर्जा की प्राप्ति (2 ATP)	अधिक ऊर्जा की प्राप्ति (36–38 ATP) होती है।
(4)	अन्तिम उत्पाद कार्बनिक यौगिक जैसे – एल्कोहॉल	अन्तिम उत्पाद के रूप में CO_2 व जल होते हैं।
(5)	उदाहरण : निम्न पादपों, बैक्टीरिया, कवक में यह श्वसन पाया जाता है।	उदाहरण : उच्चतर पादपों तथा जीवों कें ऑक्सीश्वसन होता है।
(6)	$C_6H_{12}O_6 \rightarrow 2\,C_2H_5OH + 2\,CO_2 + 2ATP$ (ऊर्जा) ग्लुकोज → एथेनॉल + कार्बनडाईऑक्साइड +ऊर्जा	$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \rightarrow 6CO_2 + 6H_2O + ATP$ (ऊर्जा) ग्लुकोज → कार्बनडाईऑक्साइड + पानी + ऊर्जा + ऑक्सीजन

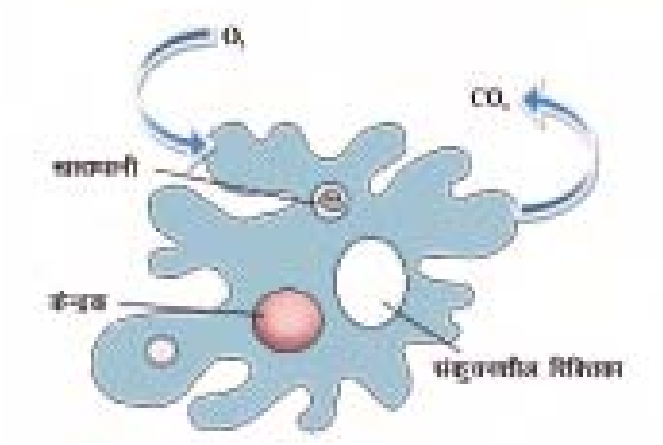

चित्र 8.7 : अमीबा में श्वसन

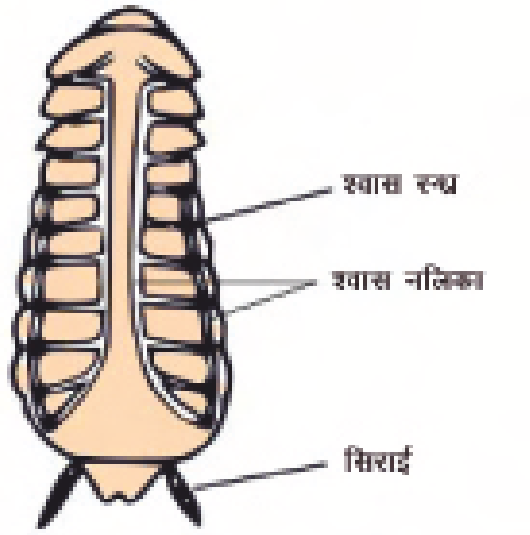

चित्र 8.9 : तिलचट्टे में श्वसन तंत्र

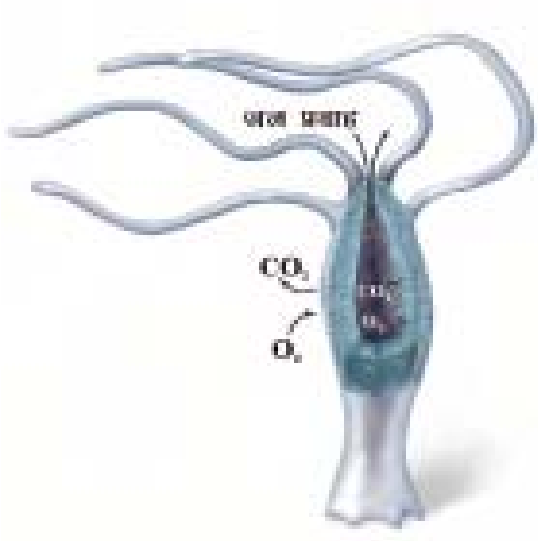

चित्र 8.8 : हाइड्रा में श्वसन

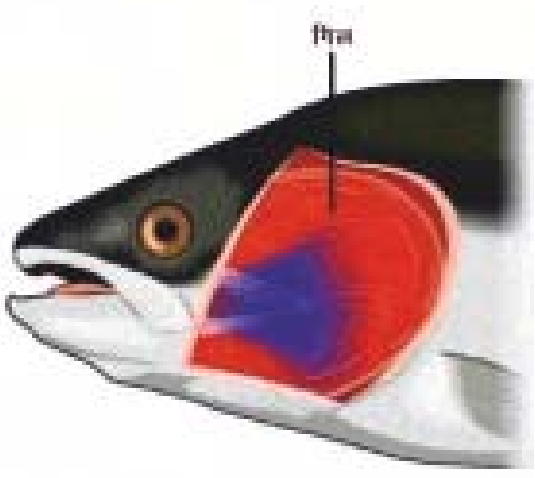

चित्र 8.10 : मछली में गिल द्वारा श्वसन

8.8.4 मानव में श्वसन

मानव में श्वसन के प्रमुख अंग निम्न हैं – नासिका या नासा मार्ग, ग्रसनी, वायु कंठ (लैरिंक्स), श्वासनली (Trachea) तथा फुफ्फुस में पाये जाने वाली श्वसनी (bronchi) श्वसनिका (bronchioles), अंतस्थ श्वसनिका (Terminal bronchiole) एवं कूपिका (Alveoli)।

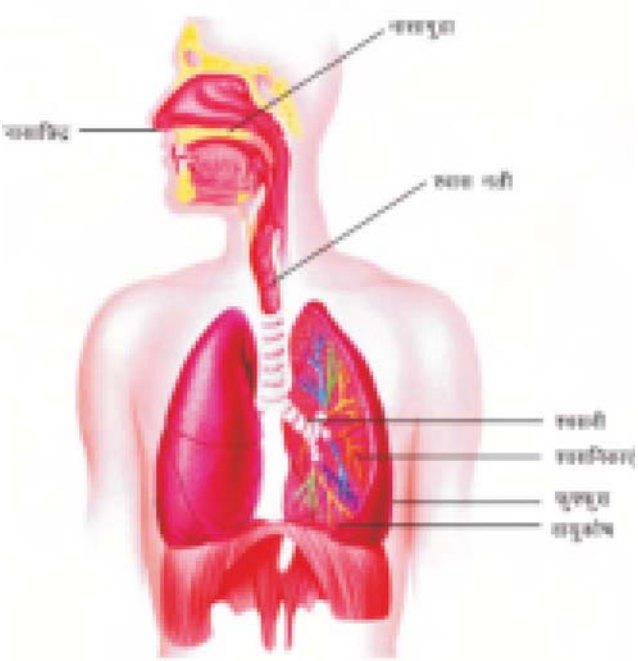

चित्र 8.11 : मानव श्वसन तंत्र

नासाछिद्र (Nostril) **तथा नासामार्ग** (Nasal passage) – मनुष्य में मुख पर एक जोड़ी नासाछिद्र होते हैं। नासाछिद्र के पीछे नासागुहा (Nasal chamber) पायी जाती है। नासागुहा व नासाछिद्रों की दीवार पर श्लेष्म ग्रंथियां पायी जाती है जिससे श्लेष्मा स्त्रावित होता है जिसके कारण मार्ग नम रहता है और सूक्ष्म जीव व धूल कण चिपक जाते हैं। नासागुहा नासामार्ग से वायु कंठ में खुलती है। नासामार्ग से अन्दर आने वाली वायु के तापमान का नियमन किया जाता है।

वायु कंठ तथा श्वासनली (Larynx and Trachea) – श्वसन मार्ग का वह भाग जो ग्रसनी (Pharynx) को श्वासनली (Trachea) से जोड़ता है वायुकंठ (Larynx) कहलाता है। इसका मुख्य कार्य ध्वनि उत्पादन करना होता है। इसके प्रवेश द्वार पर एपिग्लॉटिस (Epiglottis) पत्तीनुमा कपाट के रूप में व्यवस्थित होता है। कंठ के पीछे की ओर श्वासनली (Trachea) खुलती है। श्वासनली पर C-आकार के छल्ले पाये जाते हैं जो वायु ना होने पर श्वासनली को पिचकने से रोकते हैं।

श्वसनी तथा श्वसनीकाएं (Bronchi and Bronchioles) – श्वासनली ट्रेकिया के नीचे वक्षगुहा (Thoracic cavity) में जाकर दो भागों श्वसनियों या ब्रोंकाई में बंट जाती है। श्वसनी, श्वनीकाओं (Bronchioles) में विभाजित होती है। श्वसनिका विभाजित होकर फेफड़ों में वायुकोष्ठिका वाहिनियों (Alevolar ducts) का रूप लेते हैं। ये वाहिनियां छोटे–छोटे कूपिका या वायुकोष (Airsac or Alveoli) में खुलते हैं। वायुकोषों पर रक्त की नलिकाएं पायी जाती है जो ऑक्सीजन को पूरे शरीर में पहुंचाने का कार्य करती है। वायुकोष के कारण फुफ्फुस का क्षेत्रफल कई गुना बढ़ जाता है।

फेफड़े या फुफ्फुस (Lungs) – मनुष्य की वक्षगुहा में स्पंजी, गुलाबी थैलीनुमा एक जोड़ी फेफड़े होते हैं जो हृदय के पास फुफ्फुसीय गुहा (Pleural cavity) में स्थित होता है। प्लुरल गुहा के चारों ओर पतला आवरण होता है जिसे फुफ्फुसावरण कहते हैं। दायां फेफड़ा लम्बा तथा बायां छोटा होता है। वक्षीय गुहा के पसलियों के संकुचन व शिथिलन से आयतन बढ़ता व घटता है जिससे वायु फेफड़े में प्रवेश करती है और बाहर निकलती है।

डायफ्राम (Diaphragm) – वक्षीयगुहा का निचला फर्श एक गुंबदाकर पतले पट्टे द्वारा बंद रहता है जिसे डायफ्राम कहते हैं। उच्छवास (Exhalation) के समय डायफ्राम चपटा हो जाता है।

श्वसन क्रिया

(Breathing Mechanism in Human)

श्वसन क्रिया को दो भागों में बांटा जाता है।

(1) निः श्वसन (Inspiration)

(2) उच्छवसन (Expiration)

श्वसन वर्णक

हीमोग्लोबिन श्वसन वर्णक होता है जो RBC (लाल रक्त कणिकाएं) में उपस्थित होता है। यह श्वसन वर्णक ऑक्सीजन से बंधुता करके O_2 को पूरे शरीर की कोशिकाओं में पहुंचाता है।

8.9 परिसंचरण (Circulation)

8.9.1 अर्थ व आवश्यकता

जीवित जन्तुओं में अवशोषित पोषक पदार्थ, जल व अपशिष्ट उत्पादों को शरीर में एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने की क्रिया को **परिसंचरण** कहते हैं। इससे सम्बन्धित तंत्र को **परिसंचरण तंत्र** कहते हैं।

परिसंचरण तंत्र में कुछ अंग, वाहिका एवं वाहिनिकाएं होती हैं। जिनमें एक तरल द्रव बहता है। इस तरल द्रव से ही भोज्य पदार्थ, ऑक्सीजन, जल, उत्सर्जी पदार्थ व दूसरे उपयोगी पदार्थ शरीर में एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचती है। यह तरल द्रव मुख्यतया लसिका, रूधिर या जल होता है। इन्हीं पदार्थों से ही हमारे शरीर की प्रत्येक कोशिका को पोषण व ऊर्जा प्राप्त होती है जिससे वह अपना कार्य करने में सक्षम होती है तथा शरीर सुचारू रूप से चलता है।

8.9.2 जन्तुओं में परिसंचरण का सतही ज्ञान

जन्तुओं में दो प्रकार का परिसंचरण तंत्र पाया जाता है–

(1) **खुला परिसंचरण तंत्र** – इस प्रकार के परिसंचरण तंत्र में रक्त या रूधिर आंशिक रूप में शरीर के कुछ भाग में वाहिनियों में प्रवाहित होता है और शेष भागों में उत्तकों के मध्य खुले स्थानों में फैल जाता है। इसलिए जन्तुओं की कोशिकायें तथा ऊतक रूधिर के सीधे सम्पर्क में रहती है। उदाहरण – तिलचट्टा, झींगा, घोंघा, सीपी आदि।

(2) **बंद परिसंचरण तंत्र** – इस प्रकार के परिसंचरण में रूधिर शरीर में वाहिका तथा वाहिनिकाओं में ही संचरित होता है; शरीर के विभिन्न अंगों तक पोषक पदार्थों को पहुंचाया तथा उत्सर्जी पदार्थों को वहां से लाया जाता है। उदाहरण – केंचुआ, मछली, मेंढक, पक्षी व मानव आदि।

8.9.3 तिलचट्टे में परिसंचरण

तिलचट्टे एवं अन्य कीटों में खुले परिसंचरण द्वारा पोषक पदार्थ, अपशिष्ट पदार्थ व हार्मोनों का परिवहन शरीर में हो जाता है किन्तु इस प्रकार के तंत्र के द्वारा गैसों का परिवहन नहीं होता। गैसों के परिवहन के लिए ट्रैकियल या श्वसन नलिकाओं का एक पृथक तंत्र होता है। तिलचट्टे में एक गुहा पायी जाती है जिसे रूधिर गुहा कहते हैं। यह दो पटों द्वारा तीन कोटरों में विभाजित रहती है। इन्हें परिहृदयी, परिआंतरांग तथा परितंत्रिकीय कोटर कहते हैं। परिहृदयी कोटर में एक 13 वेश्मीय नलिकायुक्त एवं स्पंदनशील हृदय होता है जिसमें रूधिर का प्रवाह पीछे से आगे की ओर होता है। तिलचट्टे में रूधिक वर्णक की अनुपस्थिति के कारण रंगहीन होता है। इसलिये यह गैसों के परिवहन में सहायक नहीं होता है। इस परिसंचरण तंत्र का प्रमुख कार्य भोज्य व अपशिष्ट पदार्थों का परिवहन होता है।

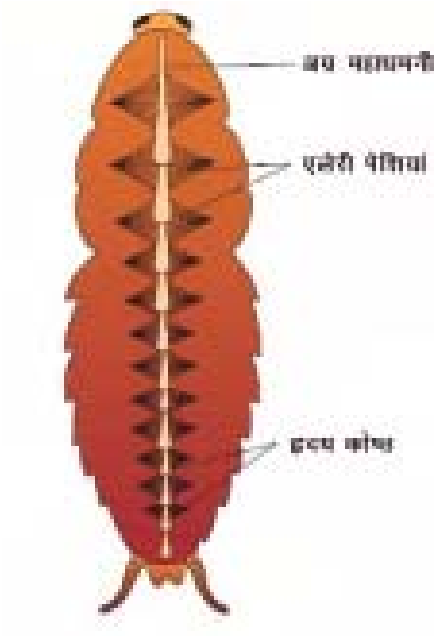

चित्र 8.12 : तिलचट्टे में खुला परिसंचरण तंत्र

8.9.4 केंचुए में परिसंचरण

केंचुए में दो प्रमुख रूधिर वाहिनियां पायी जाती है – पृष्ठ रूधिर वाहिनी (ऊपर की ओर) तथा अधर रूधिर वाहिनी (आहारनाल के नीचे) पृष्ठ रूधिर वाहिनी में रूधिर पीछे से आगे की ओर तथा अधर वाहिनी में रूधिर आगे के पीछे की ओर प्रवाहित होता है। अग्र सिरे के निकट यह दोनों वाहिनियां चार जोड़े नलिका सदृश्य हृदयों से जुड़ी रहती है और रूधिर परिवहन के पश्चात् पृष्ठ वाहिनों से पुनः हृदय में पहुंचती है। हृदय व पृष्ठ वाहिका में एकदिशीय कपाट होते हैं, जो रूधिर को विपरीत दिशा में जाने से रोकते हैं। अधर वाहिनी से निकली शाखाएं, पतली महीन केशिकाओं में विभक्त होकर शरीर में फैली रहती है। इसकी भित्ति केवल एककोशिका स्तर की होती है जिसके कारण पोषक व अन्य पदार्थ विसरित होकर ऊतक द्रव के द्वारा कोशिकाओं तक पहुंच जाते हैं।

चित्र 8.13 : केंचुए में बंद परिसंचरण तंत्र

8.9.5 मानव में परिसंचरण तंत्र

परिसंचरण तंत्र को दो तंत्रो में विभाजित किया जाता है (i) रूधिर दोहरा परिसचंरण तंत्र–इस तंत्र में निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है (क) रूधिर (ख) हृदय (ग) रूधिर वाहनियाँ

(ii) लसीका तंत्र

(क) रूधिर (Blood)

रूधिर एक तरल संयोजी ऊतक है इसमें एक तरल द्रव्य उपस्थित होता है जिसे **प्लाज्मा** कहते हैं। रूधिर में लगभग 55% हल्के पीले रंग का द्रव्य प्लाज्मा होता है। प्लाज्मा में 92% जल व शेष 8% अन्य पदार्थ होते हैं। इसमें कई कार्बनिक पदार्थ जैसे ग्लुकोज, अमीनो अम्ल, वसा अम्ल व ऑक्सीजन तथा अन्य घुलित गैसें पायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त ग्लोब्यूलिन प्रतिरक्षी प्रोटीन, थक्का जमने में सहायक फाइब्रिनोजन व प्रोथोम्बिन भी प्लाज्मा में पाये जाते हैं। प्लाज्मा के अलावा तीन प्रकार की रूधिर कणिकाएं पायी जाती हैं– (1) लाल रूधिर कणिका (Red Blood Corpusle or RBC) (2) श्वेत रूधिर कणिका (White Blood Corpusle or WBC) (3) रूधिर बिम्बाणु प्लेटलेट्स। (Blood Platelet or Thrombocytes)

(1) लाल रूधिर कणिका

(Red blood corpuscles or RBC)

ये कणिकायें हल्के पीले रंग की होती है तथा इनका आकार अण्डाकार या गोल होता है। बहुत अधिक संख्या में उपस्थिति एवं आक्सीहीमोग्लोबिन के कारण इनका रंग लाल दिखाई देता है। इनका जीवनकाल लगभग 120 दिन का होता है, केन्द्रक का अभाव होता है। RBC में एक महत्वपूर्ण लौह यौगिक पाया जाता है, जिसे हीमोग्लोबिन कहते हैं जिसके द्वारा ऑक्सीजन का विनिमय होता है। RBC की कमी से रक्त क्षीणता (Anaemia) रोग हो जाता है।

(2) श्वेत रक्त कणिका (White blood corpuscles or WBC) – इसकी संख्या शरीर में RBC से कम होती है परन्तु आकार बड़ा होता है। ये आकार में अनियमित होती है। इसमें केन्द्रक पाया जाता है। WBC में हीमोग्लोबिन नहीं पाया जाता है। इस कारण यह रंगहीन होती है। कई श्वेत रक्त कणिकाएं रूधिर वाहिनियों की दीवारों के साथ–साथ रूधिर प्रवाह के विपरीत अमीबीय गति करती है। जब कभी कोई जीवाणु या बाह्य हानिकारक पदार्थ शरीर में प्रवेश करते हैं तो यह उन पर आक्रमण कर उन्हें नष्ट कर बाहर निकाल देती है। इस प्रकार ये शरीर की रोगाणुओं से सुरक्षा करके हमारे शरीर में प्रतिरक्षा तंत्र को विकसित करती है।

(3) रूधिर बिम्बाणु – इन कणिकाओं को थ्रोम्बोसाइट भी कहते हैं। ये लाल व श्वेत रूधिर कणिकाओं से आकृति में छोटी होती है एवं संख्या में लाल रूधिर कणिकाओं से कम होती है। इनका मुख्य कार्य रक्त का थक्का बनाकर रक्तस्त्राव के मार्ग को अवरूद्ध करना होता है। इनमें केन्द्रक नहीं पाया जाता है।

(ख) हृदय – एक पेशीय अंग

मनुष्य का हृदय लम्बा व शंक्वाकार होता है। जो वक्षीय गुहा में दोनों फेफड़ों या फुफ्फुस के मध्य परन्तु थोड़ा बायीं ओर उपस्थित होता है। हृदय चार कोष्ठों का बना होता है। ऊपर की ओर बायां तथा दायां आलिन्द तथा नीचे की ओर बायां व दायां निलय होता है। ऑक्सीजन प्रचुर रूधिर फुफ्फुस से हृदय में बायीं ओर स्थित कोष्ठ (बायां आलिन्द व निलय) में लाया जाता है तथा ऑक्सीजन रहित रूधिर को दायां आलिन्द व निलय में लाया जाता है। आलिन्द की अपेक्षा निलय की पेशीय भित्ति मोटी होती है क्योंकि निलय को पूरे शरीर में रूधिर भेजना होता है। जब आलिन्द या निलय संकुचित होता है तो वाल्व उल्टी दिशा में रूधिर प्रवाह को रोकना सुनिश्चित करते हैं। दोनों आलिन्दों के बीच एक पट पाया जाता है जिसे **अर्न्तआलिन्दीय पट** (Inter auricular septum) कहते हैं। इसी प्रकार दोनों निलयों के बीच का पट **अन्तर्निलयी पट** (Inter ventricular septum) कहलाता है।

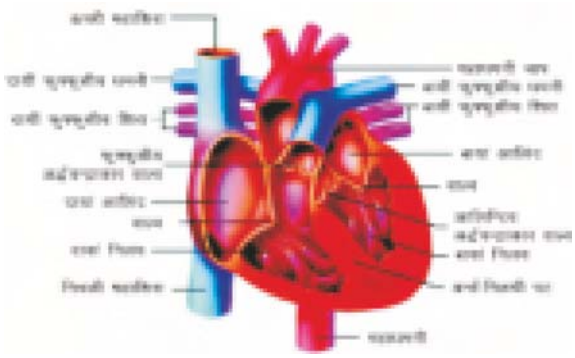

चित्र 8.14 : मानव हृदय की संरचना

8.9.6 हृदय की क्रियाविधि

हृदय का कार्य शरीर के विभिन्न भागों को रूधिर पम्प करना है। यह कार्य हृदय के संकुचन तथा शिथिलन के द्वारा होता है। हृदय के बाएं आलिन्द में ऑक्सीजन युक्त रक्त फुफ्फुस से फुफ्फसीय शिराओं द्वारा आता है। शरीर के विभिन्न भागों से शिराओं व केशिकायों द्वारा ऑक्सीजन रहित रक्त हृदय के दाएं आलिन्द में आ जाता है। अब दोनों आलिन्द एक साथ सिकुड़ते हैं जिसे बाएं आलिन्द से ऑक्सीजन युक्त रूधिर बाएं निलय में तथा दाएं आलिन्द से ऑक्सीजन रहित रूधिर दाएं निलय में आ जाता है। इसके पश्चात् निलय एक साथ सिकुड़ते

हैं, इनके सिकुड़ने से रूधिर पर दाब पड़ता है जिससे आलिन्द और निलय के बीच के कपाट (वाल्व) बन्द हो जाते हैं और रूधिर पुनः आलिन्द में नहीं जा सकता। इस दाब के कारण बाएं निलय से जुड़ी महाधमनी का महाधमनी कपाट खुल जाता है और रूधिर महाधमनी में आ जाता है जहां से इसे विभिन्न धमनियों द्वारा शरीर के सभी भागों तक पहुंचा दिया जाता है। दाएं निलय के सिकुड़ने से रूधिर फुफ्फुसी धमनियों द्वारा फुफ्फुस में चला जाता है। जहां यह कार्बनडाईऑक्साइड को मुक्त कर ऑक्सीजनित होकर पुनः बायीं आलिन्द में प्रवेश करता है। इस प्रकार हृदय में दो चक्र पूर्ण होता है। अतः इसे **दोहरा संवहन** या **दोहरा परिसंचरण** कहते हैं।

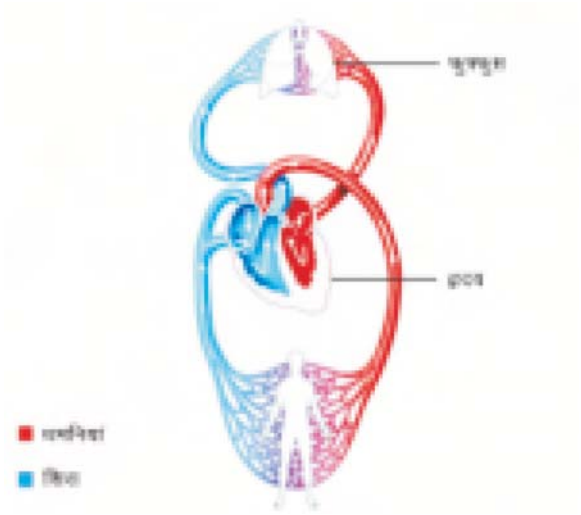

चित्र 8.15 : दोहरा परिसंचरण तंत्र

(ग) रूधिर वाहिनियां

(1) **धमनियां** – वे वाहिनियां जो रूधिर को हृदय से शरीर के विभिन्न अंगों तक ले जाती है, **धमनियां** कहलाती हैं। इसकी दीवार मोटी व लचीली होती है। क्योंकि इसमें रूधिर बहुत दाब से बहता है। इसमें सामान्यतः शुद्ध या ऑक्सीजनित रूधिर प्रवाहित होता है। फुफ्फुसीय धमनियों में अशुद्ध रक्त प्रवाहित होता है।

(2) **शिराएं** – ये रूधिर को शरीर के विभिन्न भागों से एकत्रित करके हृदय में लाती है, **शिराएं** कहलाती है। इनकी दीवारें पतली एवं पिचकने वाली होती है। शिराओं की गुहा चौड़ी होती है क्योंकि इसमें रूधिर का दाब कम होता है। इसमें सामान्यतः अशुद्ध या ऑक्सीजन रहित रूधिर प्रवाहित होता है। फुफ्फुसीय शिराओं में शुद्ध या ऑक्सीजनित रक्त प्रवाहित होता है।

(3) **केशिकाएँ** (Capillaries) : सबसे पतली वाहिनियां जो धमनी और शिरा को जोड़ने का कार्य करती है।

8.9.7 रूधिर दाब (Blood pressure)

रूधिर वाहिकाओं की भित्ति के विरूद्ध जो दाब लगता है उसे **रक्तदाब** कहते हैं। यह दाब शिराओं की अपेक्षा धमनियों में बहुत अधिक होता है। हृदय के संकुचन से जो दाब उत्पन्न होता है वह दाब रूधिर को धमनियों में आगे बढ़ाता है। धमनी के अन्दर रूधिर का दाब निलय प्रकुंचन (संकुचन) के दौरान **प्रकुंचन दाब** तथा निलय अनुशिथिलन (शिथिलन) के दौरान धमनी के अन्दर का दाब **अनुशिथिलन दाब** कहलाता है। सामान्य मानव शरीर में प्रकुंचन दाब 120 mm तथा अनुशिथिलन दाब लगभग 80 mm होता है।

(ii) लसिका तंत्र (Lymph System)

रूधिर जब केशिकाओं में प्रवाहित होता है तो उसके छन कर जो द्रव्य बनता है लसिका (Lymph) कहलाता है। लसिका का संगठन प्लाज्मा के लगभग समान होता है पर पदार्थों की सान्द्रता भिन्न होती है। लसिका द्रव अन्तर कोशिकिय स्थलों में परिसंचरण करता है। शरीर में लसिका केशिकायें, व दो बड़ी लसिकाय पायी जाती है।

8.10 पादपों में संवहन
(Conduction in plants)

हरे पादपों में प्रकाश संश्लेषण द्वारा खाद्य पदार्थ बनते हैं। प्रकाशसंश्लेषण की इस क्रिया में पेड़ पौधों को सूर्य के प्रकाश से ऊर्जा मिलती है, वायुमण्डल से कार्बन डाई–ऑक्साइड प्राप्त होती है तथा जल जड़ों के माध्यम से प्राप्त होता है। आओ हम अध्ययन करें कि पेड़ पौधों को ये सभी पदार्थ कैसे प्राप्त होते है ? प्रकाशसंश्लेषण का प्रमुख अंग पर्ण है किंतु ये सभी पदार्थ पर्ण तक किस प्रकार पहुँचते हैं ?

चित्र 8.16 : पादपों के प्रमुख अंग व कार्य

हमारे चारों ओर पाये जाने वाले पौधे चाहे वह शाक हो या झाड़ी या वृक्ष, इन सबके स्वभाव में विभिन्नता होते हुए भी इनके प्रमुख भागों में मूलतः समानता मिलती है किसी भी पुष्पी पौधे का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि पादप में जड़, तना, शाखाएँ, पत्तियां, पुष्प, फल एवं बीज मिलते हैं।

जन्तुओं की तुलना में पौधों में अंगों की संख्या कम मिलती है। पर्ण, तना एवं जड़ पौधे के कायिक अंग हैं जो कि प्रकाश–संश्लेषण, संवहन, खाद्य संग्रह आदि उपापचयी कार्य करते हैं।

8.10.1 पर्ण (Leaf)

पर्ण का प्रमुख कार्य प्रकाश संश्लेषण एवं खाद्य–संग्रह है। यह तने एवं शाखाओं पर इस प्रकार लगी रहती है कि दिन में सूर्य का प्रकाश पौधों की सभी पर्णों पर पड़े। पर्ण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कैसे करते हैं। इसके लिये पर्ण की रचना संक्षिप्त रूप से समझना आवश्यक है। पर्ण की ऊपरी अधिचर्म के नीचे सजीव मृदुत्तक कोशिकाऐं (Parenchyma cells) पायी जाती हैं। इन कोशिकाओं में पर्णहरित नामक वर्णक पाया जाता है। इन कोशिकाओं के मध्य में अन्तराकोशिकीय स्थल (Intercellular space) होते हैं जो कि परस्पर सम्पर्कित रहते हैं, जिससे विभिन्न गैसों (O_2 एवं CO_2) का विनिमय तथा जल वाष्प का उत्सर्जन एवं गैसों का परिवहन पर्ण की सभी कोशिकाओं तक हो सके।

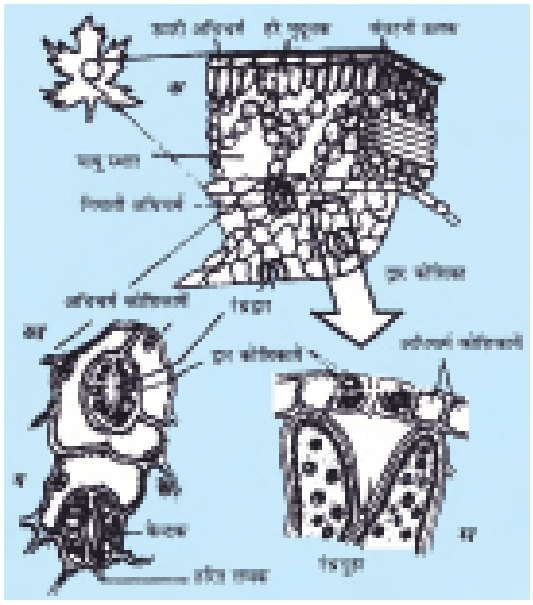

चित्र 8.17 : (क) पर्ण की आंतरिक संरचना (निचली अधिचर्म को आगे की ओर पलट दिया गया है) हरे मुदूतक प्रकाश संश्लेषण की क्रिया करते है। अधिचर्म में पाये जाने वाले रंध्रों पर ध्यान दीजिए। (ख) खुला रंध्र। (ग) बंद रंध्र। (घ) रंध्र (अनुप्रस्थ काट)

पर्ण में शिराओं का जाल बिछा होता है जिनमें प्रमुख संवहनी ऊतक जायलम (Xylem) एवं फ्लोएम (Phloem) होते हैं। यह ऊतक तरल खाद्य पदार्थ एवं जल के संवहन के लिए एक नलिका जाल बनाते हैं। यह जायलम एवं फ्लोएम, तने के जायलम एवं फ्लोएम से जुड़े रहते हैं। जायलम का मुख्य कार्य जड़ द्वारा अवशोषित जल एवं खनिज लवणों को पौधे के प्रत्येक भाग एवं पत्तियों तक पहुँचाना है। फ्लोएम का मुख्य कार्य पत्तियों में बने कार्बनिक खाद्य पदार्थ को पौधे के प्रत्येक भाग एवं जड़ तक पहुँचाना है।

चित्र 8.18 : पर्ण में शिराजाल

जड़ से पत्ती तक का जाइलम एवं फ्लोएम का संवहन तंत्र एक नली के रूप में क्रमशः जल एवं खनिज लवण पहुँचाता है, एवं खाद्य पदार्थों का संवहन करता है।

सामान्यतः पर्ण की निचली अधिचर्म पर अनेक छोटे–छोटे छिद्र पाये जाते हैं जिन्हें रंध्र (Stomata) कहते हैं। इन रंध्रों द्वार पर्ण की मृदूतक कोशिकाओं का सम्पर्क बाह्य वातावरण से बना रहता है। रंध्र चारों ओर से दो द्वारा कोशिकाओं (Guard cells) द्वारा घिरा रहता है। ये कोशिकाएँ पास की कोशिकाओं से जल अवशोषित कर फैलती है और रंध्र खुल जाते हैं और वायु तथा कार्बन डाई–ऑक्साइड पर्ण में प्रवेश कर जाती हैं। जल की हानि होने पर द्वार कोशिकाएँ संकुचित होकर रंध्र को बन्द कर देती है।

इस प्रकार रंध्रों का प्रमुख कार्य ऑक्सीजन एवं कार्बन डाई–ऑक्साइड का विनिमय है। पर्ण का दूसरा प्रमुख कार्य जल को जल वाष्प के रूप में रंध्रों द्वारा निकालना है।

वाष्पोत्सर्जन (Transpiration)

पादप के हरे वायवीय भागों में उपस्थित रन्ध्रों द्वारा जल

का जलवाष्प के रूप में वातावरण में निकलना या उत्सर्जित होना वाष्पोत्सर्जन (Transpiration) कहलाता है।

वाष्पोत्सर्जन को एक साधारण प्रयोग द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं। हम एक पौधा लगा गमला लेंगे उसे काँच की प्लेट पर रखकर एक पॉलीथीन की थैली से ढक देंगे। पॉलीथीन के मुख पर वैसलीन लगा देंगे जिससे वायु एवं वाष्प का आदान–प्रदान न हो सके। कुछ समय बाद हमें पॉलीथीन की भीतरी सतह पर जल की बूंदे दिखाई देंगी। ये बूंदें पौधे के रंध्रों से वाष्प के रूप में निकलती हैं एवं पॉलीथीन की ठंडी सतह से टकराकर पुनः बूंदों में परिवर्तित हो जाती हैं।

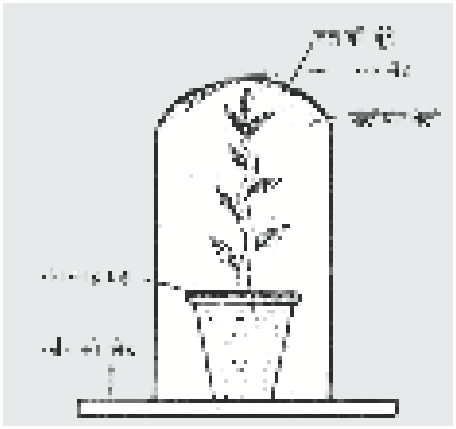

चित्र 8.19: वाष्पोत्सर्जन का प्रदर्शन

प्रकाश के अभाव में जब रंध्र बन्द होते हैं तो वाष्पोत्सर्जन की दर कम हो जाती है। यदि वाष्पोत्सर्जन की दर अनुपात से अधिक हो जाये तो पौधा मुरझा जायेगा।

वाष्पोत्सर्जन के कारण पौधों के आसपास का वातावरण नमीयुक्त रहता है। यहीं कारण है कि गर्मी की ऋतु में वृक्ष के नीचे शीतलता का अनुभव होता है। वाष्पोत्सर्जन भूमि से जल अवशोषण करने में भी सहायक होता है।

8.10.2 स्तम्भ (Stem)

जल एवं खनिज लवणों का संवहन एवं खाद्य पदार्थों को पौधों के विभिन्न भागों तक पहुँचाने का मुख्य मार्ग तना या स्तम्भ है। इसके संवहन ऊत्तक पर्णों के संवहन ऊत्तकों के साथ निरन्तरता बनाऐ रखते हैं।

जायलम (Xylem)

जायलम एक जटिल प्रकार का ऊतक है। इसमें जल एवं घुलित लवणों के संवहन के लिए वाहिकाऐं एवं वाहिनिकाऐं (Vessels and tracheids) पायी जाती है। ये लम्बी, मोटी भित्तियुक्त, मृत कोशिकाएँ हैं। इनकी भित्ति पर अनेक गर्त (Pits) मिलते हैं जिनके द्वारा जल एक से दूसरी वाहिनिकीय तत्व में जा सकता है।

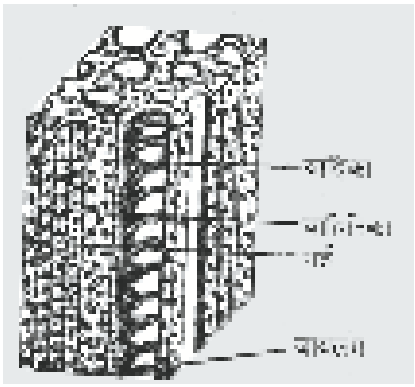

चित्र 8.20 : जायलम की संरचना

फ्लोएम (Pholem)

प्रकाशसंश्लेषण द्वारा निर्मित खाद्य तरल रूप में फ्लोएम के द्वारा पौधों के विभिन्न भागों में संवहित होता है। इस संवहन के लिए विशिष्ट **चालनी नलिका** (Sieve tube) होती हैं। चालनी तत्वों के बीच तरल खाद्य पदार्थ का संवहन सूक्ष्म छिद्रों द्वारा होता है। इन कोशिकाओं में केन्द्रक नहीं होता है।

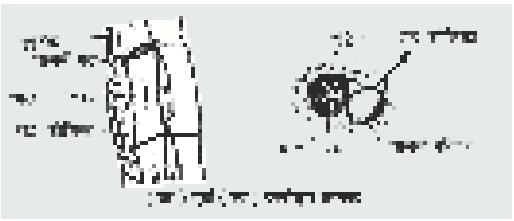

चित्र 8.21 : (क) एवं (ख) फ्लोएम ऊतक

चालनी नलिकाओं से सटी हुई मृदूतक कोशिकाएँ पायी जाती हैं जिन्हें **सहकोशिकाएँ** (Companion cells) कहते हैं।

तरल खाद्य पदार्थों का संवहन फ्लोएम द्वारा होता है–इसे एक सरल प्रयोग द्वारा समझा जा सकता है।

प्रयोग–गमले में लगा एक पौधा लीजिये। इसके मुख्य तने पर मिट्टी की सतह से लगभग 15 से.मी. ऊपर एक इन्च चौड़ी पट्टी या वलय के रूप में इसकी छाल को खुरच दीजिये जिससे इस भाग की छाल, कोमल वल्कुट एवं फ्लोएम बाहर निकल जाये। भीतर का भाग जायलम है। जायलम द्वारा जल का संवहन होता रहेगा।

पर्णों में बना खाद्य छीले हुए भाग में फ्लोएम के न होने के कारण नीचे तक नहीं जा सकेगा एवं छीले हुए भाग के ऊपर भाग में इकट्ठा होने लगेगा फलस्वरूप वह भाग फूल जायेगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि फ्लोएम ही तरल खाद्य पदार्थों का संवहन करते हैं।

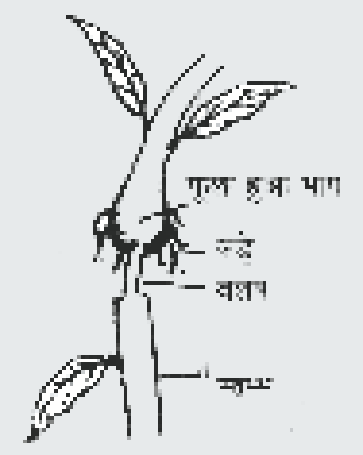

चित्र 8.22 तरल खाद्य का संवहन फ्लोएम द्वारा होता है

8.10.3 जड़ (Root)

एक सामान्य पौधे (जैसे–सरसों का पौधा) को जड़ सहित उखाड़ने पर हम देखते हैं कि इसमें एक प्रमुख जड़ होती है जिसे **प्राथमिक मूल** कहते हैं। इससे **द्वितीयक** एवं **तृतीयक** जड़ें निकलती हैं। इस प्रकार पौधे की प्रमुख जड़ एवं इसकी शाखाएँ पौधे का **मूसला तंत्र** बनाती है। उदाहरण– सरसों का पौधा।

एक बीजपत्री पौधे जैसे–गेहूं, जौ, बाजरा आदि में प्राथमिक मूल शीघ्र नष्ट हो जाती है और स्तम्भ के आधार भाग से कई छोटी रेशेदार जड़ें निकलती हैं, ऐसे–मूलतंत्र को **अपस्थानिक मूलतंत्र** कहते हैं।

चित्र 8.23 (क) : मूसला मूल तन्त्र
(ख) : अपस्थानिक मूल तंत्र

मूल का प्रमुख कार्य भूमि से जल एवं घुलित खनिज लवणों का अवशोषण करना है। इसलिए जड़ें भूमि में नमी एवं भूमि जल की ओर वृद्धि करती है।

भूमि से अवशोषित जल संवहन तंत्र द्वारा तने के संवहनी ऊतकों तक पहुँचता है एवं पर्ण तक भी पहुँचता रहता है।

हम अध्ययन कर चुके हैं कि प्रकाश संश्लेषण में निर्मित खाद्य तरल रूप में फ्लोएम द्वारा पादप के विभिन्न अंगों तक पहुँचता है। यह तभी सम्भव है जब कोशिकी झिल्लियों में चयनात्मक अर्द्ध पारगम्यता (Selective semipermeability) पायी जाये। झिल्लियों में से विलयन के रूप में पदार्थों का अवशोषण एवं संवहन दो प्रकार की क्रियाओं द्वारा होता है– (i) **निष्क्रिय अवशोषण** एवं (ii) **सक्रिय अवशोषण**; निष्क्रिय अवशोषण में कई भौतिक क्रियाएँ जैसे–विसरण (Diffusion) परासरण (Osmosis), केशिकात्व (Capillarity), अन्तःशोषण (Imbibition), आदि सहायक है।

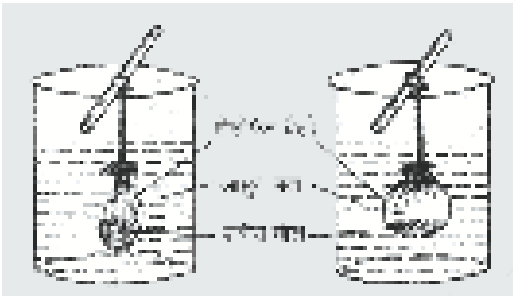

चित्र 8.24 : सेलोफेन अर्ध पारगम्य झिल्ली में से परासरण

सेलोफेन (Cellophane) की एक छोटी थैली लीजिये। सेलोफेन अर्द्ध पारगम्य होता है। इस थैली में 2% ग्लूकोस का विलयन भरिये। इस थैली के मुख को धागे से बाँधकर बन्द कर दीजिये एवं इसे बीकर में भरे आसुत जल में डुबो दीजिये। कुछ समय बाद आप देखेंगे कि थैली फूल गई है।

यह इसलिए हुआ कि बीकर के जल की सान्द्रता 100% है जबकि थैली की सान्द्रता 98 प्रतिशत है (2 प्रतिशत शर्करा है एवं 98 प्रतिशत जल है)। जल का विसरण अधिक सांद्रता से कम सांद्रता की ओर होने से बीकर का जल थैली में विसरित होगा, जिससे थैली फूल जायेगी। थैली में जल भरने की यह प्रक्रिया एक दाब के परिणामस्वरूप हुई। इसे **परासरण दाब (Osmotic pressure)** कहते हैं।

इसी प्रकार यदि किशमिश को पानी भरे कटोरे में डालें तो वह परासरण के कारण फूल जायेगी।

कोशिका, परासरण द्वारा जल का अवशोषण करती है। यदि किसी पादप या जन्तु कोशिका को आसुत जल में रखें तो कोशिका रस की सान्द्रता आसुत जल की तुलना में अधिक होने से कोशिका में जल के अणु प्रवेश करेंगे। जिससे कोशिका झिल्ली फैलेगी किन्तु साथ ही पुनः स्वाभाविक स्थिति में आने के लिए भीतर की ओर दाब डालेगी। इसे **भित्ति दाब** कहते हैं। परासरण दाब के अधिक होने के कारण जल कोशिका में जाता जायेगा एवं कोशिका फूलती जायेगी एवं **दृढ़** या **स्फीत** (Turgid) हो जायेगी। परासरण द्वारा कोशिका में जल का प्रवेश **अन्तः परासरण (Endosmosis)** कहलाता है।

कोशिका की पूर्ण स्फीत (Turgid) अवस्था, कोशिका के आकार को बनाये रखती है। पर्ण गूदेदार एवं रसदार फल, जैसे–आम एवं टमाटर की स्वस्थ प्रकृति इनकी कोशिकाओं के पूर्ण स्फीत होने के कारण ही होती है।

(iii) केशिकात्व (Capillarity) – काँच की एक पतली नली के एक सिरे को बीकर से भरे जल में डुबोया जाये तो नलिका में जल स्वयं ही कुछ ऊँचाई तक चढ़ जायेगा। किसी तरल पदार्थ के स्वयं ही रिक्त स्थान में प्रवेश को केशिकात्व (Capillarity) कहते हैं। यह भौतिक बल भी अवशोषण एवं परिवहन में सहायक हैं।

(iv) अन्तः शोषण (Imbibition) – पदार्थ एवं द्रव के अणुओं के परस्पर आकर्षण का कारण अन्तःशोषण होता है। यह प्रक्रिया जलरागी कॉलोइडों के कारण होती हैं। पादप की कोशिका भित्ति एवं बीजों के कठोर आवरण में भी जल का अवशोषण इस क्रिया द्वारा होता है। जल में रखने पर बीजों व लकड़ी का फूलना इसके प्रमुख उदाहरण है।

जीवद्रव्यकुंचन (Plasmolysis) – अब एक दूसरी स्थिति का अध्ययन करते हैं यदि एक कोशिका को एक ऐसे घोल में रखें जिसकी सान्द्रता कोशिका–रस से अधिक हो तो क्या होगा? कोशिका–रस से जल बाह्य घोल में आने लगेगा और कोशिका सिकुड़ने लगेगी। कोशिका भित्ति एक निश्चित सीमा तक ही सिकुड़ पायेगी; इसके बाद जीव द्रव्यक कोशिका भित्ति से पृथक हो एक तरफ संकुचित गोलाकार या अण्डाकार रूप में दिखायी देगी। इस क्रिया को **जीवद्रव्य कुंचन (Plasmolysis)** कहते हैं। कोशिका में जलका बाहर की ओर परासरण **बाह्य परासरण (Exosmosis)** कहलाता है।

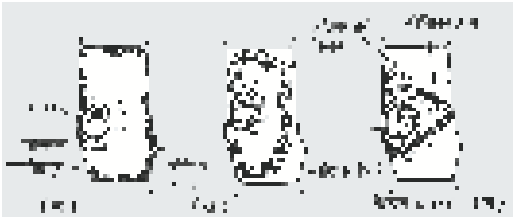

चित्र 8.25 : पादप कोशिकाओं में जीवद्रव्यकुंचन

मृदा से जल–अवशोषण (Absorption of water from soil)

मृदा के कणों के मध्य के स्थलों (छिद्रों) में वायु व जल होता है। इसे **केशिका–जल (Capillary water)** कहते हैं। पौधों की जड़ें इसी जल का अवशोषण करती हैं। मूल के मूल–रोम क्षेत्र द्वारा प्रमुखतया जल का अवशोषण किया जाता है। मृदा के केशिका जल में खनिज लवण घुले रहते हैं, अतः यह एक प्रकार का तनु विलयन होता है। मूल रोम कोशिका का कोशिका रस, इस विलयन की तुलना में अधिक सान्द्र होता है। अतः परासरण द्वारा

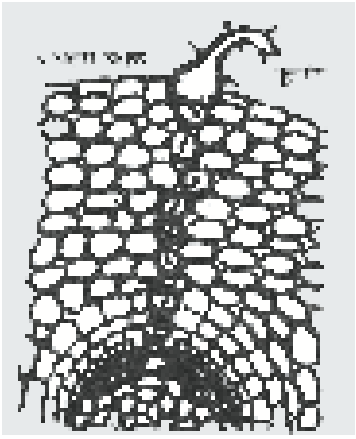

चित्र 8.26 : मूल रोम से मूल के जायलम तक का जल पथ

भूमि से जल, मूल रोम कोशिका में प्रवेश कर जाता है। मूल रोम का कोशिका रस पास की कोशिका के रस की तुलना में तनु हो जाता है और जल परासरण द्वारा अगली कोशिका में चला जाता है। इस प्रकार जायलम की वाहिकाओं से वल्कुट की कोशिकाओं तथा मूल रोम तक दाब प्रवणता (Pressure gradient) बन जाती है। इस प्रवणता के कारण भूमि से जल एवं घुलित खनिज लवण, मूल रोम से निरन्तर मूल के जायलम ऊतक तक पहुँचता रहता है।

मूल रोम का परासरण दाब, मृदा विलयन के परासरण दाब से कम हो तो परासरण के सिद्धान्त के अनुसार, बाह्य परासरण होना चाहिये। ऐसी परिस्थितियों में भी पादप मूल रोम में जल अवशोषण कर सकता है। इस अवशोषण के लिये ऊर्जा की आवश्यकता होती है जो कि ATP अणु के रूप में कोशिका को उपलब्ध रहती है। इस प्रकार के अवशोषण को सक्रिय अवशोषण (Active absorption) कहते हैं।

मूल दाब (Root Pressure)

सक्रिय जल अवशोषण के कारण मृदा से जल मूल के जायलम में पहुँचता है। इस जल अवशोषण के कारण मूल की कोशिकाएँ स्फीत (Turgid) हो जाती है और जायलम में पहुँचने वाला जल कुछ ऊँचाई तक ऊपर की ओर चढ़ने लगता है। मूलों में पाये जाना वाला यह धनात्मक दाब, मूल दाब (Root pressure) कहलाता है। यह एक सक्रिय दाब है जो कि कुछ शाकीय पौधों के जायलम में जल को ऊपर की ओर धकेलता है। यह एक जैव क्रिया (Vital process)

है।

चित्र 8.27 : मूलदाब प्रदर्शन

मूल दाब समझने के लिए हम एक सरल प्रयोग करेंगे। हम एक गमले में लगा स्वस्थ पौधा लेंगे। तने को मिट्टी की सतह से लगभग 7–8 सेमी ऊपर आड़ा काटेंगे। गमले में पानी देंगे। अब कटे भाग पर रबर की नली की सहायता से एक कांच की नलिका जोड़ेंगे–नलिका में थोड़ा–सा जल भरेंगे। जल–स्तर को चिन्हित कर देंगे। सारे उपकरण को मोम की सहायता से वायुरोधीh बना देंगे। हम देखेंगे कि कुछ समय पश्चात् काँच की नली में जल स्तर बढ़ने लगता है। यह मूल दाब के कारण होता है।

मूल दाब इतना नहीं होता कि वह 300 मीटर ऊँचे या इससे भी ऊँचे वृक्षों में जल को पर्णों तक पहुँचा सके। अब प्रश्न यह उठता है कि ऊँचे वृक्षों में जल पर्ण तक कैसे पहुँचता है? यह वाष्पोत्सर्जन–संसंजन तनाव सिद्धान्त द्वारा समझा जा सकता है।

वाष्पोत्सर्जन–संसंजन–तनाववाद

यह तीन प्रमुख कारकों पर आधारित है– (1) जायलम वाहिकाओं में जल निरन्तर, अखंडित स्तम्भ के रूप में विद्यमान होता है। (2) जल अणुओं में परस्पर दृढ़ आकर्षण होने से यह जल अणु संसंजित होकर, जल के स्तम्भ की निरंतरता को बनाये रखते हैं। (3) पर्ण में, जल स्तम्भ का ऊपरी भाग वाष्पोत्सर्जन द्वारा वायुमंडल में निकलता रहता है। इस कारण जल स्तम्भ पर ऊपर से एक खिंचाव या तनाव बना रहता है। इस खिंचाव के कारण सम्पूर्ण जल स्तम्भ ऊपर की ओर खिंचा चला जाता है।

8.11 उत्सर्जन (Excretion)

जीवों में अपशिष्ट पदार्थ (Waste material) तथा विषैले पदार्थों को बाहर निकालने की क्रियाविधि **उत्सर्जन** कहलाती है। वे अंग जो उत्सर्जन क्रिया में भाग लेते हैं **उत्सर्जी अंग** कहते हैं।

8.11.1 उत्सर्जन की आवश्यकता

सभी जीवों में उपापचयी क्रिया (Metabolic Activity) देखने को मिलती है जो पहली अपघटनी या अपचयी (Catabolic) तथा दूसरी उपचयी या संश्लेषी क्रियाएं (Anabolic activity)। उपापचय में होने वाली अनेक रासायनिक क्रियाओं में ऐसे अनावश्यक उत्पादों जैसे यूरिया, यूरिक एसिड व अमोनिया का निर्माण होता है जिनकी उपस्थिति शरीर के लिए हानिकारक होती है ऐसे उत्पादों को **अपशिष्ट पदार्थ** (Waste product) कहते हैं। शरीर में प्रोटीन उपापचय से उत्पन्न अपशिष्ट पदार्थों से मुक्त करने के लिए उत्सर्जन अत्यन्त आवश्यक है।

8.11.2 जन्तुओं में उत्सर्जन

मूत्र में उपस्थित नाइट्रोजन युक्त उत्सर्जी पदार्थों के आधार पर जन्तुओं में तीन प्रकार का उत्सर्जन पाया जाता है–

(1) **अमीनोटेलिक** (Aminotelic) – कुछ जन्तु जैसे सीपी, तारामीन, धोधा सीधे अमीनों अम्ल को उत्सर्जित कर देते है।

(2) **अमोनो टेलिक** (Ammonotelic) – अमीनो अम्ल उपापचयी क्रिया में अमोनिया एक अपशिष्ट पदार्थ के रूप में उत्पन्न होता है। अमोनिया जल के घुलनशील एवं विसरणशील होती है। हो जन्तु अमोनिया को उत्सर्जित करते हैं उन्हें अमोनोटेलिक कहते हैं।

(3) **यूरियोटेलिक** (Ureotelic) – प्रोटीन उपापचय से यूरिया नामक यौगिक यकृत में बनता है और जल में घुलनशील हो जाता है। जन्तु जो नाइट्रोजन उत्सर्जी पदार्थों को यूरिया के रूप में उत्सर्जन करते हैं यूरियोटेलिक कहलाते हैं। उदाहरण – मनुष्य, मछली, घोंघे, उभयचर (मेंढक) व सरीसृप।

(4) **यूरिकोटेलिक** (Uricotelic) – उपापचयी क्रियाओं के फलस्वरूप बने यूरिक अम्ल का उत्सर्जी पदार्थ के रूप में उत्सर्जन होता है। यूरिक अम्ल प्रायः ठोस होता है ऐसे जन्तुओं को यूरिकोटेलिक कहा जाता है। उदाहरण – शुष्क वातावरण में रहने वाले जन्तु, पक्षी, सर्प, छिपकली।

अमीबा में उत्सर्जन

अमीबा एककोशिकीय जन्तु होने के कारण इसमें उत्सर्जी अंग नहीं पाये जाते हैं। अपशिष्ट पदार्थों निष्कासन विसरण द्वारा होता है। अमीबा के शरीर में संकुचनशील रसधानियां (Contractile vacuoles) भी पाई जाती है। जिनके द्वारा अपशिष्ट पदार्थों को शरीर से बाहर त्याग दिया जाता है।

हाइड्रा में उत्सर्जन

हाइड्रा में कोई उत्सर्जन अंग नहीं होता है। अमोनिया तथा गैसों का उत्सर्जन विसरण क्रिया द्वारा होता है।

केंचुए में उत्सर्जन

केंचुए में उत्सर्जन क्रिया वृक्कक (Nephridia) द्वारा होती है जो देहगुहा में स्थित होते हैं। यें अपशिष्ट पदार्थ को शरीर से बाहर खुलने वाले छिद्रों से उत्सर्जित करते हैं। केंचुओं का उत्सर्जी पदार्थ अमोनिया व यूरिया होता है।

तिलचट्टे में उत्सर्जन

तिलचट्टे में मुख्य उत्सर्जन अंग मैलपीघी नलिकाएं होती है। लगभग 80–90 मैलपीघी नलिकाएं पीली धागे के रूप में होती है जो आहारनाल के पश्च भाग में खुलती है। यह नलिकाएं विसरण द्वारा नाइट्रोजनी पदार्थों को ग्रहण करती है ये पदार्थ तरल अवस्था में इन नलिकाओं द्वारा प्रोक्टोडियम में पहुंच जाते हैं। आहारनाल के माध्यम से यह अपशिष्ट पदार्थ मल द्वारा शरीर से बाहर त्याग दिए जाते हैं।

मनुष्य में उत्सर्जन

मनुष्यों में उत्सर्जी अंग जैसे – त्वचा, यकृत, प्लीहा, आंत्र, फेफड़े, वृक्क आदि होते हैं। त्वचा पर स्वेद ग्रंथियां होती है जो पानी, यूरिया का निष्कासन करती है। वृक्क उत्सर्जन का प्रमुख अंग होता है। मनुष्य में उत्सर्जन तंत्र के प्रमुख अंग निम्न है।

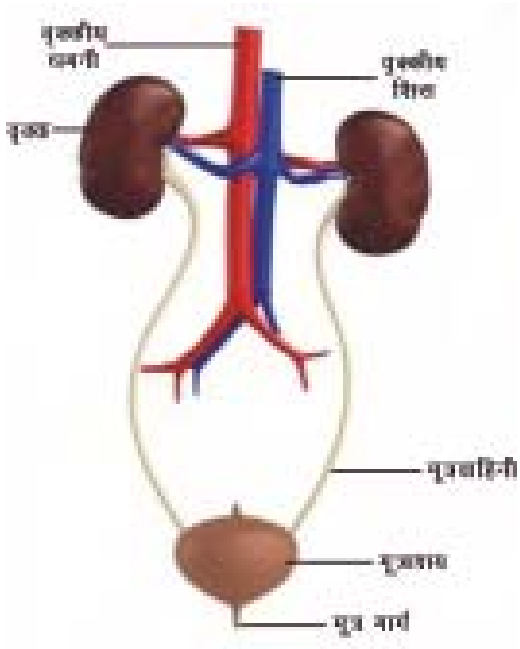

चित्र 8.28 : मनुष्य में उत्सर्जन तंत्र

(1) वृक्क (Kidney), (2) मूत्रवाहिनियां (Ureter), (3) मूत्राशय (Urinary bladder)।

(1) **वृक्क** (Kidney) – स्तनधारियों में एक जोड़ी वृक्क पाये जाते हैं। सेम के बीज के आकार के लाल रंग के वृक्क, डायफ्राम के नीचे कशेरूक दण्ड के दोनों ओर स्थित होते हैं। वृक्क 4–5 इंच लम्बा, 2 इंच चौड़ा व 140–150 ग्राम तक होता है।

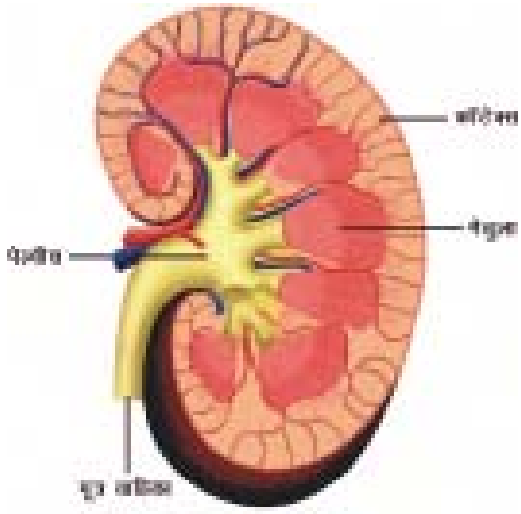

चित्र 8.29 : वृक्क की आंतरिक संरचना

चारों ओर से वसा परतों से सुरक्षित होता है। वृक्क का पतला बाहरी भाग कार्टेक्स (Cortex) तथा भीतरी मोटा भाग मेडुला (Medula) कहलाता है। वृक्क में असंख्य पतली नलिकाएं पाई जाती हैं। जिसे मूत्र नलिकायें या नेफ्रोन्स (Uriferous tubules or Nephrons) कहते हैं। नेफ्रोन्स में दो मुख्य भाग – बोमन सम्पुट व स्त्रावी भाग होते हैं। स्त्रावी भाग (Secretory portion) नेफ्रोन में बोमन सम्पुट के पीछे प्रारंभ होता है जिसके तीन भाग –(1) समीपस्थ कुण्डलित नलिका (2) हेनले लुप (3) दूरस्थ कुण्डलित नलिका होते हैं।

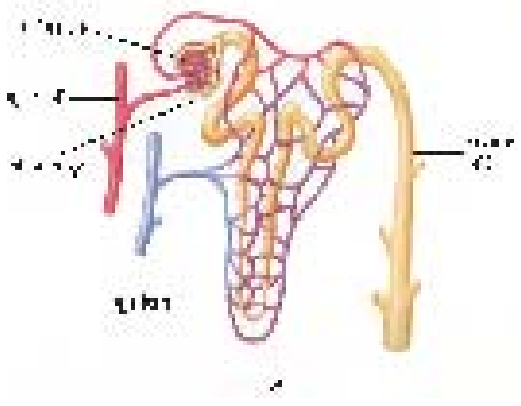

चित्र 8.30 : वृक्क में परानिस्यंदन क्रिया

(2) **मूत्र वाहिनियां** (Ureter) – ये एक जोड़ी होती है। वृक्क में

स्थित पेल्विस ही नली के रूप में नियमित होकर मूत्रवाहिनी का निर्माण करती है। मूत्रवाहिनी मूत्र को वृक्क से मूत्राशय तक पहुंचाती है।

(3) **मूत्राशय** (Urinary bladder) – मनुष्य की उदरगुहा पर थैलेनुमा रचना को मूत्राशय कहते हैं। बाह्य आवरण पेरीटोनियम कहलाता है। एक पतली नली द्वारा मूत्राशय बाहर खुलता है जिसे मूत्रमार्ग (Urethra) कहते हैं। मूत्रमार्ग एक छिद्र द्वारा शरीर के बाहर खुलता है।

मूत्र का उत्सर्जन (Urine Excretion)

यूरिया का निर्माण यकृत में होता है। वहीं से अशुद्ध रूधिर वृक्कीय धमनी द्वारा प्रत्येक वृक्क में पहुंचता है। अशुद्ध रूधिर लाने वाली धमनी अनेक अभिवाही धमनिकाओं में विभाजित होकर बोमन सम्पुट में स्थित केशिका गुच्छ (Glomerulus) को रक्त देती है। केशिका गुच्छ में रूधिर ले जाने वाली धमनियों को अभिवाही धमनियां तथा बाहर ले जाने वाली धमनियों को अपवाही धमनियां कहते हैं। अभिवाही धमनियों का व्यास अपवाही से अधिक होने से ग्लोमेरूलस में रूधिर दाब बढ़ जाता है। रूधिर दाब के कारण अभिवाही धमनियों के रूधिर से अतिसूक्ष्म परानिस्यंदन (Ultrafiltration) द्वारा रूधिर से जल, ग्लूकोज, यूरिया, यूरिक अम्ल तथा कुछ लवण छन कर बोमन सम्पुट में आ जाते हैं। उत्सर्जी पदार्थों के साथ–साथ ग्लूकोज, अमीनो अम्ल तथा दूसरे लवण भी होते हैं। बोमेन सम्पुट से यह द्रव वृक्क नलिका के स्त्रावी भाग में प्रवेश करता है। यहां से जल, ग्लूकोज व उपयोगी लवण का कुछ भाग पुनः अवशोषित किया जाता है। अवशेष द्रव में अपशिष्ट पदार्थ बचते हैं जिन्हें **मूत्र** कहते हैं। यह मूत्र वृक्क नलिका से संग्रहवाहिनी से सीधे मूत्रवाहिनी में चला जाता है जो मूत्राशय में खुलता है। मूत्राशय में मूत्र संग्रहित होता है जो मूत्राशय की पेशियों के संकुचन से मूत्र मार्ग द्वारा शरीर से बाहर निकल जाता है।

8.11.3 पादपों में उत्सर्जन (Excretion in Plants)

उच्च विकसित जन्तुओं में उत्सर्जन एक अत्यन्त जटिल प्रक्रिया है। जन्तुओं में इसी कारण विशिष्ट उत्सर्जन अंग पाये जाते हैं। पादपों में उत्सर्जन प्रक्रिया अपेक्षाकृत सरल है और पौधों में उत्सर्जन अंग एवं तंत्र नहीं पाये जाते हैं।

पादपों में सरल उत्सर्जन प्रक्रिया होने के अनेक कारण हैं–

1. जन्तुओं की तुलना में पादपों में उपापचयी क्रियाओं की दर कम होती है। अतः उपापचय क्रियाओं के फलस्वरूप बने अपशिष्ट पदार्थों के शरीर में एकत्रित होने की दर भी धीमी हो जाती है।
2. हरे पौधे, अपचयी क्रियाओं में बने अधिकांश अपशिष्ट उत्पादों का उपयोग उपचयी क्रियाओं में कर लेते हैं।
3. पौधों में प्रोटीन उपापचय में बने नाइट्रोजनी अपशिष्ट उत्पादों का उपयोग नव–प्रोटीनों के संश्लेषण में हो जाता है।
4. पादपों का उपापचय मुख्यतया कार्बोहाइड्रेट पर आधारित है। कार्बोहाइड्रेट के उपापचय से उत्पन्न अन्तिम उत्पाद, प्रोटीन के उपापचय के उत्पन्न उत्पादों से कहीं कम विषाक्त एवं हानिकारक होते हैं। अतः पादपों में उत्सर्जन की आवश्यकता जन्तुओं की तुलना में बहुत कम होती है। फिर भी पादपों में बने कुछ अपशिष्ट उत्पादों का उत्सर्जन अथवा उनका हानिरहित रूप में संग्रह आवश्यक है।
5. जलीय पौधों में कुछ अपशिष्ट पदार्थ पादप कोशिकाओं की कोशिका भित्ति से होते हुए बाहरी जलीय वातावरण में विसरित हो जाते हैं।
6. स्थलीय पादपों में आवश्यकता से अधिक गैसें, जैसे कि ऑक्सीजन एवं कार्बन डाई ऑक्साइड तथा जल, जल–वाष्प के रूप में रन्ध्रों एवं कभी–कभी वातरन्ध्रों (Lenticels) द्वारा निकल जाती है।
7. कुछ अपशिष्ट उत्पाद जैसे कार्बनिक अम्ल, घुलित अवस्था में कोशिकाओं की रिक्तकाओं में संग्रहित होते हैं अतः ये पदार्थ कोशिकाओं की विभिन्न जैव–प्रक्रियाओं में बाधक नहीं हो पाते हैं। नींबू, संतरा आदि का खट्टा स्वाद इन अम्लों के रिक्तिका में संग्रहण के कारण होता है।

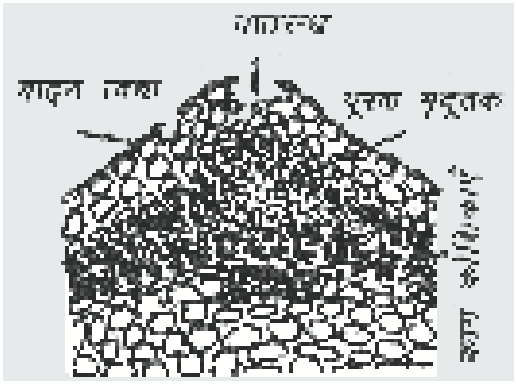

चित्र 8.31 : वातरन्ध्र की संरचना

8. कई अपशिष्ट उत्पाद घुलित रूप में रिक्तकाओं में पाये जाते हैं। ये पदार्थ भले ही पौधों के लिए अनावश्यक हों किन्तु हमारे लिए यह बहुत ही उपयोगी है। इनका

उपयोग कई औषधियों में किया जाता है। गोंद भी अपशिष्ट उत्पाद है।

9. कुछ अनावश्यक पदार्थ ठोस रवों (crystals) के रूप में, पर्ण की मृत कोशिकाओं में या तने की काष्ठीय कोशिकाओं में संग्रहित होते हैं। ये रवे अधिकांशतः कैल्सियम कार्बोनेट तथा कैल्सियम ऑक्जेलेट के होते हैं।

बिन्दु–स्राव (Guttation)

यदि आप प्रातःकाल पीपल के वृक्ष के नीचे खड़े हों तो आपको जल की सूक्ष्म बूंदों का आपके ऊपर गिरने का अनुभव होगा। यह इस वृक्ष के पर्णों से निकलने वाला जल है। इसी प्रकार टमाटर, दूब घास आदि

में पर्ण के किनारे या सिरों पर जल बून्दों के रूप में बाहर निकलता है। इस क्रिया को बिन्दु–स्राव कहते हैं। इन पौधों में बिन्दु स्राव के लिए विशेष **जल–रन्ध्र (Hydathodes)** पाये जाते हैं। ये पर्ण की शिराओं के अन्तिम सिरों पर होते हैं। प्रत्येक सूक्ष्म रन्ध्र, एक छोटी गुहिका में खुलता है। इस गुहिका के चारों ओर पतली भित्ति की कोमल मृदूतक कोशिकाएं होती हैं।

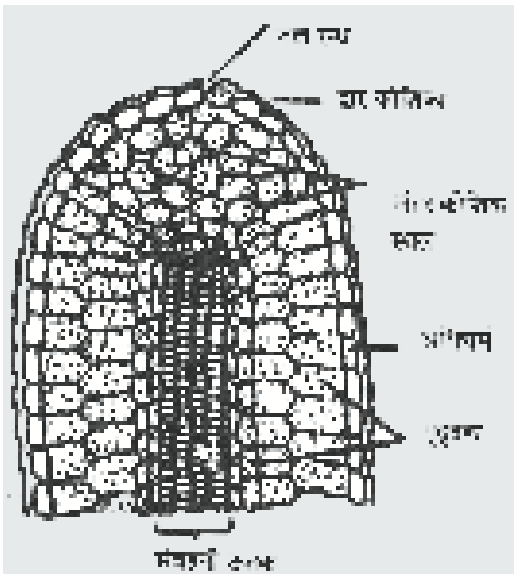

चित्र 8.32 : जलरन्ध्र

बिन्दु–स्राव अधिक अवशोषण एवं कम वाष्पोत्सर्जन की अवस्था में सबसे अधिक होता है। जल बूंदों के साथ, कुछ घुलित अपशिष्ट पदार्थ भी बाहर निकलते हैं जो कि सूख कर पपड़ी के रूप में रन्ध्र के आस–पास जम जाते हैं।

8.12 जनन (Reproduction)

8.12.1 अर्थ व आवश्यकता

वर्षा ऋतु में आपने नीम, बबूल एवं अन्य पेड़ पौधों के नीचे असंख्य छोटे–छोटे पौधे उगे हुए देखे होंगे। इसी तरह विभिन्न जन्तुओं जैसे–कुत्ते, बिल्ली, बन्दर में बच्चे तथा पक्षियों जैसे–चिड़िया, कबूतर, मुर्गी आदि में अण्डों से चूजे निकलते हुए देखे होंगे कुछ समय पश्चात् ये सभी सजीव अपनी प्रजाति के वयस्क सदस्यों के समान परिवर्धित हो जाते हैं। वयस्क हो जाने पर ये भी अपने समान संतति उत्पन्न कर अपनी प्रजाति की निरन्तरता सृष्टि में बनाये रखने में सहयोग करते हैं।

अतः यह क्रिया जिसके द्वारा सजीव अपने समान संतति उत्पन्न करता है, को **जनन** कहते हैं। जनन क्रिया द्वारा ही सृष्टि में अनादि काल से वर्तमान तक विभिन्न जैव प्रजातियों की निरन्तरता बनी हुई है। श्वसन, उत्सर्जन आदि विभिन्न क्रियाओं की भाँति यह क्रिया सजीवों के जीवित रहने के लिए तो आवश्यक नहीं है किन्तु सृष्टि में प्रजाति के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए जनन आवश्यक है।

जनन क्रिया को हम दो भागों में बाँटकर अध्ययन करते हैं–

(i) अलैंगिक जनन

(ii) लैंगिक जनन

अलैंगिक जनन (Asexual Reproduction)– सजीवों की उत्पत्ति सजीवों से ही होती है। यदि संतति की उत्पत्ति एक ही जनक से प्राप्त कोशिका अथवा जीव के किसी भी विशिष्ट कायिक संरचना से होती है तो इस प्रकार के जनन को **अलैंगिक जनन** कहते हैं।

लैंगिक जनन

(Sexual Reproduction)

नर तथा मादा जननांगों द्वारा यह जनन क्रिया सम्पन्न होती है। नर एवं मादा जननांगों द्वारा उत्पन्न युग्मकों के संयोजन से युग्मनज (Zygote) का निर्माण होता है। युग्मनज के परिवर्धन से ही सजीव की उत्पत्ति होती है, इसे लैंगिक जनन कहते हैं।

दो युग्मकों के मिलन से जो नया जीव बनता है उसमे विभिन्नतायें होती है जो नये जीवों के उद्ववविकास की आधारशिला बनती है। उद्ववविकास के नजरिये से लैंगिक जनन ज्यादा सार्थक है।

8.12.2 जन्तुओं में जनन

जनन प्राणियों का स्वाभाविक गुण है, इसी के द्वारा सभी जीव प्रकृति में अपनी जाति को बनाये रखने के लिए सन्तानोत्पत्ति करते हैं जिसे **जनन** कहते हैं। जन्तुओं की संख्या में वृद्धि जनन द्वारा होती है। जन्तुओं में जनन दो प्रकार का पाया जाता है– (1) अलैंगिक जनन (2) लैंगिक जनन।

(1) **अलैंगिक जनन** (Asexual reproduction) – यदि संतति

की उत्पत्ति एक ही जनक से प्राप्त कोशिका अथवा जीव शरीर के किसी भी भाग से या कायिक अंग से होती है तो इस प्रकार के जनन को अलैंगिक जनन कहते हैं। इस प्रकार के जनन में नर व मादा युग्मक नहीं बनते हैं। अकशेरूकीय जन्तुओं में अलैंगिक जनन कई प्रकार का होता है–

(i) द्विविखण्डन (Binary fission) – एककोशिकीय जीवों में कोशिका विभाजन या विखण्डन द्वारा समान जीवों की उत्पत्ति होती है। इसमें जन्तु विखण्डन द्वारा दो समान आकार में विभाजित हो जाता है। उदाहरण – *पैरामिशियम, यूग्लिना, अमीबा* आदि।

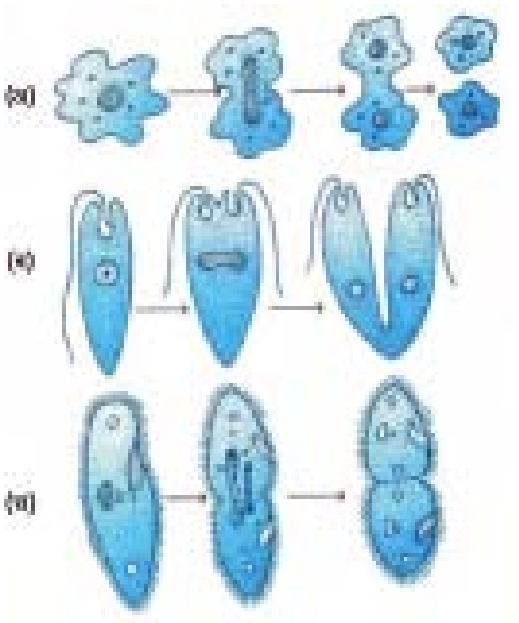

चित्र 8.33 : प्रोटोजोआ वर्ग के जीवों में विभिन्न प्रकार के द्विविखण्डन – (अ) अनियमित (*अमीबा*) (ब) लम्बवत् (*यूग्लीना*) (स) पार्श्वीय (*पैरामिशियम*)

(ii) बहुखण्डन (Multiple fission)– इस प्रकार के विभाजन में पहले प्राणी के केन्द्रक का विभाजन होता है, इस कारण कई पुत्री केन्द्रक बन जाती है। बाद में कोशिकाद्रव्य में विभाजन होता है। केन्द्रक के चारों ओर कोशिकाद्रव्य इकट्ठा होने से नई संतति प्राप्त होती है। इस प्रकार जनक प्राणी से नये संतति प्राणी का निर्माण होता है। उदाहरण – *प्लाज्मोडियम* आदि।

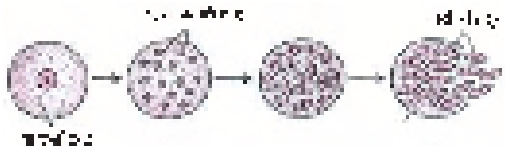

चित्र 8.34 : *प्लाज्मोडियम* में बहुखण्डन

(iii) पुनरुद्भवन (Regeneration) – कुछ जीवों में अपने कायिक भाग के विभाजन द्वारा नए जीवों के निर्माण की अद्भुत क्षमता पायी जाती है। जीव कुछ टुकडो में खण्डित हो जाता है, प्रत्येक खण्ड वृद्धि कर एक नए जीव में विकसित हो जाते हैं। जीव का पुर्ननिर्माण करने की प्रक्रिया पुनरुद्भवन कहलाती है। उदाहरण – *प्लेनेरिया, हाइड्रा,* **तारामछली** आदि।

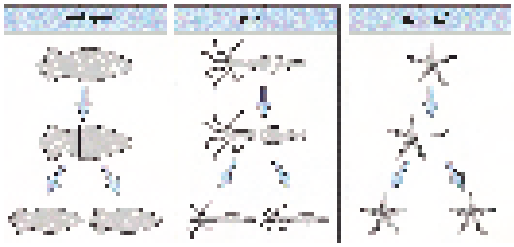

चित्र 8.35 : विभिन्न जीवों में पुनरूद्भवन

(iv) मुकुलन (Budding) – कुछ प्राणी में पुनर्जनन की क्षमता वाली कोशिकायें पाई जाती हैं। इन प्राणी के शरीर से एक कलिका का निर्माण होता है। यह कलिका आकार में बड़ी होकर जनक प्राणी से अलग हो जाता है एवं नये प्राणी का निर्माण करती है। इस विधि को मुकुलन कहते हैं। उदाहरण – *हाइड्रा*।

चित्र 8.36 : हाइड्रा में मुकुलन

(2) लैंगिक जनन (Sexual reproduction)

वह जनन जिसके अन्तर्गत नयी संतति उत्पन्न करने के लिए दो (एकल जीवों) जीवों की भागीदारी होती है। दो जनक जीवों के नर व मादा युग्मकों (शुक्राणु व अण्डाणु) के मिलने से अपने समान नये जीव की उत्पत्ति होती है जिसे लैंगिक जनन कहते हैं। उच्च अकशेरूकी व कशेरूकी प्राणियों में लैंगिक जनन पाया जाता है।

(i) ***हाइड्रा*** **में लैंगिक जनन** – हाइड्रा के शरीर पर गांठों के रूप नर एवं मादा जननांग वृषण एवं अण्डाशय का निर्माण होता है। नर व मादा युग्मकों के संयोजन से युग्मनज का निर्माण होता है, युग्मनज के परिवर्धन से हाइड्रा का निर्माण होता है।

(ii) केंचुए में लैंगिक जनन – केंचुआ एक उभयलिंगी प्राणी होता है इसके कारण केंचुए में स्वनिषेचन नहीं पाया जाता है। नर युग्मक मादा युग्मक से पहले परिपक्व होते हैं। नर जनन तंत्र में वृषण 10वें तथा 11वें खण्ड में स्थित होता है। मादा जननांग

में अण्डाशय, 13वें खण्ड में स्थित होता है। इनमें वर्षा ऋतु में मैथुन क्रिया होती है। इस हेतु दो केंचुए परस्पर सम्पर्क में आते हैं। केंचुए के अण्डे पीले थैलीनुमा आवरण कोकुन में सुरक्षित रहते हैं तथा कोकुन में ही निषेचन क्रिया सम्पन्न होती है।

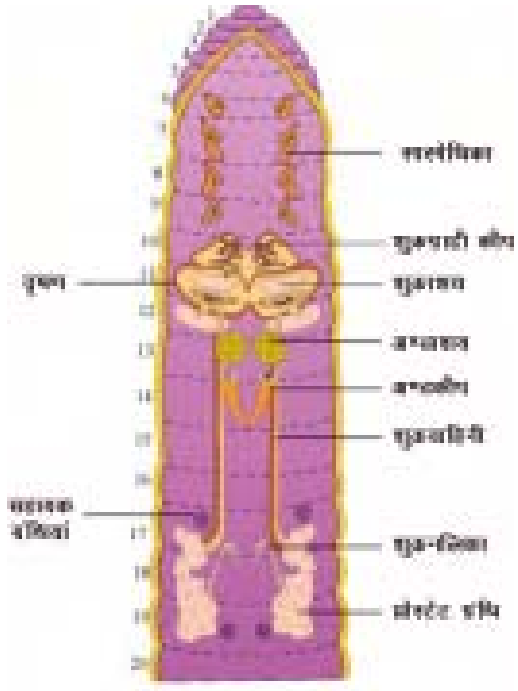

चित्र 8.37 : केंचुए का जनन तंत्र

(iii) मनुष्य में जनन – उच्च विकसित प्राणियों में नर तथा मादा जननांग अलग–अलग प्राणियों में स्थित होता है। नर में उपस्थित जनन कोशिका को नर युग्मक या शुक्राणु कहते हैं जो गतिशील होती है तथा मादा में उपस्थित जनन कोशिका को मादा युग्मक या अण्डाणु कहलाता है जो नर युग्मक से बड़ी होती है परन्तु गतिशील नहीं होती है।

मानव जनन तंत्र अन्य विकसित प्राणियों से अधिक विकसित होता है। मानव जननतंत्र एक निश्चित आयु जिसे यौवनारंभ काल कहते हैं, पर क्रियाशील होता है। लड़कों में यौवनारंभ 13–14 वर्ष की उम्र में जबकि लड़कियों में इसकी आयु 10–12 वर्ष की उम्र में होती है। मानव जनन तंत्र को दो भागों में बांटा गया है–

(a) नर जनन तंत्र – जनन कोशिका उत्पादित करने वाले अंग व जनन कोशिकाओं के निषेचन क्रिया के स्थान तक पहुंचाने वाले अंग, संयुक्त रूप से नर जनन तंत्र कहलाता है जिसके अन्तर्गत वृषण, शुक्रवाहिनियां, शुक्राशय, मूत्र जनन मार्ग प्रोस्टेट ग्रंथियों का बना होता है। नर जनन कोशिका अर्थात् शुक्राणु का निर्माण वृषण में होता है। नर में एक जोड़ी वृषण उदर गुहा के बाहर वृषण कोष में स्थित होते हैं क्योंकि शुक्राणु के उत्पादन के लिए आवश्यक ताप शरीर के ताप से कम होना चाहिए। वृषण असंख्य शुक्र जनन नलिकाओं का बना होता है ये सभी शुक्रजनन नलिकाएं एक कुण्डलित रचना एपिडिडाइमिस में खुलती है। एपिडिडाइमिस का दूरस्थ सिरा शुक्रवाहिनी में खुलता है। शुक्रवाहिनी उदरगुहा में स्थित पेशीय थैलीनुमा संरचना शुक्राशय में खुलती है। वृषण द्वारा उत्पन्न शुक्राणु अपनी–अपनी शुक्रवाहिनी द्वारा शुक्राशय में पहुंचा दिये जाते हैं जहां शुक्राणु संग्रहित रहते हैं तथा पोषण प्राप्त करते हैं। शुक्राशय से एक स्खलन वाहिनी निकलती है जो शुक्राशय को मूत्र मार्ग से जोड़ती है। मूत्र मार्ग पेशीय रचना शिश्न से घिरा रहता है तथा एक छिद्र से बाहर खुलता है। इस छिद्र द्वारा मूत्र एवं जनन द्रव्य दोनों बाहर निकलते हैं। शुक्राशय के पास स्थित प्रोस्टेट ग्रंथियाँ दूधिया द्रव स्वात्रित करती है। शुक्राणु का उत्पादन तथा यौवनावस्था में प्रदर्शित लैंगिक लक्षण टेस्टोस्टेरॉन हार्मोन के कारण होता है। गतिशील शुक्राणु में मुख्यतः आनुवंशिक पदार्थ होता है तथा एक लम्बी पूंछ होती है जो मादा युग्मक की ओर तैर कर पहुंचाता है।

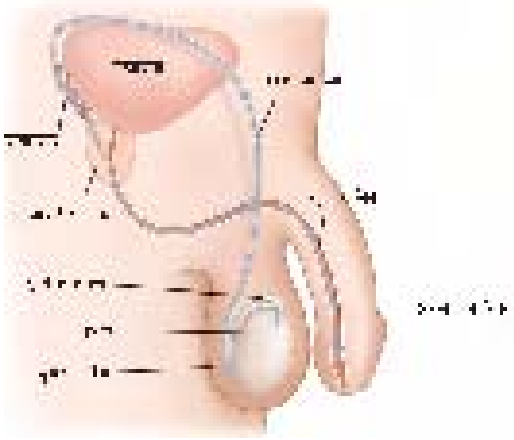

चित्र 8.38 : मनुष्यों में नर जनन तंत्र

(b) मादा जनन तंत्र – नर की अपेक्षा मादा जनन को अपेक्षाकृत जटिल होता है। मादा जनन कोशिका अर्थात् अण्डाणु का निर्माण अण्डाशय में होता है जो कुछ हार्मोन के द्वारा उत्पादित होता है। मादा जननांग में एक जोड़ी अण्डाशय, अण्डवाहिनियां, गर्भाशय एवं योनि होती है। लड़की के जन्म के समय कई सारे अपरिपक्व अण्ड दोनों अण्डाशय में पाये जाते हैं। यौवनारंभ होते ही ये अण्ड परिपक्व होना प्रारंभ हो जाते है।

अण्डाशय का आंतरिक स्तर जनन एपीथिलियम कोशिकाओं का बना होता है जो अण्डों का निर्माण करता है इसे अण्ड जनन कहते हैं। प्रत्येक अण्डाशय के सामने एक कीपाकार संरचना पायी जाती है जो अण्डवाहिनी में खुलती है। दोनों ओर की अण्डवाहिनी मिलकर पेशीयुक्त थैलीनुमा संरचना अर्थात् गर्भाशय का निर्माण करता है। गर्भाशय ग्रीवा द्वारा योनि में खुलता है। मैथुन के समय शुक्राणु योनि मार्ग द्वारा ही अण्डवाहिनी में पहुंच कर अण्ड से निषेचित हो जाता है तथा यही निषेचित अण्ड गर्भाशय में स्थापित हो जाता है। यहीं पर निषेचित अण्ड धीरे–धीरे भ्रूण में विकसित होना प्रारंभ करता हैं भ्रूण के पोषण व उत्सर्जन के लिए एक संरचना का निर्माण होता है जिसे प्लेसेन्टा कहते हैं। मादा हार्मोन प्रोजेस्ट्रोन एवं एस्ट्रोजन मादा शरीर में लैंगिक लक्षणों के लिए उत्तरदायी होता है।

स्तनधारियों की मादाओं में दो प्रकार के अण्डाशयी चक्र पाये जाते हैं।

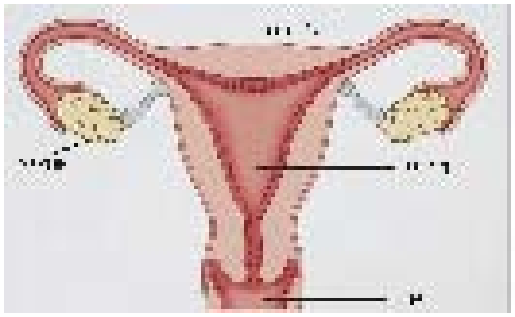

चित्र 8.39 : मनुष्यों में मादा जनन तंत्र

(i) रज चक्र (Menstrual cycle) – यदि अण्डकोशिका का निषेचन नहीं हो तो यह अण्डोत्सर्ग के पश्चात् एक दिन तक ही जीवित रहती है जिसके उपरांत गर्भाशय की आंतरिक भित्ति रक्तवाहिनियों के साथ टूट कर रक्तस्त्राव के रूप में बाहर निकलती है। इसे ऋतुस्त्राव अथवा रजोधर्म कहते हैं। इसकी अवधि 4–7 दिन की होती है। स्त्रियों में यह क्रिया नियमित 28–30 दिन के अंतराल में सम्पन्न होती है इसे **रज चक्र** या **रजोधर्म** कहते हैं। मादाओं में यौवनारंभ के समय रज चक्र या रजोधर्म के प्रारंभ को रजोदर्शन कहते हैं जो स्त्री जननकाल के आरंभ होने का संकेत होता है।

(ii) मद चक्र (Estrous cycle) – अधिकांश स्तनियों में प्रजनन काल एक निर्धारित ऋतु में होता है जिसे मद चक्र या प्रजनन काल कहते हैं। इस प्रजनन काल में मादाओं द्वारा अण्डोत्सर्जन के पश्चात् सहवास की तीव्र इच्छा जागृत होती है तथा ये प्रजनन कर सन्तान उत्पन्न करती है। यह चक्र अधिकांश स्तनधारी मादाओं में उपस्थित होता है। उदाहरण – कुत्ते, बिल्ली, गाय आदि।

8.12.3 पादपों में जनन

(Reproduction in plants)

पादपों में जनन क्रिया अलैंगिक एवं लैंगिक दोनों विधियों से सम्पन्न होती है। नीचे जनन की प्रमुख विधियाँ समझायी गयी हैं–

पादपों में अलैंगिक जनन

इस विधि में नव पादप का परिवर्धन एक ही जनक से प्राप्त कोशिका अथवा पादप की किसी भी विशिष्ट कायिक संरचना से होता है। पादपों में अलैंगिक जनन की निम्न सामान्य विधियाँ हैं।

(क) मुकुलन (Budding) – डबल रोटी निर्माण में काम में ली जाने वाली खमीर (यीस्ट) में अलैंगिक जनन मुकुलन विधि द्वारा होता है। इस विधि में यीस्ट कोशिका की सतह पर एक लघु गोलाकार अतिवृद्धि उत्पन्न होती है इसे **मुकुल** (Bud) कहते हैं। अब कोशिका में स्थित केन्द्रक समसूत्री विभाजन द्वारा दो पुत्री केन्द्रकों में विभक्त हो जाता है। इनमें से एक केन्द्रक मुकुल में चला जाता है तथा दूसरा केन्द्रक मातृ कोशिका में ही रह जाता है। कुछ समय पश्चात् मुकुल वयस्क आकार ग्रहण कर मातृ कोशिका से अलग होकर नयी यीस्ट जीव बना लेती है।

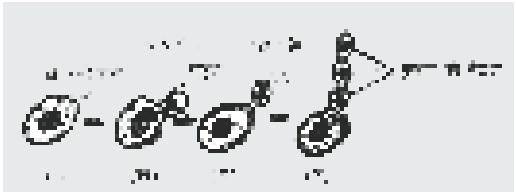

चित्र 8.40 : यीस्ट में मुकुलन

कभी–कभी यीस्ट कोशिका पर एक के ऊपर एक मुकुल उत्पन्न हो जाने से मुकुलों की एक शृंखला बन जाती है। इस प्रकार मुकुलन विधि द्वारा अलैंगिक जनन सम्पन्न होता है।

(ख) बीजाणुजनन (Sporogenesis)– कवकों में अलैंगिक जनन की यह सबसे सामान्य विधि है। इस विधि में तन्तु में एक संरचना–बीजाणुधानी विकसित होती है। बीजाणुधानी में स्थित केन्द्रक विभाजन के फलस्वरूप कई पुत्री केन्द्रकों में विभक्त हो जाता है। प्रत्येक केन्द्रक के चारों ओर थोड़ा कोशिकाद्रव्य

इकट्ठा हो जाता है, जिससे वह एक बीजाणु में परिवर्तित हो जाता है। बीजाणुओं के परिपक्व हो जाने पर बीजाणुधानी फट जाती है तथा बीजाणु भूमि अथवा अधःस्तर के सम्पर्क में आने पर अंकुरित होकर नव कवक तन्तु में परिवर्धित हो जाते हैं। उदाहरण– *राइजोपस*।

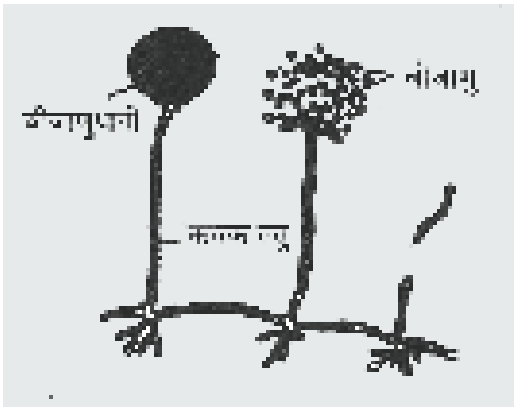

चित्र 8.41 : *राइजोपस* में बीजाणु जनन

कायिक जनन (Vegetative reproduction)

आपने विभिन्न फसली पादपों जैसे गेहूँ, जौ, चना, बाजरा आदि में बीजों के अंकुरण द्वारा पौधा परिवर्धित होते हुए देखा होगा। क्या आपने केला, गुलाब गन्ना आदि में कभी बीज उत्पन्न होते देखा है। आप देखेंगे कि विभिन्न कारणों से इनमें बीज नहीं पाये जाते हैं। इनके कायिक अंगों में जनन क्षमता पायी जाती है। केले की जड़, गुलाब, मोगरा के तने तथा *ब्रायोफिल्लम* की पत्तियों से नव पादप उत्पन्न हो जाते हैं। शकरकंद की जड़ों पर तथा आलू के कंद पर प्रसुप्त कलिकाएं पायी जाती हैं इनसे कायिक जनन द्वारा नव पादप तैयार हो जाते हैं। इस प्रकार पादप के कायिक अंगों जैसे–जड़, तना अथवा पत्तियों से नव पादप विकसित होने को कायिक जनन कहते हैं। (उच्च पादपों में अलैंगिक जनन शब्द उपयोग नहीं किया जाता है) निम्न वर्ग के पादपों जैसे– *स्पाइरोगाइरा ऑसिलेटोरिया* आदि में कायिक जनन विखण्डन द्वारा होता है।

मानव ने विभिन्न पादपों की कायिक जनन क्षमता का उपयोग करते हुए कायिक जनन की कुछ विधियाँ विकसित की जिनके द्वारा त्वरित गति से तथा कम समय में अधिकाधिक पादप तैयार किये जा सकते हैं तथा पादपों की उन्नत किस्मों तथा वांछित गुणों को अपरिवर्तित रखा जा सकता है। इन विधियों को अपनाकर हम अपने घर, खेत एवं उद्यान को शोभनीय तथा आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद बना सकते हैं।

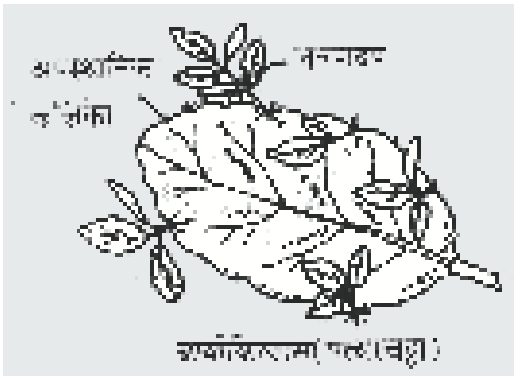

चित्र 8.42 : पर्ण द्वारा कायिक जनन

कृत्रिम कायिक प्रवर्धन
(Artificial vegetative propagation)

मानव द्वारा कायिक जनन की निम्न विधियां विकसित की गई हैं जिनके द्वारा कायिक जनन संभव है।

(क) **कर्तन (Cutting)–** पादप के जड़, तना अथवा पत्ती के स्वस्थ एवं पूर्ण विकसित खण्ड को **कर्तन** कहते हैं। कर्तन के कुछ हिस्से को नम मिट्टी में दबाने पर इससे जड़ें उत्पन्न हो जाती हैं तथा मातृ पादप के समान नव पादप परिवर्धित हो जाता है। अंगूर, गुलाब, फालसे आदि पादपों के व्यावसायिक प्रवर्धन में कर्तन विधि का व्यापक उपयोग किया जाता है।

(ख) **कलम रोपण (Grafting) –** दो पादपों को जोड़ने की विधि को कलिका रोपण या कलम लगाना कहते हैं। इस विधि में भिन्न–भिन्न पादपों के दो भागों (स्तंभ) को आपस में इस प्रकार जोड़ा जाता है कि वे संयुक्त होकर एक पादप के रूप में परिवर्धित हो जाते हैं।

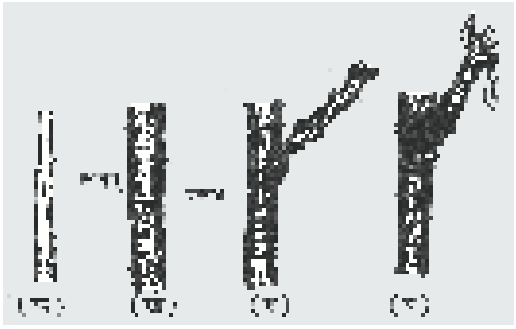

चित्र 8.43 : (ब) कलम रोपण विधि

सुविकसित मूल तंत्र वाले पौधे को स्कन्ध या स्टॉक (Stock) तथा इस पर स्थापित किये जाने वाले उत्तम गुणों वाले पादप स्तम्भ को कलम या सियन (scion) कहते हैं। स्कन्ध की स्वस्थ शाखा को ऊपर से तथा उतनी ही मोटाई की कलम

को नीचे से काटकर इस प्रकार बांधा जाता है कि दोनों का संवहनी (एधा) भाग एक दूसरे के सम्पर्क में रहे। कुछ दिनों में कलम तथा स्कन्ध के ऊतक परस्पर संयुक्त हो जाते हैं तथा एक पादप के रूप में विकसित हो जाते हैं।

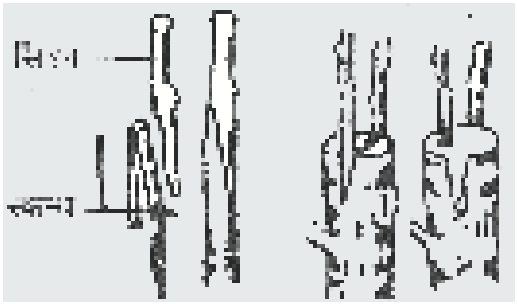

चित्र 8.44 : (स) कलम बांधने की विभिन्न अवस्थाएं (क) तैयार हुआ कलम (ख) मूल स्कंध (ग) स्कंध में प्रविष्ट किया हुआ कलम (घ) वृद्धि दशार्ती हुई कलम

इस विधि द्वारा एक ही स्कन्ध पर विभिन्न किस्में भी आरोपित की जा सकती हैं। फल एवं फूलदार पादपों की किस्म सुधार हेतु इस विधि का व्यापक स्तर पर उपयोग किया जाता है। जैसे–नींबू, संतरा।

(ग) दाब लगाना (Layering) – लम्बी लचीली शाखा वाले पादप जैसे मोगरा, लीची, अनार आदि में कायिक जनन की यह उपयुक्त विधि है। इस विधि में पादप की शाखा को मातृ पादप से अलग करने से पूर्व ही उसमें मूलन करवाया जाता है। इस विधि में दो प्रकार से शाखाओं में जड़ें उत्पन्न की जाती हैं–

(1) टीला दाब विधि– पादप की लम्बी शाखा को झुकाकर बीच में मिट्टी डालकर दबा देते हैं। 2–4 दिन के अन्तराल से मिट्टी पर पानी डालते रहते हैं। लगभग 15–20 दिनों में शाखा के मिट्टी में दबे भाग से जड़ें उत्पन्न हो जाती हैं। अब इसे मातृ पादप से काटकर अलग कर देते हैं।

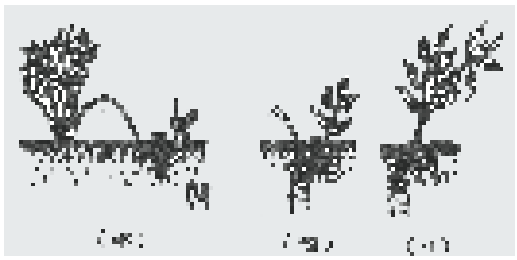

चित्र 8.45 : दाब लगाने की विधि

(2) गुट्टी या वायु दाब विधि – काष्ठीय पादपों जैसे अनार, लीची आदि में शाखाएं भूमि से कई मीटर ऊँची होती हैं। वृक्ष की 1–2 वर्ष पुरानी शाखा की छाल को चाकू से काटकर एक खाँच या वलय बनाया जाता है। इस कटे हुए भाग के चारों ओर गीली मॉस लपेटकर टाट के टुकड़े या पॉलीथीन से बांध देते हैं। इस वलय के पास स्थित एक अन्य शाखा पर थोड़ी ऊँचाई पर एक मटकी के पैंदे में बारीक छेद कर उसमें सूतली पिरो देते हैं। सूतली का निचला सिरा मॉस के चारों ओर लपेट देते हैं। अब मटकी में जल भर देते हैं जिससे सूतली गीली होकर मॉस को नम बनाये रखती है। कुछ दिनों में वलय वाले स्थान पर जड़ें उत्पन्न हो जाती हैं। अब इस शाखा को वलय के नीचे से काटकर नव पादप के रूप में लगा देते हैं। इसे गूट्टी या वायु दाब विधि कहते हैं।

कायिक जनन का महत्व

(1) प्राकृतिक रूप से बीज नहीं बनाने वाले अथवा बीजांकुरण की कम मात्रा वाले पादपों जैसे केला, सन्तरा, अंगूर की बीज रहित किस्में तथा गुलाब आदि पौधों की किस्मों को बनाये रखने तथा इनकी व्यावसायिक स्तर पर उपलब्धता के लिए कायिक जनन ही एक मात्र विधि है।

(2) बीज द्वारा उत्पन्न पादपों से फल तथा पुष्प प्राप्त होने में काफी समय लगता है तथा सभी बीजों के अंकुरण एवं पादप बनने की निश्चितता नहीं होती जबकि कायिक जनन सुनिश्चित होता है तथा इससे कम समय में ही पुष्प एवं फल प्राप्त हो जाते हैं।

(3) कायिक जनन से प्राप्त नवपादप एवं फल गुणों में मातृ पादप से पूर्णतः समान होते हैं जिससे वांछित गुण पीढ़ी दर पीढ़ी बने रहते हैं जबकि बीजों से उत्पन्न पादपों के गुण भिन्न स्तर के होते हैं।

पादपों में लैंगिक जनन

(Sexual reproduction in plants) :–

पादप जगत में पुष्पी पादप वर्ग सबसे विकसित है। पुष्प पादप के जननांगों को धारण करता है। कुछ पादपों में नर तथा मादा जननांग एक ही पादप में स्थित होते हैं। ऐसे पादपों को उभयलिंगी (Bisexual) तथा नर एवं मादा जननांग भिन्न–भिन्न पादपों में स्थित हों ऐसे पादपों को एकलिंगी **(Unisexual)** पादप कहते हैं। सरसों या धतूरे के पुष्प द्वारा हम लैंगिक जनन को सरलता से समझा सकते हैं।

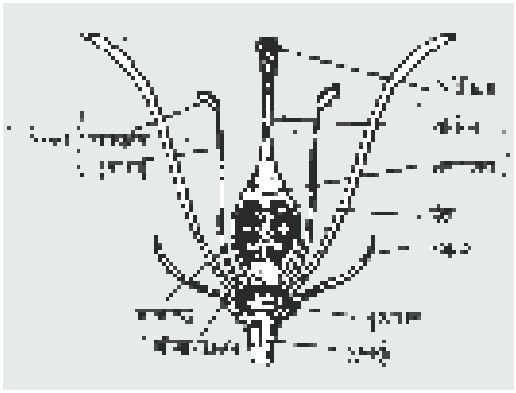

चित्र 8.46 : (द) पुष्प के विभिन्न भाग

पुष्पवृन्त के शीर्ष एवं फूले हुए भाग को **पुष्पासन** कहते हैं। पुष्पासन पर पुष्प के चारों चक्र **बाह्यदलपुंज, दलपुंज, पुमंग** तथा **जायांग** स्थित होते हैं। पुमंग एवं जायांग को जनन चक्र तथा बाह्यदलपुंज को सहायक चक्र कहते हैं। इन चारों चक्रों के एक इकाई सदस्य को क्रमशः **बाह्यदल, दल, पुंकेसर** तथा **स्त्रीकेसर** (अण्डप) कहते हैं। बाह्यदल सामान्यतः हरे रंग के एवं दल या पंखुड़ी रंगीन एवं आकर्षक होते हैं। पुंकेसर में एक तन्तु होता है व शीर्ष भाग चपटा होकर परागकोष बनाता है। परागकोष में परागकणों का निर्माण होता है। प्रत्येक परागकण दो नर युग्मक बनते हैं। मादा जननांग स्त्रीकेसर या अण्डप को तीन भागों में बांट सकते हैं। नीचे का फूला हुआ भाग **अण्डाशय (Ovary)** जिसमें बीजाण्ड होते हैं। प्रत्येक बीजाण्ड में एक

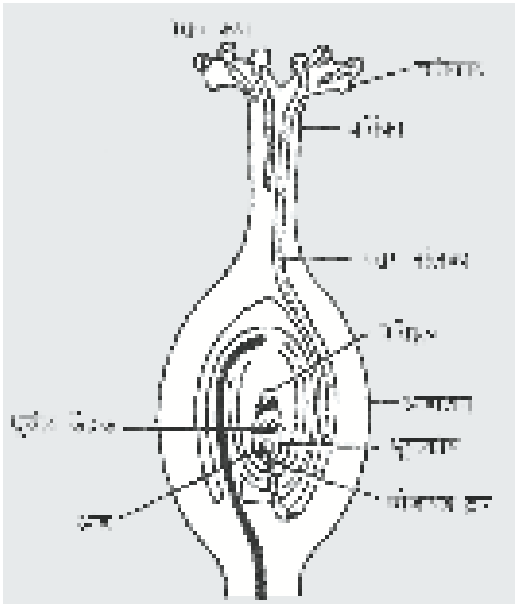

चित्र 8.47 : पुष्पी पादप में निषेचन

मादा युग्मक अण्ड होता है। अण्डाशय से ऊपर की ओर एक लम्बी नलिकाकार रचना **वर्तिका (style)** विकसित होती है। वर्तिका के शीर्ष चपटे भाग को **वर्तिकाग्र (stigma)** कहते हैं।

परागण (Pollination)

परागकणों का उसी प्रजाति के पुष्प की वर्तिकाग्र तक पहुँचने की क्रिया को परागण कहते हैं। परागण के पश्चात् ही नर एवं मादा युग्मकों का संलयन होता है। परागण वायु, कीट, जल या स्वतः स्फुटन द्वारा हो सकता है। पुष्प के परागकणों का उसी पुष्प या उस पादप पर स्थित अन्य पुष्प की वर्तिकाग्र पर पहुँचने को **स्व परागण (Self pollination)** तथा परागकणों का उसी प्रजाति के अन्य पादप पर स्थित पुष्प की वर्तिकाग्र पर पहुँचने को **पर परागण (Cross pollination)** कहते हैं।

निषेचन तथा भ्रूण परिवर्धन
(Fertilization and embryo development)

परागण द्वारा परागकण वर्तिकाग्र पर एकत्र हो जाते हैं। यहां परागकण के अंकुरण से एक नलिका **परागनलिका** उत्पन्न होती है। यह नलिका वर्तिका में प्रवेश कर अण्डाशय तक पहुँचती है तथा यहां स्थित बीजाण्ड (ovule) में उपस्थित एक सूक्ष्म छिद्र **बीजाण्डद्वार** द्वारा प्रवेश करती हैं। बीजाण्ड में परागनलिका से दो नर युग्मक बीजाण्ड में स्थित भ्रूण कोष (Embryosac) में पहुँचते हैं। यहां एक नर युग्मक का अण्ड से संलयन होता है। यही वास्तविक निषेचन है जिसके द्वारा **युग्मनज** का निर्माण एवं भ्रूण परिवर्धन होता है। दूसरे नर युग्मक का भ्रूणकोष में स्थित दो केन्द्रकों से संलयन होकर एक त्रिकेन्द्रकी रचना बनती है। इसे **त्रि संलयन** कहते हैं। इस प्रकार निषेचन क्रिया के दौरान भ्रूणकोष में दो युग्मकों (अण्ड तथा एक नर युग्मक) तथा तीन केन्द्रकों (एक नर युग्मक तथा दो ध्रुवीय केन्द्रक) का अलग–अलग संलयन होता है अतः इसे **दोहरा निषेचन (Double fertilization)** कहते हैं। निषेचन से बीजाण्ड बीज में तथा अण्डाशय फल में परिवर्धित हो जाते हैं। इस प्रकार पुष्पों में लैंगिक जनन सम्पन्न होता है।

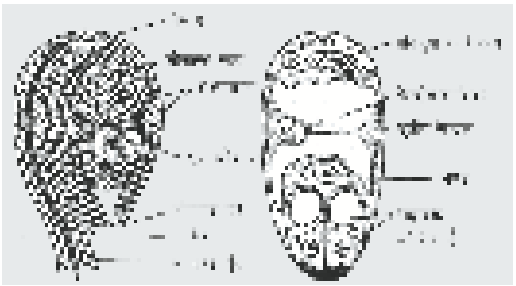

चित्र 8.48 : पुष्पी पादप में बीजाण्ड तथा भ्रूणकोष

8.13 नियमन (Regulation)

8.13.1 संवेदनशीलता

जन्तु अपने वातावरण एवं वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के प्रति अनुक्रियाएं प्रदर्शित करते हैं। यही क्रिया **संवेदनशीलता** कहलाती है। प्रत्येक जीव चाहे वह अमीबा हो या मनुष्य हर कोई संवेदनशीलता प्रदर्शित करता है। सभी जीवों में उसे दर्शाने का प्रकार भिन्न–भिन्न होता है। यदि हम एककोशिकीय जीव अमीबा के सुई चुभा दे तो वह अपने कूट पादों को समेट कर गोल हो जाता है। जबकि विकसित जन्तुओं में तंत्रिका तंत्र एवं अन्तःस्त्रावी तंत्र पाये जाते हैं जो शरीर का नियमन करते है। नॉन–कार्डेटा प्राणियों में या उनसे कम विकसित प्राणियों में पूर्ण तंत्रिका तंत्र के बजाय संवेदी कोशिकाएं पायी जाती है जो वातावरण के परिवर्तनों के प्रति अपनी संवेदनशीलता दर्शाती है। संवेदी अंगों से प्राप्त सूचनाएं तंत्रिकाओं द्वारा नियंत्रण केन्द्र मस्तिष्क, मेरूरज्जु एवं गुच्छिकाओं तक पहुंचती है जिसे आवेग का संचरण कहते हैं। इन आवेगों का नियंत्रण केन्द्रों द्वारा विश्लेषण होता है एवं उसी के अनुरूप प्रतिक्रिया प्रभावित या संवेदी अंगों तक पहुंचायी जाती है। जन्तुओं में नियमन का कार्य तंत्रिकाओं द्वारा तीव्र गति से किया जाता है।

8.13.2 तंत्रिका तंत्र (Nervous System)

जन्तुओं में संवेदनाओं के नियंत्रण व समन्वय का कार्य तंत्रिका तथा पेशी ऊतक द्वारा किया जाता है। प्रत्येक जन्तु स्वयं को वातावरण के अनुरूप सामान्य स्थिति में रहने का प्रयत्न करता है इसी प्रकार जब आकस्मिक परिस्थिति आती है अर्थात् गर्म वस्तुओं को छूना, कील का पैर में लगना, किसी व्यक्ति को छूना आदि क्रियाएं होती है तब हमारा शरीर इन क्रियाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया तंत्रिका तंत्र द्वारा प्रदर्शित करता है।

तंत्रिका तंत्र का निर्माण कई तंत्रिका कोशिकाओं अर्थात् न्यूरॉन से मिलकर होता है। तंत्रिका कोशिका के तीन भाग होते हैं – कोशिका काय, तंत्रिकाक्ष (Axon) एवं द्रुमाश्म (Dendrite)।

चित्र 8.49 : तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन)

(i) कोशिका काय (Cell body) – तंत्रिका कोशिका के इस भाग में कोशिका द्रव्य भरा होता है। इस भाग में केन्द्रक, अन्य कोशिकांग, निस्सल कण एवं न्यूरोफाइब्रिल्स तंतुक पाये जाते हैं।

(ii) तंत्रिकाक्ष (Axon) कोशिका काय के एक तरफ से लम्बी, बेलनाकार संरचना निकलती है जो तंत्रिकाक्ष कहलाती है। इसमें कोशिकाद्रव्य पाया जाता है। तंत्रिकाक्ष पर वसा की परत चढ़ी होती है जिसे माइलिन आच्छद कहते हैं। यह विद्युतरोधी की तरह कार्य करती है। तंत्रिकाक्ष के अन्तिम सिरे पर कई शाखाएं निकलती है जो बटन समान संरचनाओं में समाप्त हो जाती हैं।

(iii) द्रुमाश्म (Dendrite) – तंत्रिका कोशिका से कई द्रुमाश्म निकलते हैं जो तंत्रिकाक्ष के अलावा सभी दिशाओं में फैले रहते हैं, ये शाखित होती हैं।

जब सूचनाएं तंत्रिका कोशिका के द्रुमाकृतिक सिरे द्वारा उपार्जित की जाती है तो उसी समय एक रासायनिक क्रिया द्वारा विद्युत आवेग उत्पन्न होता है। यह आवेग द्रुमाश्म से कोशिका काय तक पहुंचता है और तब यह तंत्रिकाक्ष (एक्सॉन) में होता हुआ इसके अंतिम सिरे तक पहुंच जाता है। एक्सॉन के अंत में विद्युत आवेग कुछ रसायनों का विमोचन करती है ये रसायन रिक्त स्थान या सिनेप्स को पार करते हैं और आगे की तंत्रिका कोशिका की द्रुमाश्म में इसी तरह का विद्युत आवेग प्रारंभ करता है। यह क्रिया निरन्तर चलती रहती है। अर्थात् पहले सूचनाएं ग्रहण की जाती है तत्पश्चात् यह विद्युत आवेग की तरह यात्रा करती है फिर यह विद्युत आवेग रासायनिक आवेग में परिवर्तित होकर संचरित होता है।

मानव के तंत्रिका तंत्र को तीन भागों में विभक्त किया जाता है– (1) केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (2) परिधीय तंत्रिका तंत्र (3) स्वायत्त तंत्रिका तंत्र।

(1) केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र – इस तंत्र में मस्तिष्क व मेरूरज्जु नियंत्रण केन्द्र होते हैं।

(a) मस्तिष्क – यह शरीर का सबसे कोमल व महत्वपूर्ण अंग होता है। यह करोटि के कपाल भाग की अस्थियों से ढका एवं सुरक्षित रहता है अर्थात् यह करोटि बाह्य आघातों से हमारे मस्तिष्क की रक्षा करती है। मस्तिष्क में तीन मुख्य भाग होते हैं– अग्र मस्तिष्क, मध्य मस्तिष्क तथा पश्च मस्तिष्क। सामान्य मनुष्य के मस्तिष्क का भार 1350 ग्राम होता है तथा इसका आयतन 1300 CC होता है।

(i) अग्र मस्तिष्क: मस्तिष्क का मुख्य संवेदनाओं का केन्द्र

होता है। इसके भिन्न–भिन्न क्षेत्रों पर सुनने, सूंघने, देखने आदि के केन्द्र होते हैं। अग्र मस्तिष्क के ही अलग–अलग क्षेत्रों पर संवेदी सूचनाएं ग्रहण की जाती है। अर्थात् इस मस्तिष्क भाग में सोचने, पहचानने, स्मृति, चिंतन, इच्छाशक्ति आदि के क्षेत्र पाये जाते हैं जो इन क्रियाओं का नियंत्रण एवं समन्वय करते हैं। शरीर की विभिन्न क्रियाएं जैसे भूख लगना, प्यास आदि का लगना का नियंत्रण इसी भाग द्वारा किया जाता है।

(ii) मध्य मस्तिष्कः इसमें लगभग सभी अनैच्छिक क्रियाओं के केन्द्र पाये जाते हैं जैसे खाने को देखते ही मुंह में पानी आना, धूप में निकलते ही पुतली का सिकुड़ जाना, प्रतिवर्ती क्रिया आदि।

(iii) पश्च मस्तिष्कः सभी अनैच्छिक क्रियाओं का नियंत्रण करता है जैसे रक्तचाप, उल्टी का आना, क्रमाकुंचन, हृदय की धड़कन, पाचन, उत्सर्जन, परिसंचरण आदि। व्यक्ति के मुख्य कार्य हाथ–पैर एवं अन्य अंगों की पेशियों का नियंत्रण पश्च मस्तिष्क के अनुमस्तिष्क भाग द्वारा किया जाता है। इसी भाग द्वारा एक सीधी रेखा में चलना भी नियंत्रित होता है। शराब पीने वाले व्यक्तियों में शराब का सर्वाधिक असर उनके इसी भाग पर होता है। इस कारण वे लड़खड़ा कर चलते हैं।

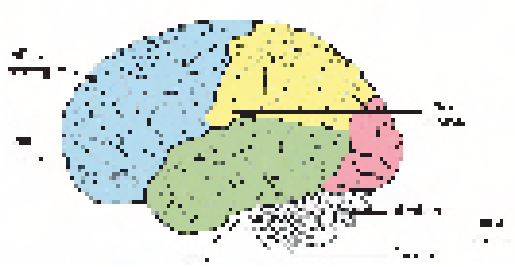

चित्र 8.50 : मानव मस्तिष्क

(b) मेरूरज्जु – यह लम्बा एवं बेलनाकार होता है। यह हमारे मेरूदण्ड में सुरक्षित रहता है। इसका अग्र भाग मस्तिष्क के मेडुला ऑबलॉगेटा से जुड़ा रहता है एवं पश्च भाग मेरूदण्ड में पतले धागे के रूप में समाप्त होता है। मेरूरज्जु से 31 जोड़ी तंत्रिकाएं निकलती है जिसे मेरूतंत्रिकाएं कहते हैं। इसका प्रमुख कार्य प्रतिवर्ती क्रियाओं का क्रियान्वयन करना है। इस क्रिया के अन्तर्गत यह संवेदनाओं को मस्तिष्क तक पहुंचाती है तथा मस्तिष्क से प्राप्त संदेशों व निर्देशों को अंगों तक भेजती है।

(2) परिधीय तंत्रिका तंत्र – केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के विभिन्न भागों से निकलने वाली तंत्रिकाओं को परिधीय तंत्रिका तंत्र शामिल करते हैं। मानव में मस्तिष्क से 12 जोड़ी कपाल तंत्रिकाएं निकलती है जो आँख, नाक, कान आदि अंगों को जाती है तथा इनका नियमन करती है।

(3) स्वायत्त तंत्रिका तंत्र – यह शरीर की कई अनैच्छिक क्रियाओं जैसे हृदय का धड़कना, क्रमानुकुंचन, पाचन आदि क्रियाओं का नियंत्रण इस तंत्रिका तंत्र द्वारा किया जाता है। इस तंत्र के दो भाग अनुकम्पी तथ परानुकम्पी होते हैं।

प्रतिवर्ती क्रिया एवं प्रतिवर्ती चाप
(Reflex action and reflex arch)

प्रतिवर्ती क्रियाएं अनैच्छिक होती है अर्थात् हमारी इच्छा–शक्ति का इन पर प्रभाव नहीं होता है। इन क्रियाओं का नियन्त्रण मेरू–रज्जु द्वारा होता है। प्रत्येक मेरू तंत्रिका के दो मूल (Two roots) होते हैं। पृष्ठ मूल (Dorsal root) एवं अधर मूल (Ventral root)। पृष्ठ मूल संवेदी तंत्रिका तन्तुओं का बना होता है। अधर मूल चालक तंत्रिका–तन्तुओं का बना होता है। पैर की त्वचा पर कांटा चुभने पर त्वचा में स्थित संवेदी कोशिकाएं इस उद्दीपन द्वारा उत्तेजित हो जाती है। संवेदी कोशिकाओं से यह उद्दीपन आवेग के रूप में संवेदी तन्तुओं से होता हुआ पृष्ठ मूल में जाता है। पृष्ठ मूल से यह आवेग मेरू–रज्जु के धूसर द्रव्य में पहुंचता है। मेरू–रज्जु में इस सूचना का विश्लेषण होता है एवं आवश्यक निर्देश चालक तन्तुओं द्वारा अधर मूल में जाता है। यह निर्देश चालक तंत्रिका से सम्बन्धित अंग तक आता है जिसके फलस्वरूप पेशियां (Muscle) पैर को तुरन्त गति देकर वहां से हटाती है। प्रतिवर्ती क्रियाओं की गति तीव्र होती है। इस क्रिया में संवदांग से लेकर सम्बन्धित अंग की पेशियों तक के पूरे मार्ग को प्रतिवर्ती चाप (Reflex-arch) कहते हैं। प्रतिवर्ती क्रिया शीघ्रता से सम्पन्न हो जाती है जिससे प्राणी हानिकारक संवेदनाओं के घातक प्रभाव से बच सकता है। प्रतिवर्ती क्रियाओं का नियन्त्रण मेरू–रज्जु करता है अतः मस्तिष्क को अन्य आवश्यक कार्यों के लिए अवसर मिल जाता है ।

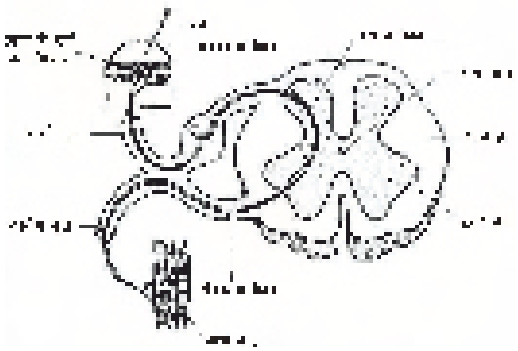

चित्र 8.51 : प्रतिवर्ती क्रिया का आरेख

8.13.3 अन्तःस्त्रावी तंत्र

(Endocrine System)

मानव शरीर में नलिका–विहीन ग्रंथियां पाई जाती हैं जो अपना स्त्रवण सीधे रूधिर वाहिनियों में डालती हैं ऐसी ग्रंथियों को **अन्तःस्त्रावी ग्रंथियां** कहते हैं। जैसे – पीयूष ग्रंथि, अग्नाशय ग्रंथि, थायरॉयड ग्रंथि आदि (चित्र 8.27)। अन्तःस्त्रावी ग्रंथियों से स्त्रावित पदार्थ को हार्मोन कहा जाता है। यह हमारे शरीर में रक्त या रूधिर द्वारा परिवहन करके लक्ष्य क्षेत्रों या अंगों पर पहुंचते है। हार्मोन हमारे शरीर में होने वाले कई क्रियाओं जैसे परिसंचरण, पाचन, उपापचय, उत्सर्जन, श्वसन आदि का संचालन व नियमन करते हैं। इनका प्रभाव मंदगति से होता है तथा यह सूक्ष्म मात्रा में स्त्रावित किये जाते हैं।

पीयूष ग्रंथि अग्रमस्तिष्क में स्थित होती है, वृद्धि हार्मोन पीयूष ग्रंथि से स्त्रावित होता है। पीयूष ग्रंथि को 'मास्टर ग्रंथि' भी कहा जाता है क्योंकि ये शरीर के कई अन्य अन्तःस्त्रावी ग्रंथियों का नियंत्रण करती है। पीयूष ग्रंथि को नियन्त्रण करने का कार्य हाइपोथैलेमस करता है। इस कारण हाइपोथैलेमस को 'मास्टर ऑफ मास्टर ग्रंथि' कहते हैं। वृद्धि हार्मोन के असंतुलन के कारण व्यक्ति या तो बहुत लम्बा या फिर बौना रह जाता है।

थायरॉक्सिन हार्मोन थायरॉइड या अवटू ग्रंथि से स्त्रावित होता है। यह ग्रंथि श्वासनली के अधर पार्श्व तल पर स्वर यंत्र के समीप स्थित होती है। इस हार्मोन के असंतुलित स्त्राव के कारण गलगण्ड या ग्वाइटर (Goiter) नामक रोग हो जाता है। जिससे गर्दन सूजी हुई दिखाई देती है। थायरॉक्सिन हार्मोन हमारे शरीर में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा आदि का उपापचय करता है जो शरीर को सुचारू रूप से चलाने के लिए आवश्यक है। थायरॉक्सिन हार्मोन के लिए आयोडीन बहुत आवश्यक है। आयोडीन की कमी से ही थायरॉक्सिन हार्मोन का शरीर में संतुलन बिगड़ने लगता है जिसे गलगण्ड रोग हो जाता है।

थाइमोसिन नामक हार्मोन थाइमस ग्रंथि से स्त्रावित होता है जो वक्ष में पायी जाती है। इस हार्मोन का मुख्य कार्य प्रतिरक्षा तंत्र का पूर्ण विकास करना है जिससे हमारा शरीर रोगाणु से लड़ने में सक्षम बनता है। इस ग्रंथि के अधिक सक्रिय होने पर टॉन्सिल बढ़ जाते हैं जिससे टॉन्सिलाइटिस रोग हो जाता है।

अग्नाशय ड्योडीनम के समीप स्थित होता है। इन्सुलिन हार्मोन का स्त्रावण अग्नाशय ग्रंथि के द्वारा होता है। ये हार्मोन रक्त शर्करा को नियंत्रित करता है यदि यह हार्मोन सही मात्रा में स्त्रावित नहीं होता तो रक्त शर्करा बढ़ या घट जाती है जिससे हमें मधुमेह (Diabetes) नामक रोग हो जाता है।

एड्रीनल ग्रंथि वृक्कों के ऊपर स्थित होती है। एड्रिनलीन हार्मोन, एड्रीनल ग्रंथि द्वारा स्त्रावित किया जाता है। यह हार्मोन सीधे ही रूधिर में स्त्रावित किये जाते हैं तथा उससे होते हुए लक्ष्य अंगों तक पहुंचता है जिसके कारण जब हम संकट में होते हैं तब हृदय धड़कन में तेजी आ जाती है जिससे हमारे शरीर में पेशियों को तेजी से ऑक्सीजन की पूर्ति की जाती है। सम्बन्धित अंगों का अन्य अंगों से रूधिर कम करके भेजा जाता है तथा श्वसन दर भी बढ़ जाती है।

नर में नर जनन ग्रंथि उपस्थित होती है जो बालक में यौवनारंभ के समय टेस्टोस्टेरॉन हार्मोन का स्त्रावण करती है जो बालक के किशोरावस्था के सभी द्वितीयक लैंगिक लक्षण तथा जनन अंगों का विकास करते हैं।

मादाओं में मादा जनन ग्रंथि उपस्थित होती है जो एस्ट्रोजन हार्मोन का स्त्रावण करती है जो बालिकाओं के शरीर का एवं द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का विकास करती है।

8.13.4 हार्मोनों के द्वारा पादपों में नियमन

(Regulation in plants by hormones)

सामान्यता यह माना जाता है कि पौधों की वृद्धि मृदा में उपस्थित खनिज लवणों व वातावरणीय पारिस्थितयों पर निर्भर करती है। मगर आज यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो चुकी है कि कुछ रासायनिक पदार्थ भी पादपों की वृद्धि को प्रभावित करते हैं। ये पदार्थ पादप के एक भाग में उत्पन्न होते हैं तथा अन्य भाग में संवहित होने पर उस भाग की वृद्धि को प्रभावित करते हैं। पादप भागों की वृद्धि को नियमित, नियंत्रित करने वाले इन रसायनों को **पादप हार्मोन** नाम दिया गया ।

पादप हार्मोनों का कृषि में उपयोग

(Uses of plant hormones in agriculture)

पादप हार्मोनों का कृषि में व्यापक उपयोग किया जाने लगा है। वृद्धि को तीव्र या मन्द करने के उद्देश्य से इनका प्रयोग होता है। प्रमुख वृद्धि नियंत्रकों में ऑक्सिन (2, 4, –डी; 1, 4, 5, टी; एन, ए. ए.); जिबरेलीन, साइटोकाइनिन, इथाईलीन व ए.बी. ए. है। इनमें से ए.बी.ए. एक प्रमुख वृद्धि निरोधक हार्मोन है।

कलमों में जड़ें उत्पन्न करने के लिए आई. बी.ए., व फलों को शीघ्र पकाने के लिए इथरल का प्रयोग किया जाता है। बगीचों में व फसलों के बीच उगे खरतपतवार हटाने में भी

ऑक्सीन का प्रयोग होता है।

पादप व जन्तुओं के नियमन में कुछ प्रमुख अंतर हैं, जैसे–

1. पादपों में तंत्रिका तंत्र पेशियाँ नहीं होती, जबकि जन्तुओं में ये उपस्थित है।
2. जन्तुओं के समान पादपों में सूचनाओं के चालन के लिये कोई विशिष्टीकृत ऊत्तक नहीं होते।
3. पादप कोशिकाओं में आकार परिवर्तन की प्रक्रिया जन्तुओं से पूर्णतः भिन्न है।

8.14 प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक (Famous Indian Scientist)

डॉ. सर जगदीश चन्द्र बोस का जीवन परिचय

डॉ. सर जगदीशचन्द्र बोस का जन्म 30 नवम्बर 1858 में पूर्वी बंगाल (अब बांग्लादेश) के मेमनसिंह नामक स्थान पर हुआ। डॉ. बोस के पिता भगवान चन्द्र बसु ब्रह्म समाज के नेता थे तथा फरीदपुर, वर्धमान एवं अन्य स्थानों पर उप–मजिस्ट्रेट थे। ग्यारह वर्ष की आयु तक इन्होंने गांव के ही एक विद्यालय में शिक्षा ग्रहण की थी। उनके पिता मानते थे कि अंग्रेजी सीखने से पहले अपनी मातृभाषा का अच्छा ज्ञान होना आवश्यक है अतः डॉ. बोस की शिक्षा एक बांग्ला विद्यालय में प्रारम्भ हुई। विक्रमपुर में 1915 में एक सम्मेलन को संबोधित करते हुऐ, डॉ. बोस ने कहा "उस समय पर बच्चों को अंग्रेजी विद्यालयों में पढ़ाना हैसियत की निशानी माना जाता था। मैं जिस बांग्ला विद्यालय में पढ़ता था वहाँ पर मेरे दायीं ओर मेरे पिता के मुस्लिम परिचारक का बेटा बैठा करता था और मेरी बांई ओर एक मछुआरे का बेटा बैठता था। ये ही मेरे खेल के साथी भी थे। इन साथियों से पक्षियों, जानवरों व जलजीवों की कहानियाँ मैं कान लगाकर सुनता था। शायद इन्हीं कहानियों ने मेरे मस्तिष्क में प्रकृति की संरचना पर अनुसंधान करने की गहरी रूचि जगाई।" प्रारम्भिक विद्यालयी शिक्षा के बाद वे कलकत्ता (कोलकाता) आ गये तथा सेंट जेवियर विद्यालय से विज्ञान स्नातक का अध्ययन किया।

जगदीश चन्द्र बोस की जीव विज्ञान में बहुत रूचि थी। 22 वर्ष की आयु में चिकित्सा विज्ञान की पढ़ाई करने के लिये लंदन चले गये मगर स्वास्थ्य खराब रहने की वजह से इन्होंने डॉक्टर (चिकित्सक) बनने का विचार त्याग कर कैम्ब्रिज के क्राइस्ट कॉलेज में प्रवेश लिया और वहाँ भौतिकी के एक प्रसिद्ध प्रोफेसर फादर लाफोण्ट ने बोस को भौतिक विज्ञान के अध्ययन हेतु प्रेरित किया। सन् 1885 में वे स्वदेश लौटे तथा भौतिकी के सहायक प्राध्यापक के रूप में प्रेसिडेंसी कॉलेज में पढ़ाने लगे। इस कॉलेज में वे 1915 तक रहे। उस समय भारतीय शिक्षकों को अंग्रेज शिक्षकों की तुलना में एक तिहाई वेतन दिया जाता था। इस अन्याय का जगदीश चन्द्र बोस ने विरोध किया तथा बिना वेतन के तीन वर्षों तक वहाँ पढ़ाते रहे जिसकी वजह से उनकी आर्थिक स्थिति खराब हो गई, उन पर काफी कर्जा हो गया था। इस कर्जे को चुकाने के लिये उन्हें अपनी पुश्तैनी जमीन भी बेचनी पड़ी। चौथे वर्ष जगदीश चन्द्र की जीत हुई और उन्हें अंग्रेजी शिक्षकों के समकक्ष पूरा वेतन दिया गया। बोस एक विख्यात शिक्षक थे तथा कक्षा में अध्यापन हेतु बड़े पैमाने पर वैज्ञानिक प्रदर्शनों का भरपूर उपयोग करते थे। बोस के ही कुछ छात्र जैसे सतेन्द्र नाथ बोस आगे चलकर प्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी बने।

जगदीशचन्द्र बोस हमारे देश के प्रथम प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे, जिन्हें भौतिकी, जीवविज्ञान, वनस्पति विज्ञान तथा पुरातत्व का गहन ज्ञान था। वे अग्रणी वैज्ञानिक थे जिन्होंने रेडियो तथा सूक्ष्म तरंगों की प्रकाशिकी पर कार्य किया।

वनस्पति विज्ञान में उन्होंने कई महत्वपूर्ण अनुसन्धान किये। उल्लेखनीय है कि वे ऐसे प्रथम भारतीय शोधकर्ता एवं वैज्ञानिक थे, जिन्होंने एक अमेरिकन पेटेंट प्राप्त किया। उन्हें रेडियो विज्ञान का जनक माना जाता है। वे विज्ञान कथाएं भी लिखते थे तथा उन्हें बंगाली विज्ञान कथा–साहित्य का जनक भी माना जाता है। कोलकाता में नवम्बर 1894 के एक सार्वजनिक प्रदर्शन के दौरान बोस ने एक मिलिमीटर रेन्ज माइक्रोवेव तरंग का उपयोग दूर रखे बारूद को प्रज्वलित करने तथा घंटी बजाने में किया। बोस ने एक बंगाली निबंध "अदृश्य आलोक" में लिखा था कि "अदृश्य प्रकाश आसानी से ईंट की दीवारों, भवनों आदि के भीतर जा सकती है, इसलिये तार के बिना प्रकाश के माध्यम से संदेश संचारित हो सकता है।"

बायोफिजिक्स के क्षेत्र में जगदीश चन्द्र बोस का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अलग–अलग परिस्थितियों में पादपों की कोशिकाओं में बदलाव का विश्लेषण करके वे इस नतीजे पर पहुँचे कि पौधे संवेदनशील होते हैं। वे दर्द महसूस कर सकते हैं, स्नेह अनुभव कर सकते हैं। बसु ने एक यन्त्र क्रेस्कोग्राफ का अविष्कार किया तथा इस यन्त्र से विभिन्न उत्तेजकों के प्रति पौधों की प्रतिक्रिया का अध्ययन किया।

1917 में जगदीश चन्द्र बोस को "नाइट (Knight)" की उपाधि प्रदान दी गई तथा भौतिक तथा जीव विज्ञान में किये गये अनुसंधानों के लिये 1920 में रॉयल सोसायटी, लंदन के फैलो (FRS = Fellow of Royal Society) चुन लिये गये। खास बात यह है कि बोस ने अपना पूरा शोधकार्य बिना किसी महंगे उपकरण तथा सामान्य प्रयोगशाला में किया था। वे एक उन्नत उपकरणों युक्त प्रयोगशाला बनाने का विचार कर रहे थे। "बोस इन्स्टीट्यूट (बोस विज्ञान मन्दिर) उनकी इसी सोच का परिणाम है जो विज्ञान में शोधकार्य के लिये हमारे राष्ट्र का एक प्रसिद्ध केन्द्र है।

डॉ. जगदीशचन्द्र बोस की मृत्यु दि. 23 नवम्बर 1937 को गिरिडीह (बंगाल प्रेसीडेंसी) में हुई। उनका जीवन एवं कृतित्व हमारी आज की युवा पीढ़ी के लिये एक आदर्श है। डॉ. बोस के जीवन से यह शिक्षा मिलती है कि यदि व्यक्ति में प्रतिभा व लगन हो तो वह सामान्य प्रयोगशाला एवं उपलब्ध संसाधनों से भी उच्च कोटि के अनुसंधान कर सकता है। डॉ. बोस का आदर्श व्यक्तित्व एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण युवा पीढ़ी के लिये प्रेरणा का स्रोत सदैव बना रहेगा।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. पर्ण की शिराओं में जायलम एवं फ्लोएम पाये जाते हैं।
2. जायलम का मुख्य कार्य जल को पौधे के प्रत्येक भाग तक पहुँचाना है एवं फ्लोएम का मुख्य कार्य पर्ण में बने खाद्य पदार्थ को पौधे के प्रत्येक भाग तक पहुँचाना है।
3. पर्ण की निचली अधिचर्म में रन्ध्र (Stomata) पाये जाते हैं। रन्ध्र के द्वारा गैसों का विनिमय होता है।
4. जल एवं खनिज लवणों का संवहन पौधों के विभिन्न भागों तक तने द्वारा होता है।
5. पादप कोशिका में जीवद्रव्यकुंचन पाया जाता है।
6. वाष्पोत्सर्जन–संसंजन तनाववाद सिद्धान्त के कारण जल ऊपर की ओर खिंचता है।
7. जन्तु जो भोजन करते हैं वे शरीर में विशिष्ट अंगों द्वारा सूक्ष्म रूपों में विभक्त हो जाते हैं एवं पाचक रसों की सहायता से सरल यौगिकों में परिवर्तित हो जाते हैं। इन क्रियाओं को करने हेतु विशिष्ट अंग होते हैं जिन्हें **पाचन अंग** कहते हैं
8. आमाशय भोजन को पचाता है। आमाशय के हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) भोजन को अम्लीय बनाने के साथ भोजन के साथ आये जीवाणुओं को मार डालता है।
9. हीमोग्लोबिन श्वसन वर्णक होता है जो RBC (लाल रक्त कणिकाएं) में उपस्थित होता है।
10. रूधिर वाहिकाओं की भित्ति के विरूद्ध जो दाब लगता है उसे **रक्तदाब** कहते हैं।
11. जीवित जन्तुओं में अवशोषित पोषक पदार्थ, जल व अपशिष्ट उत्पादों को शरीर में एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने की क्रिया को **परिसंचरण** कहते हैं। इससे सम्बन्धित तंत्र को **परिसंचरण तंत्र** कहते हैं।
12. नर जनन कोशिका अर्थात् शुक्राणु का निर्माण वृषण में होता है। मादा जनन कोशिका अर्थात् अण्डाणु का निर्माण अण्डाशय में होता है।
13. *स्पाइरोगाइरा, ओसिलेटोरिया* आदि तन्तुकी शैवालों में अलैंगिक जनन विखण्डन विधि द्वारा सम्पन्न होता है।
14. शकरकंद की जड़ों पर तथा आलू के कंद पर प्रसुप्त कलिकाएं पायी जाती हैं इनसे कायिक जनन द्वारा नव पादप तैयार हो जाते हैं।
15. मानव ने विभिन्न पादपों की कायिक जनन क्षमता का उपयोग करते हुए कायिक जनन की कुछ विधियाँ विकसित की जिनके द्वारा त्वरित गति से तथा कम समय में अधिकाधिक पादप तैयार किये जा सकते हैं।
16. पुष्पवृन्त के शीर्ष एवं फूले हुए भाग को **पुष्पासन** कहते हैं। पुष्पासन पर पुष्प के चारों चक्र **बाह्यदलपुंज, दलपुंज, पुमंग** तथा **जायांग** स्थित होते हैं। पुमंग एवं जायांग को जनन चक्र तथा बाह्यदलपुंज को सहायक चक्र कहते हैं।
17. उपापचयी क्रियाओं के फलस्वरूप अपशिष्ट पदार्थ बनते हैं इन्हें शरीर से बाहर निकालने की प्रक्रिया को उत्सर्जन कहते हैं।
18. पादपों में कोई विशेष उत्सर्जन अंग नहीं पाये जाते हैं क्योंकि इनमें बने अधिकांश अपशिष्ट पदार्थ पौधों के उपयोग में आ जाते हैं।
19. बिन्दु स्राव विशेष जल रंध्रों द्वारा होता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्नः –

1. पादपों में जल का संवहन होता है :
   (अ) फ्लोएम द्वारा
   (ब) जायलम द्वारा

(स) चालनी नलिका द्वारा
(द) अधिचर्म द्वारा

2. पौधों को जो जल प्राप्त होता है, वह है :
(अ) आर्द्रताग्राही जल
(ब) गुरूत्व जल
(स) बिन्दु स्राव से प्राप्त जल
(द) केशिका जल

3. रन्ध्रों द्वारा विनिमय होता है :
(अ) जलवाष्प एवं गैसों का
(ब) ऑक्सीजन एवं हाइड्रोजन का
(स) ऑक्सीजन एवं कार्बोहाइड्रेट का
(द) नाइट्रोजन एवं जलवाष्प का

4. खाद्य पदार्थों का संवहन निम्न के द्वारा होता है :
(अ) जायलम (ब) फ्लोएम
(स) वात रंध्र (द) अधिचर्म

5. श्वसन वर्णक है–
(अ) लाल रक्त कणिका
(ब) श्वेत रक्त कणिका
(स) हीमोग्लोबिन
(द) इनमें से कोई नहीं

6. सामान्यतया शरीर का प्रकुंचन दाब कितना होता है–
(अ) 120 nm (ब) 90 nm
(स) 140 nm (द) 80 nm

7. आमाशय का कार्य नहीं है–
(अ) भोजन का संग्रहण
(ब) अवशोषण
(स) पाचन
(द) वसा का पूर्ण पाचन

8. विखण्डन का प्रमुख उदाहरण है–
(अ) *स्पाइरोगायरा* (ब) *ब्रायोफिल्लम*
(स) यीस्ट (द) *अमीबा*

9. *राइजोपस* में जनन की प्रमुख विधि है–
(अ) द्वि विखण्डन (ब) मुकुलन
(स) बीजाणुजनन (द) बहु विखण्डन

10. बीजाण्ड अवस्थित होते हैं–
(अ) अण्डाषय में (ब) वर्तिका में
(स) पुंकेसर में (द) भ्रूणकोष में

11. पादपों की उपापचय क्रिया मुख्यतः आधारित है:
(अ) प्रोटीन पर (ब) वसा पर
(स) कार्बोहाइड्रेट पर (द) विटामिन पर

12. जल रंध्र पाये जाते हैं :
(अ) जड़ में (ब) तने में
(स) पत्ती में (द) फूल में

13. बिन्दु स्राव देखा जा सकता है जब :
(अ) श्वसन अधिक होता है
(ब) अधिक अवशोषण एवं कम वाष्पोत्सर्जन
(स) प्रकाश संश्लेषण अधिक होता है
(द) विसरण अधिक होता है

14. यूरिओटेलिक उत्सर्जन पाया जाता है–
(अ) अमीबा व मेंढक में
(ब) पक्षी व मछली में
(स) मछली व सर्प में
(द) मानव व मेंढक में

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्नः

1. जलीय पौधों में उत्सर्जन किस विधि द्वारा होता है?
2. द्वार कोशिकाओं का क्या कार्य है ?
3. यूरिकोटेलिक उत्सर्जन किसे कहते हैं?
4. पौधे के मुख्य दो भाग बताइये।
5. जड़ से जल पत्तियों तक कौनसे संवहन ऊतक द्वारा पहुँचता है?
6. फ्लोएम का क्या कार्य है।
7. जीवद्रव्यकुंचन को परिभाषित कीजिये।
8. श्वसन किसे कहते हैं।
9. द्वि विखण्डन क्या है ?
10. पुष्पासन किसे कहते हैं ?
11. वायुदाब विधि के प्रमुख उदाहरण बताऐं।
12. जीवों में जनन की आवश्यकता क्यों होती है?

लघूत्तरात्मक प्रश्नः

13. मूसला मूल एवं अपस्थानिक मूल में अन्तर बताइये।
14. जायलम एवं फ्लोएम ऊतक में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
15. निम्नलिखित को परिभाषित करिये।
विसरण, परासरण, जीवद्रव्य कुंचन, अन्तः शोषण
16. जड़ द्वारा सिंचित जल पत्तियों तक जिस सिद्धान्त के द्वारा पहुँचता है उसे समझाइये।
17. आमाशय के कार्यों का वर्णन कीजिए।

18. जन्तुओं में कितने प्रकार का परिसंचरण तंत्र पाया जाता है। उदाहरण द्वारा समझाइये।
19. अपचयी व उपचयी क्रियाएं किसे कहते हैं?
20. पादपों में विशेष उत्सर्जन अंग क्यों नहीं पाये जाते हैं? समझाइये।
21. मुकुलन क्या है ?
22. प्रतिवर्ती क्रिया को सउदाहरण समझाइये।

निबन्धात्मक प्रश्नः –

23. बिन्दु स्त्राव किसे कहते हैं? उदाहरण सहित समझाइये।
24. पर्ण की आन्तरिक रचना समझाइये।
25. मूल दाब को प्रयोग द्वारा समझाइये।
26. मानव के श्वसन तंत्र का सचित्र वर्णन कीजिए।
27. कलम लगाने की विधि का वर्णन करें।
28. द्विनिषेचन किसे कहते हैं ? व्याख्या कीजिये।
29. परागण पर टिप्पणी लिखें।
30. मानव जनन तंत्र को नामांकित चित्र द्वारा वर्णन कीजिये।

उत्तरमाला

1. (ब) 2. (द) 3. (अ) 4. (ब) 5. (स) 6. (अ) 7. (द)
8. (अ) 9. (स) 10. (अ) 11. (स) 12. (स) 13. (ब) 14. (द)

◆◆◆

अध्याय 9

बल और गति
(Force and Motion)

इस अध्याय में हम बल व गति का अध्ययन करेगें। बल एवं गति के अध्ययन से पूर्व विभिन्न भौतिक राशियों को किस प्रकार व्यक्त करते हैं की जानकारी करेंगे।

सामान्यतः किसी भी भौतिक राशि को उसके मात्रक एवं आंकिक मान द्वारा व्यक्त करते हैं। कुछ भौतिक राशियों को व्यक्त करने के लिए, भौतिक राशि के आंकिक मान के साथ–साथ दिशा की जानकारी भी आवश्यक है। सामान्यतः भौतिक राशियों को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है।

(i) अदिश राशियाँ (Scalar quantities)

(ii) सदिश राशियाँ (Vector quantities)

9.1 अदिश एवं सदिश राशियाँ (Scalar and vector quantities)

(क) अदिश राशियाँ– जिन भौतिक राशियों को व्यक्त करने के लिए केवल परिमाण की आवश्यकता होती है, अदिश राशियां कहलाती हैं। इन राशियों में दिशा बोध नहीं होता है। द्रव्यमान, समय, चाल, घनत्व, ऊर्जा, शक्ति आदि इसके उदाहरण है। जैसे किसी वस्तु का द्रव्यमान 5 kg है तो इसको व्यक्त करने की लिए किसी दिशा की आवश्यकता नहीं है।

(ख) सदिश राशियाँ – कई भौतिक राशियां इस प्रकार की होती हैं कि केवल परिमाण से हमें उनके बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं होती है। इसे हम निम्न उदाहरणों से समझ सकते हैं–

1. चित्र 9.1 (अ) तथा (ब) में एक छात्र द्वारा तय की गई दूरियों को दिखाया गया है। दूरी AB = 4 मीटर तथा दूरी BC = 3 मीटर हैं। इन दोनों यात्राओं में छात्र द्वारा तय की गई दूरियां 7 मीटर हैं, जबकि प्रारम्भिक स्थिति A से अंतिम स्थिति B के मध्य विस्थापन अलग–अलग है।

चित्र 9.1 (अ) सीधी रेखा में दो विस्थापन

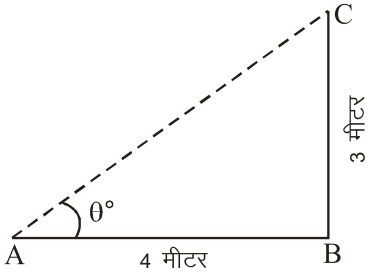

चित्र 9.1 (ब) दो लम्बवत विस्थापन

प्रथम स्थिति में विस्थापन 7 मीटर है, जिसकी दिशा AB के अनुदिश है। दूसरी स्थिति में विस्थापन AC = 5 मीटर है तथा इसकी दिशा AB से θ° पर है।

2. M द्रव्यमान की एक वस्तु पर चित्र 9.2 में बताए अनुसार दो समान बल F कार्य कर कर रहे हैं। (यहाँ तीर के निशान बल की दिशा को प्रदर्शित कर रहे हैं।)

चित्र 9.2 एक वस्तु पर बल

चित्र 9.2 (अ) को देखकर हम कह सकते है कि बल लगाने पर वस्तु स्थिर रहेगी [चित्र 9.2(अ)], जबकि चित्र 9.2 (ब) की अवस्था में बल लगाने पर वस्तु गति करेगी।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि इस प्रकार कि भौतिक राशियों जैसे बल, विस्थापन आदि को व्यक्त करने के लिए हमें परिमाण के साथ–साथ दिशा का ज्ञान होना भी आवश्यक है। इस प्रकार की राशियों को सदिश राशियां कहते हैं।

वे भौतिक राशियां, जिनकी पूर्ण जानकारी के लिये परिमाण के साथ–साथ दिशा के निर्देश भी आवश्यक हैं सदिश राशियां कहलाती हैं।

सदिश प्रदर्शन– सदिश को तीरनुमा रेखा से दर्शाते हैं। इस तीरनुमा रेखा खण्ड की लम्बाई परिमाण के समानुपातिक रहती है तथा तीर का निशान सदिश की दिशा को प्रदर्शित करता है।

उदाहरणार्थ यदि हमको पूर्व दिशा में 30 m / s के वेग को सदिश द्वारा प्रदर्शित करना है, तो हम सुविधाजनक स्केल (जैसे 10 m / s को 1 cm) लेकर उचित लम्बाई के एक रेखा खण्ड पर चित्र 9.3 में दर्शाए अनुसार तीर, जिसकी दिशा पूर्व की ओर हो बनाएंगे। इस प्रकार सदिश QP उपर्युक्त वेग को परिमाण एवं दिशा में व्यक्त करेगा।

बिन्दु Q को इस सदिश का मूल बिन्दु (पुच्छ) एवं बिन्दु P को शीर्ष कहते हैं। Q से P तक के सदिश रेखा खण्ड को हम $\overrightarrow{QP}$ द्वारा व्यक्त करते है। (यहाँ तीर का चिन्ह Q से P की ओर सदिश की दिशा में होता है)

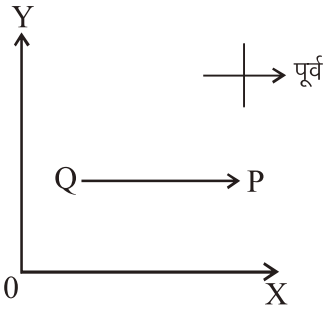

चित्र 9.3 सदिश का प्रदर्शन

सदिश संकेतन– किसी भी सदिश को लिखने के निम्न तरीके हो सकते है–

(i) पुच्छ का अक्षर पहले तथा शीर्ष का अक्षर बाद में लिखकर उसके ऊपर एक तीर लगा दिया जाता है। उदाहरणार्थ – उपर्युक्त सदिश को $\overrightarrow{QP}$ लिखेगें।

(ii) सदिश को गहरे अक्षरों द्वारा अथवा अक्षर के ऊपर एक क्षैतिज तीर लगाकर भी संकेतित किया जाता है। उदाहरणार्थ – सदिश $\overrightarrow{QP}$ को **A** या $\vec{A}$ से भी प्रदर्शित किया जा सकता है। $\left(\vec{A}=\overrightarrow{QP}\right)$ पुस्तकों में उक्त दोनों तरीकों का प्रयोग किया जाता है। परन्तु हाथ से लिखने पर अक्षर के ऊपर तीर लगा देना सुविधा जनक रहता है। सदिश राशि के परिमाण को व्यक्त करने के लिये संकेत $|\vec{A}|$ अथवा सामान्य अक्षर A का उपयोग करते है। सदिश के परिमाण को सदिश का मापांक भी कहते हैं।

सदिश $\vec{A}$ का परिमाण = $|\vec{A}|$ या A

एकांक सदिश (Unit Vector)–

किसी सदिश $\vec{A}$ का एकांक सदिश वह सदिश है जिसका परिमाण इकाई एवं दिशा सदिश $\vec{A}$ की दिशा है। सदिश $\vec{A}$ के इकाई सदिश को $\hat{A}$ द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। (नोट– $\hat{A}$ को ए केप से उच्चारण करते हैं)।

इसे हम निम्न प्रकार व्यक्त करते हैं–

$$\vec{A}=|\vec{A}|\,\hat{A}$$

अर्थात्
$$\hat{A}=\frac{\vec{A}}{|\vec{A}|}$$

$$=\frac{\textit{सदिश}}{\textit{सदिश का परिमाण}}$$

अतएवं किसी सदिश में उसके परिमाण का भाग देने पर उसकी दिशा में एकांक सदिश प्राप्त होता है।

9.2 गति (Motion)

सामान्य जीवन में हम कुछ वस्तुओं को स्थिर तो कुछ को गतिशील पाते हैं। हमारे आस पास के मकान, पेड़–पौधे आदि हमारे लिए विराम में होते है वहीं सड़क पर चलने वाली कार, चलता या दौड़ता बालक, बहता हुआ पानी, उड़ता पक्षी आदि हमें गति का अहसास करवाते हैं। कई बार हमें वस्तुओ की गति की अनुभूति प्रत्यक्ष रूप से नहीं हो पाती है, परन्तु अप्रत्यक्ष प्रमाणों से हमें उनकी गति का आभास होता है। उदाहरण के लिए वायु की गति का आभास हमें पेड़ की पत्तियों एवं टहनियों के हिलने से होता है।

किसी वस्तु, कण अथवा पिण्ड की स्थिति का समय के साथ, निरन्तर बदलना गति कहलाता है। इसी प्रकार समय के साथ स्थिति का नहीं बदलना वस्तु की विराम अवस्था को व्यक्त करता है।

एक ही वस्तु किसी व्यक्ति को गति करती हुई एवं दूसरे व्यक्ति को विराम अवस्था में प्रतीत हो सकती है, उदाहरण के लिए चलती हुई रेलगाड़ी में बैठे हुए यात्रियों को पटरी के किनारे खड़े व्यक्ति देखते हैं तो रेलगाड़ी और उसमें बैठे यात्री आगे की ओर गति करते महसूस होते हैं। वहीं चलती रेलगाड़ी में बैठे प्रत्येक यात्री को लगता है कि उसके साथी गति में नहीं है क्योंकि उनके मध्य की परस्पर दूरी में कोई परिवर्तन नहीं हो रहा है। इन प्रेक्षणों से स्पष्ट है कि स्थिति का बदलना किसी अन्य वस्तु के सापेक्ष ही हो सकता है। **अतः गति या स्थिर अवस्था सदैव ही किसी निर्देश बिन्दु जिसे मूल बिन्दु कहते हैं के सापेक्ष मापी जाती है।**

निर्देश बिन्दु :

किसी वस्तु की स्थिति की पूर्ण जानकारी के लिए उस वस्तु की मूल बिन्दु (निर्देश बिन्दु) से दूरी तथा वस्तु और मूल बिन्दु को मिलाने वाली रेखा द्वारा निर्देश अक्ष के साथ बना कोण , जो वस्तु की दिशा कहलाता है, की जानकारी आवश्यक है।

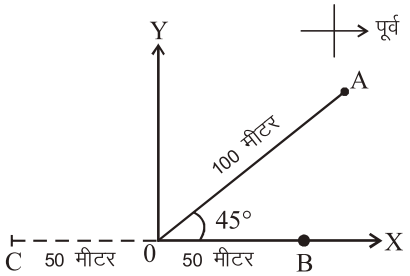

चित्र 9.4 निर्देश बिन्दू के सापेक्ष स्थिति

चित्र 9.4 में वस्तु A मूल बिन्दु O से 100 मीटर पर स्थित है। OA रेखा OX अक्ष से 45° कोण पर है तथा OX पूर्व दिशा में है। यहां रेखा OA पूर्व से उत्तर की और 45° कोण बनाती है, अतः वस्तु A, मूल बिन्दू से 100 मीटर दूर है तथा पूर्व से उत्तर की ओर 45° के कोण पर है। इसी प्रकार वस्तु B मूल बिन्दु से 50 मीटर पूर्व की ओर स्थित है। वस्तु C मूल बिन्दु O से 50 मीटर पश्चिम की ओर स्थित है। अतः व्यापक रूप से गति को निम्नानुसार परिभाषित करते हैं–

"निर्देश बिन्दु के सापेक्ष वस्तु की स्थिति में समय के साथ अनवरत परिवर्तन को वस्तु की गति कहते हैं" वस्तु की गति कई प्रकार की हो सकती है। कुछ मुख्य गतियाँ हैः–

(i) **सरल रेखीय गतिः–** यदि वस्तु एक सरल रेखा के अनुदिश गति करती है तो इसे सरल रेखीय गति कहते है। उदाहरण– किसी लम्बे पाइप में गेंद की गति

(ii) **वृत्ताकार गतिः–** जब कोई कण अथवा वस्तु वृत्ताकार पथ पर गतिशील होता है तो इसे वृत्ताकार अथवा वर्तुल गति कहते हैं। उदाहरण–एक हल्की रस्सी से बंधे पत्थर को क्षैतिज दिशा में घुमाने पर पत्थर की गति।

(iii) **दोलनी गतिः–** किसी माध्य स्थिति के इर्द गिर्द नियत समय अन्तराल में दोहराई जाने वाली गति को दोलनी गति कहते हैं। उदाहरण– पेण्डूलम वाली घडी में पेण्डूलम की गति।

पिण्ड अथवा कण :

प्रायः हम वस्तुओं की गति का अध्ययन करते समय उन्हें पिण्ड अथवा कण मान लेते हैं। यदि वस्तु गति करते समय टुकडों में नहीं टूटे तो वह प्रभावी रूप से एक इकाई की तरह देखी जा सकती है, जिसे पिण्ड नाम दिया जाता है। पिण्ड का सारा द्रव्यमान एक बिन्दु पर केन्द्रित माना जाता है। जिसे द्रव्यमान केन्द्र कहते हैं।

जब वस्तु का आकार उसके द्वारा तय की गई दूरी की तुलना में नगण्य होता है, तो उसे कण मानते हैं। जैसे किसी मैदान में गेंद द्वारा पार की गई दूरी की तुलना में गेंद के आकार को कण मानते हैं।

9.3 दूरी तथा विस्थापन (Distance and Displacement)

चित्र 9.1 (अ) एवं (ब) में AB एवं BC दूरियां क्रमशः 3.0 मीटर और 4.0 मीटर है। परन्तु AC दूरियां अलग–अलग है। **वस्तु की प्रारम्भिक एवं अन्तिम स्थिति के बीच की सरल रेखीय दूरी को वस्तु का विस्थापन कहते हैं।** यह सदिश राशि है। वहीं प्रारंभिक स्थिति से अंतिम स्थिति तक पहुंचने में तय की गई कुल दूरी अदिश राशि है। विस्थापन में हम उस दिशा को भी निर्दिष्ट करते हैं, जिस दिशा में दूरी को मापना है। दूरी एवं विस्थापन दोनों लम्बाई के माप से सम्बन्धित हैं। अतः इनको लम्बाई के मात्रकों में व्यक्त किया जाता है। दोनों का अन्तर्राष्ट्रीय मात्रक (एस.आई.) मीटर (m) है। यदि विस्थापन की माप को उसकी दिशा को छोड़कर व्यक्त करें तो इसे विस्थापन का परिमाण कहा जाता है।

चित्र 9.1 (अ) में तय की गई दूरी एवं विस्थापन का परिमाण बराबर है। जो 7 मीटर है। चित्र 9.1 (ब) में दूरी AB + BC = 7.0 मीटर है, जबकि विस्थापन AC = 5 मीटर AB से $\theta°$ के कोण पर है।

9.4 चाल (Speed)

गतिशील वस्तु द्वारा एकांक समय में तय की गई दूरी को वस्तु की चाल कहते हैं। प्रायः वस्तु असमान गति में होती है, अतः ऐसी स्थिति में हम वस्तु की गति को औसत चाल से व्यक्त करते हैं। किसी भी वस्तु की चाल ज्ञात करने के लिये वस्तु द्वारा किसी समय अन्तराल में तय की गई दूरी में उस समय अन्तराल का भाग देते हैं।

$$\text{चाल} = \frac{\textit{वस्तु द्वारा तय की गई दू}}{\textit{दूरी तय करने में लगा सम}}$$

$$v_{av} = \frac{d}{t}$$

यहाँ t समय में वस्तु d दूरी तय कर रही है।

चाल अदिश राशि है। इसका एस.आई. पद्धति में मात्रक मीटर/सैकण्ड (m/s) है। यात्रा हेतु प्रयुक्त वाहनों की चाल को प्रायः किलोमीटर/घण्टा (km/h) में व्यक्त करते है।

उदाहरण 9.1 : एक छात्र अपने वाहन से 100 किलोमीटर दूरी 2 घण्टे मे तय करता है। छात्र के वाहन की औसत चाल ज्ञात करिये।

हल – $\text{चाल} = \frac{\textit{दूरी}}{\textit{समय}}$

$$= \frac{100\,\text{km}}{2\,\text{h}}$$

$$= 50\ \text{km/h}$$

9.5 वेग (Velocity)

किसी वस्तु की चाल के साथ–साथ यह जानना भी आवश्यक है कि वस्तु किस दिशा मे गतिमान है। किसी **निश्चित दिशा में किसी वस्तु द्वारा एकांक समय में तय कि गई दूरी को उसका वेग कहते हैं।** वेग सदिश राशि है। किसी वस्तु का वेग ज्ञात करने के लिए वस्तु द्वारा तय किए गये विस्थापन में इसमें लगे समय का भाग देते हैं। यदि विस्थापन को s से, समय t से तथा वेग को v से प्रकट करें तो

$$\text{वेग} = \frac{\textit{दूरी (निचित दिा में)}}{\textit{समय}}$$

$$= \frac{\textit{विस्थापन}}{\textit{समय}}$$

$$\vec{v} = \frac{\vec{s}}{t} \qquad \ldots (9.1)$$

समय t सदैव धनात्मक होता है, अतः वेग $\vec{v}$ की दिशा वही होती है जो विस्थापन $\vec{s}$ की दिशा है। यदि एक विमीय गति में मूल बिन्दु से दाहिनी ओर की दूरी को धनात्मक तथा बांयी ओर की दूरी को ऋणात्मक मान ले तो विस्थापन के धनात्मक होने से वेग भी धनात्मक होगा तथा विस्थापन के ऋणात्मक होने से वेग भी ऋणात्मक होगा। वेग का एस. आई. मात्रक मीटर/सैकण्ड (m / s) है।

समान वेग से कोई वस्तु 't' समय में निश्चित दिशा मे s दूरी तय करती है तो वस्तु का वेग

$$\vec{v} = \frac{\vec{s}}{t}$$

या $$\vec{s} = \vec{v} \times t$$

केवल मापांक लेने पर

$$s = v \times t \qquad \ldots (9.2)$$

उदाहरण 9.2 : एक बस पूर्व दिशा में गतिमान है। यह 4 घण्टे में 200 किलोमीटर चलती है, बस का वेग ज्ञात कीजिए?

हल– $$\text{वेग} = \frac{\text{विस्थापन}}{\text{समय}}$$

यहां दूरी 200 किलोमीटर (पूर्व दिशा में), समय $= 4\,\text{h}$

$$= \frac{200\,\text{km}}{4\,\text{h}}$$

$$= 50\ \text{km / h (पूर्व में)}$$

अतः बस का वेग 50 km / h पूर्व की ओर है।

9.6 चाल एवं वेग में अन्तर (Difference between Speed and Velocity)

चाल किसी भी वस्तु की गति के परिमाण का बोध कराती है उदाहरर्णाथ यदि दो स्कूटर 40 km / h की रफ्तार से भिन्न–भिन्न दिशाओं में जा रहे हैं तो भी उनकी चाल समान होगी परन्तु वेग भिन्न–भिन्न होगा। चाल एक अदिश राशि है जबकि वेग सदिश राशि।

9.7 एक समान गति (Uniform motion)

यदि कोई वस्तु समान समय अन्तराल में समान दूरी तय करती है तो वस्तु की गति को एक समान गति कहते हैं। उदाहरण के लिए हम एक कार में यात्रा कर रहे हैं तथा हमारे हाथ पर एक घड़ी बंधी है जिसमें हम समय को सेकण्ड तक की शुद्धता तक माप सकते हैं। सडक पर लगे किलोमीटर पत्थरों में से किसी एक को मूल बिन्दु मानकर हम प्रत्येक आने वाले किलोमीटर पत्थर के क्षण को अपनी घड़ी से मापते हैं।

माना हमारे प्रेक्षण निम्न प्रकार प्राप्त होते हैं

किलोमीटर पत्थर की संख्या (दूरी)	समय (सेकण्ड मे)
मूल किलोमीटर पत्थर	0
1 किलोमीटर पत्थर	100 सेकण्ड
2 किलोमीटर पत्थर	200 सेकण्ड
3 किलोमीटर पत्थर	300 सेकण्ड
4 किलोमीटर पत्थर	400 सेकण्ड
5 किलोमीटर पत्थर	500 सेकण्ड

इन प्रेक्षणों की सहायता से कार द्वारा तय की गई दूरी और समय में ग्राफ खीचने पर ग्राफ चित्र 9.5 में दर्शाए अनुसार एक सीधी रेखा प्राप्त होती है। यह सीधी रेखा, एक समान गति को प्रदर्शित करती है। दूरी समय आलेख का ढ़ाल वस्तु की चाल को व्यक्त करता है।

किसी यात्रा का समय–स्थिति वक्र हमको उस यात्रा के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी देता है। वक्र का ढाल हमको चाल के कम या अधिक होने का आभास कराता है। चित्र 9.6 में एक अन्य कार के यात्रा वक्र को बताया गया है। वक्र से स्पष्ट है कि आरंभ से t_1 समय तक कार एक समान चाल से चल कर दूरी x के स्थान पर पहुंचती है।

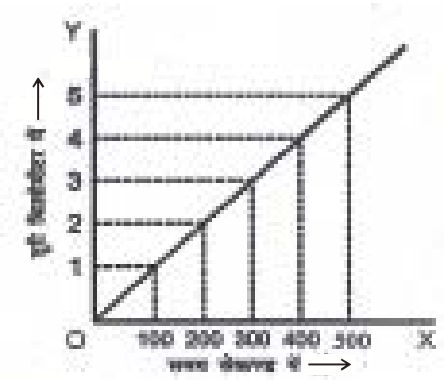

चित्र 9.5 एक समान गति में स्थिति–समय वक्र

t_1 से t_2 समय तक कार उसी स्थिति x पर स्थिर रहती है अर्थात् इस समय अन्तराल में कार रूकी हुई हैं। यहां रेखा AB का ढाल शून्य है अतः चाल शून्य है। अंत में t_2 से t_3 समय में कार दूरी x से लौटकर पुनः उसी स्थान पर आ जाती है, जहां से वह प्रारम्भ में चलती थी। यात्रा के इस भाग में चाल एक समान रहती है। परन्तु वक्र BC का ढाल OA से अधिक है, जिसका अर्थ यह है कि लौटते समय कार की चाल, जाते समय की चाल से अधिक है।

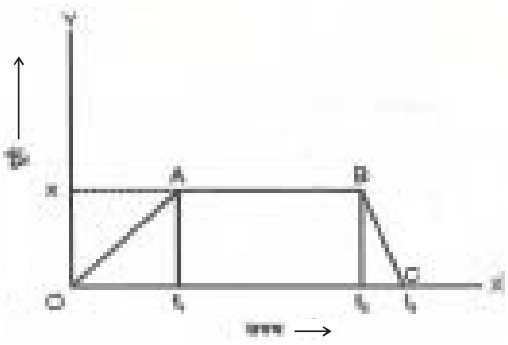

चित्र 9.6 असमान वेग का स्थिति–समय वक्र

9.8 असमान गति तथा त्वरण (Non Uniform Motion and Acceleration)

हम जानते हैं कि किसी गतिशील कार, स्कूटर, साईकिल का वेग यात्रा के समय समान नहीं रहता है। प्रायः वाहन असमान वेग से चलते हैं। रेलगाड़ी से यात्रा करने का हम सभी को अनुभव है, दो रेलवे स्टेशनों के मध्य रेलगाड़ी का वेग समान नहीं रहता है। रेलवे स्टेशन से प्रारंभ होने पर रेलगाड़ी का वेग शून्य से बढ़ता है और दूसरे स्टेशन पहुंचने पर इसका वेग घटते हुए शून्य हो जाता है।

प्रति एक सेकण्ड में वेग के परिवर्तन को त्वरण (acceleration) कहते हैं। इसे प्रायः a प्रतीक से व्यक्त करते हैं। अतः **किसी वस्तु के वेग में परिवर्तन की दर को त्वरण कहते हैं।**

यदि किसी वस्तु का प्रारम्भिक वेग u है तथा t समय पश्चात वस्तु, का वेग v हो जाता है तो वस्तु का त्वरण होगा–

$$\text{त्वरण} = \frac{\textit{वेग में परिवर्तन}}{\textit{परिवर्तन में लगा सम}}$$

$$\vec{a} = \frac{\vec{v} - \vec{u}}{t} \qquad \ldots (9.3)$$

एक समान त्वरण की गति में किसी क्षण त्वरण व औसत त्वरण का मान समान होता है।

वेग में वृद्धि की अवस्था त्वरण धनात्मक तथा वेग में कमी की अवस्था में त्वरण ऋणात्मक होता है। सरल रेखीय गति में त्वरण की दिशा या तो वेग की दिशा में होगी या उसके विपरीत दिशा में होगी। ऋणात्मक त्वरण को मंदन भी कहते हैं। उपरोक्त समीकरण 9.3 से स्पष्ट हैं कि जब कोई वस्तु एक समान वेग से गतिमान है तो उस वस्तु का त्वरण शून्य होता है। अर्थात् $v = u$ हो तो $a = 0$

मात्रक – त्वरण का मात्रक वेग के मात्रक में समय के मात्रक का भाग देकर प्राप्त करते है।

$$\text{त्वरण का मात्रक} = \frac{\textit{वेग का मात्रक}}{\textit{समय का मात्रक}}$$

$$= \frac{\text{m/s}}{\text{s}}$$

$$= \text{m/s}^2$$

त्वरण का एस. आई. मात्रक मीटर/सेकण्ड^2 (m / s^2) है।

9.9 गति का ग्राफीय निरूपण (Graphical Representation of Motion)

गति का अध्ययन करने के लिये रेखा ग्राफ का उपयोग करते हैं। रेखा ग्राफ का उपयोग दो भौतिक राशियों की परस्पर निर्भरता को प्रदर्शित करने के लिये किया जाता है। उदाहरण के लिये गतिमय वस्तु के वेग, त्वरण, दूरी आदि किसी भी भौतिक राशि की समय पर निर्भरता प्रदर्शित करने के लिए रेखा ग्राफ का उपयोग कर सकते है।

वेग–समय ग्राफ (Velocity- time graph)

(i) वस्तु समान वेग से गतिशील है–एक समान वेग v से गति करने वाली वस्तु (साईकिल, स्कूटर, रेलगाड़ी, बस

आदि) का वेग–समय ग्राफ चित्र 9.7 में बताया गया है। चूंकि समय के साथ वेग नियत बना रहता है अतः ग्राफ में वक्र x–अक्ष के समान्तर सरल रेखा के रूप में प्राप्त होता हैं।

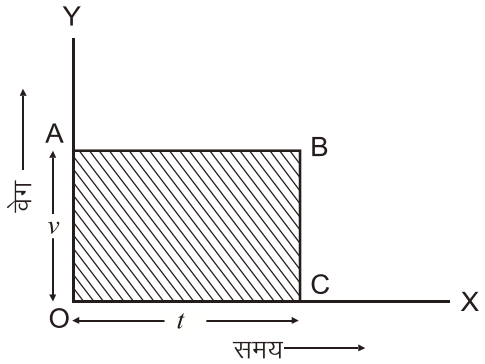

चित्र 9.7 वेग–समय वक्र

नियत वेग v से चलने वाली वस्तु t समय में s दूरी तय करती है तो कण द्वारा तय की गई दूरी सूत्र 9.2 से प्राप्त होती है।

$$s = v \times t$$

चित्र 9.7 में OX अक्ष पर OC समय t को तथा OA अक्ष पर दूरी CA वेग v को प्रदर्शित कर रहा है। अतः आयत OABC का क्षेत्रफल

$$= v \times t$$

अर्थात वेग समय ग्राफ पर t समय में तय की गई दूरी का मान क्षेत्रफल ABCD कण द्वारा तय की दूरी के बराबर होता है। अतः वेग– समय ग्राफ में वक्र तथा OX अक्ष के बीच का क्षेत्रफल, समय t में वस्तु द्वारा तय की गई दूरी को बताता है।

(ii) वस्तु एक समान त्वरण से गतिशील है– एक समान त्वरण से गति कर रही वस्तु का वेग–समय ग्राफ को चित्र 9.8 में बताया गया है। इस वेग– समय ग्राफ से एक समान त्वरण से गतिशील वस्तु के गति समीकरण भी प्राप्त कर सकते है।

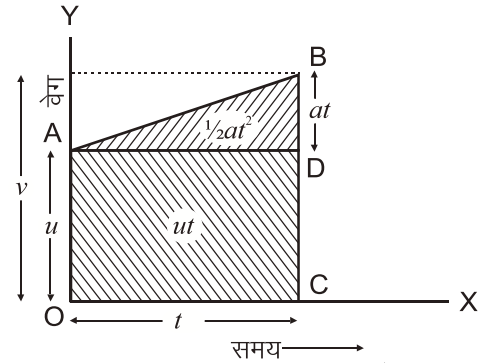

चित्र 9.8 एक समान त्वरण गति का वेग–समय वक्र

इस ग्राफ में प्रारम्भ में वस्तु का वेग u है जो t समय पर बढ़कर v हो जाता है। यदि वस्तु समान वेग u से चल रही होती तो इसके द्वारा t समय में तय की गई दूरी ग्राफ के अन्तर्गत क्षेत्र AOCD के क्षेत्रफल के बराबर होती है। यहां वस्तु त्वरित गति से गतिशील होने के कारण वेग बदल रहा है। इसके द्वारा t समय अन्तराल में तय की गई दूरी s ग्राफ AOCDB के क्षेत्रफल के बराबर होगी। आकृति AOCDB समलम्ब चतुर्भुज है।

अर्थात दूरी s = AOCDB का क्षेत्रफल

= आयत AOCD का क्षेत्रफल

+ ΔADB का क्षेत्रफल

$$= AO \times OC + \frac{1}{2} AD \times BD$$

यहाँ OC तथा AD समान्तर है, जो u के बराबर है।

तथा $BD = BC - CD = (v - u)$

अतः दूरी $s = ut + \frac{1}{2} t(v - u)$ . . . (9.4)

यदि वस्तु का एक समान त्वरण a है तो

त्वरण $a = \frac{v - u}{t}$

$\therefore$ $v - u = at$

या $v = u + at$ . . . (9.5)

समी. 9.5 से $(v - u)$ का मान समी. 9.4 में रखने पर

$$s = ut + \frac{1}{2} at^2 \quad \ldots (9.6)$$

समीकरण 9.6 एक समान त्वरण से गति करती हुई वस्तु द्वारा किसी दिये गये समय (t) में तय की गई दूरी ज्ञात करने के लिये सम्बन्ध को बताता है।

समीकरण 9.5 से $t = \frac{v - u}{a}$ को समीकरण 9.6 में रखने पर

$$s = u\left(\frac{v - u}{a}\right) + \frac{1}{2} a \left(\frac{v - u}{a}\right)^2$$

इसको सरल करने पर

$$s = \frac{uv - u^2}{a} + \frac{v^2 + u^2 - 2uv}{2a}$$

या $2as = v^2 - u^2$

या $v^2 - u^2 = 2a$

$$v^2 = u^2 + 2as \qquad \ldots (9.7)$$

समीकरण 9.5, 9.6 एवं समीकरण 9.7 को एक समान त्वरण गति के गति समीकरण कहते हैं।

(iii) असमान त्वरित गति की स्थिति में वेग समय के ग्राफों को चित्र 9.8 (अ) एवं (ब) में दिखाया गया है।

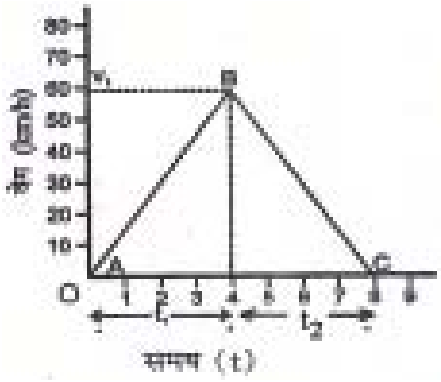

चित्र (अ)

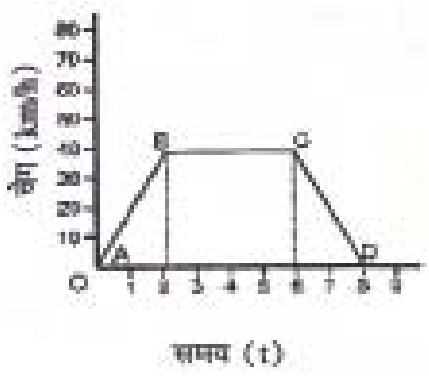

चित्र (ब)

चित्र 9.9 असमान त्वरित गति

चित्र 9.9 (अ) में t_1 समय में वेग शून्य से बढ़कर v_1 हो जाता है। A से B तक वस्तु धनात्मक त्वरण से गतिशील है, जबकि B से C तक वस्तु में ऋणात्मक त्वरण है।

चित्र 9.9 (ब) में वस्तु प्रथम 2 सेकण्ड तक धनात्मक त्वरण से गतिशील है 2 से 6 सेकण्ड के मध्य तक वस्तु का वेग स्थिर है अर्थात् त्वरण शून्य है। 6 से 8 सेकण्ड के मध्य त्वरण ऋणात्मक है एवं 8 सेकण्ड पश्चात, वेग शून्य हो जाता है।

उदाहरण 9.4 विराम अवस्था से चलकर कोई रेलगाड़ी 10 मिनट में 72 km / h का वेग प्राप्त कर लेती है। रेलगाड़ी का त्वरण एक समान है तो (i) रेलगाड़ी का त्वरण, (ii) रेलगाड़ी द्वारा इस वेग तक पहुंचने में तय की गई दूरी ज्ञात कीजिए।

हल : दिया है $u = 0,\ v = 72\,\text{km/h}$

$$v = 72\frac{\text{km}}{\text{h}}$$

$$= \frac{72 \times 1000\text{m}}{60 \times 60\text{s}}$$

$$= 20\ \text{m / s.}$$

तथा $t = 10\,\text{min}$

$$= 600\ \text{s}$$

रेलगाड़ी का त्वरण a है तो $a = \dfrac{v-u}{t}$

$$= \frac{20-0}{600}$$

$$= \frac{1}{30}\text{m/s}^2$$

दूरी ज्ञात करने के लिए हम सूत्र $v^2 = u^2 + 2as$ का उपयोग करते है

$$2as = v^2 - u^2$$

या $$s = \frac{v^2 - u^2}{2a}$$

$$= \frac{(20)^2 - 0}{2 \times \frac{1}{30}}$$

$$= \frac{(20)^2 \times 30}{2}$$

$$= \frac{20 \times 20 \times 30}{2}$$

$$= 6000\ \text{m}$$

$$= 6.0\ \text{km}$$

उदाहरण 9.5 एक वस्तु का प्रारम्भिक वेग 4 m / s है। यह वस्तु 2 m / s^2 के त्वरण से गतिशील है। 5 s पश्चात वस्तु का वेग तथा उसके द्वारा तय की गई दूरी ज्ञात कीजिये।

हलः यहां $u = 4\,\text{m/s},\ t = 5\,\text{s}$

$$a = 2\,\text{m/s}^2$$

$$v = u + at$$

$$v = 4 + 2 \times 5$$

$$= 14\,\text{m/s}$$

दूरी $$s = ut + \frac{1}{2}at^2$$

$$= 4 \times 5 + \frac{1}{2} \times 2(5)^2$$

$$\therefore \quad s = 20 + 25 = 45\,\text{m}$$

9.10 बल (Force)

पिछले अनुच्छेद में हमने वस्तु की गति के बारे में अध्ययन किया। सामान्य जीवन में हम देखते हैं कि वस्तुओं को विरामावस्था से गतिशील करने अथवा गतिशील से विरामावस्था में लाने के लिए कुछ प्रयास करने होते हैं। जैसे कमरे में रखी मेज को विराम से गति में लाने के लिए हमें उसेधक्का लागना पड़ता है या चलती हुई गाड़ी को रोकने के लिए ब्रेक लगाया जाना। इस प्रकार वस्तु की विराम अवस्था अथवा गति की अवस्था में परिवर्तन लाने अथवा परिवर्तन लाने का प्रयास करने वाली भौतिक राशि ही बल है। यह आवश्यक नही कि बल लगाने पर वस्तु की गति की अवस्था में बदलाव हो जैसे दीवार पर हाथ से बल लगाने पर दीवार विरामावस्था में ही रहती है।

बल वह भौतिक राशि है जो वस्तु की गत्यावस्था अथवा विराम अवस्था में, परिवर्तन लाता है या लाने का प्रयास करता है। बल एक सदिश राशि है।

किसी वस्तु पर लग रहे बल के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिये हमको निम्नलिखित तीन बातों का ज्ञान होना आवश्यक है।

(i) बल का क्रिया बिन्दु अर्थात वह बिन्दु जिस पर बल कार्य कर रहा है।

(ii) बल का परिमाण

(iii) बल के कार्य करने की दिशा

अतः बल एक सदिश राशि है जिसमें परिमाण के साथ–साथ दिशा भी होती है।

9.11 न्यूटन की गति के नियम (Newton's Laws of Motion)

वस्तुओं की गति को नियंत्रित करने वाले नियमों को सबसे पहले सर आइजक न्यूटन ने स्थापित किये थे। इन नियमों से हमें बल की यथार्थ परिभाषा मिलती है। इनसे आरोपित बल एवं वस्तु की गति की अवस्था के बीच मात्रात्मक संबंध प्राप्त होता है। इस सम्बन्ध में वैज्ञानिक गैलीलियो ने सत्रहवीं शताब्दी में कुछ प्रयोग किये थे जिससे बाद में न्यूटन के नियमों की आधारशिला बनी। गैलीलियों ने अपने प्रयोगों के आधार पर बताया कि यदि कोई वस्तु सरल रेखीय गति में है तो वह उस सरल रेखा में तथा उसी वेग से निरन्तर गतिमय बनी रहेगी, बशर्ते उस पर किसी भी प्रकार का कोई बाह्य बल कार्य नहीं कर रहा हो। यह अन्तिम शर्त अत्यधिक महत्वपूर्ण तथा आवश्यक है। उदाहरणार्थ – जब हम किसी गेंद को फर्श पर लुढ़काते है तो वह कुछ दूर जाकर रुक जाती है। पृथ्वी के ऊपर की ओर फेंके गये पिण्ड का वेग जैसे–जैसे पिण्ड ऊपर की ओर उठता जाता है, वैसे–वैसे कम होता जाता है तथा अन्त में शून्य हो जाता है, तो पिण्ड पुनः पृथ्वी पर ही गिर पड़ता है। इन उदाहरणों में गति करने वाले पिण्ड पर कुछ बाहरी बल कार्य करते हैं, जिनके फलस्वरूप इनकी गतियों में परिवर्तन आ जाता है। पहले उदाहरण में गेंद तथा फर्श के बीच कार्य करने वाला घषर्ण बल गेंद की गति में बाधा उत्पन्न करता है, जिससे गति मन्द होकर समाप्त हो जाती है। दूसरे उदाहरण में पृथ्वी का गुरुत्वीय बल गति में बाधा डालता है। यदि पिण्ड पर से किसी प्रकार हम इन अवरोधक बलों को हटा सकें तो पिण्ड एक बार गति में आने के पश्चात, सदैव उसी वेग से चलता रहेगा।

9.12 न्यूटन की गति का प्रथम नियम (Newton's First law of motion)

इस नियम के अनुसार **यदि कोई वस्तु स्थिर अवस्था में है तो वह स्थिर अवस्था में ही बनी रहती है या कोई वस्तु किसी निश्चित वेग से एक दिशा में गति कर रही है तो वह उसी वेग से उसी दिशा में गति करती ही रहती है जब तक की उस पर कोई बाह्य बल कार्य नहीं करता है।** किसी भी वस्तु की विराम अथवा गति की अवस्था में परिवर्तन का वस्तु द्वारा विरोध किया जाता है। वस्तु के इस गुण को जड़त्व कहते हैं। वस्तु गति की जिस स्थिति में है उसी स्थिति में बनी रहती है जब तक कि उस पर कोई बाह्य बल कार्य नहीं करता। अतएव वस्तु की स्थिर अवस्था को परिवर्तित करनी हो या गतिमान वस्तु की गति की दिशा बदलनी हो, दोनों ही परिस्थितियों में बल लगाना पड़ता है।

इसी कारण **न्यूटन के प्रथम नियम को जड़त्व का नियम भी कहते है।** गति के इस नियम को हम दो भागों में विभाजित कर सकते है।

1. स्थिर अवस्था के जड़त्व का नियम (Law of Inertia of Rest)

इस नियम के अनुसार यदि कोई वस्तु स्थिर अवस्था में है तो स्थिर अवस्था में ही बनी रहती है जब तक कि उस पर कोई बाह्य बल कार्य नहीं करता है।

स्थिर अवस्था के जड़त्व के नियमों के उदाहरण – इस नियम के अनेक उदाहरण हमें दैनिक जीवन में मिलते है, उनमें कुछ का वर्णन हम यहां करेंगे। जड़त्व के इस उदाहरण के लिये हम कुछ क्रिया कलाप करेंगे।

गतिविधि 9.1 : कांच का एक खाली गिलास लीजिए उसके खुले मुंह पर एक मोटा चिकना गत्ते का टुकड़ा रखकर उस पर एक पांच रूपया का सिक्का रखिये। अब चित्र 9.10 के अनुसार कार्ड को अपनी अँगुलियों से तेजी से धक्का दीजिए। आप देखेंगे की गत्ता तो आगे खिसक जाता है किन्तु सिक्का गिलास में गिर जाता है।

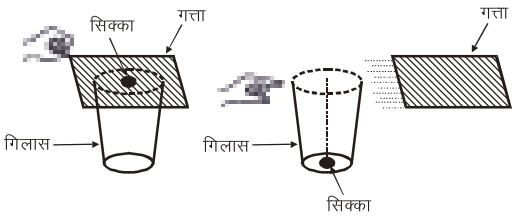

चित्र 9.10

सिक्का गत्ते के साथ ही क्यों नहीं चला जाता? इसलिए कि सिक्के का जड़त्व उसे विराम अवस्था में ही रखता है, जबकि गत्ता उस पर झटके से लगाये बल के कारण गति में आ जाता है।

गतिविधि 9.2 : एक ही प्रकार के कुछ सिक्कों (जैसे एक रुपये के सिक्को को) एक के ऊपर एक रखकर 8–10 सिक्को की एक ढेरी बनाइये। एक अन्य सिक्के को अपनी अंगुलियों से तीव्रता से झटका देकर ढेरी के सबसे नीचे वाले सिक्के पर टकराइये। जब सिक्का ढेरी से बाहर निकलता है सिक्कों की ढेरी से केवल नीचे वाला सिक्का ही बाहर निकलता है जब कोई अन्य सिक्का उस पर तीव्र गति से टकराता है और शेष ढेरी उसी प्रकार बनी रहती है क्योंकि शेष सिक्कों का जड़त्व उन्हें गति में आने से रोकता है।

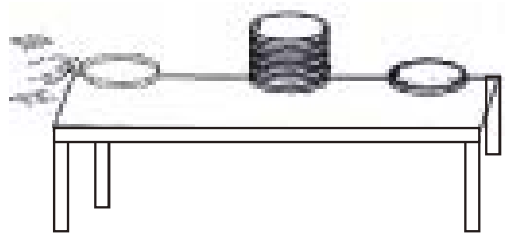

चित्र 9.11

दैनिक जीवन में जड़त्व पर आधारित कुछ घटनाएं इस प्रकार हैं–

(i) स्थिर कार या बस को अचानक तेज चला देने पर उसमें बैठे यात्री को पीछे की ओर धक्का अनुभव होने का कारण यात्री का स्थिर अवस्था जड़त्व है।

(ii) कम्बल/गर्द लगे दरियों को लटकाकर जब डंडे से प्रहार किया जाता है तो धूल के कण पृथक हो जाने का भी यही कारण है।

(iii) घोड़े पर सवार बैठा है तथा घोड़ा अचानक दौड़ना आरंभ कर दे तो प्रायः सवार पीछे की ओर गिर पड़ता है। इसका कारण भी स्थिर अवस्था का जड़त्व ही है।

(iv) फल लगे पेड़ की डाल को जब हिलाते हैं तो उससे फल गिरने का भी कारण स्थिर अवस्था का जड़त्व है।

2. गति अवस्था के जड़त्व का नियम (Law of Inertia of Motion)

इस नियम के अनुसार यदि कोई वस्तु गति कर रही है तो वह समान वेग से सीधी रेखा में गति करती ही रहेगी जब तक कि उस पर कोई बाह्य बल कार्य नहीं करता है।

गति अवस्था में जड़त्व के उदाहरणः

(i) लम्बी कूद देखने का आपको अवसर मिला होगा। लम्बी कूद में खिलाड़ी कूदने से पहले तेज रफ्तार से दौड़ता हुआ आता है। कूदते समय जड़त्व के कारण उसके शरीर की सामने वाली गति बनी रहती है, अतः वह अधिक दूरी तक कूदने में सफल होता है।

(ii) तेज रफ्तार से चलती हुई बस को ब्रेक लगाकर एकाएक रोका जाता है तो बस में बैठे यात्री आगे की ओर झुक जाते हैं। इसका कारण गति अवस्था का जड़त्व है। जब बस गतिशील थी तब यात्री का पूरा शरीर बस के वेग से गतिमान था। ब्रेक लगाने पर यात्री के शरीर का निचला भाग जो बस के सम्पर्क में था बस के साथ स्थिर हो जाता है, परन्तु शरीर का ऊपरी भाग जो गतिशील अवस्था में था, वह गतिशील अवस्था में बना रहता है। अतः ब्रेक लगाने पर बस में बैठा यात्री आगे की ओर झुक जाता है। वायुयान एवं वाहनों में जहां वेग में एकाएक परिवर्तन होने की संभावना होती है। यात्री सीट बेल्ट लगाते हैं।

(iii) जब कोई व्यक्ति चलती हुई गाड़ी (बस/रेलगाड़ी) से कूदता है तब मुंह के बल आगे की ओर गिर जाता है क्योंकि जब व्यक्ति गाड़ी में था तब उसका पूरा शरीर भी गाड़ी के वेग से गतिमान था। जब वह कूदता है तब उसके पांव जमीन को स्पर्श करते ही स्थिर हो जाते हैं, पर

ऊपर का शरीर गाड़ी के वेग से गतिमान रहता है। फलस्वरूप व्यक्ति मुंह के बल आगे की ओर गिर जाता है। इसीलिए चलती गाड़ी से कूदते समय उसकी गति की दिशा में कुछ दूरी तक साथ–साथ दौड़ना चाहिए। जिससे उसका सारा शरीर गाड़ी की दिशा में कुछ देर तक गतिमान बना रहे। तत्पश्चात थोड़ी देर में वह अपने आप को संतुलित करके सुगमता से रुक सकता है। उचित यही है कि गाड़ी के रुकने पर ही उतरें।

जड़त्व तथा द्रव्यमान

सभी वस्तुओं का जड़त्व बराबर नहीं होता है। हमारा अनुभव है कि लोहे व रबड़ की समान त्रिज्या (समान आकार) की गेदों पर बल लगाकर जब उन्हें फेंकते हैं तो लोहे की गेंद के स्थान पर रबड़ की गेंद को फेंकना अधिक आसान होता है। इसी प्रकार पुस्तकों से भरे बैग की अपेक्षा खाली बैग को उठाना आसान होता है। अर्थात सभी वस्तुएं अपनी गति की अवस्था में परिवर्तन का समान रूप से प्रतिरोध नहीं करती हैं। वस्तुओं की अवस्था में परिवर्तन का प्रतिरोध वस्तु के द्रव्यमान पर निर्भर करता है।

वस्तु का द्रव्यमान जितना अधिक होगा, उतना अधिक उसका जड़त्व भी होगा। अतः किसी वस्तु का द्रव्यमान उसके जड़त्व की माप होती है।

9.13 न्यूटन की गति का दूसरा नियम (Newton's Second law of Motion)

संवेग (Momentum)

सामान्य वेग से गतिशील क्रिकेट की गेंद को क्षेत्ररक्षक आसानी से पकड लेता है, वहीं गेंद से बहुत कम द्रव्यमान की गोली जब बंदूक से दागी जाती है तो किसी व्यक्ति द्वारा गोली को रोके जाने का प्रयास उसके लिए घातक हो जाता है। अतः वस्तु के द्रव्यमान व उसके वेग के गुणनफल से प्राप्त राशि की विशेष सार्थकता है। न्यूटन ने अपने द्वितीय नियम के कथन से संवेग की धारणा को प्रस्तुत किया।

गति करती हुई किसी वस्तु का संवेग उसके द्रव्यमान एवं वेग के गुणनफल से परिभाषित किया जाता है। यदि किसी गतिशील वस्तु के द्रव्यमान को m तथा वेग को $\vec{v}$ से व्यक्त करे तो वस्तु का संवेग

$$\vec{p} = m\vec{v} \qquad \ldots (9.8)$$

केवल परिमाण लेने पर

$$p = mv$$

संवेग भी सदिश राशि है। संवेग का एस.आई. मात्रक किलोग्राम मीटर/सेकण्ड (kg m / s) है।

किसी गतिशील वस्तु के लिये न्यूटन के द्वितीय नियम को इस प्रकार व्यक्त करते हैं–

किसी वस्तु के संवेग परिवर्तन की दर उस पर आरोपित बल के समानुपाती होती है, और उसी दिशा में होती है जिसमें बल लगाया जाता है।

माना कि m द्रव्यमान की किसी वस्तु का वेग $\vec{u}$ है। वस्तु पर वेग की दिशा में $\vec{F}$ बल लगाने से t समय पश्चात वेग $\vec{u}$ से परिवर्तित होकर $\vec{v}$ हो जाता है, तब

प्रारम्भिक संवेग $\vec{p}_1 = m\vec{u}$ $\ldots (9.9)$

t समय पश्चात संवेग $\vec{p}_2 = m\vec{v}$ $\ldots (9.10)$

समय t में संवेग परिवर्तन $\Delta\vec{p} = \vec{p}_2 - \vec{p}_1 = m(\vec{v} - \vec{u})$

अतः संवेग में परिवर्तन की दर $= \dfrac{m(\vec{v} - \vec{u})}{t}$

न्यूटन के दूसरे नियम से

$$\vec{F} \propto \frac{m(\vec{v} - \vec{u})}{t}$$

या $$\vec{F} = K\frac{m(\vec{v} - \vec{u})}{t}$$ (यहां K नियतांक है)

यहाँ $\dfrac{(\vec{v} - \vec{u})}{t}$ वस्तु के वेग में परिवर्तन की दर को बताता है, यह वस्तु में उत्पन्न त्वरण a है।

अतः $\vec{F} = Km \cdot \vec{a}$ $\ldots (9.11)$

हम बल के मात्रक को इस प्रकार लेते है कि नियतांक K का मान 1 रहे। समी. (9.11) में $K = 1$ रखने पर

$$\vec{F} = m\vec{a} \qquad \ldots (9.12)$$

समी. 9.12 से बल का मात्रक प्राप्त करते हैं। इस समी. में द्रव्यमान एवं त्वरण का अन्तर्राष्ट्रीय मात्रक प्रतिस्थापित करने पर

बल F का मात्रक $= \dfrac{\textit{किलोग्राम} \times \textit{मीटर}}{\textit{सेकण्ड}^2}$

$= \dfrac{\textit{किलोग्राममीटर}}{\textit{सेकण्डें}} = \dfrac{\text{kg m}}{\text{s}^2}$

बल के इस मात्रक को एक विशेष नाम **न्यूटन** दिया गया है, एवं इसका प्रतीक N है।

$$\left(\mathrm{N}=\frac{\mathrm{kg\,m}}{\mathrm{s}^2}\right)$$

न्यूटन के गति के दूसरे नियम से हमें बल मापने की एक विधि मिलती है। यदि किसी वस्तु का द्रव्यमान तथा किसी बल द्वारा वस्तु में उत्पन्न त्वरण ज्ञात हो तो हम उस बल को माप सकते हैं। बल के अन्य मात्रक डाइन और पाउण्डल है।

1 न्यूटन = 10^5 डाइन तथा

1 पाउण्डल = 13825.7 डाइन के बराबर है।

उदाहरण 9.6: 5 kg द्रव्यमान वाली वस्तु में 10 m /s^2 का त्वरण उत्पन्न करने के लिए कितने बल की आवश्यकता होगी? यदि बल को दो गुना कर दिया जाए तो त्वरण कितना हो जायेगा?

हल: वस्तु का द्रव्यमान $m = 5$ kg

वस्तु का उत्पन्न त्वरण $a = 10$ m /s^2

वस्तु पर आरोपित बल F का मान

सूत्र से $F = m \times a$

या $F = 5 \times 10 N$

$= 50$ N

आवश्यक बल का मान 50 N होगा।

बल को दुगना करने पर, बल का मान 100 न्यूटन हो जायेगा। अतः वस्तु में अब

त्वरण $a = \frac{F}{m}$

$= \frac{100\,\mathrm{N}}{5\,\mathrm{kg}}$

$= 20\,\mathrm{m/s^2}$

उक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि द्रव्यमान को स्थिर रखकर बल को दो गुना कर देने पर त्वरण दुगुना हो जायेगा।

9.14 न्यूटन की गति का तीसरा नियम (Newton's Third law of Motion)

न्यूटन के पहले नियम से हमें बल की गुणात्मक एवं दूसरे नियम से उसके मात्राात्मक मापन की विधि प्राप्त होती है। न्यूटन का तीसरा नियम हमें लगाए गये बलों के बारे में जानकारी देता है। इस नियम से हम दो वस्तुओं पर एक साथ लगने वाले पारस्परिक बलों के सम्बन्ध में अध्ययन करते है।

न्यूटन के तृतीय नियम के अनुसार वस्तु A द्वारा वस्तु B पर लगाया गया बल, परिमाण में B द्वारा लगाये गये बल के बराबर तथा दिशा में उसके विपरीत होता है। वस्तु A द्वारा B पर लगाये गये बल को क्रिया (Action) तथा B द्वारा A पर लगाये गये बल को प्रतिक्रिया (Reaction) कहते हैं। न्यूटन की गति का तीसरा नियम क्रिया एवं प्रतिक्रिया के सम्बन्ध को बताता है अतः इस नियम को निम्न प्रकार व्यक्त किया जाता है–

''प्रत्येक क्रिया के लिये समान परन्तु विपरीत दिशा में प्रतिक्रिया होती है''। यहां पर महत्वपूर्ण है कि क्रिया एवं प्रतिक्रिया सदैव दो भिन्न–भिन्न वस्तुओं पर कार्य करती है। न्यूटन का यह नियम सर्वव्यापक है। वस्तुऐं विराम की अवस्था में हो या गतिशील वे परस्पर सम्पर्क में हो या उनके बीच कुछ दूरी मौजूद हो यह नियम हर दशा में लागू होता है।

गति के तीसरे नियम पर आधारित कुछ उदाहरण:

(i) जब हम भूमि पर चलते हैं या किसी ट्राली, हाथ के ठेले को धक्का देकर खिसकाते हैं तो हम अपना पेशीय बल लगाते हैं। ध्यान दीजिये–यदि हमें आगे की ओर जाना है तो हम अपने नीचे पृथ्वी की सतह को पीछे की ओर खिसकाने या धकलने का प्रयत्न करते हैं और पृथ्वी हमारे पैर पर इतना ही प्रतिक्रिया के रूप में विपरीत दिशा में पांवो पर लगाती है, फलस्वरूप हम आगे की ओर चल पाते हैं। अब आप समझ गये होंगे कि बालू मिट्टी में तथा चिकने फर्श पर चलना कठिन क्यों होता है?

(ii) पानी में तैरते समय कोई तैराक आगे बढ़ने के लिए अपने हाथों एवं पैरों से पानी को पीछे की ओर धकेलता है (बल लगाता है) इस बल की प्रतिक्रिया ही उसे आगे की ओर धकेलती है।

(iii) नाव चलाने पर पानी को पत्वारों से पीछे की ओर धकेलते हैं, पानी नाव पर एक प्रतिक्रियात्मक बल सामने की ओर लगाता है जिससे नाव आगे की ओर बढ़ जाती है।

चित्र 9.12 नाव की पानी में गति

(iv) वायुयान के प्रोपेलर के ब्लेड वायु को पीछे की ओर फेंकते है तो वायु द्वारा लगने वाले प्रतिक्रियात्मक बल से वायुयान आगे बढ़ जाता है।

(v) जब बन्दूक से गोली दागी जाती है तब गोली पर बल आगे की ओर लगता है उतना ही बल बन्दूक पर विपरीत दिशा

में लगता है। परन्तु बन्दूक का द्रव्यमान गोली की तुलना में बहुत अधिक होने से बन्दूक पीछे की ओर बहुत कम वेग से चलती है। बन्दूक चलाने वाले के कंधे को झटका अनुभव होता है।

चित्र 9.13 बन्दूक की गोली दागते वक्त क्रिया एवं प्रतिक्रिया बल

(vi) जब रॉकेट छोड़े जाते हैं तब रॉकेट के पिछले भाग से गैस अत्यधिक तेज गति से निकलती है और प्रतिक्रिया के फलस्वरूप रॉकेट पर गैस निकलने की विपरीत दिशा में बल लगने के फलस्वरूप रॉकेट ऊपर उठता है।

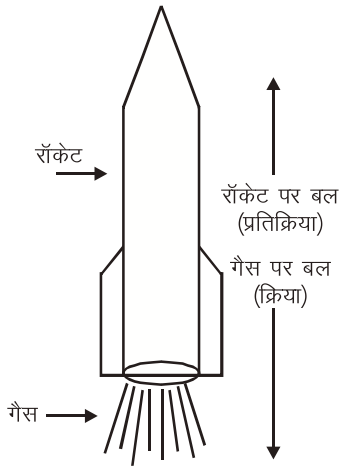

चित्र 9.14 रॉकेट पर क्रिया एवं प्रतिक्रिया बल

हमें यह भ्रम हो सकता है कि यदि प्रत्येक क्रियात्मक बल के विरुद्ध प्रतिक्रियात्मक बल उत्पन्न होता है, तो फिर वस्तुओं में गति कैसे होती है? ऊपर के उदाहरणों से आप भली भांति समझ चुके हैं कि क्रिया तथा प्रतिक्रिया के बल बराबर तथा विपरीत होने पर भी एक दूसरे को निष्प्रभावित नहीं कर सकते हैं, क्योंकि ये भिन्न–भिन्न वस्तुओं पर कार्य करते हैं। बराबर तथा विपरीत दिशा में कार्य करने वाले बल केवल तभी एक दूसरे के प्रभाव को नष्ट कर सकते हैं जबकि वे एक ही वस्तु पर एक ही सरल रेखा में कार्य कर रहे हैं।

उपरोक्त उदाहरणों एवं प्रयोग के आधार हमें न्यूटन की तीसरे नियम से निम्न जानकारी प्राप्त होती है

(1) प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया होती है।

(2) क्रिया एवं प्रतिक्रिया के बल विपरीत एवं बराबर होते हैं।

(3) क्रिया और प्रतिक्रिया बल भिन्न–भिन्न वस्तुओं पर कार्य करते हैं। अतएव परस्पर इनका संतुलन सम्भव नहीं है।

9.15 संवेग संरक्षण (Conservation of momentum)

न्यूटन की गति के दूसरे नियम से हमें विज्ञान का अत्यन्त महत्वपूर्ण संवेग संरक्षण का नियम प्राप्त होता है। माना किसी m द्रव्यमान के पिण्ड पर आरोपित बल $\vec{F}$ के कारण उसका प्रारम्भिक संवेग $\vec{p}_1$ समय t में बदलकर $\vec{p}_2$ हो जाता है तो द्वितीय नियम से

$$\vec{F} = \frac{(\vec{p}_2 - \vec{p}_1)}{t}$$

तब $$\vec{F} = \frac{\vec{p}_2 - \vec{p}_1}{t}$$

अब यदि $\vec{F} = 0$ है तो

$$\vec{p}_1 = \vec{p}_2 \qquad \ldots (9.13)$$

अर्थात् संवेग में परिवर्तन शून्य होगा या संवेग का मान सदा नियत बना रहेगा। इसे हम संवेग संरक्षण का नियम या सिद्धांत कहते हैं। इसे इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है **"यदि किसी पिण्ड या निकाय पर बाह्य आरोपित बल शून्य है, तो उस निकाय के सम्पूर्ण संवेग का संरक्षण होता है अर्थात् समय के साथ संवेग का मान नियत बना रहता है।"**

इसे हम निम्न उदाहरणों से स्पष्ट करेंगे–

(1) संवेग संरक्षण के नियम को समझने के लिये हम एक सरल स्थिति पर विचार करते हैं जिसमें केवल दो कण हैं। चित्र (9.15) कांच की दो गोलियां A एवं B जिनके द्रव्यमान क्रमशः m_1 एवं m_2 तथा प्रारम्भिक वेग u_1 और u_2 है। मान लीजिये इन दो गोलियों की सीधी टक्कर होती है, यह टक्कर t समय तक रहती है। माना टक्कर के बाद इन गोलियों के वेग क्रमशः v_1 और v_2 हो जाते हैं। यहां हम ये भी मान रहे हैं कि इन गोलियों पर कोई बल कार्यरत नहीं है। वेग u_1, u_2 एवं v_1 तथा v_2 की दिशा को चित्र में बताया गया है।

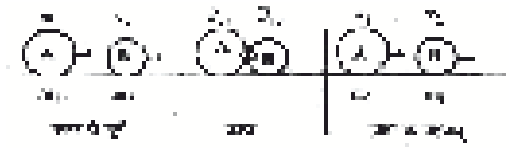

चित्र 9.15 दो गोलियों की टक्कर

(2) चित्र 9.16 में B एक विस्फोटक बम्ब है, जो आरम्भ में विराम अवस्था में है। वेग शून्य होने से इसका प्रारम्भिक संवेग शून्य है। अब यदि यह दो भागों में विस्फोट कर जाता है जिसके द्रव्यमान 2:1 के अनुपात में है, तो विस्फोट के पश्चात् इनके वेग ठीक एक ही रेखा में किन्तु विपरित दिशा में इस प्रकार होंगे कि सम्पूर्ण संवेग विस्फोट के पश्चात् शून्य हो जावे। माना बड़े टुकड़े का द्रव्यमान 2 m तथा वेग $\vec{v}_1$ एवं छोटे टुकड़े का द्रव्यमान m तथा $\vec{v}_2$ है तो विस्फोट के पश्चात् $2m\vec{v}_1 + m\vec{v}_2 = 0$

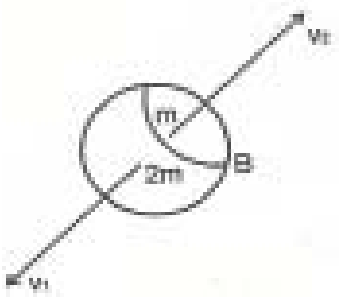

चित्र 9.16 विस्फोटक बम्ब में संवेग

अर्थात् m द्रव्यमान का टुकड़ा 2 m द्रव्यमान के टुकड़े के ठीक विपरीत दिशा में $2\vec{v}_1$ वेग से गति करेगा।

गोली A का टक्कर से पहले एवं टक्कर के बाद संवेग क्रमशः m_1u_1 तथा m_2u_2 है, अतः गोली A के संवेग में परिवर्तन की दर $= \frac{m_1(v_1 - u_1)}{t}$ होगी।

इसी प्रकार गोली B के संवेग परिवर्तन की दर $= \frac{m_2(v_2 - u_2)}{t}$ होगी।

यदि A द्वारा B पर आरोपित बल F_{12} है तो B द्वारा A पर आरोपित बल F_{21} होगा–

न्यूटन के गति के द्वितीय नियम से

$$F_{12} = \frac{m_1(v_1 - u_1)}{t}$$

$$F_{21} = \frac{m_2(v_2 - u_2)}{t}$$

अब गति के तीसरे नियम से A द्वारा B पर लगाया गया बल B द्वारा A पर लगाये गये बल के बराबर एवं विपरीत होने चाहिये।

अतः $F_{12} = -F_{21}$

$$\frac{m_1(v_1 - u_1)}{t} = -\frac{m_2(v_2 - u_2)}{t}$$

या $m_1(v_1 - u_1) = -m_2(v_2 - u_2)$

$$m_1u_1 + m_2u_2 = m_1v_1 + m_2v_2 \quad \ldots (9.14)$$

अर्थात टक्कर से पूर्व कुल संवेग = टक्कर के पश्चात् कुल संवेग

इस प्रकार हम पाते हैं कि दो गोलियों की टक्कर में टक्कर के पहले कुल संवेग तथा टक्करके बाद कुल संवेग बराबर होते हैं, अर्थात् संवेग संरक्षित रहता है। जबकि निकाय पर कोई बाह्य बल नहीं लग रहा है। यह परिणाम संवेग संरक्षण के अनुसार ही है।

9.16 घर्षण (Friction)

घर्षण से हम भली भांति परिचित हैं। यह बल दो वस्तुओं के मध्य परस्पर गति का विरोध करता है। घर्षण बल सदैव गति की दिशा के विपरीत दिशा में लगता है।

हम जानते हैं कि खुरदरी सड़क की अपेक्षा, कांच के समान चिकनी सतह पर कोई गेंद अधिक दूरी तक चलेगी। खुरदरी सड़क की अपेक्षा डामर की सड़क पर साइकिल चलाना आसान है। सतह को चिकनी करके घर्षण को कम किया जा सकता है किन्तु घर्षण को शून्य नहीं किया जा सकता है। वायु में गतिशील वस्तुओं पर भी घर्षण कार्य करता है। अब हम दो सतहों के मध्य लगने वाले घर्षण बल की निर्भरता पर विचार करेंगे।

सीमांत घर्षण (Limiting Friction) – एक ईंट को मेज पर रखकर अपनी अंगुली से इसे धकेलने का प्रयत्न कीजिये। प्रारम्भ में जब बल का मान कम होता है ईंट नहीं खिसकती है, इस समय ईंट पर लगाया गया बल एवं इस पर लगा घर्षण बल दोनों आपस में संतुलन में तथा एक दूसरे के विपरीत दिशा में है। जैसे–जैसे ईंट पर हम लगाए गये बल को बढ़ाते हैं, घर्षण बल भी साथ–साथ बढ़ता जाता है, और एक स्थिति में जब लगाए बल को एक सीमा से अधिक बढ़ाया जाता है ईंट खिसकने लगती है। उस बल का परिमाण जो ईंट को

खिसकाने मात्र के लिये प्रर्याप्त है (अर्थात् न इससे अधिक और न कम) सीमांत घर्षण कहलाता है।

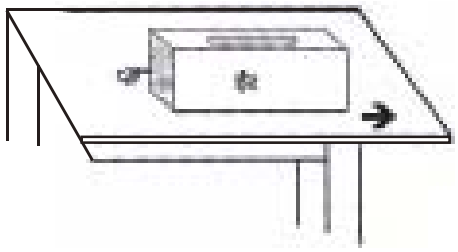

चित्र 9.16 किसी ईंट को खिसकाने के लिए अंगुली से आरोपित बल

सर्पी घर्षण (Sliding Fricition)– जब कोई वस्तु किसी दूसरी वस्तु पर के धरातल पर खिसकती हुई चलती है तो दोनों धरातलों के मध्य के घर्षण को सर्पी घर्षण कहते हैं। सर्पी घर्षण तब तक क्रिया करता है जब तक दोनों वस्तुओं को सापेक्ष गति होती है। वस्तु पर से बाह्य बल हटा लेने पर भी घर्षण बल क्रिया करता रहता है। परिणाम स्वरूप वस्तु का वेग कम होता जाता है और अंत में वस्तु विराम अवस्था में आ जाती है।

लोटनी घर्षण (Rolling Friction)– ईंट को चित्र में बताए अनुसार तीन या चार बेलनाकार रोलरों जैसे पैंसिल या लोहे के पतले बेलनाकार टुकड़ो पर रखकर (चित्र 9.17) धकेलने पर हम पाते हैं कि, इस बार ईंट को खिसकाना आसान है। रोलरों एवं पहियों पर गति करने वाली वस्तुओं की स्थिति में घर्षण को लोटनी घर्षण कहते हैं।

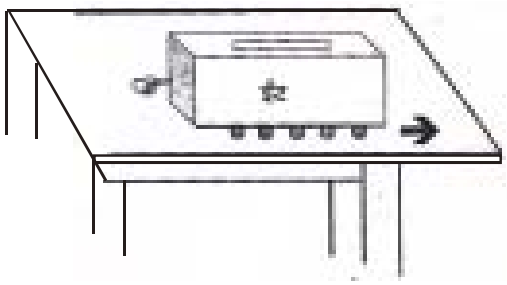

चित्र 9.17 ईट को खिसकाने में लोटनी गति

दो समान प्रकार के धरातलों में लोटनी घर्षण का मान सर्पी घर्षण से कम होता है। अतः मशीनों में पहियों और रोलरों का उपयोग करते हैं।

वायु एवं द्रव में गतिशील वस्तुओं पर घर्षणः

वायु एवं द्रव में गतिशील वस्तुओं पर भी घर्षण बल कार्य करता है, यह घर्षण बल ठोस सतहों की तुलना में कम होता है। उल्काएं जब अंतरिक्ष से पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश करती हैं, तो इनके अधिक वेग होने से वायु के घर्षण के कारण, अत्यधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है और वे चमकने लगती हैं। अधिकतर पृथ्वी की सतह तक पहुंचने से पहले ही वाष्पित हो जाती हैं।

तेज गति से चलने वाले वाहनों, मोटर गाड़ियों, वायुयानों और अंतरिक्षयानों में वायु का घर्षण कम करने के लिए इन्हे विशेष डिजाइन का बनाया जाता है। जिससे हवा का घर्षण बल कम हो सके।

घर्षण का नियंत्रण– घर्षण सदैव दो सतहों के बीच गति का विरोध करता है। घर्षण के कारण मशीनों के गतिमान पूर्जे, घिसते रहते हैं और गरम हो जाते हैं, जिससे इन पुर्जों की क्षति होती है। हमें वस्तु को समान वेग से चलाये रखने के लिये, घर्षण के निराकरण हेतु आवश्यक बल लगाना पड़ता है।

घर्षण को निम्न विधियों द्वारा हम कुछ सीमा तक नियंत्रित कर सकते हैं–

(i) चिकनी सतहों में घर्षण कम होता है, अतः मशीनों के गतिमान भागों को बहुत चिकने बनाकर घर्षण को कम किया जा सकता है।

(ii) वायु के कारण घर्षण कम करने के लिये, मोटर वाहन, रेलगाड़ियों के इंजन एवं वायुयान विशेष डिजाइन के बनाए जाते हैं।

(iii) लोटनी घर्षण, सर्पी घर्षण से सदैव बहुत कम होता है। अतः मशीनों में घर्षण कम करने के लिए प्रायः गतिशील पुर्जों के मध्य स्टील की गोल गेंदे लगा दी जाती है, इनको बॉल–बियरिंग कहते है। साईकिल के पहियों में भी बॉल बियरिंग लगे होते हैं। बॉल बियरिंग से घर्षण कम हो जाता है जिससे ऊर्जा एवं श्रम की बचत होती है।

स्नेहक (Lubricant): घर्षण बल कम करने के लिये कुछ विशेष प्रकार के पदार्थ भी काम में लाए जाते हैं, इन पदार्थों को स्नेहक कहते हैं। स्नेहक ठोस, द्रव या गैसीय अवस्थाओं में हो सकते है। हल्की मशीनों यथा साईकिल, घड़ियों में स्नेहक के रूप में पतले तेल का उपयोग करते हैं जबकि भारी मशीनों में गाढ़ा तेल या ग्रीस का उपयोग किया जाता है। जब स्नेहक को दो गतिमान सतहों के बीच में डाला जाता है तो स्नेहक के कण उन सतहों के असमान भागों के बीच चले जाते हैं और दोनों के बीच एक पतली परत बना लेते है। गति अब इन परतों के बीच होती है अतः घर्षण कम हो जाता है। स्नेहक के रूप में संपीडित वायु का भी उपयोग करते हैं। मशीनों के गतिशील भागों के मध्य, उच्च दाब पर वायु प्रवाहित की जाती है, जो घर्षण बल को कम करने के साथ–साथ मशीनों के धूल कणों को जमने से रोकती है। इसी प्रकार कैरम बोर्ड पर छिड़का पाउडर भी स्नेहक का काम करता है। केरम बोर्ड खेलते समय उस पर पाउडर डाला जाता है।

घर्षण की आवश्यकताः यद्यपि घर्षण बल मशीनों में ऊर्जा का क्षय कर मशीनों की दक्षता कम करता है। परन्तु कई

स्थितियों घर्षण को बढ़ाने की आवश्यकता होती है। घर्षण बढ़ाने के लिए माचिस की डिब्बी व तीलियों को खुरदरा बनाया जाता है, जिससे तीलियां रगड़ से आसानी से जल सकें। चलते समय जब हम पांव उठा कर आगे रखते हैं तो दूसरे पांव घर्षण के बल के कारण ही प्रतिक्रिया बल पीछे खिसकने से रोकता है। इसी प्रकार किसी वाहन आदि का पहिया जब आगे बढ़ता है तो पहिया पीछे की ओर बल लगाता है। घर्षण बल के कारण जो प्रतिक्रिया बल उत्पन्न होता है वह उस पहिये को पीछे फिसलने से रोकता है, जिससे पहिया लुढ़क कर आगे बढ़ता है। यदि घर्षण बल कम हो, जैसा कभी–कभी रेत या कीचड़ में होता है, तो बल लगाने पर पहिया उसी स्थान पर घूमता रहेगा। बालू मिट्टी एवं कीचड़ में प्रायः यह घटना हमको देखने को मिलती है। वाहनों के टायर घर्षण बढ़ाने के लिये खुरदरे बनाये जाते हैं, जिससे उनकी सड़को पर पकड़ बढ़ जाती है जो उन्हे फिसलने से रोकता है। घर्षण बल के कारण ही ब्रेक लगाकर वाहन को रोका जाता है।

अब आप समझ गए होंगे कि जब हमारा पैर केले के छीलके पर पड़ जाता है तो हमारा संतुलन बिगड़ जाता है। जिससे गिरने की संभावना बढ़ जाती है। चिकने फर्श पर चलने में हमें कठिनाई होती है इसका कारण भी घर्षण है।

घर्षण के लाभ एवं हानियाँ (Advantages and disadvantages of Friction)

घर्षण के लाभ (Advantages of Friction)

1. घर्षण हमें चलने में सहायता करता है। बिना घर्षण के फर्श पर हम फिसल कर गिर जाऐंगे।
2. सड़क पर पहिये के वाहनों को चलने एवं घूमने में घर्षण बल सहायक होता है। बिना घर्षण वाहनों का चलना या मुड़ना संभव नहीं होता।
3. घर्षण के द्वारा ही ब्रेक द्वारा वाहन को रोकना संभव होता है।
4. घर्षण के कारण ही पट्टे या चैन द्वारा मोटर से मशीन को घूर्णन ऊर्जा का स्थानान्तरण संभव होता है।
5. किसी दीवार या लकड़ी आदि में कील या पेच घर्षण के कारण ही ठहरे रहते हैं।
6. बिना घर्षण के हम पैन या पेंसिल को हाथ में पकड़ और उससे लिख नहीं सकते।
7. बिना घर्षण के रस्सी में गाँठ लगाना या कपड़ा बुनना संभव नहीं होगा।

घर्षण की हानियाँ (Disadvantages of Friction)

1. घर्षण के कारण ऊर्जा की हानि होती है। इस कारण मशीन की दक्षता घट जाती है।
2. वाहनों के लगभग 20% ईंधन घर्षण बल के कारण अधिक व्यय होता है।
3. घर्षण के कारण मशीनी कल–पुर्जों में घिसावट या टूट–फूट होती है।
4. घर्षण बल के कारण मशीन में उच्च मात्रा में ऊष्मा उत्पन्न हो जाती है जो मशीन की कार्य क्षमता में बाधा उत्पन्न करती है और उसे क्षति पहुँचाती है।

9.17 प्रणोद एवं दाब (Thrust and Pressure)

प्रणोद (Thrust): किसी वस्तु के ऊपर उसकी सतह के लम्बवत लगा हुआ बल प्रणोद (Thrust) कहलाता है। प्रणोद का S.I. मात्रक न्यूटन है।

दाब (Pressure): वस्तु के प्रति एकांक क्षेत्रफल पर लगने वाला बल दाब कहलाता है। यह एक अदिश राशि है।

$$\text{दाब} = \frac{\text{बल}}{\text{क्षेत्रफल}}$$

दाब मापने का S.I. मात्रक न्यूटन प्रति वर्गमीटर N / m^2 है जो पास्कल (Pa) भी कहलाता है।

1 पास्कल = 1 न्यूटन प्रति वर्गमीटर

$$1 \text{ Pa} = 1 \text{ N} / m^2$$

दाब निम्न दो कारकों पर निर्भर करता है–

1. लगाया गया बल
2. सतह का क्षेत्रफल

अगर दो सतहों का क्षेत्रफल समान हो, तब अधिक बल लगाने पर अधिक दाब उत्पन्न होगा। यदि समान बल लगाया जाता है, तब अधिक क्षेत्रफल वाली सतह पर कम दाब उत्पन्न होगा।

9.18 उत्प्लावकता (Buoyancy)

लोहे तथा स्टील से बना जलयान समुद्र के पानी में नहीं डूबता लेकिन उतने ही भार का लोहा अथवा स्टील चादर के रूप में हो तो वह डूब जायेगी। इसी प्रकार पानी के पृष्ठ पर रखने पर लोहे की कील डूब जाती है तथा कॉर्क तैरता है। इसे जानने के लिए उत्प्लावता का अर्थ समझना होगा।

''किसी द्रव का वह गुण जिसके कारण वह द्रव में छोड़ी गई किसी वस्तु पर ऊपर की ओर एक बल लगाता है उत्प्लावकता कहलाता है।''

द्रव में वस्तु पर निम्न दो बल कार्यरत होते है–

प्रथम– वस्तु पर पृथ्वी का गुरूत्वाकर्षण बल (वस्तु का भार) नीचे की ओर तथा

द्वितीय–वस्तु पर पानी का उत्प्लावन बल ऊपर की ओर।

किसी वस्तु का पानी में डूबना या तैरना उपर्युक्त दोनों बलों के आपेक्षिक मानों पर निर्भर करता है।

1. यदि वस्तु का भार, उत्प्लावन बल से अधिक है तो वस्तु पानी में डूब जायेगी।

2. यदि वस्तु का भार, उत्प्लावन बल से कम है तो वस्तु पानी में आंशिक रूप से डूबकर तैरेगी।
3. यदि वस्तु का भार, उत्प्लावन बल के बराबर है तो वस्तु पानी में पूरी डूबकर तैरती रहेगी।

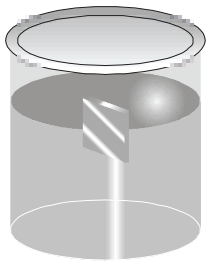

चित्र 9.18 : पानी की सतह पर रखने पर लोहे की कील डूब जाती है तथा कॉर्क तैरता है।

किसी वस्तु के जल में तैरने या डूबने का ज्ञान उस वस्तु के घनत्व से प्राप्त किया जा सकता है। यदि वस्तु का घनत्व जल के घनत्व से कम है तो वह वस्तु जल में तैरेगी। इसके विपरीत यदि वस्तु का घनत्व, जल के घनत्व के अधिक है तो वह वस्तु जल में डूब जाएगी।

9.19 आर्किमीडीज का सिद्धान्त (Archimide's Principle)

एक पत्थर के टुकड़े को किसी कमानीदार तुला से लटकाकार उसका भार नोट कर लेते है। तत्पश्चात इसी पत्थर को पानी से भरे एक बर्तन में डूबोकर तुला की माप में हुए परिवर्तन को नोट करते हैं।

आप देखेंगे कि पानी में डुबोने पर तुला के पाठ्यांक में कमी आती है। यह कमी पत्थर द्वारा हटाए गए पानी के भार के बराबर होगी।

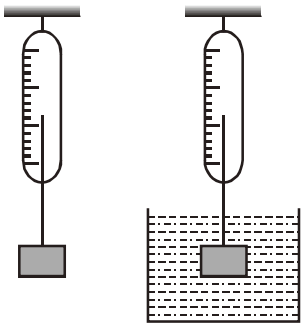

चित्र 9.19: (1) हवा में लटके पत्थर के टुकड़े का भार (2) पत्थर को पानी में डुबोने पर भार

''जब किसी वस्तु को किसी तरल में पूर्ण या आंशिक रूप में डुबोया जाता है तो वह ऊपर की दिशा में एक बल का अनुभव करती है जो वस्तु द्वारा हटाए गए तरल के भार के बराबर होता है। यह बल उत्पलावन बल कहलाता हैं।'' इसे आर्किमीडीज का सिद्धान्त कहते है।

उपयोग –

1. यह पदार्थों का आपेक्षिक घनत्व ज्ञात करने में उपयोगी है।
2. यह जलयानों और पनडुबियों के डिजाइन बनाने में प्रयोग किया जाता है।
3. दुग्धमापी तथा हाइड्रोमीटर आर्किमीडीज के सिद्धान्त पर आधारित है। (दुग्धमापी दूध की शुद्धता मापने के लिए तथा हाइड्रोमीटर द्रवों का घनत्व ज्ञात करने में प्रयुक्त होता है।)
4. पानी में बर्फ का तैरना भी इससे समझा जा सकता है।

9.20 घनत्व (Density)

किसी पदार्थ के एकांक आयतन का द्रव्यमान घनत्व कहलाता है। अगर पदार्थ का द्रव्यमान m व आयतन V है तो

$$\text{घनत्व} = \frac{\text{द्रव्यमान}}{\text{आयतन}}$$

$$d = \frac{m}{V} \qquad \ldots (9.15)$$

घनत्व का S.I. मात्रक kg / m^3 या $kg\ m^{-3}$

9.21 आपेक्षिक घनत्व (Relative Density)

प्रायः किसी पदार्थ के घनत्व को पानी के घनत्व की तुलना में व्यक्त किया जाता है। किसी पदार्थ को आपेक्षिक घनत्व उस पदार्थ के घनत्व व पानी के घनत्व का अनुपात है।

$$\text{अर्थात् आपेक्षिक घनत्व} = \frac{\text{किसी पदार्थ का घनत्व}}{\text{पानी का घनत्व}}$$

आपेक्षिक घनत्व समान राशियों का एक अनुपात है। अतः इसका कोई मात्रक नहीं होता।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. ऐसी भौतिक राशियां जिनका केवल परिमाण होता है और जिनमें दिशा का बोध नहीं होता है को अदिश राशियां कहते हैं।
2. ऐसी भौतिक राशियां जिनको व्यक्त करने के लिए परिमाण के साथ–साथ दिशा की भी आवश्यकता होती है को सदिश राशियां कहते हैं।
3. किसी भी सदिश $\vec{A}$ में उसके परिमाण $|\vec{A}|$ का भाग देने से जो सदिश प्राप्त होता है उसे एकांक सदिश कहते हैं।

$$\hat{A} = \frac{\vec{A}}{|\vec{A}|}$$

4. निर्देश बिन्दु से वस्तु की स्थिति में निरन्तर परिवर्तन को वस्तु की गति कहते हैं।
5. यदि कोई वस्तु निश्चित समय अन्तराल में समान दूरियां तय करती है तो वस्तु की गति को एकसमान गति कहते हैं।
6. यदि कोई वस्तु निश्चित समय अन्तराल में अलग–अलग दूरियां तय करती है तो वस्तु की गति को असमान गति कहते हैं।
7. एकांक समय में वस्तु द्वारा तय की गई दूरी को चाल कहते हैं। चाल एक अदिश राशि है। जबकि वस्तु द्वारा किसी निश्चित दिशा में एकांक समय में तय की गई दूरी को वेग कहते हैं। वेग एक सदिश राशि है। इन दोनों का मात्रक m/s है।
8. वस्तु में वेग के परिवर्तन की दर को त्वरण कहते हैं। त्वरण का मात्रक m/s^2 है।
9. वस्तु की एकसमान त्वरित गति को तीन समीकरणों द्वारा दर्शाया जाता है।

(i) $v = u + at$

(ii) $v = ut + \frac{1}{2}at^2$

(iii) $v^2 = u^2 + 2as$

10. बल वह भौतिक राशि है, जो वस्तु की गत्यावस्था या विराम अवस्था में परिवर्तन लाती है।
11. असंतुलित बल वस्तु में गति उत्पन्न करता है।
12. वस्तु अपनी विराम अवस्था सरल रेखा के अनुरूप एक समान गति की अवस्था में तब तक बनी रहती है, जब तक कि उस पर कोई असंतुलित बल कार्य न करे। वस्तु द्वारा अपनी विराम अथवा गति की अवस्था में परिवर्तन का प्रतिरोध करने की प्रवृति को जड़त्व कहते हैं। यह न्यूटन की गति का प्रथम नियम है।
13. न्यूटन की गति का दूसरा नियम– संवेग परिवर्तन की दर वस्तु पर लगने वाले बल के समानुपातिक होती है। संवेग में परिवर्तन, सदैव बल की दिशा में होता है।
14. न्यूटन की गति का तीसरा नियम– प्रत्येक क्रिया के लिए उसके बराबर व विपरीत प्रतिक्रिया होती है, और यह दो भिन्न–भिन्न वस्तुओं पर कार्य करती है।
15. घर्षण बल सदैव वस्तु की गति का प्रतिरोध करता है। घर्षण उन दो सतहों के चिकने या खुरदरे होने पर निर्भर करता है जो परस्पर सम्पर्क में है। घर्षण बल को कुछ सीमा तक नियंत्रित किया जा सकता है।
16. किसी वस्तु अथवा सतह के एकांक क्षेत्रफल पर लगने वाला बल दाब कहलाता है। दाब की इकाई N/m^2 अथवा पास्कल (Pa) है।
17. किसी द्रव में जब किसी ठोस को डूबोया जाता है तो वस्तु द्वारा हटाए गए द्रव के भार के समान वस्तु पर ऊपर की ओर एक बल लगता है जिसे उत्पलावन बल कहते हैं।
18. यदि किसी ठोस का घनत्व द्रव के घनत्व से अधिक होता है तो वह वस्तु द्रव में डूब जाती है। यदि वस्तु का घनत्व द्रव के घनत्व से कम होता है तो वस्तु द्रव में तैरती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. निम्न में से सदिश राशि है–
   (अ) कार्य (ब) समय
   (स) द्रव्यमान (द) गुरूत्वीय बल
2. 4 N एवं 3 N के दो बल एक ही वस्तु पर विपरीत दिशा में कार्यरत है, कण पर बल का परिमाण होगा–
   (अ) 5 N (ब) 7 N
   (स) 1 N (द) 1 N एवं 7 N के बीच
3. वेग में परिवर्तन की दर है–
   (अ) बल (ब) संवेग
   (स) त्वरण (द) विस्थापन
4. संवेग का मात्रक है–
   (अ) न्यूटन मीटर
   (ब) न्यूटन किग्रा / मीटर
   (स) न्यूटन मीटर/सेकण्ड
   (द) किग्रा मीटर/सेकण्ड
5. एकसमान वेग से गतिमान वस्तु का वेग समय आरेख है

(अ) 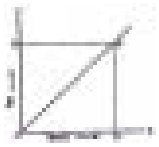 (ब) 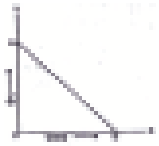

(स) (द)

6. वस्तु का संवेग निर्भर करता है
   (अ) वस्तु के द्रव्यमान पर
   (ब) वस्तु के विस्थापन पर
   (स) विस्थापन में लगे समय पर
   (द) उपरोक्त सभी पर
7. बल (F) द्रव्यमान (m) तथा त्वरण (a) सम्बन्धित समीकरण हैं–
   (अ) $F = ma$ (ब) $m = aF$
   (स) $a = mF$ (द) $ma = \frac{1}{F}$
8. बल का मात्रक है
   (अ) किग्रा–मीटर–सेकण्ड
   (ब) किग्रा–मीटर–सेकण्ड^2
   (स) किग्रा–मीटर/सेकण्ड^2
   (द) किग्रा–मीटर/सेकण्ड
7. संवेग का मात्रक है–
   (अ) मीटर/सेकण्ड
   (ब) किग्रा–मीटर/सेकण्ड^2
   (स) किग्रा–भार
   (द) किग्रा–मीटर/सेकण्ड
8. यदि कोई पिण्ड नियत संवेग से सीधी रेखा में गतिमान है। यदि उस पर कोई बाह्य बल न लगे तो–
   (अ) इसके वेग में वृद्धि होगी
   (ब) वेग नियत रहेगा
   (स) थोड़ी देर पश्चात् पिण्ड रुक जाएगा
   (द) चाल में वृद्धि होगी
9. किसी वस्तु का जड़त्व निर्भर करता है–
   (अ) वस्तु के गुरुत्व केन्द्र पर
   (ब) वस्तु के द्रव्यमान पर
   (स) गुरुत्वीय त्वरण पर
   (द) वस्तु के आकार पर
10. 5 किग्रा का एक पिण्ड $10\ \mathrm{m/s}$ त्वरण से सरल रेखा में गतिमान है। पिण्ड पर कार्यरत परिणामी बल होगा–
    (अ) $50\ \mathrm{N}$ (ब) $0.5\ \mathrm{N}$
    (स) 0 (द) $2\ \mathrm{N}$
11. किसी वस्तु पर बल आरोपित होने पर–
    (अ) उसकी गति बदल सकती है
    (ब) उसकी गति की दिशा बदल सकती है
    (स) उसका आकार बदल सकता है
    (द) उपरोक्त सभी
12. 1 किग्रा. द्रव्यमान की वस्तु का भार होगा–
    (अ) 1 न्यूटन (ब) 9.08 न्यूटन
    (स) 9.8 न्यूटन (द) 8.9 न्यूटन
13. यदि वस्तु का द्रव्यमान m, वेग v, व त्वरण a है तो संवेग p होगा–
    (अ) $p = m \times a$ (ब) $p = m \times v$
    (स) $p = m/v$ (द) $p = v/m$
14. कोई वस्तु अपनी स्थिर या गति की अवस्था में परिवर्तन नहीं कर सकती–
    (अ) अपने द्रव्यमान के कारण
    (ब) अपने भार के कारण
    (स) अपने त्वरण के कारण
    (द) अपने जड़त्व के कारण
15. यदि किसी सतह की दी गई सतह पर बल दूगना कर देते है तो दाब–
    (अ) आधा हो जाएगा
    (ब) अपरिवर्तित रहेगा
    (स) दुगना हो जाएगा
    (द) चार गुणा हो जाएगा

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. $40\ \mathrm{m/s}$ के समान वेग से गतिशील वस्तु का $10\ \mathrm{s}$ के बाद कितना त्वरण होगा?
2. m द्रव्यमान एवं u वेग से गतिशील वस्तु दीवार से टकराने के पश्चात् पुनः u वेग से लौट जाती है वस्तु के संवेग में कितना परिवर्तन होगा?

3. एक रेलगाड़ी 120 km / h के वेग से चल रही है। यह 30 मिनट में कितनी दूरी तय करेगी?
4. किसी गतिमान वस्तु के वेग समय ग्राफ तथा समय अक्ष के बीच स्थित क्षेत्रफल किसके बराबर होता है?
5. रॉकेट का सिद्धांत न्यूटन के कौन से नियम पर आधारित है?
6. एक गतिशील साईकिल पर घर्षण बल किस दिशा में होता है?
7. एक क्रिकेट का खिलाड़ी गेंद को पकड़ने के लिये अपना हाथ नीचे (पीछे) की ओर क्यों करता है?
8. एक खिलाड़ी ऊंची कूद/लम्बी कूद में कूदने से पहले कुछ दूर क्यों भागता है?
9. चलती बस के अचानक रूकने पर उसमें खड़ा यात्री आगे की ओर क्यों गिरता है?
10. एक वस्तु नियत वेग से गतिशील है, तो उस पर परिणामी बल कितना होगा?
11. एक व्यक्ति बर्फ से जमे हुये तालाब के बीच में बर्फ पर खड़ा है उसे किनारे पर पहुंचने के लिये क्या प्रयास करने चाहिए?
12. एक न्यूटन बल क्या है?
13. जड़त्व क्या है?
14. ब्रेक लगाने से चलती हुई गाड़ी रुक जाती है। इस प्रक्रिया में गाड़ी के संवेग का क्या होता है?
15. बन्दूक से गोली छोड़ने से पहले बन्दूक तथा गोली का संवेग कितना होता है?
16. प्रणोद क्या है?
17. आपेक्षिक घनत्व की इकाई क्या है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. निम्न की परिभाषा दीजिये –
   (i) विस्थापन (ii) वेग (iii) त्वरण
2. एक समान गति से क्या तात्पर्य है? एक उदाहरण बताइये?
3. यदि क्रिया सदैव प्रतिक्रिया के बराबर होती है तो स्पष्ट कीजिये कि घोड़े द्वारा खींची गई घोड़ा गाड़ी आगे की ओर कैसे चलती है?
4. फल से लदे पेड़ की शाखाओं को जोर–जोर से हिलाने पर फल नीचे गिरते हैं। कारण बताओ?
5. पानी से भरे टैंकरों को भरते समय उनके ऊपर कुछ खाली स्थान छोड़ दिया जाता है। कारण स्पष्ट कीजिये।
6. यदि कोई व्यक्ति नाव से किनारे पर कूदता है तो नाव विपरीत दिशा में चली जाती है। क्यों? स्पष्ट कीजिये?
7. ''किसी वस्तु पर सदा दो बल जोड़े से लगते हैं, उस पर एक बल संभव नहीं होता है'' इस कथन पर टिप्पणी कीजिये?
8. गतिक घर्षण एवं लुढ़कने वाले घर्षण में अंतर बताईये?
9. संवेग संरक्षण का नियम क्या है? उदाहरण देकर समझाइये?
10. घर्षण को कम करने के उपाय बताइये।
11. एक कार एवं एक ट्रक के रेखीय संवेग बराबर है। दोनों में से किसकी चाल अधिक होगी?
12. घर्षण के लाभ एवं हानियों को समझाइये?
13. क्या होता है जब किसी गीले कपड़े को झटकते हैं अपने प्रेक्षण को स्पष्ट कीजिए।
14. कुएँ से जल खींचते समय एकाएक रस्सी टूट जाने पर पानी खींचने वाला व्यक्ति पीछे की ओर क्यों गिर पड़ता है?
15. चलती हुई गाड़ी में अचानक उतरने पर यात्री आगे की ओर गिर पड़ता है, क्यों? स्पष्ट कीजिए।
16. लोहे का जहाज पानी में तैरता है लेकिन उसी लोहे की चद्दर पानी में डूब जाती है। क्यों?
17. घनत्व व आपेक्षिक घनत्व में अन्तर लिखिए।
18. आर्किमीडीज का सिद्धान्त लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न

1. अदिश एवं सदिश राशियों को समझाइये। किसी सदिश राशि को लिखने का तरीका बताइये। एकांक सदिश की परिभाषा दीजिए।
2. एकसमान एवं असमान गति को समझाइये। वेग समय ग्राफ की सहायता से गति के समीकरण ज्ञात कीजिये।
3. संतुलित व असंतुलित समीकरण को परिभाषित कीजिये। आवश्यक चित्र बनाकर समझाइये कि असंतुलित बल ही वस्तु में गति उत्पन्न कर सकता है।
4. न्यूटन के गति के नियमों को दैनिक जीवन के उदाहरण देते हुये समझाइये। द्वितीय नियम के आधार पर बल, द्रव्यमान एवं त्वरण में सम्बन्ध स्थापित कीजिये।
5. जड़त्व से क्या अभिप्रायः है? दो उदाहरण देकर समझाइये?
6. संवेग को परिभाषित कीजिए। दो गतिशील वस्तुओं की सीधी टक्कर में संवेग संरक्षित रहता है। चित्र बनाकर समझाइये।

आंकिक प्रश्न

1. एक जहाज जिसका द्रव्यमान $3\times 10^7\,\text{kg}$ है, विरामावस्था में है, 5×10^4 N बल से 3 m की दूरी तक खींचा जाता है, यदि जल का घर्षण नगण्य हो, तो जहाज की चाल ज्ञात करिये?
2. एक बस की चाल $25\,\text{km/h}$ से बढ़कर 5 s में $70\,\text{km/h}$ हो जाती है। बस का माध्य त्वरण ज्ञात कीजिये।
3. एक साईकिल चला रहे छात्र का साइकिल सहित संवेग $400\,\text{kg m/s}$ है। साईकिल $5\,\text{m/s}$ के वेग से गतिमान है। छात्र एवं साईकिल का द्रव्यमान ज्ञात कीजिये।
4. एक बालक किसी गेंद को ऊपर की ओर फेंक कर 8 s के पश्चात पुनः लपक लेता है, तो बतलाइये?

   (क) किस वेग से गेंद को ऊपर फेंका गया था?

   (ख) कितनी ऊंचाई पर गेंद का वेग शून्य होगा?

   $\left(g = 9.8\,\text{m/s}^2\right)$

उत्तरमाला

1. द	2. स	3. स	4. द	5. स	6. द	7. अ
8. ब	9. ब	10. अ	11. द	12. स	13. ब	14. द
15. स						

उत्तर – आंकिक प्रश्न

1. $0.1\,\text{m/s}$
2. $2.5\,\text{m/s}^2$
3. $80\,\text{kg}$
4. $39.2\,\text{m/s}$, $78.4\,\text{m}$

अध्याय 10

गुरूत्वाकर्षण
(Gravitation)

गतिविधि 10.1

• किसी पत्थर के टुकड़े को हाथ से छोड़ने पर वह स्वतः पृथ्वी तल की ओर गिरता हैं।

• इसी पत्थर के टुकड़े को यदि हवा में कुछ ऊँचाई तक फेंकना है तो हमें कुछ बल लगाना पड़ता है।

पिछले अध्याय में हमने पढ़ा है कि किसी वस्तु अथवा पिण्ड की चाल अथवा गति की दिशा बदलने के लिए बल की आवश्यकता होती है। उपर्युक्त दोनों क्रियाकलापों में आवश्यक बल की चर्चा करने पर समझ आता है कि किसी भी वस्तु को मुक्त रूप से छोड़ने पर वह पृथ्वी की सतह की ओर जाती है अर्थात् इस वस्तु पर पृथ्वी कोई अदृश्य बल लगाती है जिसे गुरूत्वाकर्षण बल कहा जाता है। जब वस्तु को ऊपर की ओर फेंका जाता है तो गति के लिए बाह्य बल, फेंकने वाले व्यक्ति द्वारा लगाया जाता है तब भी पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल के कारण वस्तु का वेग धीरे–धीरे कम होते हुए शून्य हो जाता है। तत्पश्चात् वह वस्तु पुनः पृथ्वी तल की ओर गिरने लगती है। यह भी पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल का उदाहरण है। वर्षा की बूँदों का बादल से पृथ्वी तल तक आना इसका एक अन्य उदाहरण है।

10.1 गुरूत्वाकर्षण

कहा जाता है कि एक बार न्यूटन पेड़ के नीचे बैठा था उसी समय एक सेब उसके ऊपर गिरा। सेब के गिरने पर न्यूटन इस घटना के कारण ढूँढ़ने को प्रेरित हुआ। उसने सोचा कि सेब पृथ्वी की ओर ही क्यों गिरा। यह चन्द्रमा की ओर आकर्षित क्यों नहीं हुआ। इस प्रकार दैनिक जीवन की

घटनाओं पर न्यूटन ने गुरूत्वाकर्षण के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया।

इस अध्याय में हम गुरूत्वाकर्षण तथा गुरूत्वाकर्षण के सार्वत्रिक नियम के बारे में अध्ययन करेंगे साथ ही पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल के अन्तर्गत वस्तु की गति पर विचार करेंगे साथ ही वस्तु के भार में परिवर्तन होने एवं अन्तरिक्ष में तैरती वस्तुओं के रहस्य को जानेंगे।

आइयें देखें कि वृत्ताकार गति कैसे होती हैं ?

गतिविधि 10.2

• धागे का एक टुकड़ा लेकर उसके एक सिरे पर छोटा पत्थर बाँधिए।

• धागे के दूसरे सिरे को पकड़कर पत्थर को वृत्ताकार पथ में घुमाइए जैसे कि चित्र में दिखाया गया है।

• पत्थर की गति की दिशा को देखिये।

• अब धागे को छोड़िए ओर पत्थर की गति की दिशा को देखिए.

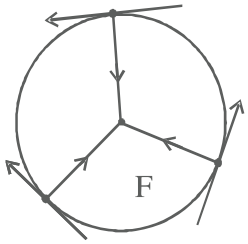

चित्र 10.1

धागे को छोड़ने से पहले पत्थर वृत्ताकार गति कर रहा था इस समय उस पर केन्द्र की ओर एक बल लगता है जिसे अभिकेन्द्र बल कहते हैं। यह बल ही वस्तुओं की वृत्ताकार गति के लिए उत्तरदायी है।

धागे को छोड़ने पर पत्थर एक सरल रेखा में जाकर मुक्त रूप से गतिशील हो जाता है अर्थात अभिकेन्द्र बल हटते ही वृताकार गति समाप्त हो जाती है।

पृथ्वी के चारों ओर चन्द्रमा की गति अभिकेन्द्र बल के कारण ही है। यह अभिकेन्द्र बल पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल से प्राप्त होता है।

गुरूत्वाकर्षण बल विश्व के सभी पिण्डों के मध्य प्राकृतिक रूप से लगता है परन्तु हमें पृथ्वी पर स्थित सामान्य वस्तुओं

के बीच लगने वाले गुरूत्वाकर्षण बल का आभास नहीं होता। आकाशीय पिण्डों का द्रव्यमान अधिक होने से यह बल प्रभावी हो जाता है और उनकी गति को नियंत्रित करता है।

सर्वप्रथम पाँचवी सदी में भारतीय खगोलविद् आर्यभट्ट नें ग्रहों की गति को समझने के लिए भूकेन्द्रीय मॉडल दिया। भाष्कराचार्य ने न्यूटन व केपलर से लगभग 500 वर्ष पहले अपनी मुख्य रचना सिद्धान्त शिरोमणी के ग्रह गणित खण्ड में पृथ्वी की गुरुत्व शक्ति व ग्रहीय गति की व्यापक चर्चा की है। भाष्कराचार्य ने पृथ्वी की त्रिज्या (R) तथा परिधि ($2\pi r$) की गणना की। आर्यभट्ट की कल्पना के आधार पर पश्चिमी वैज्ञानिक कॉपरनिकस (1473 – 1543) ने खगोल पिण्डों की गति का मॉडल प्रस्तुत किया। जिस पर कैप्लर गैलीलियो ने भी कार्य कर कुछ नियम दिये जिससे ग्रहों की गति का और स्पष्टीकरण हुआ।

सत्रहवीं शताब्दी के प्रमुख वैज्ञानिक आइजक न्यूटन (1642–1727) ने गति के तीन नियमों तथा गुरूत्वाकर्षण का सार्वत्रिक नियम दिया जो ठोस वैज्ञानिक तर्कों पर आधारित थे साथ ही गणित से उसकी पुष्टि भी की गई थी। इन वैज्ञानिकों का भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

10.2. गुरूत्वाकर्षण का सार्वत्रिक नियम

ब्रह्माण्ड का प्रत्येक कण (पिण्ड) किसी भी अन्य कण (पिण्ड) पर अपनी ओर एक आकर्षण बल लगाता है, जिसे गुरूत्वाकर्षण बल कहते हैं।

इस नियमानुसार दो द्रव्य कणों (पिण्डों) के मध्य लगने वाला आकर्षण बल कणों के द्रव्यमानों के गुणनफल के समानुपाती तथा उनके मध्य की दूरी के वर्ग के व्युत्क्रमानुपाती होता है। इस बल की दिशा दोनों कणों को मिलाने वाली रेखा की दिशा में होती हैं।

माना M एवं m द्रव्यमान के दो पिण्ड चित्र 10.1 के अनुसार परस्पर d दूरी पर रखे हैं तो इनके मध्य लगने वाला गुरूत्वाकर्षण बल F

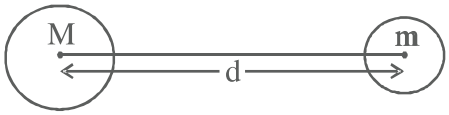

चित्र 10.2

(1) $F \propto Mm$ ..... (i)

(2) $F \propto \frac{1}{d^2}$ .....(ii)

(i) व (ii) से $F \propto \frac{Mm}{d^2}$ तथा

$$F = \frac{GMm}{d^2} \quad \text{..... (10.1)}$$

यहाँ G समानुपाती नियतांक हैं जिसे सार्वत्रिक गुरूत्वाकर्षण नियतांक (Univershal gravitational constant) कहते हैं।

प्रयोगों से G का मान 6.67×10^{-11} न्यूटन–मीटर^2 – कि.ग्रा. $^{-2}$ है। इसका मान कणों की प्रकृति, माध्यम, समय एवं ताप आदि पर निर्भर नहीं करता है अर्थात सभी स्थानों पर समान रहता है। अतः इसे सार्वत्रिक नियतांक कहते हैं पृथ्वी भी वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करती है। पृथ्वी के इस आकर्षण बल को गुरूत्वीय बल कहते हैं।

G का मात्रक निकालने की विधिः समी. (10.1) से

$$Fd^2 = GMm$$

$$G = \frac{Fd^2}{Mm} \quad \text{..... (10.2)}$$

समी. (10.2) में F, d व M के मात्रक रखते हैं तो G का SI मात्रक $\frac{N\,m^2}{Kg^2}$ प्राप्त होता है।

गुरूत्वाकर्षण के नियम से अनेक परिघटनाओं की सरलता से व्याख्या की जा सकती है उनमें से कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ है–

(1) हमें पृथ्वी से बांधे रखने वाला बल
(2) सुर्य के चारों ओर ग्रहों की गति
(3) पृथ्वी के चारों चन्द्रमा की गति; तथा
(4) समुद्र में ज्वार भाटा आना

उदाहरण 10.1 : पृथ्वी का द्रव्यमान लगभग 6×10^{24} kg हैं तथा चंद्रमा का द्रव्यमान 7.4×10^{22} kg है यदि पृथ्वी तथा चंद्रमा के बीच की दूरी 3.84×10^5 km है तो पृथ्वी द्वारा चंद्रमा पर लगाये गये बल का परिकलन कीजिए।

यहाँ $G = 6.7 \times 10^{-11} \frac{Nm^2}{Kg^2}$

हल : पृथ्वी का द्रव्यमान $M = 6 \times 10^{24}$ kg
चंद्रमा का द्रव्यमान $m = 7.4 \times 10^{22}$ kg
दोनों के बीच की दूरी $d = 3.84 \times 10^5$ km

$= 3.84 \times 10^5 \times 1000$ m

$= 3.84 \times 10^8$ m

पृथ्वी द्वारा चन्द्रमा पर लगाया गया बल

$$F = \frac{G M m}{d^2}$$

$$= \frac{6.7\times10^{-11}\times6\times10^{24}\times7.4\times10^{22}}{3.84\times10^{8}\times3.84\times10^{8}} N$$

$= 20.17 \times 10^{19}$ N

$= 2.02 \times 10^{20}$ N

उदाहरण 10.2 : एक 40 kg द्रव्यमान का गोला दूसरे 80 kg द्रव्यमान के गोले द्वारा 0.25×10^{-6} kg भार के बराबर गुरूत्वाकर्षण बल अनुभव करता हैं। दोनों गोलों के केन्द्र के मध्य 30 सेमी. की दूरी है। यदि गुरूत्वीय त्वरण g = 9.8 मी. / सें^{2} है तो गुरूत्वाकर्षण नियतांक की गणना कीजिए।

हल : यहाँ $m_1 = 40$ kg

$m_2 = 80$ kg

$W = F = mg = 0.25 \times 10^{-6} \times 9.8$ न्यूटन

r = 30 सेमी. = 0.3 मीटर

$$F = \frac{G m_1 m_2}{r^2}$$

$$G = \frac{F r^2}{m_1 m_2}$$

$$= \frac{0.25\times10^{-6}\times9.8\times0.3\times0.3}{40\times80}$$

$$= \frac{225\times98\times10^{-11}}{32\times100}$$

$= 6.89 \times 10^{-11}$ N m^2 kg^{-2}

गतिविधि 10.3

(i) एक पत्थर को ऊपर फेंकने पर वह एक निश्चित ऊँचाई तक पहुँचता है फिर नीचे गिरने लगता है।

(ii) एक पत्थर को कुछ ऊँचाई से छोड़ने पर वह स्वतः नीचे की ओर गिरने लगता है।

आपने देखा पहली स्थिति में पत्थर कुछ ऊँचाई तक जाता हैं। यह ऊँचाई आपके द्वारा लगाये बल पर निर्भर करती है। इस स्थिति में पत्थर की गति की दिशा, पृथ्वी के गुरूत्वीय बल के विपरीत है। इस कारण एक निश्चित ऊँचाई प्राप्त करने के बाद यह पुनः नीचे गिरने लगता है।

द्वितीय स्थिति में पत्थर कुछ ऊँचाई से स्वतः नीचे की ओर गिरता है इसे मुक्त पतन कहते हैं इस स्थिति में पत्थर की गति की दिशा एवं गुरूत्वीय बल की दिशा समान होती है।

उक्त दोनों स्थितियों में वस्तु के वेग में परिवर्तन उत्पन्न होता है जिससे वस्तु की गति गुरूत्वीय त्वरण के अधीन होती है।

10.3 गुरूत्वीय त्वरण

जब वस्तु के वेग में परिवर्तन या त्वरण गुरूत्वीय बल के कारण होता है तो इसे गुरूत्वीय त्वरण कहते हैं। इसे 'g' से प्रदर्शित करते हैं गुरूत्वीय त्वरण का मात्रक m s^{-2} होता है।

गति के दूसरे नियम से बल = द्रव्यमान x त्वरण

या $F = mg$ ..... (10.3)

समीकरण (10.1) तथा (10.3) की तुलना करने पर

$$mg = G\frac{Mm}{d^2}$$

$$g = \frac{GM}{d^2} \quad \text{..... (10.4)}$$

यहाँ M पृथ्वी का द्रव्यमान, d वस्तु की पृथ्वी के केन्द्र से दूरी है।

यहाँ d के बढ़ने पर, g के मान में कमी होती है

यदि पृथ्वी की त्रिज्या R हो तो पृथ्वी सतह पर गुरूत्वीय त्वरण

$$g_s = \frac{GM}{R^2} \quad \text{..... (10.5)}$$

चित्र 10.2 से स्पष्ट है कि पृथ्वी की त्रिज्या ध्रुवों से विषुवत वृत की ओर जाने पर बढ़ती है इसलिए g का मान ध्रुवों पर विषुवत वृत की अपेक्षा अधिक होगा।

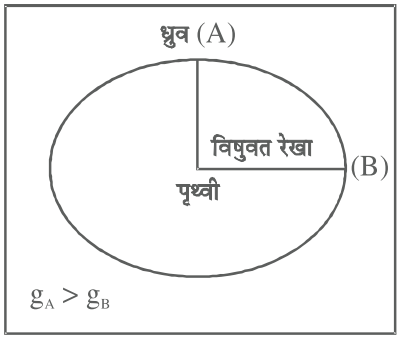

चित्र 10.2

पृथ्वी सतह से h ऊँचाई की ओर बढ़ने पर g का मान घटता है।

पृथ्वी सतह पर गुरूत्वीय त्वरण के मान की गणना :

पृथ्वी का द्रव्यमान $M = 6 \times 10^{24}$ Kg

पृथ्वी की त्रिज्या $R = 6400$ Km

$= 6400 \times 1000$

$= 6.4 \times 10^6$ m

समी. 10.5 से $g_s = \frac{GM}{R^2}$

$$= \frac{6.7\times10^{-11}\times6\times10^{24}}{6.4\times10^{6}\times6.4\times10^{6}}$$

$= 9.8$ m/s^2 या m s^{-2}

अतः पृथ्वी के गुरूत्वीय त्वरण का मान $= 9.8 ms^2$

10.3.1 विभिन्न ग्रहों पर गुरूत्वीय त्वरण

किसी भी ग्रह का गुरूत्वीय त्वरण उस ग्रह के द्रव्यमान एवं व्यास पर निर्भर करता है, अर्थात् जो ग्रह जितना भारी होगा उसका गुरूत्वीय त्वरण तुलनात्मक रूप से उतना ही अधिक होगा।

गतिविधि : 10.4

- नीचे एक सारणी दी गई है
- सारणी में ग्रहों के द्रव्यमान, व्यास व गुरूत्वीय त्वरण वर्णित है।
- g की निर्भरता को ध्यान में रखते हुए सारणी 10.1 का अवलोकन करे तथा नीचे दिये गये प्रश्नों का हल खोजिए।

सारणी 10.1

ग्रहों के नाम	द्रव्यमान $\times 10^{24}$ (Kg)	व्यास (Km)	गुरूत्वीय त्वरण (m/s^2)
बुध (Mercury)	0.33	4879	3.7
शुक्र (Venus)	4.87	12104	8.9
पृथ्वी (Earth)	5.97	12756	9.8
मंगल (Mars)	0.642	6792	3.7
बृहस्पति (Jupitar)	1898	142984	23.1
शनि (Saturn)	568	120536	9.0
अरूण (Uranus)	86.8	51118	8.7
वरूण (Neptune)	102	495.28	11
प्लूटो (Pluto)	0.014	2370	0.7

प्लूटो को सन् 2006 में ग्रह की श्रेणी से हटा दिया गया है।

प्रश्न 1. सारणी में सबसे अधिक 'g' किसका है और क्यों ?

प्रश्न 2. बुध ग्रह पर 'g' का मान कितना है ?

आप स्वयं भी सारणी से प्रश्न बनाकर अपने साथियों के साथ चर्चा करें।

चंद्रमा पर गुरूत्वीय त्वरण 1.61 m/s^2 है जो पृथ्वी के गुरूत्वीय त्वरण का लगभग $\frac{1}{6}$ है।

10.4 पृथ्वी के गुरूत्वीय बल के प्रभाव में वस्तुओं की गति

समी. (10.4) व (10.5) से स्पष्ट है कि वस्तुओं द्वारा अनुभव किया जाने वाला गुरूत्वीय त्वरण वस्तुओं के द्रव्यमान एवं आकृति पर निर्भर नहीं करता। इसका अर्थ यह हुआ कि विभिन्न वस्तुओं को समान ऊँचाई से गिराने पर समान दर से नीचे गिरनी चाहिए। क्या ऐसा होता है ? इसके लिए एक क्रियाकलाप करेंगे।

गतिविधि 10.5

- कुछ कागज, पंख, सिक्के तथा पत्थर लीजिए।
- इन्हें घर कि छत से नीचे गिराइये और देखिए।
- क्या धरती पर सब एक साथ पहुँचते है?

आप देखते है कि सिक्का व पत्थर साथ–साथ तथा थोड़ी देर बाद कागज व पंख लगभग साथ आते हैं, क्योंकि वस्तुओं पर वायु प्रतिरोध से उत्पन्न घर्षण बल भी लगता है यह घर्षण बल कागज व पंख के लिए अधिक होता है जबकि सिक्के एवं पत्थर के लिए कम होता है।

मुक्त रूप से गिरती हुई वस्तुओं का प्रारम्भिक वेग शून्य होता हैं।

पृथ्वी की सतह के निकट (कुछ km ऊँचाई तक) गुरूत्वीय त्वरण g का मान स्थिर रहता है। इसलिए पृथ्वी सतह के निकट वस्तुओं की गति अध्ययन के लिए पूर्व अध्याय में वर्णित एक समान त्वरण की गति समीकरण में त्वरण a के स्थान पर g रखकर उपयोग की जाती है। सामान्यतः वायु के प्रतिरोध को नगण्य माने तो

(i) किसी वस्तु अथवा पिण्ड को ऊपर की ओर फैंकने पर गति समीकरणें

$$\left.\begin{aligned} v &= u - gt \\ h &= ut - \frac{1}{2}gt^2 \\ v^2 &= u^2 - 2gh \end{aligned}\right\} \quad \text{.....(10.6)}$$

जहाँ h किसी क्षण वस्तु की सतह से ऊँचाई है।

(ii) वस्तु अथवा पिण्ड को मुक्त रूप से छोड़ने पर गति समीकरणें –

$$\left.\begin{aligned} v &= gt \\ s &= \frac{1}{2}gt^2 \\ v^2 &= 2gs \end{aligned}\right\} \quad \text{.....(10.7)}$$

उदाहरण 10.3 एक नीम पर बैठे कौए की चोंच से पूड़ी छूटकर 2 सैकेण्ड में नीचे आ जाती हैं। $g = 10\ m/s^2$ का मान लेते हुए निम्न गणना कीजिए।

(i) धरती पर टकराते समय पूड़ी का वेग क्या होगा ?

(ii) इन 2 सैकण्ड के दौरान पूड़ी का औसत वेग कितना होगा ?

(iii) कौए की चोंच धरती से कितनी ऊँचाई पर है ?

हलः (i) अन्तिम वेग समी. (10.7) से

$v = gt$

अतः $v = 10 \times 2 = 20\ m/s$

(ii) औसत वेग

$$\bar{v} = \frac{u+v}{2} = \frac{0+20}{2} = 10\ m/s$$

(iii) तय की गई दूरी

$$s = \frac{1}{2}gt^2$$

$$s = \frac{1}{2} \times 10 \times 4$$

$= 20\ m$

उदाहरण 10.4 : एक वस्तु को ऊर्ध्वाकार दिशा में ऊपर की ओर फैंका जाता है जिससे वह 10 m ऊँचाई तक पहुँचती है, तो निम्न का परिकलन कीजिएः–

(1) वस्तु कितने वेग से ऊपर फैंकी गई तथा

(2) वस्तु द्वारा उच्चतम बिन्दु तक पहुँचने में लिया गया समय ?

हलः यहाँ उच्चतम ऊँचाई $h = 10\ m$

अंतिम वेग $v = 0$

गुरूत्वीय त्वरण $g = 9.8\ m/s^2$

(1) $v^2 = u^2 + 2gh$

$0 = u^2 - 2gh$

$u^2 = 2gh$

$u^2 = 2 \times 9.8 \times 10 = 196$

$u =$

$= 14\ m\ s^{-1}$

(2) $v = u - gt$

$0 = u - gt$

$u = gt$

$$t = \frac{u}{g} = \frac{10}{9.8} = 1.43\ s$$

10.5 द्रव्यमान

आपने पूर्व अध्याय में पढ़ा कि द्रव्यमान वस्तु के जड़त्व का माप होता है अर्थात वस्तु का जितना अधिक द्रव्यमान होगा उतना ही अधिक उसका जड़त्व भी होगा। किसी वस्तु का द्रव्यमान सभी स्थानों पर समान रहता है चाहे वह पृथ्वी पर हो या अंतरिक्ष में।

10.6 भार

पृथ्वी पर किसी वस्तु का भार एक प्रकार का बल है, जो उसे पृथ्वी की ओर ले जाता है। परिभाषा में किसी वस्तु का भार वह बल है जिससे वस्तु पृथ्वी की ओर आकर्षित होती है।

गणितीय रूप में $F = mg$

अतः वस्तु का भार $w = mg$.

*** आप सोचो भार का मात्रक क्या है और क्यों ?**

चूँकि किसी एक स्थान पर g का मान स्थिर होता है अतः वस्तु का भार उसके द्रव्यमान के समानुपाती होता है, स्थान

बदलने पर m वही रहता है परन्तु g के बदलने से वस्तु का भार बदल जाता है।

10.7 किसी वस्तु का चन्द्रमा पर भार

चन्द्रमा पर किसी वस्तु का भार वह बल है जिससे चन्द्रमा उस वस्तु को आकर्षित करता है, चन्द्रमा का द्रव्यमान पृथ्वी की अपेक्षा कम है अतः चन्द्रमा का आकर्षण बल भी कम हैं। हम कह सकते है कि चन्द्रमा पर वस्तु का भार पृथ्वी की अपेक्षा कम होता हैं।

चूँकि हमने देखा है कि चन्द्रमा पर गुरूत्वीय त्वरण 1.61 m/s^2 होता है जो पृथ्वी पर गुरूत्वीय त्वरण 9.8 m/s^2 से $\frac{1}{6}$ गुणा है अतः चन्द्रमा पर किसी वस्तु का भार पृथ्वी के भार का $\frac{1}{6}$ गुणा होगा।

भारहीनता :

मेले में लगे झूलों में कभी आप बैठे होंगे तो आपने महसूस किया होगा कि जब झूला ऊपर से नीचे की ओर आता है तो भार में कमी महसूस होती है।

वस्तुतः भार का आभास वस्तु पर लगने वाली प्रतिक्रिया बल के कारण होता है यदि नीचे आती लिफ्ट की केबल टूट जाये तो लिफ्ट स्वतंत्रता पूर्वक नीचे की ओर गिरने लगती है तो हमें भारहीनता (शून्य भार) का अनुभव होगा।

भारहीनता की अवस्था में प्रतिक्रिया बल (R) = 0

इस प्रकार कृत्रिम उपग्रह निरंतर पृथ्वी के केन्द्र की ओर मुक्त रूप से गिरता है जिससे उसमें स्थित सभी वस्तुएँ व जीव भारहीनता की अवस्था में रहते हैं। जिसके कारण अनेक रोचक परिणाम होते हैं। जैसे –

1. गिलास में भरा पानी गिलास उल्टा करने पर गिरेगा नहीं क्योंकि गिलास को टेढ़ा करते ही गिलास का पानी भारी होने के कारण बूंदों के रूप में तैरने लगता है। जिससे अंतरिक्ष यात्री गिलास का पानी नही पी सकता।

2. भोजन को पेस्ट के रूप में ट्यूब दबा कर अन्दर प्रवेष कराना होता है।

3. उपग्रह के भीतर सभी वस्तुओं का तैरती हुई अवस्था में होना ।

4. यदि अंतरिक्ष यात्री कृत्रिम उपग्रह में किसी स्प्रिंग तुला पर खड़ा हो तो तुला का पाठ्यांक शून्य प्राप्त होगा।

5. यदि किसी वस्तु को उपग्रह पर डोरी से लटका दें तो डोरी में तनाव शून्य होता हैं।

यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि कोई भी वस्तु कृतिम उपग्रह में भारहीनता महसूस करती है जबकि प्राकृतिक उपग्रह में ऐसा नहीं होता है। इसका कारण है कि प्राकृतिक उपग्रह का द्रव्यमान अधिक होने के कारण वह वस्तु पर अपना गुरूत्वाकर्षण बल लगाता हैं। कृतिम उपग्रह का द्रव्यमान कम होने के कारण वह वस्तु पर नगण्य गुरूत्वाकर्षण बल लगाता है। जिससे वस्तु कृतिम उपग्रह में भारहीनता महसूस करती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- वस्तु की गति के लिए कोई न कोई बल उत्तरदायी होता है तथा वृताकार गति के लिए अभिकेन्द्र बल आवश्यक है।
- ब्रह्माण्ड का प्रत्येक पिण्ड दूसरे पिण्ड पर प्रकृतिक रूप से एक आकर्षण बल लगाता है जिसे गुरूत्वाकर्षण बल कहते हैं । पिण्डों में तारे, ग्रह, आकाशगंगा तथा छोटे परमाणवीय कण सभी सम्मिलित हैं।
- दो पिण्डों के मध्य कार्यरत गुरूत्वाकर्षण बल को गणितीय रूप में निम्न प्रकार लिखते हैं, जिसे गुरूत्वाकर्षण के सार्वत्रिक नियम के रूप में भी जानते हैं–

$$F = \frac{GMm}{d^2}$$

यहाँ M व m क्रमशः दोनों पिण्डों के द्रव्यमान हैं तथा d दोनों के बीच की दूरी है। G समानुपाती नियतांक हैं जिसका आंकिक मान $= 6.67 \times 10^{-11}$ $\frac{Nx\,m^2}{Kg^2}$ होता है।

- गुरूत्वीय बल के कारण वस्तु के वेग में परिवर्तन हो तो वेग में परिवर्तन की दर को गुरूत्वीय त्वरण कहते हैं।
- पृथ्वी सतह पर गुरूत्वीय त्वरण के मान का सूत्र

$$g = \frac{GM}{R^2}$$

यहाँ M व R क्रमशः पृथ्वी का द्रव्यमान व पृथ्वी की त्रिज्या हैं तथा गुरूत्वीय त्वरण का पृथ्वी सतह पर आंकिक मान 9.8 m/s^2 होता है।

- गुरूत्वीय त्वरण का मान पृथ्वी सतह से ऊँचाई अथवा गहराई पर जाने पर कम होता जाता हैं।
- पृथ्वी सतह पर ध्रुवों से विषुवत रेखा की ओर जाने पर गुरूत्वीय त्वरण का मान कम हो जाता है।
- किसी भी ग्रह की सतह पर गुरूत्वीय त्वरण का मान उस ग्रह के द्रव्यमान एवं त्रिज्या पर निर्भर करता है।
- सौर मण्डल का सबसे बड़ा ग्रह बृहस्पति है इसका गुरूत्वीय त्वरण भी सर्वाधिक है।
- मुक्त गिरती हुई वस्तुओं का प्रारम्भिक वेग शून्य होता है, जबकि ऊपर की ओर फैंकने पर अन्तिम वेग शून्य होता है।
- प्रत्येक कण, पिण्ड या वस्तु का द्रव्यमान अवश्य होता है जो गुरूत्वीय बल पर निर्भर नहीं करता जबकि वस्तु का भार गुरूत्वीय बल पर निर्भर करता है।
- वस्तु के द्रव्यमान व भार में निम्न संबंध हैं $W = F = mg$

यहाँ F वस्तु का भार न्यूटन में तथा m वस्तु का द्रव्यमान में है तथा g गुरूत्वीय त्वरण मीटर/ सैकण्ड^2 में है।

- किसी वस्तु का किसी ग्रह या उपग्रह पर भार उस ग्रह या उपग्रह पर गुरूत्वीय त्वरण के मान पर निर्भर करता है। जैसे चन्द्रमा पर गुरूत्वीय त्वरण, पृथ्वी के गुरूत्वीय त्वरण से 1/6 गुना है तो किसी वस्तु का भार चन्द्रमा पर पृथ्वी पर भार से 1/6 गुना होगा ।
- स्वतंत्र रूप से गिरती वस्तु भारहीनता की अवस्था में होती है क्योंकि वस्तु पर प्रतिक्रिया बल शून्य होता हैं।
- कृत्रिम उपग्रह में स्थित सभी वस्तुएँ भारहीनता की अवस्था में होती हैं। जिससे वे तैरती हुई दिखती हैं।
- गुरूत्वाकर्षण बल की गणना से खगोलीय पिण्डों एवं इनकी गतियों को समझना आसान हो गया हैं।
- आकाशीय पिण्ड, गुरूत्वाकर्षण बल एवं ग्रहों की गति के क्षेत्र में प्रमुख योगदान देने वाले भारतीय वैज्ञानिकों में आर्यभट्ट, वराहमिहिर एवं भाष्कराचार्य प्रमुख हैं। पश्चिमी वैज्ञानिकों में कॉपरनिकस, गैलिलियो, केपलर एवं न्यूटन ने इस क्षेत्र में विशेष कार्य किया।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्नः –

1. न्यूटन का गुरूत्वाकर्षण का नियम सार्वत्रिक होता है क्योंकि –
   (अ) वह सदैव आकर्षण का होता है।
   (ब) वह सौरमण्डल के सभी सदस्यों व कणों पर लागू होता है।
   (स) यह सभी द्रव्यमान पर सभी दूरियों पर लागू होता है तथा माध्यम से प्रभावित नहीं होता है।
   (द) उपरोक्त में से कोई नहीं।
2. वस्तु की वृत्ताकार गति के लिए आवश्यक बल कौनसा है ?
   (अ) गुरूत्वाकर्षण बल
   (ब) घर्षण बल
   (स) अभिकेन्द्र बल
   (द) उपरोक्त में से कोई नहीं।
3. गुरूत्वाकर्षण के सार्वत्रिक नियतांक G का मान निर्भर करता है।
   (अ) कणों की प्रकृति पर
   (ब) कणों के मध्य उपस्थित माध्यम पर
   (स) समय पर
   (द) किसी पर निर्भर नहीं करता।
4. पृथ्वी सतह पर किसी व्यक्ति का भार 60 N है तो चन्द्रमा की सतह पर व्यक्ति का भार होगा –
   (अ) 60 N (ब) 30 N
   (स) 20 N (द) 10 N
5. m द्रव्यमान के किसी पिण्ड को गहरी खान के तल पर ले जाया जाता है तब –
   (अ) उसका द्रव्यमान बढ़ता है
   (ब) उसका द्रव्यमान घटता है
   (स) उसका भार घटता है
   (द) उसका भार बढ़ता है
6. दो द्रव्यमानों के बीच की दूरी दुगुनी करने पर द्रव्यमानों के बीच गुरूत्वाकर्षण बल –
   (अ) अपरिवर्तित रहेगा

(ब) चौथाई हो जायेगा
(स) आधा रह जायेगा
(द) दुगुना हो जायेगा

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्नः

1. किसी उपग्रह को ग्रह के चारों ओर चक्कर लगाने के लिए आवश्यक अभिकेन्द्रीय बल कहाँ से प्राप्त होता है ?
2. क्या एक कृत्रिम उपग्रह में किसी पिण्ड का गुरूत्वीय द्रव्यमान ज्ञात किया जा सकता है ?
3. दो द्रव्यमान के बीच की दूरी दुगनी करने पर द्रव्यमानों के बीच गुरूत्वाकर्षण बल में क्या परिवर्तन होगा।
4. एक वस्तु का द्रव्यमान 10 Kg है तो उस वस्तु का पृथ्वी की सतह पर भार कितना होगा ?
5. दो पिण्डों के मध्य गुरूत्वाकर्षण बल का सूत्र लिखिए?
6. बॉल पैन किस सिद्धांत पर कार्य करता है ?
7. एक व्यक्ति चन्द्रमा पर अधिक ऊँची छलांग लगा सकता है इसका क्या कारण है ?
8. एक–एक किग्रा के दो पिण्ड परस्पर एक मीटर की दूरी पर हैं तो इनके मध्य गुरूत्वाकर्षण बल का मान लिखिए।
9. चन्द्रमा पर पृथ्वी का गुरूत्वाकर्षण बल लगता है तो चन्द्रमा पृथ्वी पर क्यों नहीं गिरता ?
10. समुद्र में उत्पन्न ज्वारभाटे का प्रमुख कारण क्या हैं ?

लघूत्तरात्मक प्रश्नः

1. गुरूत्वाकर्षण का सार्वत्रिक नियम लिखिए ?
2. पृथ्वी की सतह पर गुरूत्वीय त्वरण g का मान कहाँ सबसे अधिक होता है और क्यों ?
3. गुरूत्वाकर्षण के सार्वत्रिक नियतांक का मान लिखकर इसका मात्रक भी लिखिए ?
4. गुरूत्वीय त्वरण किसे कहते हैं इसका सूत्र भी लिखिए ?
5. किसी वस्तु के द्रव्यमान तथा भार में क्या अंतर है स्पष्ट कीजिए ?
6. मुक्त पतन से क्या अभिप्राय है ? मुक्त पतन के उदाहरण भी दीजिए।
7. एक व्यक्ति पृथ्वी के ध्रुव से विषुवत रेखा की ओर आता है तो उसके भार में क्या परिवर्तन होगा ? और क्यों ?
8. भारहीनता किसे कहते हैं । भारहीनता के दो रोचक उदाहरण दीजिए।
9. मुक्त रूप से गिरती हुई वस्तु के लिये गति के तीनों समीकरण लिखिए एवं प्रतीकों का अर्थ भी लिखिए।
10. किसी वस्तु को u वेग से ऊपर की ओर फेंका जाता हैं। जिससे वह h ऊँचाई तक जाती है। वस्तु के लिए गति के तीनों समीकरण लिखिए।
11. एक अंतरिक्ष यात्री को भारहीनता के कारण क्या–क्या कठिनाईयाँ होती हैं।
12. केपलर तथा न्यूटन से भी पहले प्राचीन भारतीय खगोल वैज्ञानिक कौन थे और इनका गुरूत्वाकर्षण क्षेत्र में क्या योगदान था।
13. कृत्रिम उपग्रह में स्थित वस्तुएँ भारहीनता अवस्था में होती हैं जबकि प्राकृतिक उपग्रह में यह स्थिति नहीं होती ? कारण स्पष्ट कीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्नः –

1. दो गोलों में प्रत्येक का भार 10 किग्रा है यह एक–दूसरे से 50 सेमी. की दूरी पर हैं, इन दोनों के मध्य गुरूत्वाकर्षण बल का मान ज्ञात कीजिए।
2. पृथ्वी की सतह पर स्थित एक 40 Kg की वस्तु पर गुरूत्वाकर्षण बल की गणना करो, यदि पृथ्वी की त्रिज्या (R) = 6400 Km तथा द्रव्यमान = 6×10^{24} kg हों ।
3. किसी पत्थर को 20 m/s के प्रारम्भिक वेग से ऊपर की ओर फैंका जाता है $g = 10\ m/s^2$ लेते हुए निम्न की गणना करो।
   (i) पत्थर द्वारा उच्चतम ऊँचाई तक पहुँचने में लगा समय
   (ii) पत्थर द्वारा तय की गई दूरी
4. यदि चन्द्रमा का द्रव्यमान 0.073×10^{24} Kg एवं त्रिज्या 1738 Km हो तो चन्द्रमा की सतह पर गुरूत्वीय त्वरण ज्ञात करो।
5. 125 m ऊँची मीनार से एक पत्थर छोड़ा जाता है तो निम्न की गणना करो –
   (i) नीचे पहुँचने में लगा समय
   (ii) पत्थर का अंतिम वेग
6. यदि पृथ्वी का व्यास उसके वर्तमान व्यास का आधा हो जाये तो द्रव्यमान 1/8 रह जायेगा। इस आधे आकार की पृथ्वी पर g का मान क्या होगा ?

उत्तरमाला

(1) स, (2) अ, (3) द, (4) द, (5) स, (6) ब

◆◆◆

अध्याय 11

ध्वनि
(Sound)

ऊर्जा के विभिन्न रूप हैं जैसे यांत्रिक ऊर्जा, विद्युत ऊर्जा, ऊष्मा, प्रकाश ऊर्जा, नाभिकीय ऊर्जा आदि। इनमें से ही ऊर्जा का एक रूप है ध्वनि ऊर्जा। दैनिक जीवन में विभिन्न स्त्रोतों की ध्वनि हम सुनते हैं। ध्वनि के कम्पन्न हमारे कानों में जो संवेदना उत्पन्न करते हैं उनसे ही हम आवाज सुन पाते हैं।

गतिविधि 11.1: एक स्वरित्र द्विभुज की किसी भुजा को रबड़ के पैड पर मार कर कंपित कराने पर क्या ध्वनि सुनाई देती है। हम पायेंगे कि स्वरित्र की भुजा को पैड पर मारने पर इसमें कम्पन्न उत्पन्न होता है और यदि इस कंपमान स्वरित्र को किसी धागे से लटकी गेंद के निकट ले जाते हैं तो चित्र 11.1 में दर्शाये अनुसार गेंद भी कंपित करने लगेगी।

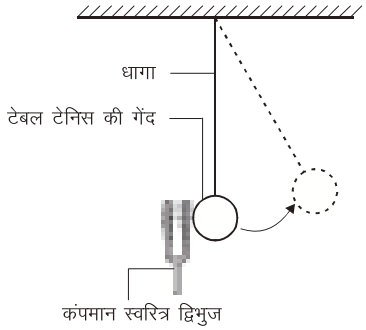

चित्र–11.1 कंपमान स्वरित्र द्विभुज लटकी हुई की गेंद को स्पर्श करते हुए।

गतिविधि 11.2: विभिन्न वाद्ययंत्रों में ध्वनिउत्पन्न करने के लिये प्रेक्षण इस प्रकार होते है

वाद्य यन्त्र	कंपित भाग
गिटार,सितार	तार
बाँसुरी	बाँसुरी के अन्दर की वायु
ढोलक	पर्दा
हारमोनियम	हारमोनियम का रीड

इसी प्रकार हमारे विद्यालय की घण्टी पर हथौड़े के आघात के कारण उत्पन्न कम्पन्न से ध्वनि उत्पन्न होती है। उक्त क्रिया कलापों से स्पष्ट है कि ध्वनि वस्तुओं के कम्पन्न से उत्पन्न होती है।

11.1 ध्वनि का संचरण (Propagation of Sound)

वस्तुओं के कम्पन्न जिस पदार्थ से होकर गुजरते हैं वह माध्यम कहलाता है। ध्वनि ठोस, द्रव एवं गैस तीनों माध्यम में से संचरण कर सकती है। जब कोई वस्तु कम्पन्न करती है तो माध्यम के कण कम्पन्न करते हुए अपनी ऊर्जा निकटवर्ती माध्यम कणों को स्थानान्तरित करती है जिससे समीपवर्ती कण कंपमान होकर इसी ऊर्जा को आगे से कणों को देकर कंपमान कर देती है। इस प्रकार ध्वनि (ऊर्जा) एक कण से निकटवर्ती कणों में स्थानान्तरित होती हुए हमारे कान तक पहुँचती है जहाँ ये कम्पन्न अथवा विक्षोभ जो संवेदन उत्पन्न करते हैं उनसे हम ध्वनि सुन पाते है। ध्वनि संचरण में केवल विक्षोभ (कम्पन्न) संचरित होते हैं माध्यम के कणों का कुल विस्थापन शून्य ही रहता है।

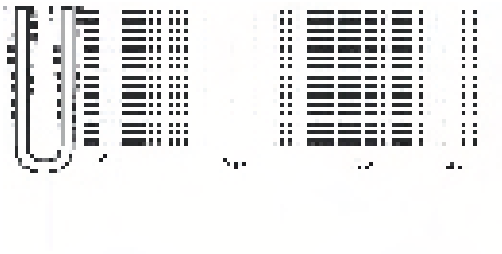

चित्र–11.2 ध्वनि संचरण में संपीडन (**Compression**) तथा विरलन (**Rarefaction**) की श्रेणी

वायु ध्वनि संचरण के लिए सबसे सामान्य माध्यम है। चित्र 11.2 में दर्शाये अनुसार कंपित वस्तु की वायु को धक्का देकर संपीडन (Compression) उत्पन्न करती है। जब कंपित वस्तु पीछे की ओर कंपन करती है तो विरलन (Rarefaction) उत्पन्न होता है। यह संपीडन एवं विरलन ध्वनि तरंग बनाते हैं जो माध्यम से होकर संचरित होती हैं। संपीडन उच्च दाब का क्षेत्र है तथा विरलन निम्न दाब का क्षेत्र है।

ध्वनि संचरण के लिए माध्यम की आवश्यकता **(Sound needs a medium to travel)**

ध्वनि एक यांत्रिक तरंग है तथा इसके संचरण के लिए किसी माध्यम जैसे – वायु, जल, लोहे आदि की आवश्यकता

होती है। यह निर्वात् में होकर नहीं चल सकती है। इसे प्रयोग द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

गतिविधि11.3: काँच के बेलजार में विद्युत घण्टी को घंटी के स्विच को दबाने पर उसकी लटका कर ध्वनि सुनते है। अब निर्वात पम्प द्वारा बेलजार की वायु बाहर निकाल लेते हैं, हम पाते हैं कि जैसे–जैसे बेलजार से वायु कम होती है घंटी की ध्वनि कम होती जाती है। लगभग निर्वात की अवस्था में घंटी की आवाज सुनाई देना बंद हो जाती है।

इस प्रकार इस क्रिया कलाप से स्पष्ट है कि ध्वनि संचरण के लिए माध्यम की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि यदि हम चन्द्रमा पर बात करें तो वायुमण्डल की अनुपस्थिति के कारण हम अपने साथी की बात नहीं सुन सकते हैं।

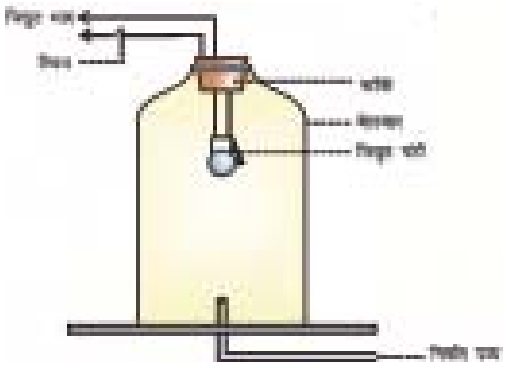

चित्र– 11.3 बेलजार प्रयोग

ध्वनि तरंगों की प्रकृति **(Nature of sound wave)**

तरंगो के कम्पन्न एवं संचरण की दिशा के आधार पर दो प्रकार से विभक्त किया है–

(i) अनुप्रस्थ तरंगें:– जिन तरंगों में कम्पन्न संचरण की दिशा में लम्बवत् होते है उन्हें अनुप्रस्थ तरंगे कहते है। उदाहरण–प्रकाश तरंगे, तनी हुई रस्सी में संचरित ऊर्जा आदि

(ii) अनुदैर्ध्य तरंगें:– जिन तरंगों में कम्पन्न संचरण की दिशा में अनुदिश होते है उन्हें अनुदैर्ध्य तरंगे कहते है। उदाहरण:– स्प्रिंग में उत्पन्न तरंगें, ध्वनि तरंगें आदि।

ध्वनि तरंगे अनुदैर्ध्य प्रकृति की है। अनुदैर्ध्य तरंग संचरण को हम निम्न क्रिया कलाप से आसानी से समझ सकते हैं।

क्रियाकलाप 11.4: चित्र 11.4 में दर्शाये अनुसार एक स्लिंकी को स्वयं व अपने मित्रों के हाथों में खीचकर पकड़ने के पश्चात लगातार तेज झटका देते हैं। स्लिंकी पर एक चिन्ह लगा देते हैं तो हम पाते हैं कि स्लिंकी पर लगा चिन्ह विक्षोभ के संचरण की दिशा के समान्तर आगे–पीछे गति करता है।

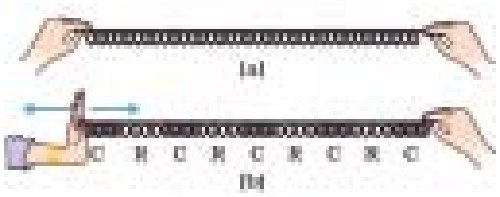

चित्र–11.4 स्लिंकी में अनुदैर्ध्य तरंग।

उन क्षेत्रों को जहाँ कुंडलियाँ पास–पास आ जाती हैं संपीडन (**C**) कहते हैं तथा उन क्षेत्रों को जहाँ कुण्डलियाँ दूर–दूर हो जाती हैं, विरलन (**R**) कहते हैं। स्लिंकी में विक्षोभ के संचरण की तरंगों को अनुदैर्ध्य तरंगें कहते हैं। इन तरंगो में माध्यम के कणों का विस्थापन विक्षोभ के संचरण की दिशा के समान्तर होता है।

11.2 ध्वनि तरंग के अभिलक्षण (Characteristics of a sound wave)

किसी ध्वनि तरंग के तीन अभिलक्षण होते हैं–

(i) आवृत्ति (Frequency)

(ii) आयाम (Amplitude)

(iii) वेग (Speed)।

चित्र 11.5 में ध्वनि तरंग को ग्राफीय रूप में प्रदर्शित किया है। इसमें संचरण दूरी (x अक्ष) के साथ तथा किसी समय माध्यम के दाब का औसत मान से परिवर्तन (y अक्ष) को प्रदर्शित किया है। ग्राफ में विभिन्न बिन्दुओं के अध्ययन से हम पाते हैं कि बिन्दु 1, 5, 9 आदि वे स्थान हैं जहाँ दाब सर्वाधिक है। ये ध्वनि संचरण के संपीडन (compression) बिन्दु हैं जबकि बिन्दु 3, 7, 11 पर दाब न्यूनतम है जिन्हें विरलन (Rerefraction) कहते हैं। दो क्रमागत संपीडनों (**C**) अथवा दो क्रमागत विरलनों (**R**) के बीच की दूरी तरंगदैर्ध्य **(Wave Length)** कहलाती हैं इसे सामान्यतः λ से प्रदर्शित करते हैं।

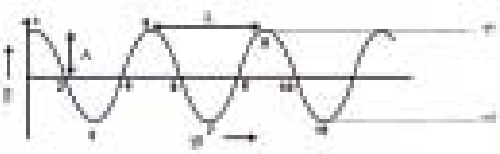

चित्र–11.5 ध्वनि तरंग का ग्राफीय रूप

आवृत्ति **(Frequency)** – "एकांक समय में किए गए कम्पनों या दोलनों की संख्या ध्वनि तरंग की आवृत्ति कहलाती है। इसे ν से प्रदर्शित किया गया है। इसका S.I. मात्रक हर्ट्ज (Hz) है।

आवर्तकाल **(Time period)**– दो क्रमागत संपीडनों या दो क्रमागत विरलनों को निश्चित बिन्दु से गुजरने में लगे समय को तरंग का आवर्तकाल कहते हैं। अन्य शब्दों में माध्यम के कणों द्वारा एक दोलन पूर्ण करने में लगा समय आवर्तकाल कहलाता है। इसे T से प्रदर्शित करते हैं। इसका S.I. मात्रक सेकण्ड (s) है।

आवृत्ति तथा आवर्तकाल के बीच निम्नलिखित सम्बन्ध होता है–

$$\text{आवृत्ति } \nu = \frac{1}{\text{आवर्तकाल (T)}} \quad \ldots (11.1)$$

आयाम **(Amplitude)** – मूल स्थिति से माध्यम के विक्षोभ का अधिकतम विस्थापन आयाम कहलाता है। इसे A से प्रदर्शित करते हैं।

वेग **(Velocity)** एवं तरंग समीकरण **(Wave Equation)**– तरंग में किसी बिन्दु (जैसे संपीडन या विरलन) द्वारा एक सैकण्ड में तय दूरी को तरंग वेग कहते है।

$$\text{हम जानते है वेग} = \frac{\text{दूरी}}{\text{समय}}$$

$$\text{अतः } \mathrm{v} = \frac{\lambda}{T} = \lambda \nu \quad \ldots (11.2)$$

उक्त समीकरण को तरंग समीकरण कहते हैं यह समीकरण सभी तरह की तरंगों के लिए सत्य है। तरंग का वेग माध्यम पर निर्भर करता है। किसी माध्यम में तरंग का वेग नियत रहता है। जब भी किसी माध्यम में तरंग की आवृत्ति बढ़ती है तो तरंग दैर्ध्य घटता है।

तीव्रता **(Intensity)**–

1. एक सेकण्ड में एकांक क्षेत्रफल से गुजरने वाली ध्वनि ऊर्जा को ध्वनि की तीव्रता कहते हैं।
2. ध्वनि की तीव्रता मापी जाती है।
3. ध्वनि की तीव्रता का सम्बन्ध उसकी ऊर्जा से है।

प्रबलता **(Loudness)** –

1. कानों की संवेदनशीलता की माप को ध्वनि की प्रबलता कहते हैं।
2. ध्वनि की प्रबलता को मापा नहीं जा सकता।
3. ध्वनि की प्रबलता तरंग की ऊर्जा की तुलना में हमारे कानों की संवेदनशीलता पर अधिक निर्भर करती हैं।

ध्वनि के अभिलक्षणों के सम्बन्ध में कुछ तथ्य निम्नवत् हैं

1. तारत्व ध्वनि का वह गुण है जिसके कारण ध्वनि बारीक अथवा मोटी सुनाई पड़ती है तारत्व को मापा नहीं जा सकता परन्तु अनुभव किया जा सकता है।
2. तारत्व ध्वनि की आवृत्ति पर निर्भर करता है। उच्च आवृत्ति की ध्वनि का तारत्व ऊँचा होता है तथा यह ध्वनि बारीक सुनाई पड़ती है। इसके विपरीत निम्न आवृत्ति की ध्वनि का तारत्व नीचा होता है तथा यह ध्वनि मोटी सुनाई पड़ती है।
3. मच्छर की भिनभिनाहट का तारत्व ऊँचा होता है तथा शेर की दहाड़ का तारत्व नीचा होता है।
4. प्रबलता ध्वनि का वह गुण है जिसके आधार पर कोई ध्वनि तेज (जोरो की) अथवा धीमी सुनाई पड़ती है। धीमी सुनाई वाली ध्वनि की प्रबलता कम तथा तेज सुनाई पड़ने वाली ध्वनि की प्रबलता अधिक होती हैं।
5. ध्वनि की प्रबलता ध्वनि के माध्यम पर निर्भर करने के साथ–साथ कान की संवेदनशीलता पर भी निर्भर करती है। एक ही ध्वनि किसी व्यक्ति के लिए प्रबल तथा दूसरे के लिए मृदु हो सकती है।
6. गुणवत्ता ध्वनि का वह गुण है जिसके आधार पर दो समान तारत्व तथा समान प्रबलता वाली ध्वनियों में विभेद किया जा सकता हैं।

उदाहरण 11.1: किसी ध्वनि तरंग की आवृत्ति 4 kHz और उसकी तरंगदैर्ध्य 17.5 cm है। यह 3.5 km की दूरी चलने में कितना समय लेगी?

हल– आवृत्ति $\nu = 4kHz = 4000Hz$

तरंगदैर्ध्य $\lambda = 17.5\,\mathrm{cm} = 0.175\,\mathrm{m}$

हम जानते है, तरंग वेग,

$\mathrm{v} =$ तरंगदैर्ध्य $\times$ आवृत्ति

$\mathrm{v} = \lambda\nu = 0.175m \times 4000Hz$

$= 700\,\mathrm{m/s}$

तरंग को 3.5 km दूरी तय करने में लगने वाला समय

$$t = \frac{d}{v} = \frac{3.5 \times 1000\,\mathrm{m}}{700\,\mathrm{m\,s^{-1}}} = \frac{35}{7} = 5\,\mathrm{s}$$

ध्वनि 3.5 km तय करने में 5 s का समय लेगी।

उदाहरण 11.2: किसी दिए हुए माध्यम में एक ध्वनि तरंग की आवृत्ति 220 Hz तथा वेग 440 m / s है। इस तरंग की तरंग दैर्ध्य की गणना कीजिए।

हल– तरंग की आवृत्ति $\nu = 200Hz$

तरंग वेग $\mathrm{v} = 440m/s$

सूत्र $\mathrm{v} = \nu\lambda$ से,

तरंग दैर्ध्य $\lambda = \frac{v}{\nu} = \frac{440}{220} = 2\,m$

11.3 विभिन्न माध्यमों में ध्वनि की चाल (Speed of Sound in Different Media)

ध्वनि की चाल माध्यम के गुणों पर निर्भर करती हैं। यह माध्यम के ताप पर भी निर्भर करती है। ध्वनि की चाल ठोसों में अधिक तथा गैसों में कम होती है। ताप बढ़ने पर ध्वनि की चाल बढ़ती है। सामान्यतः $0\,^{o}C$ पर ध्वनि की चाल $330\,m/s$ होती है ध्वनि की विभिन्न माध्यमों में चाल सारणी 11.1 में दर्शायी है।

सारणी 11.1. विभिन्न माध्यमों में 25^{0} **C** पर ध्वनि की चाल

अवस्था	पदार्थ	चाल m/s में
ठोस	ऐलुमिनियम	6420
	निकिल	6040
	स्टील	5960
	लोहा	5950
	पीतल	4700
द्रव	जल (समुद्री)	1531
	जल (आसुत)	1498
	इथेनॉल	1207
	मेथेनॉल	1103
गैस	हाइड्रोजन	1284
	हीलियम	965
	वायु	346
	ऑक्सीजन	316
	सल्फर डाईऑक्साइड	213

11.4 ध्वनि का परावर्तन (Reflection of Sound)

प्रकाश की भाँति ध्वनि भी किसी ठोस या द्रव के पृष्ठ से परावर्तित होती है तथा परावर्तन के उन्हीं नियमों का पालन करती है जिनका पालन प्रकाश करता है। ये नियम हैं:– (1) परावर्तक पृष्ठ के आपतन बिन्दु पर खींचे गए अभिलंब तथा ध्वनि के आपतन तथा परावर्तन होने की दिशा के बीच बने कोण बराबर होते हैं, (2) आपतित ध्वनि, परावर्तित ध्वनि एवं अभिलम्ब एक ही तल में होते हैं।

गतिविधि 11.5: चित्र 11.16 की भांति दो एक जैसे पाइप लेकर इन्हें दीवार के समीप किसी मेज पर व्यवस्थित करते हैं। एक पाइप के खुले सिरे के पास एक घड़ी अथवा अन्य ध्वनि स्रोत रखते हैं। दूसरे पाइप की ओर से ध्वनि सुनने की कोशिश करते हैं। जब ठीक प्रकार से समायोजित होने पर ध्वनि सुनाई देने लगे तब इन पाइपों तथा दर्शाए अभिलंब के बीच के कोणों को मापते हैं।

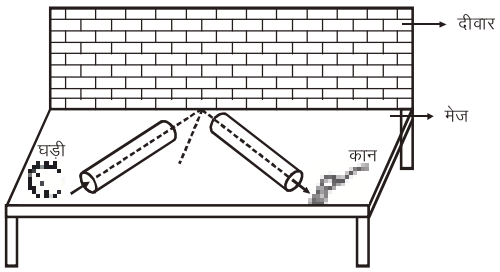

चित्र–11.6 ध्वनि का परावर्तन

हम पाते हैं कि

(1) जब पाइप दीवार के साथ बराबर कोण बनाते है अर्थात् $\angle i = \angle r$ तब घडी की ध्वनि सबसे अच्छी सुनाई देती है।

(2) जब दायीं ओर के पाइप को थोड़ा ऊपर उठाया जाता है तो घड़ी की ध्वनि अच्छी तरह सुनाई नहीं देगी।

प्रतिध्वनि **(Echo)** – यदि हम किसी उचित परावर्तक वस्तु जैसे कोई इमारत, कुआँ, पहाड़ी आदि के सामने जोर से चिल्लाएँ तो हमें कुछ समय पश्चात वही ध्वनि फिर से सुनाई देती है इसे प्रतिध्वनि कहते हैं। स्पष्ट प्रतिध्वनि सुनने के लिए मूल ध्वनि तथा परावर्तित ध्वनि के बीच कम से कम 0.1 s का समय अन्तराल अवश्य होना चाहिए। यदि ध्वनि की चाल कमरे के ताप पर $350\,m/s$ मानें तो स्पष्ट प्रतिध्वनि सुनने के लिए अवरोधक की कुल दूरी ($350 \times 0.1 = 35$ m) की आधी अर्थात् 17.5 m अवश्य होनी चाहिए। ध्वनि के बार–बार परावर्तित होने के कारण हमें एक से अधिक प्रतिध्वनियाँ भी सुनाई दे सकती हैं।

11.5 अनुरणन (Reverberation)

किसी बड़े हॉल में उत्पन्न होने वाली ध्वनि दीवारों से बारंबार परावर्तन के कारण काफी समय तक बनी रहती है। यह बारंबार परावर्तन, जिसके कारण ध्वनि का स्थायित्व होता है, अनुरणन कहलाता हैं।

11.6 ध्वनि के बहुल परावर्तन के उपयोग (Uses of Multiple Reflection of Sound)

(1) लाउडस्पीकर, हॉर्न तथा शहनाई जैसे वाद्य यंत्र इस प्रकार निर्मित किए जाते हैं कि ध्वनि सभी दिशाओं में

फैले इन यंत्रों से उत्पन्न होने वाली ध्वनि तरंगों को बार–बार परावर्तित करके श्रोताओं की ओर आगे की दिशा में भेजा जाता है।

(2) चिकित्सीय अनुसंधान में स्टेथोस्कोप एक महत्वपूर्ण यंत्र है। जिसका उपयोग डॉक्टरों द्वारा हृदय तथा फेफड़ों में ध्वनि को सुनने में किया जाता हैं। इसमें ध्वनि बार–बार परावर्तन के द्वारा डॉक्टर के कानों तक पहुँचती हैं।

(3) कंसर्ट हॉल, सम्मेलन कक्षों तथा सिनेमा हॉल की छतें वक्राकार बनाई जाती हैं जिससे कि परावर्तन के पश्चात ध्वनि हॉल के सभी भागों में पहुँच जाए।

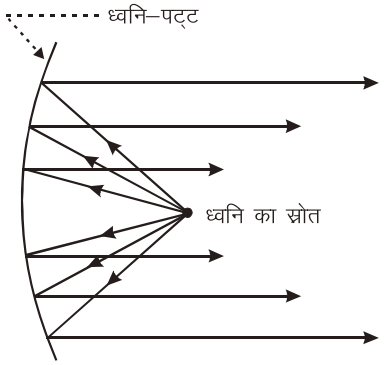

चित्र–11.7 बड़े हॉल में उपयोग किया जाने वाला ध्वनि पट्ट।

श्रव्यता का परास **(Range of Hearing)**

ध्वनि तरंगों आवृत्ति परास के अनुसार तीन प्रकार से विभक्त किया जाता है–

(1) श्रव्य तरंगें **(Audible Sound)**– वे ध्वनि तरंगें जिन्हें हमारा कान सुन सकता है, श्रव्य तरंगें कहलाती है। इन तरंगों की आवृत्ति 20 Hz से 20 kHz के मध्य होती है। ये निम्नतम तथा उच्चतम आवृत्तियों की श्रव्यता की सीमाएँ कहलाती हैं। ये तरंगें कम्पित वायु स्तम्भ, स्वरित्र द्विभुज, वायलिन आदि से उत्पन्न होती हैं।

(2) अपश्रव्य तरंगें **(Infrasound)**– वे ध्वनि तरंगें जिनकी आवृत्ति 20 Hz से कम होती है अपश्रव्य तरंगें कहलाती है। इन तरंगों को सुना नहीं जा सकता हैं। ये तरंगें भूकम्प के समय, ज्वालामुखी विस्फोट व व्हेल, हाथी जैसे प्राणियों में उत्पन्न होती है।

(3) पराश्रव्य तरंगें **(Ultrasound)**– वे ध्वनि जिनकी आवृत्ति 20,000 Hz (20 kHz) से अधिक होती है, पराश्रव्य तरंगें कहलाती है।इन तरंगों को क्वार्ट्ज के क्रिस्टल के कम्पनों से उत्पन्न कर सकते है। चमगादड़, बिल्लियाँ, कुत्ते जैसे कुछ प्राणी, कुछ पक्षी तथा कीट भी पराश्रव्य तरंगों का प्रयोग संकेत भेजने, समुद्र की गहराई ज्ञात करने, चिकित्सा के क्षेत्र में तथा हवाई अड्डों पर धुंध दूर करने में होता हैं। वायु में इन तरंगों की तरंग–दैर्ध्य 1.6 सेमी से कम होती है।

पराध्वनि के अनुप्रयोग

(Applications of Ultrasound)

पराध्वनियाँ उच्च आवृत्ति की तरंगें हैं। उद्योगों तथा चिकित्सा के क्षेत्र में पराध्वनियों का विस्तृत रूप से उपयोग किया जाता है। इसमें से कुछ निम्नवत् है–

(i) पराध्वनि का उपयोग धातु के ब्लॉकों में उत्पन्न दरारों तथा अन्य दोषों का पता लगाने में किया जाता है। इसमें पराध्वनि तरंगें धातु के ब्लॉक से गुजारी जाती हैं और प्रेषित तरंगों का पता लगाने के लिए संसूचकों का उपयोग किया जाता है। यदि थोड़ा भी दोष होता है तो पराध्वनि तरंगें परावर्तित हो जाती हैं जो ब्लॉक में दोष को दर्शाती हैं।

(ii) पराध्वनि द्वारा उन वस्तुओं को साफ किया जाता है जिन तक पहुँचना कठिन होता है। जिन वस्तुओं को साफ करना होता है उन्हें साफ करने वाले मार्जन विलयन में रखकर पराध्वनि तरंगें भेजी जाती हैं, उच्च आवृत्ति के कारण धूल, चिकनाई तथा गंदगी के कण अलग होकर नीचे गिर जाते हैं।

(iii) पराध्वनि तरंगों को हृदय के विभिन्न भागों से परावर्तित कर हृदय का प्रतिबिम्ब बनाया जाता है। इसे इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (ECG) कहा जाता है।

(iv) अल्ट्रा साउण्ड सोनोग्राफी में भी पराध्वनि का प्रयोग होता है। इसमें पराध्वनि तरंगों से रोगी के अंगों; जैसे – यकृत, पित्ताशय, गर्भाशय, गुर्दे आदि का प्रतिबिम्ब प्राप्त किया जा सकता है। अल्ट्रासोनोग्राफी का उपयोग गर्भकाल में भ्रूण की जाँच तथा अनियमितताओं का पता लगाने में किया जाता है। इस तकनीक द्वारा ट्यूमर का पता लगाया जाता है।

(v) पराध्वनि का उपयोग गुर्दे की छोटी पथरी को बारीक कणों में तोड़ने के लिए भी किया जाता है। बाद में ये कण मूत्र के साथ बाहर निकल जाते हैं।

चमगादड़ अंधेरे में भोजन को खोजने के लिए उड़ते समय पराध्वनि तरंगें उत्सर्जित करके परावर्तन के पश्चात् इनका संसूचन करता है। चमगादड़ द्वारा उत्पन्न उच्च तारत्व के पराध्वनि स्पंद अवरोधों या कीटों से टकराकर उनसे परावर्तित होकर चमगादड़

के कान तक पहुँचते हैं, इससे चमगादड़ जो देख नहीं सकती है, को अवरोध या कीट की स्थिति का पता लग जाता है।

11.7 सोनार (SONAR)

यह एक ऐसी युक्ति है जिसमें जल में स्थित पिण्डों की दूरी, दिशा तथा चाल मापने के लिए पराध्वनि तरंगों का उपयोग किया जाता हैं। सोनार (SONAR) शब्द का अंग्रेजी पर्याय हैं – Sound Navigation and Ranging.

कार्यविधि–सोनार में एक प्रेषित्र तथा एक संसूचक होता है और इसे चित्रानुसार किसी नाव या जहाज में लगाया जाता है। प्रेषित्र द्वारा उत्पन्न पराध्वनि तरंगें जल में गमन करती हैं तथा समुद्र तल में पिण्ड़ से टकराने के पश्चात् परावर्तित होकर संसूचक द्वारा ग्रहण कर ली जाती हैं। संसूचक पराध्वनि तरंगों को विद्युत संकेतों में बदल देता है। ध्वनि की चाल (जल में) तथा पराध्वनि के प्रेषण तथा अभिग्रहण के समय अंतराल को ज्ञात करके उस पिण्ड की दूरी की गणना की जा सकती है जिससे ध्वनि तरंग परावर्तित हुई है।

माना पराध्वनि संकेत के प्रेषण तथा अभिग्रहण का समय अंतराल t है तथा समुद्री जल में ध्वनि की चाल v हैं, तब यदि d, गहराई पर पिण्ड है तो सतह से पिण्ड और वापस जहाज तक की गई दूरी $2d$ होगी।

तब $2d = v \times t$

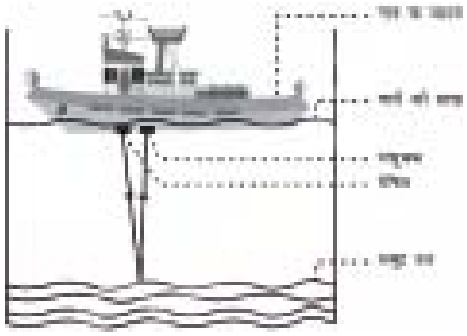

चित्र 11.8 सोनार

11.8 मानव कर्ण की संरचना (Structure of Human Ear)

हम अपने कानों के द्वारा सुनते हैं। कान वायु (माध्यम) में संचरित ध्वनि में सुनने योग्य आवृत्तियों के संगत दाब परिवर्तनों की वायु संकेतो में बदलता है। जो श्रवण तंत्रिका द्वारा हमारे मस्तिष्क तक पहुँचते हैं।

कान की संरचना चित्र 11.9 में बताई गई है। बाहरी कान को कर्ण पल्लव कहते हैं। यह परिवेश से ध्वनि एकत्रित करके श्रवण नलिका को भेजता हैं। श्रवण नलिका के सिरे पर एक पतली झिल्ली होती है जिसे कर्ण पटल कहते है। ध्वनि के संपीडन के कर्णपटल पर पहुँचने से झिल्ली के बाहर की ओर लगने वाला दाब बढ़ जाता है और यह कर्ण पटल को अंदर की ओर दबाता है तथा विरलन के समय कर्ण पटल बाहर की ओर गति करता है, इस प्रकार कर्ण पटल कंपन करता है।

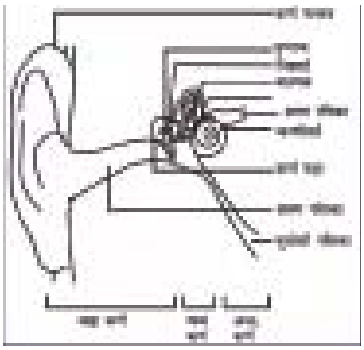

चित्र 11.9 कर्ण की संरचना

मध्य कर्ण में स्थित तीन हड्डियाँ मुग्दरक, निहाई एवं वलयक इन कंपनों को कई गुना कर देती हैं। मध्य कर्ण इन दाब परिवर्तनों को आतंरिक कर्ण तक संचरित कर देता हैं। आंतरिक कर्ण में कर्णावर्त द्वारा दाब परिवर्तनों का विद्युत संकेतों में परिवर्तित करके मस्तिष्क तक भेज दिया जाता है और मस्तिष्क इसकी ध्वनि के रूप में व्याख्या करता है।

11.9 राडार (RADAR)

राडार एक वैज्ञानिक उपकरण है। राडार का आविष्कार टैलर व लियो यंग (यू.एस.ए.) ने वर्ष 1922 में किया था। यह यंत्र अन्तरिक्ष में आने–जाने वाले वायुयानों के संसूचन और उनकी स्थिति ज्ञात करने के काम आता है। राडार, एक यंत्र है जिसकी सहायता से रेडियो तरंगों का उपयोग दूर की वस्तुओं का पता लगाने में तथा उनकी स्थिति, अर्थात् दिशा और दूरी, ज्ञात करने के लिए किया जाता है। आँखों से जितनी दूर दिखाई पड़ सकता हैं, राडार द्वारा उससे कहीं अधिक दूरी की चीजों की स्थिति का सही पता लगाया जा सकता है। कोहरा, धुंध, वर्षा, हिमपात, धुआँ अथवा अंधेरा, इनमें से कोई भी इसमें बाधक नहीं होते। किंतु राडार आँख की पूरी बराबरी नहीं कर सकता, क्योंकि इससे वस्तु के रंग तथा बनावट का सूक्ष्म ब्योरा नहीं जाना जा सकता, केवल आकृति का आभास होता है। पृष्ठभूमि से विषम तथा बड़ी वस्तुओं का, जैसे समुद्र पर तैरते जहाज, ऊँचे उड़ते वायुयान, द्वीप, सागरतट इत्यादि का, राडार द्वारा बड़ी अच्छी तरह से पता लगाया जा सकता है। सन् 1886 में रेडियो तरंगों के आविष्कर्ता,

हाइनरिख हेट्र्स ने ठोस वस्तुओं से इन तरंगों का परावर्तन होना सिद्ध किया था । रेडियो स्पंद (Pulse) के परावर्तन द्वारा परासन, अर्थात् दूरी का पता लगाने, का कार्य सन् 1925 में किया जा चुका था और सन् 1939 तक राडार के सिद्धान्त का प्रयोग करने वाले कई सफल उपकरणों का निर्माण हो चुका था, किंतु द्वितीय विश्वयुद्ध में ही राडार का प्रमुख रूप से उपयोग आरंभ हुआ।

चित्र 11.10 राडार

स्थिति निर्धारण की पद्धति–

राडार से रेडियो तरंगें भेजी जाती हैं और दूर की वस्तु से परावर्तित होकर उनके वापस आने में लगने वाले समय को नापा जाता है। रेडियो तरंगों की गति 1,86,999 मील प्रति सेकंड है। इसलिए समय ज्ञात होने पर परावर्तक वस्तु की दूरी सरलता से ज्ञात हो जाती है। राडार में लगे उच्च दिशापरक ऐंटेना Antenna) से परावर्तक, अर्थात् लक्ष्य वस्तु, की दिशा का ठीक–ठीक पता चल जाता है। दूरी और दिशा मालूम हो जाने से वस्तु की यथार्थ स्थिति ज्ञात हो जाती है। राडार का प्रेषित्र (transmitter) नियमित अंतराल पर रेडियो ऊर्जा के क्षणिक, किंतु तीव्र, स्पंद भेजता रहता है। प्रेषित स्पंदों के अंतरालों के बीच के समय में राडार का ग्राही (Receiver) यदि बाहरी किसी वस्तु से परावर्तित होकर तरंगें आऐं तो उनको ग्रहण करता है। परावर्तन होकर वापस आने का समय विद्युत् परिपथों द्वारा सही–सही मालूम हो जाता है और समय के अनुपात में अंकित सूचक से दूरी तुरंत मालूम हो जाती है। एक माइक्रोसेकंड (सेकंड का दस लाखवां भाग) के समय से 164 गज ओर 19.75 माइक्रोसेकंड से 1 मील की दूरी समझी जाती है। कुछ रडार 199 मील दूर तक की वस्तुओं का पता लगा लेते हैं। अच्छे यंत्रों से दूरी नापने में 15 गज से अधिक की भूल नहीं होती और दूरी के कम या अधिक होने पर नाप की यर्थाथता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। लक्ष्य वस्तु की दिशा अथवा उसकी ऊँचाई का कोण एक अंश के 9.96 भाग तक परिशुद्ध नापा जा सकता है। राडार के ग्राही यंत्र की ऋणाग्र–किरण–नली (Cathod ray tube) में वस्तु की स्थिति स्पष्ट दिखाई पड़ती है।

दिशा का ज्ञान –

लक्ष्य का पता लगाने के लिए ऐंटेना को घुमाते, या आगे पीछे करते हैं। जब ऐंटेना लक्ष्य की दिशा में होता है, तब लक्ष्य का प्रतिरूप ऋणाग्र–किरण–नली के फलक पर प्रकट होता है। इस प्रतिरूप को पिप (Pip) कहते हैं। पिप सबसे अधिक स्पष्ट तभी होता है, जब ऐंटेना सीधे लक्ष्य की दिशा में होता है। राडार के ऐंटेना अत्युच्च दिशापरक होते हैं। ये रेडियो तरंगों को सकरी किरण पुंजों में एकाग्र करते हैं तथा यंत्र में लगे विशेष प्रकार के परावर्तक इन किरण पुंजों को सघन बनाते हैं। राडार के कार्य के लिए अति लघु तरंग दैर्ध्य वाली, अर्थात् अत्युच्च आवृतियों की, तरंगों का उपयोग किया जाता हैं,। इन सूक्ष्म तरंगों के उत्पादन के लिए मल्टिकैविटी मैग्नेट्रॉन (Multicavity Magnetron) नामक उपकरण आवश्यक है, जिसके बिना आधुनिक राडार का कार्य संभव नहीं है।

राडार के अवयव–

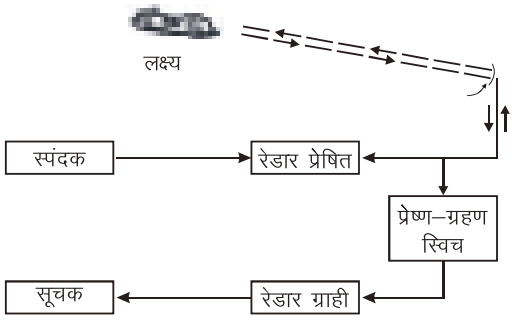

चित्र 11.11 राडार के अवयव एवं क्रिया

मॉडुलेटर (Modulator) से रेडियो आवृति दोलित्र (Radio frequency Oscillator) को दिए जाने वाली विद्युत् शक्ति के आवश्यक विस्फोट प्राप्त होते हैं।

रेडियो–आवृति दोलित्र उच्च आवृति वाली शक्ति के उन स्पंदों को उत्पन्न करता है जिनसे राडार के संकेत बनते हैं ऐंटेना द्वारा ये स्पंद आकाश में भेजे जाते हैं और ऐंटेना ही उन्हें वापसी में ग्रहण करता है।

ग्राही वापस आनेवाली रेडियो तरंगों का पता पाता है।

सूचक (Indicator) राडार परिचारक को रेडियो तरंगों द्वारा एकत्रित की गई सूचनाएँ देता हैं।

तुल्यकालन (Synchronisation) तथा परास की माप के अनिवार्य कृत्य मॉडुलेटर तथा सूचक द्वारा संपन्न होते हैं। यूँ तो जिस विशेष कार्य के लिए राडार यंत्र का उपयोग किया जाने

वाला है, उसके अनुरूप इसके प्रमुख अवयवों को भी बदलना आवश्यक होता है।

राडार के उपयोग –

राडार के कारण युद्ध में सहसा आक्रमण प्रायः असंभव हो गया है। इसके द्वारा जहाजों, वायुयानों और रॉकेटों के आने की पूर्वसूचना मिल जाती है। वायुयानों पर भी राडार यंत्रों से आगंतुक वायुयानों का पता चलता रहता है तथा इन यंत्रों की सहायता से आक्रमणकारी विमान लक्ष्य तक जाने और अपने स्थान तक वापस आने में सफल होते हैं। केंद्रीय नियंत्रक स्थान से राडार के द्वारा 299 मील के व्यास में चतुर्दिक्, ऊपर और नीचे, आकाश में क्या हो रहा है, इसका पता लगाया जा सकता हैं। रात्रि या दिन में समुद्र के ऊपर निकली नौकाओं का, या आते जाते जहाजों का, पता चल जाता है तथा दुश्मन के जहाजों पर तोपों का सही निशाना लगाने में भी इससे सहायता मिलती है।

शांति के समय में भी राडार के अनेक उपयोग हैं। इसने नौका, जहाज या वायुयान चालन को अधिक सुरक्षित बना दिया है, क्योंकि इसके द्वारा चालकों को दूर स्थित पहाड़ों, हिमशैलों अथवा अन्य रूकावटों का पता चल जाता है। राडार से वायुयानों को पृथ्वी तल से अपनी सही ऊँचाई ज्ञात होती रहती है तथा रात्रि में हवाई अड्डों पर उतरने में बड़ी सहूलियत होती है। 19 जनवरी, 1946 ई. को संयुक्त राज्य अमरीका के सैनिक दल ने राडार द्वारा सर्वप्रथम चन्द्रमा से संपर्क स्थापित किया। रेडियो संकेत को चन्द्रमा तक आने जाने में 4,59,999 मील की यात्रा करनी पड़ी और 2.4 सेकण्ड समय लगा।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1. किसी कण की वह गति जो एक निश्चित समय के बाद बार–बार दोहराई जाती है, आवर्ती गति कहलाती है।
2. किसी कण द्वारा सरल रेखा में एक निश्चित बिन्दु के इधर–उधर आवर्ती गति हो रही हो तो यह गति कम्पनिक गति या दोलनी गति कहलाती है।
3. माध्यम में कणों के कम्पनों के अनुसार तरंगें दो प्रकार की होती हैं–(i) अनुप्रस्थ तरंगें (ii) अनुदैर्ध्य तरंगें।
4. ध्वनि विभिन्न वस्तुओं के कंपन करने के कारण उत्पन्न होती है तथा ध्वनि तरंगें, अनुदैर्ध्यतरंगें होती है।
5. ध्वनि माध्यम में क्रमागत संपीडनों तथा विरलनों के रूप में संचरित होती है।
6. ध्वनि तरंगों में दो क्रमागत संपीडनों या दो क्रमागत विरलनों के बीच की दूरी तरंगदैर्ध्य कहलाती है इसे λ से प्रदर्शित कहते हैं।
7. तरंग द्वारा माध्यम के विक्षोभ के एक संपूर्ण दोलन में लिए गए समय को आवर्तकाल (T) कहते हैं।
8. एकांक समय में दोलनों की कुल संख्या को आवृत्ति (ν) कहते हैं। $\nu = 1/T$
9. तरंग की चाल, उसकी आवृत्ति तथा तरंगदैर्ध्य के गुणनफल के बराबर होती है, अर्थात $v = \nu\lambda$
10. किसी एकांक क्षेत्रफल से 1 सेकण्ड में गुजरने वाली ध्वनि ऊर्जा को ध्वनि की तीव्रता कहते हैं।
11. ध्वनि की चाल मुख्यतः संचरित होने वाले माध्यमकी प्रकृति तथा ताप पर निर्भर करती है।
12. ध्वनि के आपतित होने की दिशा तथा परिवर्तित होने की दिशा, परावर्तक सतह पर खींचे गए अभिलंब से समान कोण बनाते हैं और तीनों एक ही तल में होते हैं।
13. स्पष्ट प्रतिध्वनि सुनने के लिए मूल ध्वनि एवं परावर्तित ध्वनि के बीच कम से कम 0.1 s का समय अंतराल अवश्य होना चाहिए।
14. ध्वनि के तीन गुण होते हैं–
    (i) तारत्व (ii) प्रबलता (iii) गुणता।
15. मानव द्वारा श्रव्य ध्वनि का परास 20 हर्ट्ज से 20 किलो हर्ट्ज होता है।
16. 20 हर्ट्ज से कम आवृत्ति की ध्वनियों को अपश्रव्य ध्वनि तथा 20 किलोहर्ट्ज से अधिक आवृत्ति की ध्वनि को पराश्रव्य ध्वनि कहते हैं।
17. पराध्वनि के चिकित्सा तथा प्रौद्योगिक क्षेत्रों में अनेक उपयोग हैं।
18. सोनार एक ऐसी युक्ति है जिसका प्रयोग समुद्र की गहराई नापने, समुद्र की गहराई में किसी अदृश्य वस्तु की उपस्थिति का पता लगाने में किया जाता है।
19. सोनार में पराश्रव्य तरंगों का प्रयोग किया जाता है।
20. एकल आवृत्ति की ध्वनि को टोन कहते हैं तथा अनेक आवृत्तियों के मिश्रण से उत्पन्न ध्वनि को स्वर (Node) कहते हैं।
21. राडार का उपयोग अन्तरिक्ष में आने–जाने वाले वायुयानों के संसूचन एवं उनकी स्थिति ज्ञात करने में काम आता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. वह तरंग, जिसमें संपीडन और विरलन हैं, कहलाती है
   (अ) अनुप्रस्थ तरंग (ब) अनुदैर्ध्य तरंग
   (स) प्रकाश तरंग (द) परा बैंगनी किरणे

2. तरंग के वेग v तरंगदैर्ध्य (λ) तथा आवृत्ति ν के बीच सम्बन्ध है–
(अ) $v = \nu\lambda$ (ब) $\lambda = v\nu$
(स) $v = \nu\lambda$ (द) $v = \lambda / \nu$

3. अनुदैर्ध्य तरंगें उत्पन्न की जा सकती हैं
(अ) ठोस व गैस में (ब) ठोस व द्रव में
(स) गैस व द्रव में
(द) ठोस, द्रव व गैस तीनों में।

4. अनुदैर्ध्य तरंग में माध्यम के कणों का कम्पन्न
(अ) तरंग की दिशा में होता है
(ब) तरंग की दिशा के लम्बवत् होता है
(स) कण कम्पन्न नहीं करते हैं
(द) तरंग की दिशा में 60° के कोण पर।

5. ध्वनि की चाल अधिकतम होती है
(अ) वायु में (ब) ठोसों में
(स) जल में (द) जल व ठोस दोनों में

6. घड़ी की सुइयों में घण्टे वाली सुई का आवर्तकाल होता है
(अ) 1 घण्टे (ब) 24 घण्टे
(स) 12 घण्टे (द) इनमें से कोई नहीं।

7. एक तरंग की चाल 350 m / s तथा तरंगदैर्ध्य 50 cm है, तो तरंग की आवृत्ति होगी
(अ) 13500 Hz (ब) 700 Hz
(स) 400 Hz (द) 300 Hz

8. प्रति सेकण्ड समय में पूर्ण किए गए दोलनों की संख्या को कहते हैं
(अ) आयाम (ब) चाल
(स) आवर्तकाल (द) आवृत्ति

9. कम्पन्न करती एक वस्तु का आवर्तकाल 0.02 s है, वस्तु के कम्पन्न की आवृत्ति होगी
(अ) 100 Hz (ब) 20 Hz
(स) 50 Hz (द) 1 Hz

10. घड़ी में सेकण्ड वाली सुई का आवर्तकाल होता है
(अ)1 मिनट (ब) 1 घण्टा
(स) 12 घण्टे (द) 24 घण्टे।

11. श्रव्यता सीमा होती है–
(अ) 200 Hz से 20000 Hz तक
(ब) 20 Hz से 20000 Hz तक
(स) 2 Hz से 20 Hz तक
(द) 20000 Hz से अधिक।

12. प्रतिध्वनि सुनने के लिए हमारे कान तक ध्वनि कम से कम कितने समय बाद पहुँचनी चाहिए?
(अ) 0.1 s (ब) 0.5 s
(स) 1 s (द) 2 s

13. अल्ट्रासोनोग्राफी में प्रयुक्त तरंगों की आवृत्ति है
(अ) 20 Hz
(ब) 20 Hz से कम
(स) 20 Hz से 20000 Hz तक
(द) 20000 Hz से अधिक।

14. आयाम का मात्रक है–
(अ) m (ब) m / s
(स) Hz (द) इनमें से कोई नहीं।

15. ध्वनि की निर्वात में चाल होती है
(अ) 3×10^8 m / s
(ब) 330 m / s
(स) ध्वनि निर्वात् में नहीं चल सकती
(द) इनमें से कोई नहीं।

अतिलघुत्तरीय प्रश्न

1. अनुदैर्ध्य तरंगें किस प्रकार के माध्यम में उत्पन्न की जा सकती हैं?
2. लोहे में उत्पन्न ध्वनि तरंगें किस प्रकार की होती हैं?
3. वायु में उत्पन्न ध्वनि तरंगें किस प्रकार की होती हैं?
4. किसी तार को दो खूँटियों के बीच तानकर लम्बाई के लम्बवत् खींचकर छोड़ दिया जाता है तो तार में उत्पन्न तरंग का नाम बताइए।
5. तरंगदैर्ध्य का S.I.मात्रक क्या है?
6. आवृत्ति का S.I.मात्रक क्या है?
7. एक स्वतंत्र रूप से लटकी स्लिंकी को खींचकर छोड़ दिया जाए तो किस प्रकार की तरंगें उत्पन्न होंगी?
8. घड़ी की सुइयों की गति किस प्रकार की होती है?
9. तरंगदैर्ध्य की परिभाषा दीजिए।
10. आवृत्ति की परिभाषा लिखिए।
11. राडार क्या है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. ध्वनि उत्पन्न करने के लिए क्या आवश्यक है?
2. तरंग–गति से आप क्या समझते हो ?
3. अनुदैर्ध्य तरंगें क्या है ?
4. तरंगें संचरण के लिए क्या आवश्यक है?
5. तरंग संचरण में एक स्थान से दूसरे स्थान तक किसका स्थानान्तरण होता है, ऊर्जा का या भौतिक द्रव्यमान का ?

6. अनुदैर्ध्य तरंगों के दो उदाहरण दीजिये।
7. क्या बन्दूक से निकली हुई गोली या गुलेल से फेंका गया पत्थर तरंग गति करता है ?
8. राडार के उपयोग एवं इसके स्थिति निर्धारण की पद्धति बताइये।
9. अनुप्रस्थ एवं अनुदैर्ध्य तरंगों में अन्तर बताइये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. निम्न की परिभाषा लिखिये–
   (i) आयाम (ii) आवृत्ति
   (iii) आवर्तकाल (iv) तरंगदैर्ध्य
2. सम्बन्ध बताइये–
   (i) आवर्त्तकाल और आवृत्ति,
   (ii) आवृत्ति, तरंगदैर्ध्य और वेग
3. उत्तर दीजिए–
   (i) माध्यम का कोई कण जब एक दोलन पूरा करता है, तरंग कितनी दूरी तय करती है?
   (ii) वायु में ध्वनि तरंगें अनुदैर्ध्य हैं या अनुप्रस्थ।
   (iii) किसी लम्बी स्लिंकी में उत्पन्न हो सकने वाली तरंग/तरंगों के नाम लिखिए।
   (iv) अनुप्रस्थ और अनुदैर्ध्य तरंगों के दो–दो उदाहरण लिखिए।
   (v) उस भौतिक राशि का नाम लिखिए जिसका मात्रक हर्टज है?
4. पराध्वनि के पाँच उपयोग दीजिए।
5. SONAR का विस्तृत रूप लिखिए। समुद्र की गहराई आप प्रतिध्वनिक परास का उपयोग कर कैसे ज्ञात करेंगे ?
6. चित्र बनाकर बताइये कि मनुष्य का कान किस प्रकार कार्य करता है ?
7. ध्वनि के परावर्तन के नियम लिखिए। इनके सत्यापन के लिए एक क्रियाकलाप का वर्णन कीजिए।
8. पराध्वनि क्या है? बताइए कि इसका उपयोग धातु पिंड के दोषों का पता करने और सर्पिलाकार नलियों की सफाई में कैसे किया जाता है।
9. राडार के अवयव एवं उपयोग पर प्रकाश डालिये।

आंकिक प्रश्न

1. एक वस्तु 6600 कम्पन प्रति मिनट कर रही है। यदि वायु में ध्वनि का वेग 330 m / s हो तो ज्ञात कीजिये (i) आवर्त्तकाल, (ii) आवृत्ति (iii) तरंगदैर्ध्य।
2. एक वस्तु का आवर्तकाल 0.004 s है, उसकी आवृत्ति ज्ञात कीजिये।
3. एक तरंग के दो समीपस्थ शृंगों के मध्य की दूरी 30 cm है तथा उसकी आवृत्ति है 450 Hz तो तरंग का वेग ज्ञात कीजिये।
4. एक तरंग जिसकी आवृत्ति 256 Hz है, 330 m / s के वेग से संचरण कर रही है। इसी माध्यम में 512 Hz वाली तरंग की गति क्या होगी।

उत्तरमाला

1. ब 2. अ 3. ब 4. अ 5. ब 6. स 7. ब
8. द 9. स 10. अ 11. ब 12. अ 13. द 14. अ
15. स

उत्तर – आंकिक प्रश्न

1. (i) 1/110 सेकण्ड, (ii) 110 हर्ट्ज (iii) 3 मीटर
2. 250 हर्ट्ज
3. 135 मी./से.
4. 330 मी./से.

◆◆◆

अध्याय 12

आकाशीय पिण्ड एवं भारतीय पंचांग
(Celestial bodies and Indian Calendar)

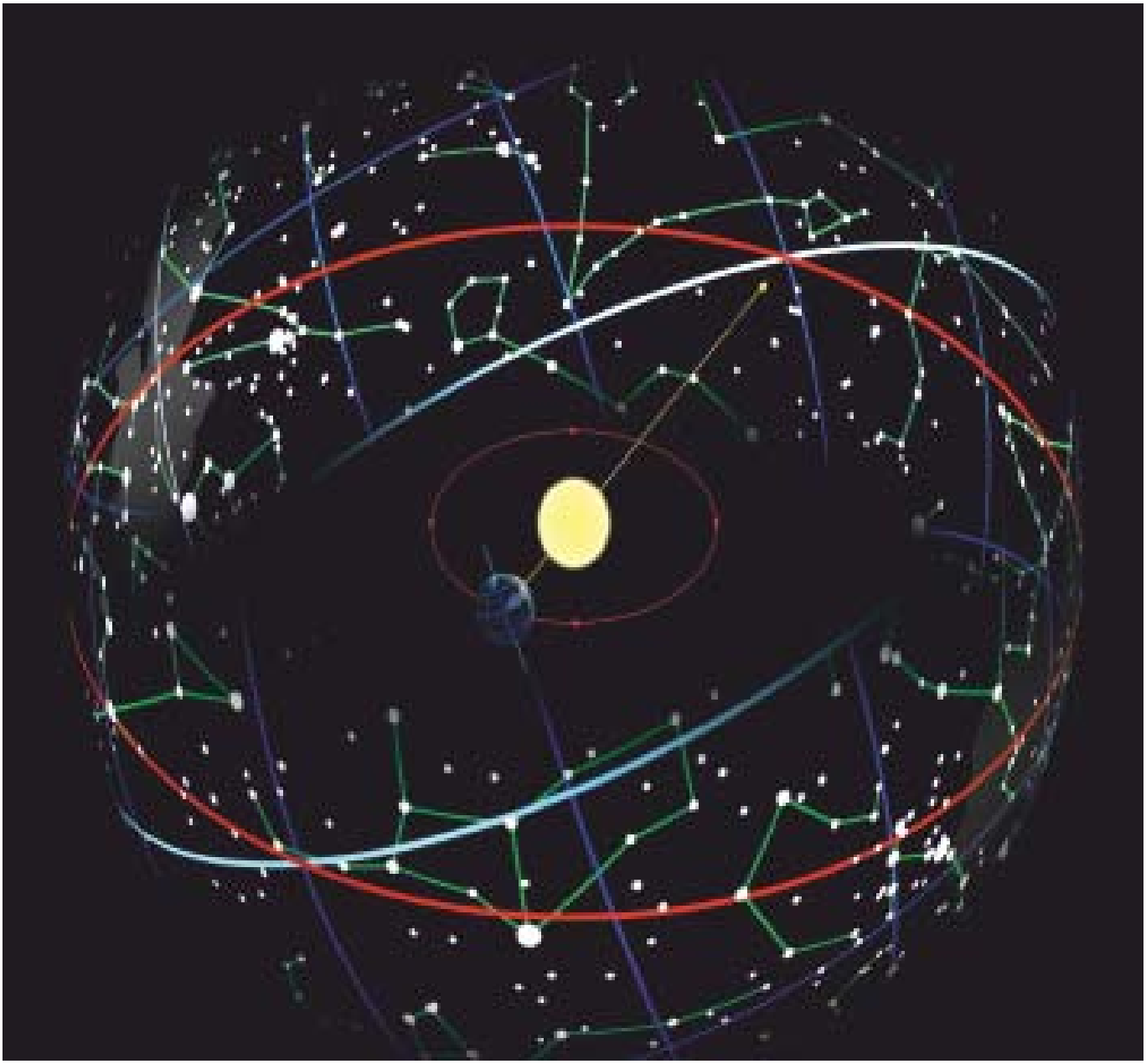

चित्र 12.1

12.1 खगोलीय पिण्ड

आप ने पूर्व कक्षाओं में पढ़ा कि पहेली तथा बूझों ने रात्रि के खुले आकाश में चाँद तारों का सुन्दर दृश्य देखा था। आप भी अंधेरी रात में यह मनमोहक दृश्य देख सकते हैं। दृश्य में असंख्य तारे दिखाई देते हैं कुछ बहुत अधिक चमकीले और कुछ कम चमकीले। कुछ टिमटिमाते प्रतीत होते हैं कुछ नहीं टिमटिमाते। कुछ तारे समूह के रूप में पास–पास दिखते हैं कुछ तारों के समूह को देखने पर कुछ विशेष आकृतियाँ भी

बनती प्रतीत होती हैं तो ऐसा है हमारे ब्रह्मांड का कुछ परिदृश्य। खगोलीय दूरबीन की सहायता से और भी अन्य खगोलीय पिण्डों को देख सकते हैं, जो हमें नंगी आँखों से नहीं दिखते। सूक्ष्मता से देखने पर यह दृश्य समय के साथ बदलता है क्योंकि सभी खगोलीय पिण्ड गतिशील हैं।

गतिविधि 12.1

- सभी विद्यार्थियों को पाँच–पाँच के समूह में बाँटें
- शिक्षक निम्न प्रश्न श्यामपट्ट पर लिखें :– आपने जिन खगोलीय पिण्डों को देखा है या उनके बारे में पढ़ा है, सुना है, उनके नामों की सूची बनायें।
- समूह से आये नामों को एक–एक कर श्यामपट्ट पर संकलित करें।

ब्रह्माण्ड में कई छोटे, विशाल और अति विशाल पिण्ड हैं। इन पिण्डों को खगोलीय पिण्ड कहते हैं। सूर्य, तारे, ग्रह, क्षुद्रग्रह, उल्कायें, धूमकेतु, आकाशगंगा, चंद्रमा सभी खगोलीय पिण्ड हैं। इन्हें हम आकाशीय पिण्डों के रूप में जानते हैं। आपने बड़े–बुजुर्गों से ध्रुवतारा, सप्तऋषि तारों आदि के बारे में सुना होगा ये भी खगोलीय पिण्ड हैं, जो स्वयं के प्रकाश से चमकते हैं इसलिए इन्हें तारे कहते हैं।

ऐसा ही एक तारा हमारा सूर्य हैं। सूर्य से दूर भी कई तारें हैं, जो सूर्य से भी अधिक दूरी पर होने के कारण छोटे एवं कम चमकीले दिखते हैं। कई तारे सूर्य से कई गुना बड़े हैं। **ब्रह्मांड का विस्तार कल्पना से भी परे है। वेदों में भी अन्य रूप में यह वर्णित है।**

भारतीय पंचांग ऐसी गणित पर आधारित खगोलीय पुस्तक है जिसमें विभिन्न खगोलीय पिण्डों का नामकरण एवं उनकी गतियों का उल्लेख है। हजारों वर्ष पूर्व जब विद्युत एवं घड़ी की खोज नहीं हुई थी तब समय, तिथि, मास का निर्धारण हमारे ऋषि आकाशीय पिण्डो की स्थिति से करते रहे हैं। इसी आधार पर भारतीय पंचाग का निर्माण हुआ।

गतिविधि 12.2

शिक्षक विद्यार्थियों से निम्न प्रश्नों के माध्यम से चर्चा करें–

- आकाश में पूर्ण चंद्रमा कब दिखता है ?
- आकाश चंद्रमा विहीन कब होता है ?
- चंद्र ग्रहण कब तथा कौनसे दिन होता है ?
- हमारे घरों में या आस–पास भवन निर्माण में कार्यरत कारीगर एवं मजदूर किस दिन अवकाश रखते हैं।
- इन सब बातों की जानकारी हमें दैनिक जीवन में कहाँ से प्राप्त होती है।

शिक्षक छात्र–छात्राओं से प्राप्त उत्तरों को सही रूप में व्यक्त करें तथा स्पष्ट करें कि इन सबकी जानकारी वर्षों पूर्व भारतीय पंचांग में उल्लेखित हैं। पंचांग में दी गई गणनाओं के आधार पर किसी खगोलीय घटना का पहले से ही पता लगाया जा सकता है।

12.2 भारतीय पंचांग

भारतीय पंचांग के पाँच प्रमुख अंग हैं इसलिए इसे पंचांग कहते हैं। ये पाँच अंग निम्न हैं–

1. तिथि – इसे अंग्रेजी महीने की दिनांक रूप में समझ सकते हैं, इसका संबंध चन्द्रमास की दिनांक से है, एक चन्द्रमास में दो पक्ष होते हैं जिन्हें शुक्ल पक्ष एवं कृष्ण पक्ष के रूप में जानते हैं प्रत्येक पक्ष में 15–15 तिथियां होती हैं, इनमें से दो तिथियाँ पूर्णिमा एवं अमावस्या हैं।

2. वार – इसका संबंध सप्ताह के दिनों से है जो सात (7) होते हैं।

3. नक्षत्र – इसका संबंध चन्द्रमा के क्रांतिपथ के उस आकाशीय भाग से है जहाँ चन्द्रमा उस समय स्थित होता है। इस आधार पर 27 नक्षत्र माने गये हैं।

4. योग – इसका संबंध सूर्य तथा चन्द्र गति में किसी समय उत्पन्न अंतर से है। योग भी 27 होते हैं।

5. करण – तिथियों के सूक्ष्म प्रभाव को जानने के लिए प्रत्येक तिथि के दो भाग मान्य किये हैं। तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं।

इनके अतिरिक्त भी भारतीय पंचांग विभिन्न जानकारियों को सटीक रूप से प्रस्तुत करता है इनमें से कुछ निम्न हैं–

- विभिन्न शहरों के लिए दैनिक सूर्योदय एवं सूर्यास्त का समय
- चंद्रमा के दिखने का समय
- सूर्य, चंद्रमा एवं विभिन्न ग्रहों की गतियाँ
- नक्षत्र, राशियों में ग्रहों का परिभ्रमण

- दैनिक तिथियाँ, इनमें वृद्धि एवं क्षय
- राशियाँ, भारतीय महीनों का विवरण

भारतीय पंचांग समय, काल की दैनिक गणनाओं एवं खगोलीय पिण्डों की स्थितियों का प्रतिपल का विवरण दर्शाता है। पंचांग के पाँच अंगों में से नक्षत्र एवं तिथियों की विस्तृत जानकारी इस अध्याय में दी जा रही है।

वर्तमान में प्रचलित पंचांग भारतीय पंचांग पर आधारित है। इसमें विभिन्न खगोलीय घटनाओं के साथ–साथ सभी धर्मों के त्योहारों एवं पर्व विशेष का उल्लेख भी मिलता है, साथ ही समुदाय विशेष की भाषा में भी उपलब्ध होते हैं।

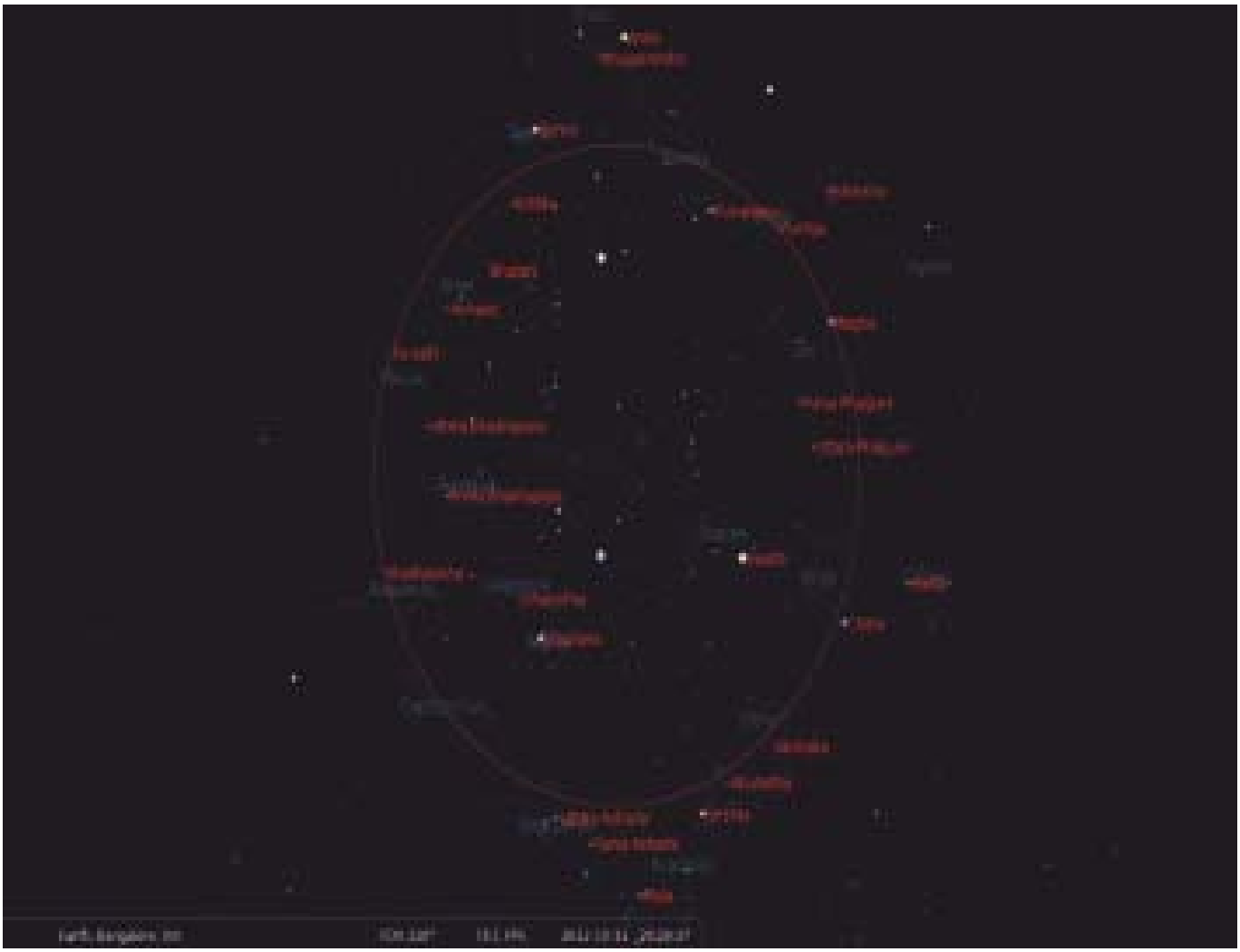

चित्र 12.2

12.3 नक्षत्र

आकाश में तारों के समूह को तारामण्डल कहते हैं। इसमें तारे परस्पर यथावत अंतर से दृष्टिगोचर होते हैं। ये सूर्य से बहुत दूर हैं और सूर्य की परिक्रमा नहीं करने के कारण स्थिर जान पड़ते हैं इन तारों के समूह की पहचान स्थापित करने हेतु नामकरण किया गया। यह नाम उन तारों के समूह को मिलाने से बनने वाली काल्पनिक आकृति के अनुसार दिया गया।

चन्द्रमा लगभग 27 दिनों में पृथ्वी का एक चक्कर पूरा करता हैं। चन्द्रमा के पथ में पड़ने वाले तारों के समूह को नक्षत्र कहते हैं। चन्द्रमा के क्रांति पथ को 27 भागों में विभाजित कर 27 नक्षत्रों का नामकरण किया गया है। नीचे दी गई सारणी (12.1) में उनका विस्तृत वर्णन हैं।

सारणी 12.1

क्र. सं.	नक्षत्र का नाम	समूह में तारों की संख्या	आकृति या पहचान
1.	अश्विनी	3	घोड़ा
2.	भरणी	3	त्रिकोण
3.	कृतिका	6	अग्निशिखा
4.	रोहिणी	5	गाड़ी
5.	मृगशिरा	3	हरिणमस्तक
6.	आद्रा	1	उज्ज्वल
7.	पुनर्वसु	5 या 6	धनुष
8.	पुष्य	1 या 3	मणिक्यवर्ण
9.	अश्लेषा	5	कुत्ते के पूँछ
10.	मघा	5	हल
11.	पूर्वाफाल्गुनी	2	खट्वाकार
12.	उत्तराफाल्गुनी	2	शय्याकार
13.	हस्त	5	हाथ का पंजा
14.	चित्रा	1	मुक्तावत उज्ज्वल
15.	स्वाति	1	कुंकुं
16.	विशाखा	5 व 6	तोरण
17.	अनुराधा	7	सूप
18.	ज्येष्ठा	3	सर्प
19.	मूल	9 या 11	शंख
20.	पूर्वाषाढ़	4	हाथी दंत
21.	उत्तराषाढ़	4	सूप
22.	श्रवण	3	बाण या त्रिशूल
23.	धनिष्ठा	5	बाजा
24.	शतभिषा	100	मण्डलाकार
25.	पूर्वभाद्रपदा	2	घण्टाकार
26.	उत्तरभाद्रपदा	2	दो मस्तक
27.	रेवती	32	मछली

28 वें नक्षत्र का नाम अभिजित है जिसे पूर्वाषाढ़ा के भीतर ही मान लिया गया है।

12.4 सौर मण्डल एवं इसके ग्रह

आपने पूर्व कक्षाओं में हमारे सौर मण्डल के बारे में पढ़ा। यहाँ पुनः सौर मण्डल के बारे में विस्तृत जानकारी सारांश रूप में जानेंगें।

- सूर्य के चारों ओर अण्डाकार मार्ग में परिक्रमा करने वाले खगोलीय पिण्डों से मिलकर सौर परिवार बना है।
- सौर परिवार में ग्रह, उपग्रह, क्षुद्रग्रह, धूमकेतु, उल्कायें, ओर कई ज्ञात अज्ञात पिण्ड हैं जो सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाते हैं।
- सूर्य के अधिक गुरूत्वाकर्षण के कारण ये पिण्ड सूर्य की परिक्रमा करते हैं।
- सूर्य के परिक्रमा करने वाले पिण्ड, ग्रह तथा ग्रहों के परिक्रमा करने वाले पिण्ड उपग्रह कहलाते हैं, ये सभी ग्रह एवं उपग्रह हमारे सौर परिवार के सदस्य हैं। हमारी पृथ्वी खगोलीय पिण्डों में ग्रह की श्रेणी में आती है।
- ग्रहों का अपना प्रकाश एवं ऊष्मा नहीं होती ये केवल सूर्य या अन्य तारों के प्रकाश को परावर्तित करते हैं।
- सूर्य हमारे सौर मण्डल का सबसे बड़ा पिण्ड है जिसमें सौर मण्डल का 99 प्रतिशत से भी ज्यादा द्रव्यमान निहित है और पृथ्वी से लगभग दस (10) लाख गुना बड़ा है, ऊर्जा का यह शक्तिशाली भण्डार मुख्य रूप से हाईड्रोजन और हीलियम गैसों का एक विशाल गोला है। सूर्य से निकली ऊर्जा का छोटा सा भाग ही पृथ्वी पर पहुँचता हैं। पृथ्वी पर वर्षा होना, दिन–रात होना एवं ऋतु परिवर्तन का कारण सूर्य है। पेड़–पौधे एवं समस्त जीवों के जीवन चक्र पर इस सौर ऊर्जा का प्रभाव हैं।

आधुनिक युग में आठ खगोलीय पिण्डों को ग्रहों की परिभाषा में रखा गया है परन्तु भारतीय पंचांगानुसार ग्रहों की संख्या नौ (9) है। प्रस्तुत अध्याय में दोनों प्रकार से ग्रह एवं उनकी गतियों के बारे में जानेंगे।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार ग्रह एवं उनकी गतियाँ–

सारणी 12.2

ग्रहों के नाम	द्रव्यमान $\times 10^{24}$ Kg	व्यास (Km)	सूर्य से दूरी $\times 10^{6}$ km	कक्षीय गति काल (days)	घूर्णन गति काल (hours)
बुध (Mercury)	0.33	4879	57.9	88	1407.6
शुक्र (Venus)	4.87	12104	108.2	224.7	–5832.5
पृथ्वी (Earth)	5.97	12756	109.6	365.2	लगभग 24
मंगल (Mars)	0.642	6792	227.9	687	24.6
बृहस्पति (Jupitar)	1898	142984	778.6	4331	9.9
शनि (Saturn)	568	120536	1433.3	10747	10.7
अरूण (Uranus)	86.8	51118	2872.5	30589	–17.2
वरूण (Neptune)	102	49528	4495.1	59800	16.1

अन्तर्राष्ट्रीय खगोलशास्त्रीय संघ के प्राग सम्मेलन 24 अगस्त 2006 के अनुसार सौर मण्डल में मौजूद पिण्डों को तीन श्रेणियों में बाँटा गया है–

1. ग्रह – इसमें उपरोक्त आठ ग्रहों को मान्यता दी गई हैं, इनमें से प्रथम चार बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल को स्थलीय ग्रह कहा है क्योंकि यहाँ धरातल है। शेष चार – बृहस्पति, शनि, अरूण एवं वरूण विशाल गैस से बने भारी ग्रह हैं।

2. बौने ग्रह – यम (प्लूटो), एरीज, सीरीज आदि।

3. लघु सौरमण्डलीय पिण्ड – इसमें 166 ज्ञात उपग्रह एवं अन्य छोटे खगोलीय पिण्ड जिसमें क्षुद्रग्रह पट्टी, धूमकेतु, उल्कायें, ग्रहों के बीच की धूल शामिल हैं।

अंतरिक्ष में परिभ्रमण करते धूल और गैसीय पिण्ड पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण के कारण पृथ्वी की ओर आकर्षित होते हैं तथा पृथ्वी के वायुमण्डल में घर्षण के कारण चमकने लगते हैं, इनमें से जो पृथ्वी तक पहुँचने से पूर्व जलकर राख हो जाते हैं उन्हें **उल्का** कहते हैं और जो पूर्णतया जल नहीं पाते

चट्टानों के रूप में पृथ्वी पर आकर गिरते हैं, 'उल्काश्म' कहे जाते हैं।

नीचे ग्रहों के बारे में कुछ विशेष जानकारी भी दी जा रही है:–

बुध में वायुमण्डल नहीं है। यह सूर्य का निकटतम ग्रह है, यहाँ दिन अति गर्म और रातें बर्फीली होती हैं।

षुक्र के चारों ओर सल्फ्यूरिक एसिड के बादल हैं इसकी सतह चट्टानों व ज्वालामुखी से भरी पड़ी है। यह सबसे चमकीला ग्रह है। जिस के कारण इसे भोर का तारा व सांझ का तारा कहते हैं। आकार व द्रव्यमान में पृथ्वी के लगभग समान होने के कारण इसे पृथ्वी की बहिन भी कहते हैं।

पृथ्वी पश्चिम से पूर्व दिशा में घूर्णन करती है। इसलिए हमें सूर्योदय पूर्व में तथा सूर्यास्त पश्चिम में दिखता है। शुक्र एवं अरूण ग्रह पूर्व से पश्चिम दिशा में घूर्णन करते हैं।

मंगल को लाल ग्रह कहते हैं। इसका सबसे ऊँचा पर्वत 'निक्स ओलंपिया' है, जो एवरेस्ट से तीन गुना ऊँचा हैं। हाल ही की खोजों में यहाँ जीवन की संभावना बनी हैं। मंगल के दो उपग्रह' फोबोस व डीमोस' हैं।

बृहस्पति सबसे बड़ा ग्रह हैं। इसका प्रसिद्ध लाल धब्बा वास्तव में अशांत बादलों के घेरे में स्थित विशाल चक्रवात हैं। इसके 16 उपग्रहों में गैनिमीड, आयो, यूरोपा, कैलिस्वो आदि प्रमुख हैं।

षनि ग्रह के चारों ओर की प्रसिद्ध वलय वास्तव में हजारों की संख्या में सर्पीली तरंगों की पेटियाँ हैं। इसके चारों ओर गैस व हिमकण के छोटे–छोटे चट्टानों के मलबे का घेरा है। इसके मुख्य उपग्रह फोबे, टेथिस तथा मीमास आदि हैं।

सारणी 12.2 से स्पष्ट है कि जो ग्रह सूर्य से जितना दूर है उसका परिभ्रमण काल अथवा कक्षीयगति काल उतना ही अधिक है।

आपको पता है भारत के वैज्ञानिकों ने 24 सितम्बर 2014 को मंगल ग्रह की कक्षा में अपने अन्तरिक्ष यान को प्रवेश कराने में सफलता प्राप्त कर ली है। यह मंगल यान प्रथम पूर्णतः भारत में निर्मित हुआ है, इसे श्री हरिकोटा आन्ध्रप्रदेश से छोड़ा गया। जो ग्यारह मास बाद मंगल की कक्षा तक पहुँचा। भारत द्वारा पहले ही प्रयास में यह कम खर्च एवं सफलता प्राप्त करने का पूरे विश्व के अंतरिक्ष अभियानों में प्रथम उदाहरण है।

भारतीय पंचांग के अनुसार जिन खगोलीय पिण्डों के प्रभाव में हमारी पृथ्वी है उन्हें ग्रह माना गया है इन ग्रहों की प्रकृति एवं गतियाँ लगभग वही हैं जो आधुनिक विज्ञान ने गणना करके प्राप्त की हैं।

भारतीय पंचांगानुसार ग्रह एवं उनकी गतियाँ

क्र. सं.	ग्रहों के नाम	ग्रहों का राषि भोग अर्थात एक राषि पर गति/समय
1.	सूर्य	एक राशि पर एक मास
2.	चन्द्र	एक राशि पर 2.25 दिन
3.	मंगल	एक राशि पर 1.5 मास
4.	बुध	एक राशि पर 0.75 मास
5.	गुरू	एक राशि पर 13 मास
6.	शुक्र	एक राशि पर 0.75 मास
7.	शनि	एक राशि पर 2.5 वर्ष
8.	राहु	एक राशि पर 1.5 वर्ष
9.	केतु	1.5 वर्ष

राहु और केतु छाया ग्रह की श्रेणी में हैं, इन्हें चन्द्रमा के क्रांतिवृत के दोनों ओर बिन्दु रूप में माना गया है। अर्थात चन्द्रमा की वह स्थितियां है जब ग्रहण की घटना घटित होती है। भारतीय पंचांग में ग्रहों की अन्य गतियों का उल्लेख भी है जिनका अध्ययन उच्च कक्षाओं में करेंगे।

सूर्य के प्रकाश को पृथ्वी तक आने में लगभग 8 (आठ) मिनट लगते हैं। चन्द्रमा द्वारा परावर्तित प्रकाश पृथ्वी तक $1\frac{1}{4}$ सैकेण्ड में पहुँचता है, जबकि प्रकाश की गति 3×10^8 m/s हैं।

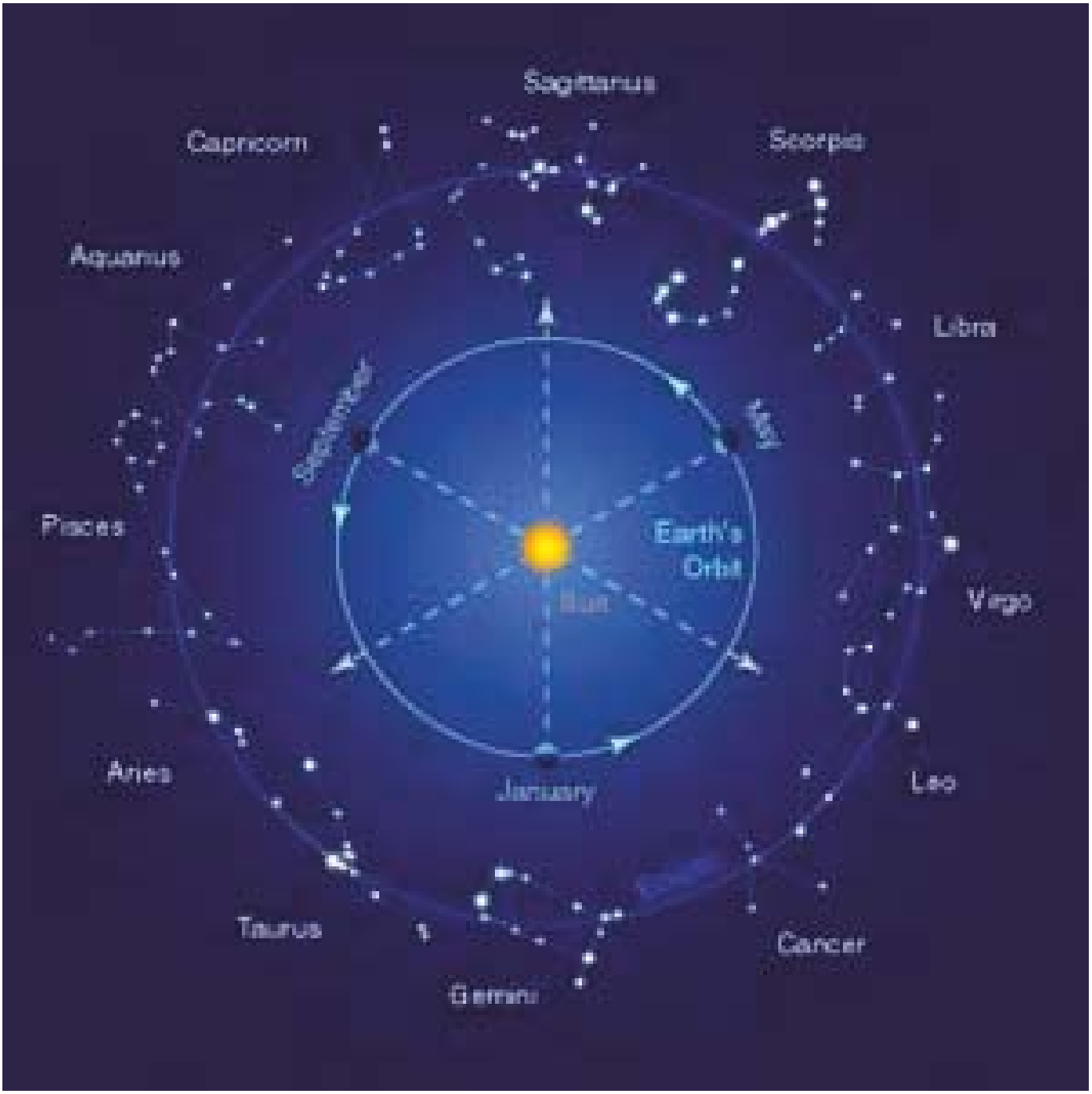

चित्र 12.3

12.5 राशियाँ

जिस प्रकार नक्षत्रों का नामकरण चन्द्रमा के पथ के आधार पर किया गया है उसी प्रकार राशि का संबंध पृथ्वी भ्रमण से है। पृथ्वी के क्रांति पथ को 12 विभागों में बाँटा गया है। प्रत्येक भाग को एक राशि माना गया है।

भारतीय पंचांगानुसार इन राशियों के नाम व आकृति आकाश में विद्यमान नक्षत्रों की आकृति विशेष के आधार पर रखे गये हैं। राशि चक्र के विभाग नक्षत्र चक्र के विभागों से बड़े होते हैं। अतः किसी राशि में 2 या 3 नक्षत्र तक हो सकते हैं। एक नक्षत्र को 4 (चार) चरणों में बाँटा गया है अतः एक राशि में 9 (नौ) चरण आते हैं,

दूसरे शब्दों में कह सकते है, चूंकि पृथ्वी लगभग एक वर्ष में सूर्य के चक्कर लगाती है, अतः सूर्य प्रत्येक राशि पर एक

माह रहेगा। इन राशियों की स्थितियों को 12 सौर मास के रूप में जानते हैं। इसके लिए सारणी 12.3 का अवलोकन करें।

सारणी 12.3

क्र.सं.	राषि	आकृति
1.	मेष (Aries)	भेड़
2.	वृष (Taurus)	बैल
3.	मिथुन (Gemini)	स्त्री पुरूष का जोड़ा
4.	कर्क (Cancer)	केकड़ा
5.	सिंह (Leo)	शेर
6.	कन्या (Virgo)	लड़की
7.	तुला (Libra)	तराजू
8.	वृश्चिक (Scorpio)	बिच्छू
9.	धनु (Sagittarus)	धनुष
10.	मकर (Capricorn)	मगरमच्छ
11.	कुंभ (Aquarius)	घड़ा
12.	मीन (Pisces)	मछली

पृथ्वी जब एक राशि से दूसरी राशि पर जाती है तो इसे संक्रान्ति कहते हैं। बोलचाल की भाषा में इसे सूर्य की संक्रान्ति भी कहते हैं। जब सूर्य मकर राशि पर संक्रमण करता है तब उसे मकर संक्रान्ति कहते हैं। यह अधिकतर 14 जनवरी को आती है।

12.6 उत्तरायण दक्षिणायन :

आपने महाभारत में पढ़ा कि भीष्म पितामह मृत्यु के समय बाणों की शय्या पर लेटे रहे, कारण सिर्फ इतना था कि सूर्य के उत्तरायण होने की प्रतीक्षा। इस अध्याय में हम समझेंगे कि उत्तरायण से क्या अभिप्राय है?

आप जानते हैं हमारी पृथ्वी सूर्य के चारों ओर भ्रमण करती है। इसे पृथ्वी का क्रांतिवृत कहते हैं। पृथ्वी के क्रांतिवृत को दो भागों में बाँटें तो सूर्य की स्थिति 6 मास पर्यन्त तक प्रतिदिन पूर्व–उत्तर–पश्चिम रहती है, इसे उत्तरायण कहते है। अगले 6 मास सूर्य की स्थिति प्रतिदिन पूर्व–दक्षिण–पष्चिम की होती है इसे दक्षिणायण कहते हैं।

उत्तरायण काल में पृथ्वी की स्थिति ऐसी होती है जिस कारण सूर्य प्रकाश पृथ्वी पर अधिक समय रहता है, अतः उत्तरायण में दिन बड़े व रात्रि छोटी होती हैं। मकरसंक्रांति से उत्तरायण का प्रारम्भ होता है। मकर सक्रान्ति हमें अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ने का संदेश देती है।उत्तरायण काल में मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृष और मिथुन ये 6 राशियाँ पृथ्वी क्रांति पथ में पड़ती हैं। इसी प्रकार कर्क संक्रांति से दक्षिणायण प्रारम्भ होता है। इसमें दिन छोटे एवं रात्रि बड़ी होती हैं। इसमें कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और धनु ये 6 राशियाँ इस पथ में आती हैं।

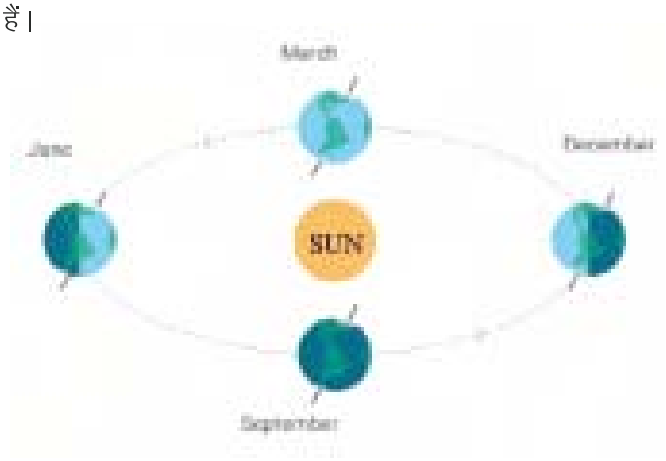

चित्र 12.4

21 जून तथा 22 दिसम्बर को सूर्य क्रमशः कर्क (उत्तरी अयनांत) व मकर रेखा (दक्षिणी अयनांत) पर पहुँचता है।

जब सूर्य भूमध्य रेखा पर मध्याह्न में ऊर्ध्वाधर होता है, और पृथ्वी का आधा प्रदीप्त भाग दोनों ध्रुवों को समान रूप से शामिल करता है तब दिन एवं रात्रि की अवधि बराबर (12 – 12 घंटे) होती हैं। ऐसा वर्ष में दो बार होता हैं। इनमें से 21 मार्च को बसंत विषुव तथा 22 सितम्बर को शरद विषुव कहते हैं।

गतिविधि 12.3

- विद्यार्थियों से प्रश्न करें कि मकर संक्रान्ति पर्व पर क्या कार्य किये जाते हैं ?
- छात्र– छात्राओं द्वारा बताए कार्यों के पीछे वैज्ञानिक एवं नैतिक आधारों को शिक्षक चर्चा कर स्पष्ट करें।

हमारे सौर परिवार की अभिकल्पना में सूर्य को स्थिर माना गया हैं, अतः यहाँ सूर्य गति से तात्पर्य है कि पृथ्वी की गति के कारण सूर्य की स्थिति में परिवर्तन। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे चलती रेलगाड़ी की खिड़की से देखने पर पेड़ रेलगाड़ी के विपरीत दिशा में भागते नजर आते हैं।

12.7 बुध एवं शुक्र पारगमण

हमारे आकाश में पूर्वानुमानित कई दुर्लभ खगोलीय घटनाएँ घटित होती हैं। इनमें से कुछ घटनाओं की वर्षों बाद पुनरावृत्ति भी होती हैं। ये घटनाएँ पृथ्वी के अलग–अलग स्थानों में अलग–अलग रूपों में दिखाई पड़ती हैं। ऐसी ही दो घटनाएँ जिन्हें बुध पारगमण एवं शुक्र पारगमण से जानते हैं, का विवरण नीचे दिया जा रहा हैं।

शुक्र पारगमण

शुक्र पारगमण (Transit of Venus) तब होता है जब शुक्र ग्रह सीधे सूर्य और पृथ्वी (या अन्य कोई ग्रह) के बीच आ जाता हैं। पारगमन के दौरान शुक्र सूर्य के चेहरे पर एक काले तिल जैसा दृष्टिगोचर होता है तथा आर–पार खिसकता हुआ दिखाई देता है। इस तरह पारगमण के दौर आमतौर पर घंटों में मापे गये हैं। 21 वीं सदी का अंतिम शुक्र पारगमण 5 व 6 जून 2012 को हुआ तथा यह पारगमण 6 घंटे चला था। आगामी पारगमण 10–11 दिसम्बर 2117 में होगा। जो भारत सहित विश्व के कई देशों में देखा जाएगा।

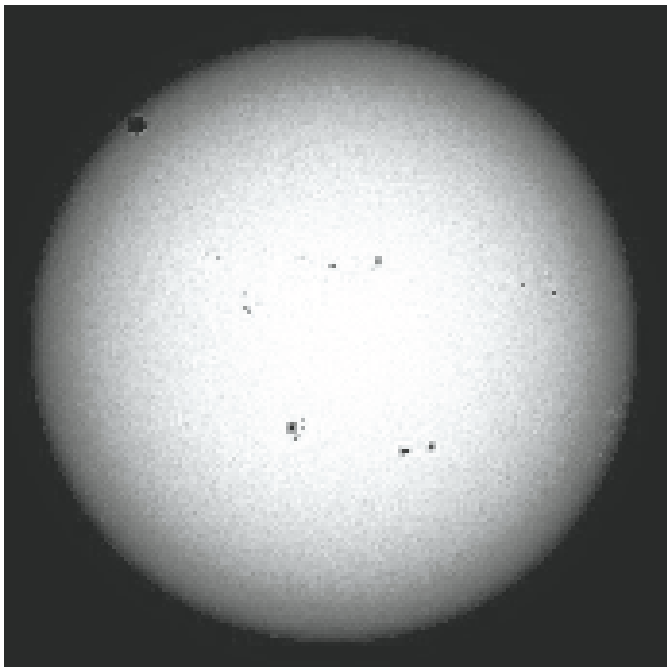

बुध पारगमण

बुध जब पृथ्वी और सूर्य के मध्य में आता है तो पृथ्वी से ऐसे दिखता है मानो सूर्य के चेहरे पर एक काला तिल हो इस खगोलीय घटना को बुध पारगमण कहते हैं। बुध पारगमण की घटना शुक्र पारगमण से कम समय तक होती है क्योंकि बुध सूर्य के अधिक नजदीक है, इसलिए तेजी से परिभ्रमण करता है यह घटना मई या नवम्बर में घटित होती है, अंतिम तीन बार यह घटना क्रमशः 1999, 2003 एवं 8 नवंबर 2006 में घटित हुई थी। वैज्ञानिकों के अनुसार आगामी 2016 में पुनः यह घटना घटित होगी।

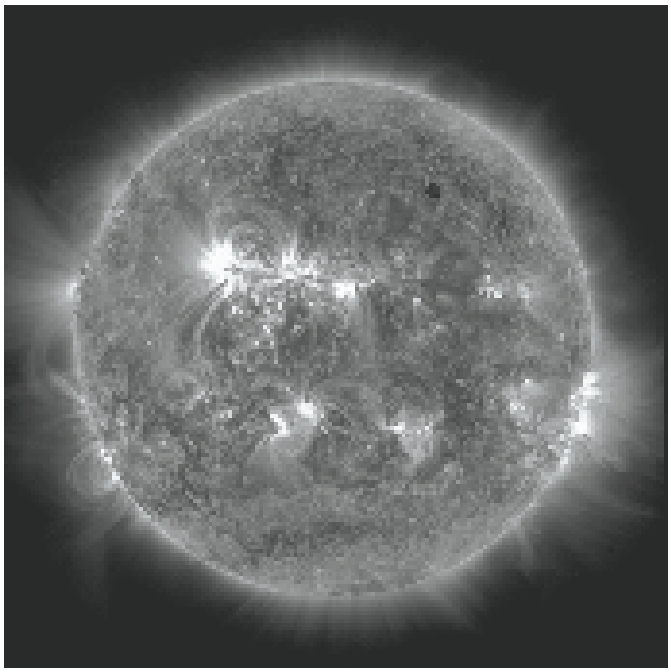

3 जून 2014 को क्यूरोसिटि रोवर अन्तरिक्ष यान जो मंगल पर था उसने बुध पारगमण को देखा। यह पहला अवसर था, जब ग्रहों के पारगमण को पृथ्वी से हटकर देखा गया।

वैज्ञानिक इन खगोलीय घटनाओं का अति सूक्ष्मता से प्रेक्षण करते है और कई खगोलीय गणनाओं में इसका उपयोग करते हैं। जैसे पृथ्वी शुक्र के मध्य दूरी के मान को परिशुद्ध करना। इन घटनाओं का प्रेक्षण वैज्ञानिकों के लिए अनुसंधान के नये अवसर खोलता है।

12.8 तिथियाँ

अमावस्या के अंत पर सूर्य, चन्द्र दोनों एक समान राशि अंश पर रहते हैं। शीघ्र गतिमान चन्द्रमा जब सूर्य से क्रमिक 12 अंशों का अंतर सिद्ध करता है उस कालांश अंतरांश को प्रतिपदा कहते हैं। इसी प्रकार 12 से 24 अंतरांश पर द्वितीया तिथि का स्वरूप बनेगा। पूर्ण स्पष्टता के लिए सारणी 12.4 का अवलोकन करें।

सारणी 12.4

क्र.सं.	सूर्य चन्द्र गति में उत्पन्न अंतरांष	तिथि का नाम
1.	0 – 12	प्रतिपदा या एकम
2.	12 – 24	द्वितीया
3.	24 – 36	तृतीया
4.	36 – 48	चतुर्थी
5.	48 – 60	पंचमी
6.	60 – 72	षष्ठी
7.	72 – 84	सप्तमी
8.	84 – 96	अष्टमी
9.	96 – 108	नवमी
10.	108 – 120	दशमी
11.	120 – 132	एकादशी
12.	132 – 144	द्वादशी
13.	144 – 156	त्रयोदशी
14.	156 – 168	चतुर्दशी
15.	168 – 180	पूर्णिमा

यह चंद्र मास का एक हिस्सा है जिसे शुक्ल पक्ष से जानते हैं। इसी प्रकार 180^0 अंश के अंत से 168 अंश तक 12 अंश न्यूनांतर बनने पर कृष्णपक्ष की प्रतिपदा का स्वरूप बनेगा। यह क्रम चलते रहने पर 12 से 0 अंतरांश होने पर अमावस्या तिथि हो जायेगी।

इस प्रकार शुक्ल पक्ष एवं कृष्ण पक्ष की 15–15 तिथियाँ होती हैं। इन तिथियों में किसी तिथि के कुल भोग समय में कमी या वृद्धि भी होती रहती है।

12.9 भारतीय महीनों के नामों का आकाशीय संबंध

आपने पूर्व अनुच्छेद में 12 सौरमासों के बारे में जाना जो सूर्य गति से सम्बद्ध हैं। इसी प्रकार चन्द्रमा की गति से चन्द्रमास का सम्बन्ध है। चन्द्रमास भी 12 होते हैं, चन्द्रमासों का नामकरण चन्द्रमा के क्रांतिपथ में पड़ने वाले नक्षत्रों एवं राशियों के आधार पर हुआ है।

अमावस्या के पश्चात चन्द्रमा जब मेष राशि और अश्विनी नक्षत्र में प्रकट होकर प्रतिदिन एक–एक कला बढ़ता हुआ पूर्णिमा को चित्रा नक्षत्र में पूर्णता को प्राप्त करता है, तब वह मास चित्रा नक्षत्र के कारण चैत्र कहा जाता है। इसे इस प्रकार भी समझ सकते हैं कि पूर्णिमा को चन्द्रमा जिस नक्षत्र पर रहता

है उस महीने का नाम उस नक्षत्र के अनुसार होगा। जैसे कार्तिक की पूर्णिमा को चन्द्रमा कृतिका नक्षत्र पर रहेगा। नीचे सारणी में और स्पष्ट किया गया है :–

सारणी 12.5

क्र.सं.	नक्षत्र	राषि	माह का नाम
1.	चित्रा	मेष	चैत्र
2.	विशाखा	वृष	वैशाख
3.	ज्येष्ठा	मिथुन	ज्येष्ठ
4.	पूर्वाषाढ़ा उत्तराषाढ़ा	कर्क	आषाढ़
5.	श्रवण	सिंह	श्रावण
6.	पूर्वाभाद्रपद / उत्तराभाद्रपद	कन्या	भाद्रपद
7.	अश्विनी	तुला	आश्विन
8.	कृतिका	वृश्चिक	कार्तिक
9.	मृगशिरा	धनु	मार्गशीर्ष
10.	पुनर्वसु / पुष्य	मकर	पौष
11.	मघा	कुंभ	माघ
12.	पूर्वाफाल्गुन उत्तरफाल्गुन	मीन	फाल्गुन

चन्द्रवर्ष और सौरवर्ष की अवधि में अतंर होता है क्योंकि चन्द्रमा और पृथ्वी की गतियों में भी अंतर हैं सौर एवं चन्द्र मास में सामंजस्य रखने के लिए प्रत्येक तीसरे वर्ष में एक चन्द्रमास की वृद्धि मानी जाती हैं, जिसे **अधिक मास** से जाना जाता हैं। 150 से 200 वर्षो में एक मास का क्षय भी किया जाता है।

12.10 भारतीय वैज्ञानिकों की जानकारी

आपने इस अध्याय में ब्रह्मांड के बारे में इतना कुछ जाना। क्या आपने सोचा कि सारे विश्व को यह सटीक जानकारियाँ, गणनाएँ किसने दीं ?

इसके पीछे बहुत सारे खगोलविद् गणितज्ञ एवं वैज्ञानिकों की वर्षों की मेहनत है। यह निरंतर चलने वाला कार्य है। एक वैज्ञानिक जो कार्य करके जाता है, उसके परिणामों को आधार बनाकर अन्य वैज्ञानिक उस पर कार्य करते हैं और इन परिणामों के आगे की खोज प्रस्तुत करते हैं। इन वैज्ञानिकों के महान कार्यों ने ही आज हमें बहुत सारे यंत्र, उपकरण, मशीनें और अन्य सुविधायें प्रदान की हैं।

इस वैज्ञानिक प्रगति में भारतीय वैज्ञानिकों का बहुत योगदान रहा है। इनके कार्यों ने सम्पूर्ण विश्व को अपने ज्ञान से प्रकाशित एवं अचम्भित किया है। ऐसे ही कुछ भारतीय वैज्ञानिकों की जीवनी तथा विश्व को इनकी देन के बारे में जानकारी दी जा रही है जिसे जानकर आप भारतीय होने में गर्व महसूस करेगें।

आर्यभट्टः

आर्यभट्ट प्राचीन भारत के प्रथम महान खगोलविद् एवं गणितज्ञ हुए हैं। इनका जन्म संवत 476 में हुआ। इन्होंने नालन्दा विश्वविद्यालय में अध्ययन किया और मेधावी होने से इस विश्वविद्यालय के शिक्षक भी रहे। इन्होंने अल्पकाल में आर्यभटीय ग्रंथ की रचना की। यह गणित एवं ज्योतिष का एक विशुद्ध वैज्ञानिक ग्रंथ है।

आर्यभट्ट के कार्य का प्रत्यक्ष विवरण सिर्फ आर्यभटीय ग्रंथ से ही ज्ञात है। समूचे ग्रंथ में 108 छंद हैं और परिचय के रूप में 13 अतिरिक्त हैं। इसे 4 अध्याय में विभाजित किया गया है :–

1. गीतिकपाद (13 छंद) में समय की बड़ी इकाईयाँ कल्प, मनवन्तर, युग आदि का वर्णन है।

2. गणितपाद (33 छंद) में क्षेत्रमिति और सरल, द्विघात, युगपत और अनिश्चित समीकरणों का समावेश है।

3. काल क्रियापद (25 छंद) में समय की विभिन्न इकाईयाँ और किसी दिन के लिए ग्रहों की स्थिति का निर्धारण करने की विधि। अधिक मास की गणना, क्षय तिथियाँ, सप्ताह के दिनों के नामों के साथ एक सात दिन का सप्ताह प्रस्तुत करते हैं।

4. गोलपाद (50 छंद) में आकाशीय क्षेत्र के ज्यामितिक, त्रिकोणमितिय पहलू, क्रांतिवृत, पृथ्वी के आकार, दिन और रात के कारण आदि सम्मिलित हैं।

पश्चिम वैज्ञनिक कॉपरनिक्स(1473–1543ई.) को जिन खोजों के लिए जाना जाता हैं, उन खोजों की शुरूआत आर्यभट्ट हजार वर्ष पहले कर चुके थे। इनके द्वारा प्रतिपादित महत्वपूर्ण खोजें निम्न प्रकार से हैं।

1– π (पाई) के मान को शुद्ध रूप में निरूपित किया।

2. पृथ्वी स्वयं भी अपनी धुरी पर घूमती है

3. वृत्त की परिधि और व्यास में संबंध

4. त्रिभुज का क्षेत्रफल

5. सौरमण्डल के भूकेन्द्रीय मॉडल की परिकल्पना कर सूर्य–चन्द्र ग्रहणों की सही व्याख्या कर विभिन्न गणनाएँ दी।

6. पृथ्वी का आवर्त काल एवं वर्ष की अवधि 365 दिन 6 घंटे 12 मिनट 30 सैकण्ड दी गई जिसमें आधुनिक विज्ञान के मान से 3 मिनट 20 सैकण्ड की त्रुटि रही।

7. पृथ्वी की परिधि की गणना की जो वास्तविक मान से केवल 0.2 % कम थी।

8. आर्यभट्ट पहले व्यक्ति थे जिन्होनें साइन (ज्या) तालिकाओं को 0 से 90^0 तक निर्मित किया।

आर्यभट्ट की खगोलीय गणना की विधियाँ बहुत प्रभावशाली थी जो यूरोप में सदियों तक सर्वाधिक सूक्ष्म पंचांग के रूप में उपयोगी रहीं। आर्यभट्ट और उनके अनुयायियों द्वारा की गई तिथि गणना पंचांग व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए भारत में निरंतर उपयोग में रही हैं।

आर्यभट्ट ने आजकल के उन्नत साधनों के बिना जो खोजें की थीं, उनकी महत्ता है। इनके कार्यो को सम्मान देने के लिए प्रथम भारतीय उपग्रह का नाम "**आर्यभट्ट**" रखा गया।

ये एक क्रांतिकारी विचारक थे। परम्पराओं के विरोध में सही विचार प्रस्तुत करके इन्होंने बड़े साहस का परिचय देते हुए भारत में वैज्ञानिक अनुसंधान की स्वस्थ परम्परा की स्थापना की।

वराहमिहिर :–

वराहमिहिर ईसा की पाँचवी–छठी शताब्दी के भारतीय गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ थे। इनका जन्म सन् 499 में उज्जैन के निकट एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। वराहमिहिर ने अपने पिता आदित्यदास से पराम्परागत गणित एवं ज्योतिष सीखकर इन क्षेत्रों में व्यापक शोध कार्य किया। इन्होंने समय मापक घट यंत्र, इन्द्रप्रस्थ में लौहस्तम्भ का निर्माण कराया तथा ईरान के शहंशाह के आमन्त्रण पर जुन्दीशाहपुर नामक स्थान पर वेधशाला की स्थापना उनके कार्यो की एक झलक देते हैं। वराहमिहिर का पत्थक (उज्जैन) में उनके द्वारा विकसित गणितीय विज्ञान का गुरूकुल सात सौ वर्षों तक अद्वितीय रहा।

कुसुमपुर (पटना) जाने पर वराहमिहिर महान गणितज्ञ आर्यभट्ट से मिले। इससे युवा वराहमिहिर को इतनी प्रेरणा मिली कि उसने खगोलज्ञान को ही अपने जीवन का ध्येय बना लिया। जब इनके ज्ञान की प्रसिद्धि चन्द्रगुप्त द्वितीय तक पहुँची तो उन्होंने वराहमिहिर को अपने नौ रत्नों में शामिल कर लिया। इन्होंने त्रिकोणमिति, प्रकाशिकी एवं ज्योतिष के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सूत्र एवं सिद्धांत दिये साथ ही आर्यभट्ट प्रथम द्वारा प्रतिपादित ज्या सारणी को भी और अधिक परिशुद्ध बनाया। सन् 587 में इनकी मृत्यु हो गई।

– इनके द्वारा लिखित व्रहज्जातक, व्रहत्सहिंता व पंचसिद्धांतिका पुस्तके गणित एवं ज्योतिष के क्षेत्र में मील का पत्थर सिद्ध हुई हैं।

पंचसिद्धांतिका में इन्होंने पगैलिय, रोमक, वशिष्ठ, सौर एवं पितामह नाम से पाँच सिद्धांतों का वर्णन किया। वराहमिहिर विज्ञान इतिहास के पहले व्यक्ति थे जिन्होनें कहा कि ऐसी कोई शक्ति है जो वस्तुओं को पृथ्वी से चिपकाये रखती है। आज इस शक्ति को गुरूत्वाकर्षण कहते हैं।

वराहमिहिर का मुख्य उद्देश्य गणित एवं विज्ञान को जनहित से जोड़ना था। वस्तुतः ऋग्वेद काल से ही भारत की यह परम्परा रही है। वराहमिहिर ने पूर्णतः इसका परिपालन किया।

भास्कराचार्य या भास्कर द्वितीय :–

भास्कर II जिन्हें भास्कराचार्य भी कहते हैं। इनका जन्म सन् 1114 ई. में बीजापुर, कर्नाटक में हुआ। ये बारहवीं सदी में भारत के प्रसिद्ध गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ हुए हैं। जिन्होंने दशमलव प्रणाली की खोज की जिसे हम आज उपयोग में ले रहे हैं। भास्कराचार्य ने आर्यभट्ट की कृतियों को जन मानस के समझने हेतु सरल व्याख्या की, साथ ही इन कृतियों पर आधारित अपनी स्वतंत्र रचनाएँ भी कीं। उन्होंने 36 वर्ष की आयु में पुस्तक सिद्धान्त शिरोमणि की संस्कृत–भाषा में रचना की जिसके चार भाग हैं: लीलावती, बीजगणिताध्याय, ग्रहगणिताध्याय, और गोलाध्याय जिसमें क्रमशः अंकगणित, बीजगणित, ग्रहों की गणित एवं गोले के संबंध में विस्तृत विवरण हैं। ये उज्जैन में खगोलीय प्रेक्षणों के प्रमुख रहे। आधुनिक युग में धरती की गुरूत्वाकर्षण शक्ति की खोज का श्रेय न्यूटन को दिया जाता है परन्तु यह कई सदियों पहले भास्कराचार्य ने अपने ग्रंथ में लिखा कि पृथ्वी आकाशीय पदार्थों को विशिष्ट शक्ति से अपनी ओर खींचती है। इनकी एक अन्य रचना ''करण कौतुहल'' है जिसमें खगोलविज्ञान की गणना हैं। जिसे पंचांग आदि बनाने के समय अवश्य देखा जाता है। एक अन्य ग्रंथ सूर्य सिद्धांत में भास्कराचार्य ने यह स्पष्ट किया कि पृथ्वी गोल है ओर सूर्य के चारों ओर एक निर्धारित मार्ग पर अनवरत परिक्रमा करती रहती है।

प्रसिद्ध गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त (598 – 665) जिसको भास्कर द्वितीय अपना गुरू मानते थे, के अधूरे कार्यों को भी पूरा किया। भास्कराचार्य पहले गणितज्ञ थे जिन्होंने बताया कि शून्य से किसी संख्या को विभक्त करने पर अनन्त प्राप्त होता है। भास्कराचार्य जिस काल में पैदा हुए और ज्ञान–विज्ञान में सक्रिय रहे तो दूसरी ओर हमारे समाज के भीतर भारी अंधविश्वास व्याप्त थे। ऐसे ही समय में कट्टर और परंपरावादी अंधविश्वासियों ने यह अफवाह फैलाई थी कि पृथ्वी बिना आधार की है और वह धँसती जा रही है। इन परंपरावादियों ने यह कार्य पौराणिक ग्रंथों की गलत व्याख्या करते हुए समाज में अपने वर्चस्व के लिए दहशत फैलाने के उद्देश्य से किया था। ऐसे समय में इस महान खगोलविज्ञानी ने अपने वैज्ञानिक कर्त्तव्यों का निर्वहन करते हुए प्रमाण प्रस्तुत करके यह बताया कि 'निश्चय ही पृथ्वी बिना आधार के है, लेकिन उसके चारों ओर जो ग्रह नक्षत्र आदि हैं, वे अपने गुरूत्वाकर्षण से एक–दूसरे को अपनी ओर खींचकर आपसी संतुलन बनाए हुए हैं; हमारी पृथ्वी ऐसी ही रहेगी और कभी भी नहीं धँसेगी।'

उससे भी महत्वपूर्ण यह है कि भारतीय खगोल वैज्ञानिकों ने ये घोषणाएँ पश्चिमी खगोल वैज्ञानिकों से सदियों पूर्व ही कर दी, जो भारत के वैज्ञानिक क्षेत्र में अग्रणी होने का ठोस प्रमाण है।

भास्कराचार्य के महत्वपूर्ण खगोलकीय विचारों की दुनिया की कई भाषाओं में प्रस्तुति हुई है। इस प्रकार महत्वपूर्ण भारतीय खगोलिकीय एवं गणितीय सूचनाएँ विश्व स्तर पर मान्य हुई। सम्राट अकबर के एक दरबारी विद्वान फैजी ने भास्कराचार्य की रचना **लीलावती** का फारसी में अनुवाद किया था। इसी प्रकार सन् 1710 में कोलब्रुक नामक एक अंग्रेज विद्वान ने इसी ग्रंथ का अंग्रेजी में अनुवाद किया था। भारत सरकार ने इनको सम्मान देने के लिए अपने द्वितीय कृत्रिम उपग्रह का नाम **भास्कर** रखा।

इनके नाम के साथ द्वितीय इसलिए जोड़ा गया क्योंकि भास्कर प्रथम (लगभग 6 वीं सदी में जन्म) भी एक प्रसिद्ध गणितज्ञ हुए।

अन्य भारतीय गणितज्ञों मे ब्रह्मगुप्त (628ई) जैन गणितज्ञ महावीराचार्य, (850ई.) श्री धराचार्य (991ई) रामानुजन (1887), सुब्रह्मण्यम चन्द्रशेखर (1938) भी हुए जिन्होंने गणित एवं खगोल क्षेत्र में बहुत कार्य किया। राजवंश में भी सवाई जयसिंह द्वितीय (1686 – 1743ई.) ने जयपुर, दिल्ली, मथुरा, वाराणसी

तथा उज्जैन में वेधशालाओं (जंतर मंतर) का निर्माण करवाकर खगोल शास्त्र के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

महत्वपूर्ण बिन्दु

- तारे, सूर्य, ग्रह, क्षुद्रग्रह, उल्कायें, धूमकेतु, आकाशगंगा, चंद्रमा आदि सभी आकाशीय पिण्ड ब्रह्माण्ड के खगोलीय पिण्ड हैं।
- भारतीय पंचांग खगोलीय पिण्डों की स्थिति एवं गति की जानकारी देने वाली पुस्तक है, जो विभिन्न गणनाओं पर आधारित हैं।
- भारतीय पंचांग के पाँच प्रमुख अंग हैं, जिन्हें तिथि, वार, नक्षत्र, योग तथा करण नाम से जानते हैं।
- चन्द्रमा के क्रांतिपथ में पड़ने वाले तारों के विशेष आकृति के समूह को नक्षत्र से जानते हैं। नक्षत्रों की संख्या 27 है, यह पृथ्वी – चन्द्रमा की गतियों के दौरान मार्ग में पहचाने गए हैं।
- सूर्य के विभिन्न मार्गों से परिक्रमा करने वाले खगोलीय पिण्डों से मिलकर हमारा सौर परिवार बना है जिसमें विभिन्न ग्रह, क्षुद्रग्रह, धूमकेतु, उपग्रह आदि सम्मिलित हैं।
- अन्तर्राष्ट्रीय खगोलीय संघ से मान्यता प्राप्त ग्रहों की संख्या 8 है जो सूर्य से दूरी के आधार पर क्रमशः बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, अरूण एवं वरूण हैं।
- बृहस्पति अथवा गुरू सबसे बड़ा ग्रह है। चन्द्रमा पृथ्वी का एक प्राकृतिक उपग्रह है।
- भारतीय पंचांग के अनुसार पृथ्वी जिन खगोलीय पिण्डों के गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव में हैं, उन्हें ग्रह माना गया है। ग्रहों की संख्या 9 हैं, जिन्हें– सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति या गुरू, शुक्र, शनि तथा दो छाया ग्रह राहु, केतु से जाना गया।
- सभी ग्रह सूर्य के चारों ओर परिक्रमण करते हैं साथ ही अपने अक्ष पर घूर्णन भी करते हैं। एक परिक्रमण अथवा एक घूर्णन करने का समय प्रत्येक ग्रह के लिए भिन्न होता हैं।
- पृथ्वी सूर्य के चारों ओर लगभग 12 मास में एक चक्कर पूरा करती है। पृथ्वी के इस क्रांतिपथ को 12 भागों में विभाजित किया गया है प्रत्येक भाग में पड़ने वाले विशेष नक्षत्र के समूह को राशि कहा जाता है। इन्हें **सौर मास** से भी जानते हैं तथा इन्हें मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु मकर, कुम्भ व मीन से जाना जाता है।
- पृथ्वी के क्रांतिपथ को दो भागों में बाँटें तो एक भाग के लिए या 6 मास तक सूर्य की स्थिति पूर्व उत्तर–पश्चिम रहती हैं जिसे **उत्तरायण** कहते हैं तथा अगले 6 मास तक प्रतिदिन सूर्य की स्थिति पूर्व–दक्षिण, पश्चिम की ओर होती हैं जिसे **दक्षिणायण** से जानते हैं।
- जब बुध सूर्य की परिक्रमा के दौरान सूर्य एवं पृथ्वी (या अन्य कोई ग्रह) के बीच से सीधा गुजरता हैं तो पृथ्वी से ऐसे दिखता है जैसे सूर्य के चेहरे पर काला तिल जो धीरे–धीरे आगे खिसकता रहता है। इस खगोलीय घटना को **बुध परागमण** कहते हैं। इसी प्रकार **षुक्र परागमण** की घटना भी घटित होती हैं। ये घटनायें समय–समय पर वैज्ञानिकों द्वारा देखी गई और आगे भी देखी जा सकेंगी।
- अमावस्या के अंत पर सूर्य, चन्द्र दोनों एक समान राशि अंश पर रहते हैं, शीघ्र गतिमान चन्द्रमा जब सूर्य से क्रमिक 12 अंशों का अंतर सिद्ध करता है उस कालांश अंतरांश को **प्रतिपदा** तिथि कहते हैं जो आगे इसी प्रकार 12–12 अंशों के अंतर से तिथियाँ मानी जाती हैं।
- एक मास में दो पक्ष जिन्हें शुक्ल पक्ष (बढ़ता हुआ चन्द्रमा) तथा कृष्ण पक्ष (घटता हुआ चन्द्रमा) कहते हैं। प्रत्येक पक्ष में 15–15 तिथियाँ होती हैं। शुक्ल पक्ष की अंतिम तिथि पूर्णिमा तथा कृष्ण पक्ष की अंतिम तिथि अमावस्या होती हैं।
- पूर्णिमा को चन्द्रमा प्रायः जिस नक्षत्र पर रहता है उस चन्द्रमास का नाम उस नक्षत्र के आधार पर रखा गया हैं। इस आधार पर बारह भारतीय महीनों के नाम रखे गयें हैं जिन्हें क्रमशः चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ, श्रावण,

भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन कहते हैं।

- विभिन्न खगोलीय पिण्डों की प्रकृति, गति एवं आपसी संबंध की जानकारी होने पर विभिन्न खगोलीय घटनाओं की भविष्यवाणी एवं विश्लेषण संभव है। प्राचीन भारत में आर्यभट्ट, वराहमिहिर, भास्कराचार्य आदि ऐसे महान भारतीय खगोलिविद् एवं गणितज्ञ हुए हैं जिन्होंने इस क्षेत्र में कई सूत्र, सिद्धान्त एवं नई जानकारियाँ देकर, सम्पूर्ण विश्व को आलोकित किया हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. जिन पिण्डों में अपना स्वयं का प्रकाश एवं ऊष्मा होती है उन्हें किस नाम से जानते हैं?
   (अ) तारे (ब) ग्रह
   (स) उपग्रह (द) उल्काएँ
2. सौर मण्डल में चन्द्रमा को किस श्रेणी में रखा गया है ?
   (अ) तारा (ब) ग्रह
   (स) उपग्रह (द) क्षुद्रग्रह
3. भारतीय पंचांगानुसार नक्षत्रों की संख्या कितनी है?
   (अ) 15 (ब) 27
   (स) 12 (द) 07
4. भारतीय पंचांगानुसार राशियों की संख्या कितनी है ?
   (अ) 15 (ब) 27
   (स) 12 (द) 07
5. हमारे सौर मण्डल का सबसे बड़ा पिण्ड कौनसा है ?
   (अ) बृहस्पति (ब) सूर्य
   (स) पृथ्वी (द) शनि
6. हमारे सौर मण्डल का सबसे बड़ा ग्रह कौनसा है?
   (अ) बृहस्पति (ब) शनि
   (स) अरूण (द) वरूण
7. अधिक मास कितने वर्ष के अन्तराल के बाद आता है?
   (अ) 1 वर्ष बाद (ब) 2 वर्ष बाद
   (स) 3 वर्ष बाद (द) 4 वर्ष बाद
8. दक्षिणायन के प्रारम्भ में सूर्य की स्थिति किस राशि पर होती है ?
   (अ) कर्क (ब) सिंह
   (स) मकर (द) कुम्भ

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1. अंक गणित पर आधारित पुस्तक लीलावती के लेखक कौन थे ?
2. प्रथम भारतीय उपग्रह का नाम किस भारतीय वैज्ञानिक के नाम पर रखा गया है ?
3. शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी के बाद कौनसी तिथि आती है ?
4. यदि पूर्णिमा को चन्द्रमा मृगशिरा नक्षत्र पर है तो उस चंद्रमास का क्या नाम होगा ?
5. कौनसे ग्रह का कक्षीय काल सबसे कम है ?
6. सूर्य से दूरी के आधार पर ग्रहों को क्रम से लिखिए?
7. स्थलीय ग्रहों के नाम लिखिए ?
8. पृथ्वी के अतिरिक्त किस ग्रह पर जीवन की संभावना खोजी जा रही हैं ?
9. भारतीय पंचांगानुसार छाया ग्रह की श्रेणी में कौन से ग्रह आते हैं ?
10. दो ग्रह A और B सूर्य से क्रमशः X और Y दूरी पर हैं यदि Y का मान X से अधिक है तो कौन से ग्रह का परिभ्रमण काल अधिक होगा ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. पृथ्वी से दूरी के आधार पर ग्रहों को क्रम से लिखिए?
2. भारतीय पंचांग के पाँच प्रमुख अंगों के नाम लिखिए?
3. नक्षत्र से क्या अभिप्राय है ? इन्हें कितने भागों में बाँटा गया हैं ? किन्ही पाँच नक्षत्रों के नाम लिखिए।
4. भारतीय पंचांगानुसार तिथि का निर्धारण किस प्रकार होता हैं ? संक्षेप में समझाइए ।
5. ग्रहों के नाम उनके आकार के क्रम में लिखिए ?
6. उत्तरायण–दक्षिणायण से क्या अभिप्राय है ? समझाइए।
7. पृथ्वी की विभिन्न गतियों के बारे में समझाइए?

8. भारतीय पंचांगानुसार राशि का संबध किसकी गति से हैं ? राशियों का निर्धारण किस प्रकार किया गया है ?
9. मकर संक्रान्ति से क्या अभिप्राय है ?
10. अधिक मास से आप क्या समझते हैं ?
11. बुध पारगमण को समझाइये तथा इसकी तुलना शुक्र पारगमण से कीजिए ?
12. भारतीय पंचांगानुसार सौर मासों के नाम लिखिए?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. आर्यभट्ट की जीवनी पर प्रकाश डालते हुए इनके प्रमुख वैज्ञानिक कार्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए?
2. भास्कराचार्य की जीवनी पर प्रकाश डालते हुए इनके प्रमुख वैज्ञानिक कार्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए?
3. भारतीय मासों के नामकरण का क्या आधार है ? भारतीय मासों के नाम लिखकर उस समय बनने वाली आकाशीय स्थिति को विस्तार से लिखिए।
4. हमारे सौर मण्डल के बारे में विस्तार से लिखिए?

उत्तरमाला

(1) अ, (2) स, (3) ब, (4) स, (5) ब, (6) अ, (7) ब, (8) अ

◆◆◆

अध्याय 13
पर्यावरण
(Environment)

13.1 पर्यावरण (Environment) का अर्थ :

पर्यावरण शब्द एक अंग्रेजी शब्द इनवाइरनमेन्ट (Environment) का हिन्दी पर्याय है। इसका शाब्दिक अर्थ है चारों ओर/सभी ओर से घेरने वाला (परि=चारों ओर+आवरण = घेरा/घेरने वाला)। यही अर्थ इनवाइरनमेन्ट शब्द का भी है। वैबस्टर शब्द–कोश में पर्यावरण को एक जीवधारी या जीवधारियों के समूह के अस्तित्व, वृद्धि तथा कल्याण को प्रभावित करने वाली सभी परिस्थितियों के समूह के रूप में परिभाषित किया गया है। इस प्रकार इसमें जीवधारियों के अस्तित्व, वृद्धि तथा कल्याण से सम्बन्धित परिवेश के सभी घटक और परिस्थितियाँ सम्मिलित हैं। इसे यों भी कहा जा सकता है कि पर्यावरण एक "जीवन अवलंब तंत्र (Life Support System) है, क्योंकि जैव–मण्डल (Biosphere) के सभी घटक जीवधारियों का अस्तित्व एवं सातत्य (Perpetuation) इसी पर निर्भर है। पर्यावरण और जीवधारियों की परस्पर क्रियाओं के अध्ययन से सम्बन्धित विज्ञान को **पारिस्थितिकी (Ecology)** कहते हैं। जीवधारी अपने पर्यावरण में अंतःस्थापित (Embedded) रहते हैं, जो (पर्यावरण) इनके अनुरक्षण तथा सदा बने रहने के लिए आवश्यक सभी संसाधन (Resource) उपलब्ध कराता है। जीवधारियों के संपोषण तथा सातत्य से सम्बन्धित आवश्यकताएँ उनके जीवन–चक्र (Life-cycle) में जन्म से मृत्यु तक की अवस्थाओं में स्थिर नहीं रहतीं अर्थात् परिवर्तनशील हैं। पर्यावरण के कारक भी दिक्काल [(दिक् = दिशा या अवकाश या स्थान + काल = समय) (Space and time)] के साथ परिवर्तनशील हैं। अतः किसी विशेष स्थान और समय में एक जीवधारी का अस्तित्व और सातत्य उसकी (जीवधारी) परिवर्तनीय (बदलने वाली) आवश्यकताओं तथा पर्यावरण की गति के बीच समाकलन पर निर्भर है।

जीवधारी को आवृत करने वाले वर्तमान पर्यावरण के भौतिक (Physical), रासायनिक (Chemical), जैविक (Biological), वैज्ञानिक (Scientific) तथा प्रौद्योगिक (Technological) घटकों (Components) को निम्नलिखित तीन उपसंकुलों (Subcomplexes) में विभाजित किया जा सकता है:

(अ) अजैविक उपसंकुल (Abiotic-subcomplex),

(ब) जैविक (Biotic) उपसंकुल तथा

(स) वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिक (Scientific and Technological) उपसंकुल।

प्रत्येक उपसंकुल में अनेक कारक (Factors) होते हैं जो संकुल स्तर (Level) पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं और तीनों उपसंकुल एक दूसरे से अन्योन्य क्रिया करते हुए (Interacting) **सकल पर्यावरणीय संकुल (Total Environmental Complex)** का गठन करते हैं। इसी में जीवधारियों को अन्तःस्थापित (Embedded) माना गया है। तुलसीदास जी ने अपने महाकाव्य "रामचरितमानस" में पाँच अजैव (Abiotic) घटकों, अर्थात् क्षिति/पृथ्वी (Earth), जल (Water), पावर/अग्नि ऊर्जा (Energy), गगन/आकाश (Space) तथा समीर/वायु (Air) को जीवधारियों के संगठन के लिए संसाधन (Resource) माना है (रामचरितमानस 4)। विगत शताब्दी की वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिक क्रान्तियों द्वारा लाए गए परिवर्तनों के कारण आज पर्यावरण के जैव तथा अजैव घटकों में बड़े पैमाने पर रूपान्तरण किए जा रहे हैं। अतः अब एक तीसरा उपसंकुल सम्मिलित किया गया है। इसने सभी जीवधारियों के लिए एक कृत्रिम पर्यावरण निर्मित किया है। **हैबर** (Haber, 1989) ने इसे प्रौद्योगिक पारिस्थितिक तन्त्र (Tech-ecosystem) नाम दिया है।

सजीवों का यह पर्यावरण प्राकृतिक, भौतिक, रासायनिक एवं जैविक रूप में हो सकता है। पर्यावरण में प्राणी, वनस्पति एवं उससे सम्बन्धित कारक जैसे–प्रकाश, वायु, जल, मृदा, ध्वनि एवं आर्द्रता सम्मिलित हैं। पर्यावरण को जीव मण्डल (Biosphere) भी कहते हैं, इसमें जल मण्डल, (Hydrosphere) वायुमण्डल (Atmosphere) एवं स्थल मण्डल (Lithosphere) आते हैं। पर्यावरण के अंतर्गत वे सभी वस्तुएँ आती हैं जो सजीवों को घेरे रहती हैं एवं उनके जीवन को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करती हैं।

वैदिक काल से ही भारत में पर्यावरण के निरीक्षण, परीक्षण एवं विश्लेषण की प्रवृत्ति रही है। इसका ज्ञान पुराण, वेद एवं उपनिषदों में वर्णित है। इन शास्त्रों में लिखा है कि मनुष्य की उत्पत्ति पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश एवं वायु (पंच तत्व) से हुई है; विष्णु पुराण, वृहत् संहिता, चरक संहिता एवं

सुश्रुत संहिता में पर्यावरण का वर्णन उल्लेखित है। दो महाकाव्यों रामायण तथा महाभारत में कई स्थानों पर पर्यावरणीय चेतना के उदाहरण वर्णित हैं।

पर्यावरण के अंतर्गत (i) जैविक घटक (Biotic component) एवं (ii) अजैविक घटक (Abiotic component) आते हैं। जैविक घटक में प्राणी, पादप, सूक्ष्म जीव एवं मानव सम्मिलित हैं जबकि अजैविक घटक में वायु, जल, मृदा, तापक्रम, आर्द्रता, स्थलाकृति आदि आते हैं। पर्यावरण के ये घटक साथ कार्य करते हैं, आपस में समन्वय रखते हैं एवं एक दूसरे के प्रभाव को रूपान्तरित भी करते हैं। पर्यावरण अध्ययन के अंतर्गत इसके विभिन्न घटकों का अध्ययन और उनका संवर्धन, संरक्षण एवं प्रबन्धन सम्मिलित है।

13.2 पर्यावरण प्रदूषण (Environmental Pollution)

ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोष में प्रदूषण (Pollution) तथा प्रदूषण करने (Pollute) शब्दों के अर्थ निम्नानुसार दिए हैं :

पॉल्यूट (प्रदूषित करना) – शुद्धता अथवा पवित्रता को नष्ट करना (जल आदि को बदबूदार एवं गंदा करना)।

पॉल्यूशन (प्रदूषण) – प्रदूषित करने का कार्य। इससे ज्ञात होता है कि प्रदूषण को स्पष्ट शब्दों में परिभाषित नहीं किया जा सकता। फिर भी इसकी अवधारणा बताने के लिए शब्दों में इसकी व्याख्या की जा सकती है। प्रदूषण वायु, जल, मृदा, जीवजात आदि की भौतिक, रासायनिक और/या जैविक विशेषताओं में अवांछित परिवर्तन है, जो संसाधनों के कच्चे माल का निम्नीकरण करता है। यह पर्यावरण के एक या अधिक घटकों में प्रत्यक्ष या परोक्ष परिवर्तन कर जीवित जीवों विशेषकर मानव जाति पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। कुछ प्रदूषक जैसे गंध तथा शोर मनोवैज्ञानिक अधिप्रभाव उत्पन्न करते हैं। कभी–कभी यह मानव स्वास्थ्य के लिए खतरा बन सकता है।

प्रदूषण को दो श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं– (1) जिससे पर्यावरण के भौतिक और रासायनिक घटकों में मानव के लिए हानिकारक परिवर्तन हो जाते हैं तथा (2) जिसमें आधुनिक औद्योगिक एवं प्रौद्योगिक मानव की गतिविधियों द्वारा पर्यावरण में कुछ नए पदार्थ शामिल हो जाते हैं। प्रथम श्रेणी के प्रदूषकों की तुलना में ये नए पदार्थ लगभग नगण्य होते हैं।

जनसंख्या वृद्धि ने प्राकृतिक संसाधनों पर सीधा आक्रमण किया है। आधुनिक मानव विश्वास करता है कि पृथ्वी मनुष्य के लिए बनी है। वह संसाधनों के दोहन के लिए अधिकृत है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि पृथ्वी में आज भी मानव की आवश्यकताओं के लिए यथेष्ट है, उसकी तृष्णा के लिए नहीं। इस प्रकार प्रकृति के शोषण और प्रदूषण के संकट का मूल कारण मानव की तृष्णा और अज्ञान है।

यदि सविवेक मूल्यांकन किया जाए तो पता लगेगा कि तेजी से बढ़ती जनसंख्या, अनियोजित वन विनाश, शहरीकरण, औद्योगीकरण, विकास की ओर अंधी दौड़, पर्यावरण संकट के वास्तविक कारक हैं।

भारत में वैदिक काल से ही पर्यावरण के प्रति जागरूकता रही है। सम्पूर्ण वैदिक और उत्तर वैदिक काल में पर्यावरण संरक्षण जीवनचर्या का अभिन्न अंग रहा है। उपनिषद् भावी पीढ़ियों के लिए संसाधनों को सुरक्षित रखने की नीति प्रस्तुत करते हैं। सम्राट अशोक के शिलालेख संभवतः वन्य जीवन संरक्षण के प्रथम अभिलेख हैं। इनसे पता चलता है कि अशोक ने वन्य जीवों और पक्षियों के लिए चिकित्सा तथा आरक्षित क्षेत्र बनाए थे। इस देश पर मुगलों के आक्रमण दुर्भाग्यपूर्ण रहे तथा मुगल सल्तनत की स्थापना ने हमारी समाज व्यवस्था का ऐसा रूपान्तरण किया जिससे हमारे पूर्वजों का हजारों वर्षों का ज्ञान काल के गाल में समा गया।

तकनीकी क्रान्ति से सम्बन्धित तथाकथित विकास तथा अधिकाधिक तकनीकी विकास के लिए बेलगाम दौड़ ने पर्यावरण संरक्षण की चिन्ता को ताक पर रख दिया है। मानवता के लिए दीर्घकालीन लाभों की उपेक्षा कर तात्कालिक लाभ प्राप्त करने की चाह ने परिवेश में अवांछित परिवर्तन करने वाली स्थिति निर्मित की है जिससे पादप, जन्तु एवं मानव जीवन पर हानिकारक प्रभाव पड़ रहे हैं।

13.2.1. वायु–प्रदूषण (Air Pollution)

वायुमण्डल को बनाने वाली वायु वास्तव में कई गैसों का मिश्रण है। इसमें जीवधारियों में श्वसन एवं उपापचयी प्रक्रियाओं (Metabolic processes) के लिए आवश्यक जीवनदायी एवं अपरिहार्य, एक गैस ऑक्सीजन भी है।

सारणी 13.1 : आयतन के आधार पर वायु का संघटन

क्र.	घटक	प्रतिशत
1.	नाइट्रोजन	78.09
2.	ऑक्सीजन	20.95
3.	कार्बन डाइऑक्साइड	0.03

शेष घटकों में, ऑर्गन, क्रिप्टॉन, हीलियम, ओजोन, कार्बन मोनोऑक्साड, जलवाष्प, अमोनिया, मीथेन आदि शामिल हैं।

13.2.2 वायु प्रदूषण के कारण (Causes of Air Pollution)

वायु प्रदूषण या तो प्राकृतिक हो सकता है या मानवजनित। वायु प्रदूषण के लिए उत्तरदायी प्राकृतिक कारण निम्नलिखित हैं:

1. ज्वालामुखी विस्फोट– इनसे सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2), हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S), कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) आदि प्रदूषणकारी गैसें निकलती हैं।
2. जंगल की आग।
3. कच्छीय गैसें (जैसे CH_4)।
4. प्राकृतिक, कार्बनिक एवं अकार्बनिक पदार्थों के अपघटन उत्पाद।
5. निलम्बित कणीय पदार्थ
6. बाह्य–स्थलीय पदार्थ।
7. ब्रह्माण्डीय रज।
8. पराग, बीजाणु आदि वाय व एलर्जीकारक।

मानवजनित वायु प्रदूषक निम्नलिखित हैं :

1. औद्योगिक उत्सर्ग।
2. मोटर वाहन उत्सर्ग।
3. घरेलू उत्सर्ग।
4. जीवाश्म ईंधनों के जलने से उत्पन्न पदार्थ।
5. युद्ध में प्रयुक्त विस्फोटक सामग्री एवं अन्य रसायन आदि।
6. कृषि में प्रयुक्त पदार्थ एवं कृषि क्रियाएँ।

13.2.3 वायु प्रदूषण के प्रभाव (Effects of Air Pollution)

ये प्रदूषक मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। इनके कुछ प्रदूषक एवं उनके प्रभाव निम्नलिखित हैं:

1. **सल्फर डाइऑक्साइड–** इससे वक्ष संकुचन, सिरदर्द, उल्टी होती हैं। इससे होने वाले विकार मृत्यु का भी कारण बन सकते हैं।
2. **नाइट्रोजन के ऑक्साइड–** ये पक्ष्मों (Cilia) की क्रिया को रोकते हैं। अतः कालिख तथा धूल कण फेफड़ों की गहराई में पहुँच जाते हैं जिससे श्वसन विकार होते हैं।
3. **हाइड्रोजन सल्फाइड–** यह आँखों और गले में जलन उत्पन्न करती है तथा मितली आती है।
4. **कार्बन मोनोऑक्साइड–** यह रक्त की ऑक्सीजन वहन क्षमता को कम करके थकान लाती है।
5. **हाइड्रोजन साइनायड–** यह तंत्रिका कोशिकाओं को प्रभावित करती है। इससे गले का सूखना, अस्पष्ट दृष्टि तथा सरदर्द आदि प्रभाव होते हैं।
6. **अमोनिया–** यह ऊपरी श्वसन मार्ग में सूजन उत्पन्न करता है।

13.2.4. वायु–प्रदूषण का नियंत्रण (Control of Air Pollution)

संसाधनों के विवेकपूर्ण तथा सीमित उपयोग द्वारा वायु–प्रदूषण का नियंत्रण किया जा सकता है। इसके नियंत्रण की कुछ रणनीतियाँ निम्नलिखित हैं :

1. **अधिशोषण (Adsorption)–** यह कुछ पदार्थों की सतह की विशेषताओं पर आधारित एक भौतिक प्रक्रिया है। इसमें तरल और गैस प्रवाह का सम्बन्ध, एक ठोस से कर देते हैं। सक्रियत चारकोल (Activated charcoal), सिलिका जैल, रेजिन आदि का उपयोग इस उद्देश्य से अधिशोषक के रूप में किया जाता है। इस प्रक्रिया में अधिशोषक का बार–बार उपयोग किया जाता है। अतः यह एक मितव्ययी प्रक्रिया है।
2. **अवशोषण (Absorption) –** यह भी एक भौतिक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में गैस को एक तरल में घुलने दिया जाता है। अवशोषण के लिए जल सर्वाधिक उपयुक्त विलायक या माध्यम है।
3. **संघनन (Condensation)** – गैसीय वाष्पों का नियंत्रण, संघनन प्रक्रिया द्वारा किया जा सकता है। परिवेशी (Ambient) ताप पर बहुत कम वाष्प दाब वाले हाइड्रोकार्बनों तथा अन्य कार्बनिक पदार्थों को हटाने के लिए यह सबसे उपयुक्त प्रक्रिया है। जल या वायु शीतलित संघनित्रों के उपयोग से वायु–प्रदूषण का संतोषजनक नियंत्रण किया जा सकता है।
4. **रासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा (By chemical reactions)** – रासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा भी वायु–प्रदूषण का नियंत्रण किया जा सकता है :

13.2.5 जल–प्रदूषण (Water Pollution)

जल पृथ्वी ग्रह का सबसे बहुमूल्य संसाधन है जिस पर सभी जीवित जीवों का जीवन निर्भर है। सभी जीवधारियों का यह प्रमुख भाग है। कतिपय जीवों में तो यह जीवधारी के भार का 90% तक हो सकता है। मानव इतिहास में झाँकने से पता चलेगा कि विश्व की महान सभ्यताएँ बड़ी नदियों के किनारे ही उत्पन्न व विकसित हुईं है। मानव द्वारा इनके अविवेकपूर्ण उपयेाग एवं दुरूपयोग ने इन सभ्यताओं को कब्रगाहों में बदल दिया है।

जल, भू–दृश्यों को प्राकृतिक सौन्दर्य प्रदान करता है और उनमें सौन्दर्य बोध जगाता है। यह मनोरंजन और जलविहार का आधार है। यह मानव स्वास्थ्य के लिए भी महत्त्वपूर्ण घटक है। इसका संदूषण अनेक महामारियों और जलोढ़ रोगों को

जन्म दे सकता है।

13.2.6 जल–प्रदूषण के कारण (Causes of Water Pollution)

वायु प्रदूषण की ही भांति जल–प्रदूषण के भी दो कारण हैं (1) प्राकृतिक तथा (2) मानवजनित जो मानव गति–विधियों के कारण होता है। जल–प्रदूषण की प्राकृतिक प्रक्रिया में प्राकृतिक पदार्थों जैसे लवण, रसायन, खनिज आदि का विलय तथा पादप एवं जन्तु स्रोतों के विलेय उत्पादों का अपघटन सम्मिलित हैं। ये सभी वर्षा जल द्वारा जल स्रोतों जैसे पोखर, तालाब, झील, नदियों आदि में पहुँचाए जाते हैं जो अन्ततः महासागरों में पहुँच जाते हैं। समुद्रों की खारी प्रकृति, सदियों से नदियों द्वारा बहकर लाए गए लवणों के एकत्रित होने के कारण हैं।

जल–प्रदूषण की वर्तमान समस्या आधुनिक औद्योगिक गतिविधियों की देन है। घरेलू गंदा जल, मलजल/वाहित मल, नगर के अपशिष्ट, औद्योगिक उत्सर्ग, कृषि भूमियों के प्रक्षाल्य, तेल की चिकनाहट, ठोस अपशिष्टों के अपक्षय उत्पाद आदि को प्राकृतिक जल स्रोतों में विसर्जित करने से उनका प्रदूषण होता है। वायु और भूमि से जल विलेय पदार्थ (संदूषक) अन्ततः जल में आकर उसे प्रदूषित करते हैं। विलेय विक्षालित पदार्थ भौमजल संसाधनों तक पहुँच जाते हैं।

जल में घुलकर उसका प्रदूषण करने वाले विभिन्न पदार्थ हैं :

1. अम्ल 2. क्षार 3. कोयला 4. रंजक 5. वसा, साबुन एवं मोम 6. गैसीय प्रदूषक (घुली हुई गैसें) 7. उर्वरक 8. पीड़कनाशी 9. शाकनाशी 10. फार्म उत्सर्ग 11. विषाक्त धातुएँ जैसे पारा एवं उसके यौगिक 12. संश्लेषित अपमार्जक (Detergents) 13. तेल 14. प्रोटीन एवं कार्बोहाइड्रेट 15. घुले हुए ठोस 16. अन्य कार्बनिक प्रदूषक : (अ) पॉलीक्लोरीनेटेड बाइ–फिलाइल्स (PCBs) (ब) फिनॉल एवं फिनॉलिक योगिक (स) पॉलीन्यूक्लियर ऐरोमैटिक हाइड्रोकार्बन (द) एल्डीहाइड्स 17. रेडियोधर्मी पदार्थ 18. गर्म बहिःस्राव द्वारा तापीय प्रदूषक 19. रंग 20. जैविक प्रदूषक–विषाणु, शैवाल, कवक आदि। 21. गंध तथा 22. गंदलापन आदि।

भारत की सभी 14 बड़ी नदियाँ जैसे गंगा, यमुना, गोदावरी, गोमती, कोसी, कावेरी, रावी, सोन, चिनाब, झेलम, नर्मदा, माही, ताप्ती और कृष्णा, तीव्र जल प्रदूषण का शिकार हैं।

13.2.7 जल प्रदूषण के प्रभाव (Effects of Water Pollution)

समुद्र जल में एकत्रित प्रदूषक यदि विषाक्तता की अवसीमा को पार कर जाते हैं तो पृथ्वी पर 60% प्रकाश संश्लेषित ऑक्सीजन को उत्पन्न करने वाले पादप प्लवक अव्यवस्था एवं महाविपदा की स्थिति में पड़ जाएँगे। जब घुली हुई ऑक्सीजन का स्तर जैवरासायनिक माँग से नीचे हो जाएगा तो इससे होने वाली हानि का आकलन करना भी कठिन हो जाएगा।

13.2.8 जल प्रदूषण का नियंत्रण (Control of Water Pollution)

जल प्रदूषण से उत्पन्न खतरों से पार पाने के लिए एकीकृत जल एवं उत्सर्ग प्रबन्ध (Integrated water and waste management) के कार्यक्रमों की आवश्यकता है। इसमें शामिल हैं :

(1) जल उपचार (2) उत्सर्ग जल उपचार (3) उत्सर्ग जल का पुनः चक्रण तथा (4) उत्पाद पुनः प्राप्ति। उत्सर्ग जल के उपचार के लिए निम्नलिखित तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है :

1. ऑक्सीकरण एवं स्थिरकारी पोखर (Oxidation and stabilization ponds) – उत्सर्ग जल को इन पोखरों में स्थिर किया जाता है जो पर्याप्त सूर्य–प्रकाश और गर्म जलवायु में ऑक्सीकृत हो जाता है।

2. सिंचाई के उद्देश्य से वाहित मल बहिःस्रावों का उद्धार कर उपयोग में लाना।

3. प्रदूषकों को हटाना :

(अ) व्युत्क्रम परासरण (Reverse osmosis) द्वारा लवणों को अलग करना।

(ब) वैद्युत अपघटन (Electrolysis), आयन विनिमय रेजिन आदि द्वारा धातुओं को अलग करना।

(स) जलकुम्भी (Water hyacinth) द्वारा।

(द) मूल क्षेत्र (Root zone) उपचार तकनीक।

मानव उपयोग के लिए जल उपलब्ध कराने के उद्देश्य से, स्थानीय, जल प्रबन्धन रणनीति बनाने की भी आवश्यकता है। जल उपलब्धता के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं :

1. नदियों, क्षुद्र सरिताओं, झीलों आदि के प्रदूषण नियंत्रण हेतु उचित कदम उठाए जाएँ।
2. प्राकृतिक वनस्पति का संरक्षण।
3. नदियों, क्षुद्र सरिताओं, झीलों, तालाबों आदि के आवास क्षेत्रों का सुधार।
4. जलाशयों में विसर्जित करने से पूर्व वाहित मल, घरेलू उत्सर्गों तथा औद्योगिक उत्सर्ग का उचित उपचार।
5. संग्रह प्रारक्षणों का निर्माण।
6. अन्तःभौमिक जल भण्डारों का बड़े पैमाने पर विकास।
7. वर्षाजल का संग्रह।

8. भौमजल की कृत्रिम पुनःपूर्ति।

13.2.9 मृदा प्रदूषण (Soil Pollution)

मृदा, स्थलमण्डल (Lithosphere) का वह भाग है जो वायुमण्डल, जलमण्डल तथा जैवमण्डल से अन्योन्य क्रियाएँ करता है। इस प्रकार यह थलीय जीवधारियों की सभी मौलिक आवश्यकताओं को पूरा करता है। मृदा, स्थलीय पौधों को आवश्यक पदार्थ उपलब्ध कराती है जो जैविक पदार्थ उत्पन्न करते हैं, जिससे मनुष्य को रोटी, कपड़ा और मकान के रूप में मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

मृदा में विभिन्न प्रकार के तथा विभिन्न अनुपातों में एक साथ जुड़े हुए कण पाए जाते हैं। इसमें वायु अथवा जल से भरे हुए स्थान या अन्तराल पाए जाते हैं। यदि मृदा सुवातित (अच्छी तरह वायु पूरित) नहीं होती है तो छिद्रावकाश जल से भर जाते हैं तथा मूल (जड़) की वृद्धि को रोकते हैं। जहाँ जलनिकास अपर्याप्त होता है वहाँ ऐसा होता है और मृदा जलाक्रान्त हो जाती है।

13.2.10 मृदा प्रदूषण के कारण (Causes of Soil Pollution)

मृदा प्रदूषण, आधुनिक जीवनशैली, उद्योग तथा कृषि से सम्बन्धित मानव गतिविधियों का परिणाम है। इनमें से मृदा प्रदूषण के कुछ प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं :

1. औद्योगिक उत्सर्ग/अपशिष्ट– उद्योगों के ठोस तथा तरल उत्सर्गों को अन–उपचारित रूप में ही मृदा पर फैला दिया जाता है। दूर–दूर तक फैलने वाली उड़न राख मृदा को क्षति पहुँचाती है। उत्सर्ग के खनिज, रसायन, विष आदि मृदा को संदूषित करते हैं तथा उसकी उर्वरता को समाप्त कर देते हैं।

2. नगरीय उत्सर्ग– कागज, काँच, धात्विक पात्र (डिब्बे), प्लास्टिक, रेशे, खाद्य अपशिष्ट, रबर, रंजक, पेण्ट आदि ठोस नगरीय उत्सर्ग हैं जो मृदा को अनेक प्रकार से संदूषित कर उसको बड़े पैमाने पर प्रदूषण करते हैं। तरल नगरीय उत्सर्गों में घुले हुए कार्बनिक एवं अकार्बनिक रसायन, तेल, ग्रीस, विषैले पदार्थ आदि होते हैं जो मृदा में फैलकर उसे संदूषित करते हैं। इन उत्सर्गों में रोगकारी जीव भी होते हैं जो रोग फैलाते हैं।

3. कृषि गतिविधयाँ – रासायनिक उर्वरकों का अविवेक पूर्ण अंधाधुंध उपयोग तथा अतिशय सिंचाई से मृदा जलाक्रान्त होती है और उसके पोषकों का अपक्षालन होता है। इससे मृदा की उर्वरता नष्ट होती है।

प्रतिवर्ष रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से मृदा में विलेय लवणों की सान्द्रता क्रमिक रूप में बढ़ती जाती है। ऐसी मृदाए लवणीय मृदा (Saline soil) कहलाती हैं। यदि इन मृदाओं में सोडियम की अधिकता हो तो वे क्षारीय (Alkaline) हो जाती हैं। इन्हें क्षारीय या सोडिक मृदा (Alkaline or Sodic soil) कहते हैं। दोनों ही प्रकार की लवणीय एवं क्षारीय मृदाओं को भारत में "ऊसर" कहा जाता है। ये मृदाएँ खेती के लिए सर्वथा अनुपयुक्त होती है।

आधुनिक कृषि में फसलों को पीड़कों, रोगों तथा खरपतवारों से बचाने के लिए विभिन्न प्रकार के रसायनों–पीड़कनाशी (जैसे DDT) कवकनाशी, जीवाणुनाशी तथा शाकनाशी का वृहद् स्तर पर उपयोग किया जाता है। ये रसायन सामान्यतः अपघटित नहीं होते हैं और मृदा में बने रहते हैं। पौधे इन्हें अवशोषित कर लेते हैं और इनसे ये उच्चतर पोषण स्तरों में खाद्य शृंखला के माध्यम से पहुँच जाते हैं। इस प्रक्रिया में इन रसायनों का जैव आवर्धन (जैव सान्द्रण) होता है और ये मानव के लिए विषाक्त हो जाते हैं।

13.2.11 ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)

ध्वनि ऊर्जा जो इकाई समय में माध्यम के इकाई क्षेत्र में प्रवाहित हो रही हो उसे वाट/वर्ग मीटर में मापा जाता है। ध्वनि दाब को न्यूटन/वर्ग मी. (N/m^2) के रूप में भी मापा जा सकता है। ध्वनि की प्रबलता (Loudness) को एक सापेक्षिक इकाई सोन (Sone) के रूप में व्यक्त किया जाता है। एक सोन 40 dB ध्वनि प्रबलता के बराबर होती है। एक dB (डेसीबल) 0.002 माइक्रोबार ध्वनि दाब ($dynes/cm^2$) = लगभग 10^{-16} वाट ऊर्जा के समकक्ष होती है। मानव श्रवण (Hearing) परास 0 से लेकर 120 से अधिक होती है। सामान्यतः 80 dB को कान की क्षति (Damage) के लिए क्रांतिक (Critical) स्तर माना जा सकता है। अतः इस तथा इससे उच्च ध्वनि प्रबलता को प्रदूषण माना जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने किसी भी शहर के लिए 45 dB को सुरक्षित शोर स्तर तय किया है। 10 मिली सेकण्ड से अधिक समय के लिए 90 dB से अधिक ध्वनि स्तर, श्रवणिक प्रतिवर्ती क्रिया (Aural reflex action) टिम्पैनिंक झिल्ली का संकुचन करता है। 140 dB से अधिक ध्वनि स्तर कर्ण अस्थिका (Ear oscicles) की गति की दिशा को बदल देता है, जिससे आन्तरिक कर्ण द्वारा प्राप्त ध्वनि की तीव्रता कम हो जाती है। यह सुरक्षात्मक, प्रतिवर्ती क्रिया प्रबल शोर के बुरे प्रभाव का सामना थोड़े समय के लिए ही कर पाती है। इन तथ्यों के आधार पर अस्पताल क्षेत्रों में 65 dB को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहनशीलता की सीमा माना गया है।

ध्वनि प्रदूषण मानव स्वास्थ्य, आराम और दक्षता को

प्रभावित करता है। यह रक्त वाहिनियों का संकुचन कर सकता है और "ऐड्रीनेलिन" नामक हार्मोन का अतिस्राव कर सकता है, जो उच्च रक्त चाप उत्पन्न करता है। इससे पेशियों का खिंचाव होता है, जिससे मानसिक तनाव, तंत्रिका भंग तथा पागलपन आदि हो सकते हैं। उच्च ध्वनि स्तर, मानसिक व्यथा, उच्च कोलेस्टीरॉल स्तर, हृदयाघात तथा मस्तिष्क, वृक्क, यकृत की क्षति और भीतरी पर्त की रोम कोशिकाओं को चिरकालिक क्षति पहुँचा सकता है जिससे बहरापन आता है।

तापीय–प्रदूषण (Thermal Pollution)

किसी प्राकृतिक जलराशि में गर्म बहिःस्राव मिलाने पर उस जलराशि का ताप बढ़ने से तापीय प्रदूषण होता है। इससे जल की गुणवत्ता में गिरावट आती है और जलीय तथा थलीय जीवजात की हानि होती है। तापीय प्रदूषण के स्रोत निम्नलिखित हैं :

1. नाभिकीय विद्युत संयंत्र के बहिःस्राव– इन विद्युत संयंत्रों के बहिःस्रावों का ताप प्रायः प्रशीतक में आने वाले जल से 10^0 से. अधिक होता है। इससे जलीय जीवन बुरी तरह से प्रभावित होता है।

2. तापीय विद्युत संयंत्र बहिःस्राव– इन संयंत्रों में विद्युत उत्पादन के लिए कोयले का उपयोग होता है। इसके लिए समीपस्थ जलराशि से जल लिया जाता है और लगभग 15^0 से. अधिक ताप पर उसी में वापस छोड़ दिया जाता है। गर्म बहिःस्राव, जल में "घुली हुई ऑक्सीजन" को कम कर देते हैं जिससे मछलियाँ तथा अन्य जीवधारियों की मृत्यु हो जाती है।

3. जल विद्युत शक्ति बहिःस्राव– विद्युत उत्पादन की यह एक मात्र प्रक्रिया है। जिससे जल तंत्र का ऋणात्मक तापीय उद्भारण (Negative thermal loading) होता है।

4. औद्योगिक बहिःस्राव– वस्त्र, कागज, शर्करा आदि के उद्योग गर्म बहिःस्राव उत्पन्न करते हैं। ये 8^0 से 10^0 अधिक तापक्रम वाले होते हैं। इस बहिःस्राव का क्या प्रभाव होगा, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि जलाशय के मूल ताप से यह ताप कितना अधिक है।

5. घरेलू वाहित मल– इन्हें उपचारित करके या बिना उपचार के ही नदियों, नहरों या झीलों में विसर्जित कर दिया जाता है। नगरीय वाहित मल का ताप सामान्यतः उच्च रहता है। यह जलाशय में उच्च स्तर तक ताप वृद्धि कर सकता है जिससे जलाशय का जलीय जीवजात कम हो जाता है, इससे अवायव दशाएँ उत्पन्न हो जाती हैं जो मछलियों की मृत्यु का कारण बनती हैं।

जीवधारियों तथा जीवसमुदायों की जैविकी में तापीय प्रदूषण से होने वाले प्रतिकूल और भौतिक तथा रासायनिक परिवर्तनों में से कुछ निम्नलिखित हैः

(अ) भौतिक दशाएँ

1. तापमान में वृद्धि।
2. वाष्प दाब में वृद्धि।
3. निलम्बित कणों (Suspended particles) की सिलटिंग दर में वृद्धि आदि।
4. घनत्व में कमी।
5. श्यानता (Viscocity) में कमी।

(ब) रासायनिक दशाऐं

7. रासायनिक ऑक्सीजन माँग (C.O.D.) में वृद्धि।
8. जैविक ऑक्सीजन माँग (BOD) में वृद्धि।
9. विषाक्तता (Toxicity) में वृद्धि।

(स) जैविक प्रभाव

10. कार्यिकीय (Physiological) गतिविधियों में परिवर्तन।
11. उपापचयी (Metabolic) दरों में परिवर्तन।
12. जैव–रासायनिक (Biochemical) प्रतिमानों में परिवर्तन।
13. प्रजनन में व्यवधान (Interference) ।
14. प्रजनन दर में विभिन्नता (Variation) ।
15. प्रत्यक्ष मृत्यु संख्या की कारणभूत संवेदनशीलता में वृद्धि।

(द) जैव समुदायों पर प्रभाव

16. जीवधारियों के वितरण प्रारूप परिवर्तित होते हैं।
17. शैवाल समष्टि में अवांछित परिवर्तन।
18. सायनोबैक्टीरिया (नील हरित जीवाणु) द्वारा "वाटर ब्लूम्स" (जल प्रस्फुटन) बनाना।
19. विनाशकारी जीवों का आक्रमण।

तापीय प्रदूषण निवारण के लिए ऐसे संयंत्र बनाए जाएँ जिनमें प्रयुक्त जल कम गर्म हो और बहिःस्रावों को विसर्जित करने से पूर्व टैंकों और/या टॉवरों में ठण्डा करने के उद्देश्य से रोका जाय।

13.3 पारिस्थितिकी (Ecology)

पर्यावरण अध्ययन, पारिस्थितिकी (Ecology) के अन्तर्गत आता है। इस शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के ओइकोस (Oikos) शब्द से हुई है जिसका अर्थ है रहने का स्थान (Place to live) एवं लोगोस (Logos) शब्द का अर्थ है–अध्ययन करना (to study) अर्थात् सजीवों के रहने के स्थान (आवास = habitat) का अध्ययन करना। **अर्नेस्ट हेकल** (Ernst Haeckel,

1868) के अनुसार पारिस्थितिकी **"सजीवों का इसके जैविक एवं अजैविक पर्यावरण (Biotic and abiotic environment) के साथ होने वाला पारस्परिक सम्बन्ध है।"**

प्रत्येक सजीव, जीवित रहने के लिए पर्यावरण से विभिन्न पदार्थ प्राप्त करता है। जैसे–श्वसन के लिए ऑक्सीजन आवश्यक है उसी प्रकार पौधों में प्रकाश संश्लेषण के लिए कार्बन डाई–ऑक्साइड, पानी एवं सूर्य का प्रकाश जरूरी है। पादपों की वृद्धि के लिए खनिज, मृदा से प्राप्त होते हैं। प्राणी अपना भोजन पौधों एवं सूक्ष्म प्राणियों से प्राप्त करते हैं मानव अपना भोजन पौधों एवं प्राणियों से प्राप्त करता है।

धातुएं जैसे कॉपर, एल्यूमिनियम, लोहा आदि मशीनें, बर्तन, जहाज एवं वायुयान बनाने के काम में आते हैं। ये धातुएं खनिजों से प्राप्त होती हैं। कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस का उपयोग, घरेलू एवं औद्योगिक ईंधन के रूप में होता है। इस प्रकार सभी सजीव पृथ्वी पर पाये जाने वाले पदार्थों का उपयोग करते हैं।

सजीवों को जीवित रहने के लिए जिन पदार्थों की आवश्यकता होती हैं उन्हें संसाधन (Resource) कहते हैं। वे सभी पदार्थ जो पर्यावरण में उपस्थित है एवं सजीवों के जीवन प्रवाह के लिए आवश्यक है उन्हें **प्राकृतिक संसाधन (Natural resource)** कहते हैं। वायु, हवा, मृदा, वनस्पति, प्राणी, खनिज, सूर्य का प्रकाश एवं जीवाश्म ईंधन प्राकृतिक संसाधन हैं।

13.4 पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem)

यह जीव मण्डल की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई हैं एवं इसमें स्वतः जीवित रहने का गुण है। यह एक खुला तंत्र है एवं सूर्य की ऊर्जा पर निर्भर रहता है। पारिस्थितिकी तंत्र छोटे एवं बड़े भी होते हैं। आस पास के तंत्रों में खनिज पदार्थों एवं ऊर्जा का लगातार आदान–प्रदान होता रहता है। अतः ये सभी तंत्र एक दूसरे से संबंधित है एवं आपस में जुड़े रहते हैं। आपस में जुड़े सभी पारिस्थितिक तंत्रों के जाल को **जीव मण्डल** कहते हैं। सर्वप्रथम ब्रिटिश पारिस्थितिक विज्ञ **आर्थर टेन्सले** (Arthur Tansley, 1935) ने पारिस्थितिक तंत्र शब्द का उपयोग किया। यह जैविक एवं अजैविक घटकों का बना होता है। **यूजिन पी. ओडम** (Eugene P.Odum 1963, 1969) के अनुसार पारिस्थितिकी तंत्र, पारिस्थितिकी की मूलभूत इकाई हैं जिसमें उपस्थित जैविक एवं अजैविक घटक एक दूसरे से अंतःक्रिया करते हैं एवं दोनों घटक जीवन के सातत्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। प्राणि समभोजी (Holozoic) जन्तु अपना भोजन स्वयं नहीं बनाते हैं एवं स्वयं की भोजन पूर्ति हेतु ये पादपों पर प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से निर्भर रहते हैं। यद्यपि पादप अपना भोजन संश्लेषित करते हैं परन्तु फिर भी ये विभिन्न अजैविक कारकों पर निर्भर रहते हैं। यदि व्यापक रूप से देखें तो धरा जिस पर हम रहते हैं, स्वयं एक वृहद पारिस्थितिक तंत्र (Giant ecosystem) हैं जिसके विभिन्न (जैविक एवं अजैविक) घटक पारस्परिक क्रिया करते रहते हैं। इसी कारण पारिस्थितिक तंत्र में संरचनात्मक एवं क्रियात्मक परिवर्तन होते रहते हैं। यद्यपि सम्पूर्ण जीव मण्डल को नियंत्रित करना असम्भव प्रतीत होता है, लेकिन अध्ययन की दृष्टि से इसे विभिन्न पारिस्थितिक तंत्रों में बांटा गया है।

13.5 पारिस्थितिक तंत्र की रचना (Structure of ecosystem)

पारिस्थितिक तंत्र दो प्रमुख घटकों (अजैविक तथा जैविक) का बना होता है–

(1) **अजैविक घटक (Abiotic components) –** इनमें अकार्बनिक, कार्बनिक एवं जलवायवी (Climatic) कारक, जैसे–वायु, पानी, मृदा एवं सूर्य का प्रकाश आदि आते हैं–

(i) **अकार्बनिक पदार्थ** – इनमें पोषक तत्व एवं यौगिक आते हैं जैसे–कार्बन, नाइट्रोजन, सल्फर, फास्फोरस, कार्बन डाइ–ऑक्साइड एवं पानी आदि। इनका पारिस्थितिक तंत्र में चक्रण (Cycling) होता है।

(ii) **कार्बनिक यौगिक –** इनमें प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट एवं ह्यूमसी पदार्थ (Humic substances) सम्मिलित हैं। ये मुख्य रूप से जीवित काय (Living body) से संबंधित होते हैं और अजैविक एवं जैविक यौगिकों को जोड़ते हैं।

(iii) **जलवायवी कारक** – ये दो प्रकार के हैं– (क) वायुमण्डलीय कारक जैसे सूर्य का प्रकाश, ताप, आर्द्रता (Humidity), वर्षण (Precipitation) आदि (ख) मृदीय कारक (Edaphic factor) जैसे स्थलाकृति (Topography), मृदा गठन (Soil texture) आदि। ये कारक सजीवों के वितरण, संख्या उपापचय एवं व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

(2) **जैविक घटक** (Biotic components)– पर्यावरण के वे घटक जो सजीव होते हैं जैविक घटक कहलाते हैं– इनको पुनः उत्पादक, उपभोक्ता तथा अपघटकों में विभक्त किया जा सकता है।

(i) **उत्पादक (Producer) –** ये क्लोरोफिल युक्त पादप हैं जिनमें शैवाल, घास एवं पेड़ आते है। ये प्रकाश संश्लेषण द्वारा सूर्य ऊर्जा (Solar energy) को रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। ये अधिकतर प्राणियों के लिए भोजन का स्रोत हैं। हरे पादपों को स्वपोषी (Autotrophs) भी कहते हैं क्योंकि ये अपना भोजन स्वयं बनाते हैं।

(ii) उपभोक्ता (Consumer) – वे प्राणी जो स्वयं का भोजन नहीं बना सकते हैं एवं किसी अन्य पर जीवित रहते हैं उन्हें **उपभोक्ता** कहते हैं। ये विषमपोषी (Heterotrophs) होते हैं। ये ज्यादातर जन्तु होते हैं। वे जन्तु जो भोजन हेतु सीधे पादपों पर निर्भर रहते हैं उन्हें शाकाहारी (Herbivorous) कहते हैं जैसे–टिड्डा, बकरी, भेड़ एवं खरगोश। वे जन्तु जो शाकाहारी जीवों पर भोजन के लिए निर्भर रहते हैं उन्हें मांसाहारी (Carnivorous) कहते हैं, जैसे–शेर, बिल्ली। ये परभक्षी (Predator) या परजीवी (Parasite) भी हो सकते हैं। वे प्राणी जो पादप एवं जन्तुओं पर भोजन के लिए निर्भर रहते हैं उन्हें सर्वाहारी (Omnivorous) कहते हैं जैसे–तिलचट्टा, मनुष्य।

(iii) अपघटक (Decomposer) – इसमें मुख्य रूप से जीवाणु (Bacteria) एवं कवक (Fungi) आते हैं। पारिस्थितिक तंत्र में सामान्यतया बैक्टीरिया जन्तु ऊतकों पर क्रिया करते हैं जबकि कवक, पादप ऊतकों पर। ये मृत ऊतकों का पाचन, एन्जाइम स्रावण के द्वारा करते हैं, इस प्रकार प्रोटोप्लाज्म के आधारभूत तत्वों को पर्यावरण में छोड़ देते हैं, इन तत्वों का उपयोग उत्पादक कर लेते हैं।

13.5.1 पारिस्थितिक तंत्र के प्रकार (Types of ecosystems)

इसके दो प्रमुख प्रकार है–

(1) प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र (Natural ecosystem) – ये प्राकृतिक अवस्था में स्वतः ही नियंत्रित रहते हैं इनमें मनुष्य का दखल कम होता है। ये विशेष प्रकार के आवास के आधार पर निम्न प्रकार के होते हैं–

(क) **स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र** (Terrestrial ecosystem) उदाहरण–वन, घास के मैदान, रेगिस्तान आदि।

(ख) **जलीय पारिस्थितिक तंत्र** (Aquatic ecosystem) – यह दो प्रकार का है– शुद्ध जलीय (Fresh water) एवं समुद्री जलीय (Marine water)। शुद्ध जलीय तंत्र भी दो प्रकार का होता है–सरित (Lotic) उदाहरण–नदी, झरना आदि। स्थिर जलीय (Lentic) उदाहरण–तालाब (Pond), सरोवर (Lake)।

(2) कृत्रिम पारिस्थितिक तंत्र (Artificial ecosystem) – ये तंत्र पूर्ण रूप से मनुष्य द्वारा निर्मित एवं नियंत्रित होते हैं। जैसे–शस्यभूमि (Crop land) जिसमें गेहूँ, बाजरा एवं चावल इत्यादि के क्षेत्र आते है। यहाँ मनुष्य जैव समुदाय (Biotic community) एवं भौतिक रासायनिक (Physico chemical) कारकों को नियंत्रित करने का प्रयास करता है। उपरोक्त तंत्रों के अतिरिक्त, अंतरिक्ष पारिस्थितिक तंत्र (Space ecosystem) को भी पहचाना गया है।

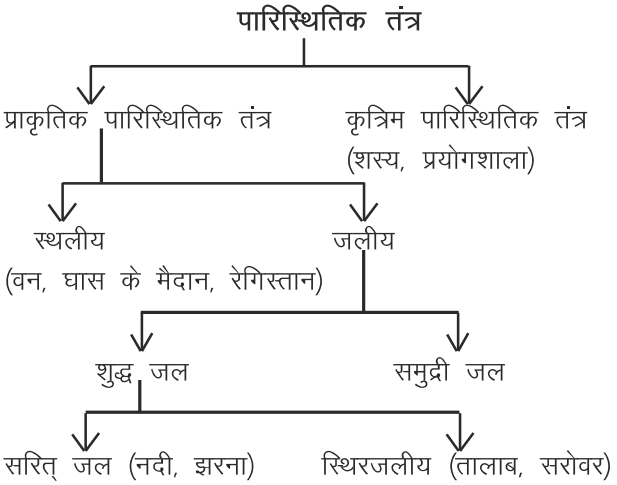

13.6 भू–जैव रासानिक चक्रण (Geobiochemical Cycle)

जीवमंडल के जैविक और अजैविक घटकों के बीच का सामंजस्य जीवमंडल को गतिशील और स्थिर बनाता है। इस सामंजस्य के द्वारा जीवमंडल के विभिन्न घटकों के बीच पदार्थ और ऊर्जा का स्थानांतरण होता है। आइए देखते हैं कि वे कौन–कौन सी क्रियाएँ हैं जो संतुलन को बनाए रखती हैं।

13.6.1. जलीय–चक्र

आपने देखा है कि जलाशयों से जल के वाष्पीकरण और फिर संघनन के बाद वर्षा कैसे होती है। लेकिन हमने समुद्रों और महासागरों को सूखते हुए नहीं देखा है, तो किस प्रकार जल इन जलाशयों में वापस आता है? पूरी

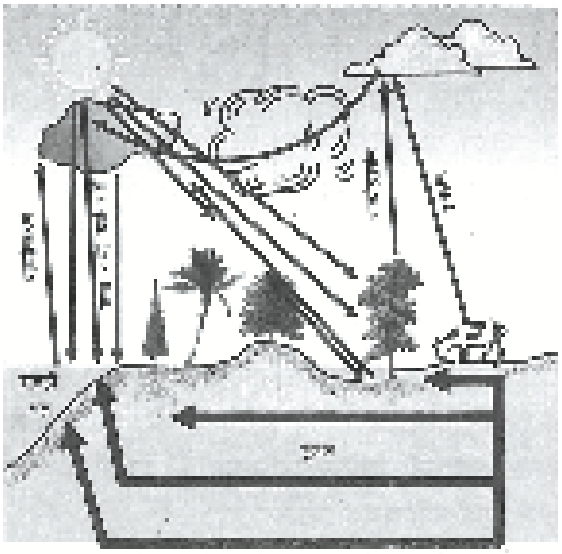

चित्र 13.1. प्रकृति में जलीय–चक्र

प्रक्रिया को, जिसके द्वारा जल, जलवाष्प बनता है और वर्षा के रूप में सतह पर गिरता है और फिर नदियों के द्वारा समुद्र में पहुँच जाता है, **जलीय चक्र** कहते हैं। यह चक्र उतना

आसान और सरल नहीं है जैसा कि वक्तव्य से प्रतीत होता है। वह सारा जल जो पृथ्वी पर गिरता है तुरंत समुद्र में नहीं चला जाता है। इसमें से कुछ मृदा के अंदर चला जाता है और भूजल का हिस्सा बन जाता है। कुछ भूजल झरनों के द्वारा सतह पर आ जाता है या हम इसे अपने व्यवहार के लिए कूपों और नलकूपों की मदद से सतह पर लाते हैं। जीवन की विभिन्न प्रक्रियाओं में स्थलीय जीव–जंतु और पौधे इस जल का उपयोग करते हैं (चित्र 13.5.1)

जैसा कि आप जानते हैं जल बहुत से पदार्थों को घुलाने में सक्षम है। घुलने वाले खनिजों से होकर जब जल गुजरता है तब इनमें से कुछ खनिज जल में घुल जाते हैं। इस प्रकार नदी बहुत से पोषक तत्वों को सतह से समुद्र में ले जाती है और इनका उपयोग समुद्री जीव–जंतुओं द्वारा किया जाता है।

13.6.2 ऑक्सीजन–चक्र

ऑक्सीजन पृथ्वी पर बहुत अधिक मात्रा में पाया जाने वाला तत्व है। इसकी मात्रा मूल रूप में वायुमंडल में लगभग 21 प्रतिशत है। यह बड़े पैमाने पर पृथ्वी के पटल के जल व अन्य यौगिकों के रूप में तथा वायु में कार्बन डाइऑक्साइड के रूप में भी पाई जाती है। पृथ्वी के पटल में यह धातुओं तथा सिलिकन के ऑक्साइडों के रूप में पाई जाती है। यह कार्बोनेट, सल्फेट, नाइट्रेट तथा खनिजों के रूप में भी पाई जाती है। यह जैविक अणुओं; जैसे–कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्ल और वसा (अथवा लिपिड) का भी एक आवश्यक घटक है।

लेकिन जब हम ऑक्सीजन–चक्र के बारे में बात करते हैं तब हम मुख्यतः उस चक्र को निर्देशित करते हैं जो ऑक्सीजन की मात्रा को वायुमंडल में संतुलित बनाए रखता है। वायुमंडल से ऑक्सीजन का उपयोग तीन प्रक्रियाओं में होता है, जिनके नाम हैं: श्वसन, दहन तथा नाइट्रोजन के ऑक्साइड के निर्माण में। वायुमंडल में ऑक्सीजन केवल एक ही मुख्य प्रक्रिया, जिसे प्रकाशसंश्लेषण कहते हैं, के द्वारा लौटती है। इस प्रकार से प्रकृति में ऑक्सीजन–चक्र की रूपरेखा बनती है।

यद्यपि हम जीवन में श्वसन की क्रिया में ऑक्सीजन को महत्वपूर्ण मानते हैं, परन्तु कुछ जीव मुख्यतः बैक्टीरिया, तत्वीय ऑक्सीजन द्वारा ज़हरीले हो जाते हैं। वास्तव में, बैक्टीरिया के द्वारा नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया ऑक्सीजन की उपस्थिति में नहीं होती।

13.6.3 कार्बन–चक्र

कार्बन पृथ्वी पर बहुत सारी अवस्थाओं में पाया है। यह अपने मूल रूप में हीरा और ग्रेफ़ाइट में पाया जाता है। यौगिक के रूप में वह वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड के रूप में, विभिन्न प्रकार के खनिजों में कार्बोनेट और हाइड्रोजन कार्बोनेट के रूप में पाया जाता है। जबकि सभी जीवरूप कार्बन आधारित अणुओं; जैसे–प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स वसा, न्यूक्लिक अम्ल और विटामिन पर आधारित होते हैं। बहुत सारे जंतुओं के बाहरी और भीतरी कंकाल भी कार्बोनेट लवणों से बने होते हैं। प्रकाशसंश्लेषण की क्रिया, जो सूर्य की उपस्थिति में उन सभी पौधों में होती है जिनमें कि क्लोरोफ़िल होता है, द्वारा कार्बन जीवन के विभिन्न प्रकारों में समाविष्ट होता है। यह प्रक्रिया वायुमंडल में या जल में घुले कार्बन डाइऑक्साइड को ग्लूकोस अणुओं में बदल देती है। ये ग्लूकोस अणु या तो दूसरे पदार्थों में बदल दिए जाते हैं या ये दूसरे जैविक रूप से महत्वपूर्ण अणुओं के संश्लेषण के लिए ऊर्जा प्रदान करते हैं।

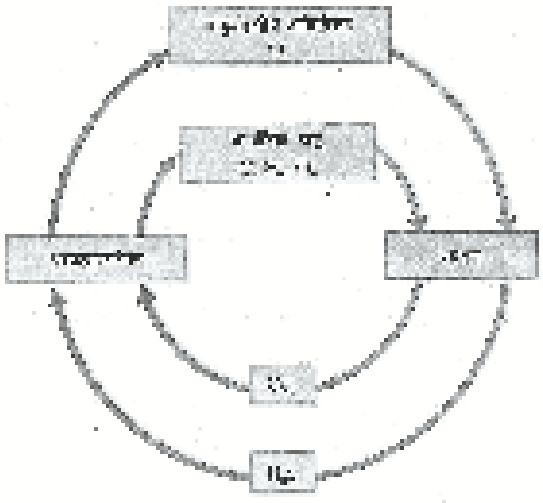

चित्र 13.2 प्रकृति में ऑक्सीजन चक्र

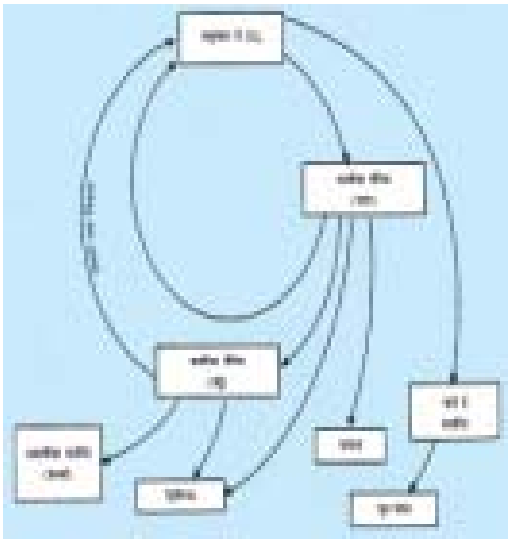

चित्र 13.3 कार्बन चक्र

जीवित प्राणियों को ऊर्जा प्रदान करने की प्रक्रिया में ग्लूकोस का उपयोग होता है। श्वसन की क्रिया द्वारा ग्लूकोस को कार्बन डाइऑक्साइड में बदलने के लिए ऑक्सीजन का प्रयोग हो भी सकता है और नहीं भी। यह कार्बन डाइऑक्साइड पुनः वायुमंडल में चली जाती है। दहन की क्रिया जहाँ ईंधन का उपयोग खाना पकाने, गर्म करने, यातायात और उद्योगों में होता है, के द्वारा वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड का प्रवेश होता है। वास्तव में, जब से औद्योगिक क्रांति हुई है और मानव ने बहुत बड़े पैमाने पर जीवाश्म ईंधन को जलाना शुरू किया है तब से वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा दोगुनी हो गई है। जल की तरह कार्बन का भी विभिन्न भौतिक एवं जैविक क्रियाओं के द्वारा पुनर्चक्रण होता है।

13.6.4 नाइट्रोजन–चक्र

हमारे वायुमंडल का लगभग 78 प्रतिशत भाग नाइट्रोजन गैस है। यह गैस जो जीवन के लिए आवश्यक बहुत सारे अणुओं का भाग है; जैसे–प्रोटीन, न्यूक्लीक अम्ल, डी.एन.ए. और आर.एन.ए. तथा कुछ विटामिन। नाइट्रोजन दूसरे जैविक यौगिकों में भी पाया जाता है; जैसे–ऐल्केलॉइड् तथा यूरिया। इसलिए नाइट्रोजन सभी प्रकार के जीवों के लिए एक आवश्यक पोषक है। सभी जीवरूपों द्वारा वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन गैस के प्रत्यक्ष उपयोग से जीवन सरल हो जाएगा। लेकिन प्रकृति में ऐसा नहीं होता है। यद्यपि कुछ प्रकार के बैक्टीरिया को छोड़कर दूसरे जीवरूप निष्क्रिय नाइट्रोजन परमाणुओं को नाइट्रेट्स तथा नाइट्राइट्स जैसे दूसरे आवश्यक अणुओं में बदलने में सक्षम नहीं हैं। 'नाइट्रोजन स्थिरीकरण' करने वाले

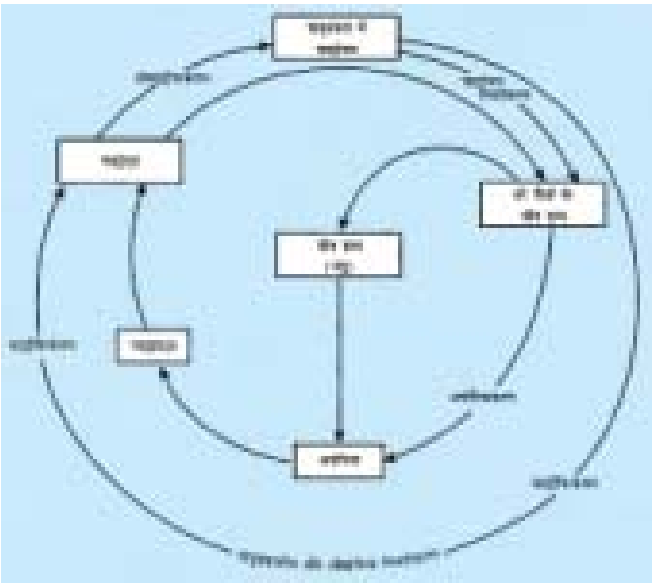

चित्र 13.4 प्रकृति में नाइट्रोजन–चक्र

ये बैक्टीरिया या तो स्वतंत्र रूप से रहते हैं या द्विबीजपत्री पौधों की कुछ जातियों के साथ पाए जाते हैं। साधारणतः ये नाइट्रोजन को स्थिर करने वाले बैक्टीरिया फलीदार पौधों की जड़ों में एक विशेष प्रकार की संरचना (मूल ग्रंथिका) में पाए जाते हैं। इन बैक्टीरिया के अलावा नाइट्रोजन परमाणु नाइट्रेट्स और नाइट्राइट्स में भौतिक क्रियाओं के द्वारा बदलते हैं। बिजली चमकने के समय वायुमण्डल में पैदा हुआ उच्च ताप तथा दाब नाइट्रोजन को नाइट्रोजन के ऑक्साइड में बदल देता है। ये ऑक्साइड जल में घुलकर नाइट्रिक तथा नाइट्रस अम्ल बनाते हैं और वर्षा के साथ भूमि की सतह पर गिरते हैं। तब इसका उपयोग विभिन्न जीवरूपों द्वारा किया जाता है।

नाइट्रोजन–संयोजी अणु बनाने में प्रयुक्त होने वाले रूपों के निर्माण के पश्चात् नाइट्रोजन का क्या होता है? सामान्यतः पौधे नाइट्रेट्स और नाइट्राइट्स को ग्रहण करते हैं तथा उन्हें अमीनो अम्लों में बदल देते हैं जिनका उपयोग प्रोटीन बनाने में होता है। कुछ दूसरे जैव–रासायनिक विकल्प हैं इनका प्रयोग नाइट्रोजन वाले दूसरे जटिल यौगिकों को बनाने में होता है। इन प्रोटीनों और दूसरे जटिल यौगिकों का प्रयोग जंतुओं द्वारा किया जाता है। जब जंतु या पौधे की मृत्यु हो जाती है तो मिट्टी में मौजूद अन्य बैक्टीरिया विभिन्न यौगिकों में स्थित नाइट्रोजन को नाइट्रेट्स और नाइट्राइट्स में बदल देते हैं तथा अन्य तरह के बैक्टीरिया इन नाइट्रेट्स एवं नाइट्राइट्स को नाइट्रोजन तत्व में बदल देते हैं। इसी प्रकार, प्रकृति में एक नाइट्रोजन–चक्र होता है जिसमें नाइट्रोजन वायुमंडल में अपने मूल रूप से गुजरता हुआ मृदा और जल में साधारण परमाणु के रूप में बदलता है तथा जीवित प्राणियों में और अधिक जटिल यौगिक के रूप में बदल जाता है। फिर ये साधारण परमाणु के रूप में वायुमंडल में वापस आ जाता है (चित्र 13.4)।

13.7. ग्रीन हाउस प्रभाव (हरित गृह प्रभाव)

शीशे (Glass) द्वारा ऊष्मा को रोक लेने के कारण शीशे के अंदर का तापमान बाहर के तापमान से काफी अधिक हो जाता है। ठंडे मौसमों में ऊष्ण कटिबंधीय पौधों को गर्म रखने के लिए आवरण बनाने की प्रक्रिया में इस अवधारणा का उपयोग किया गया है। इस प्रकार के आवरण को **ग्रीन हाउस** कहते हैं। वायुमंडलीय प्रक्रियाओं में भी ग्रीन हाउस होता है। कुछ गैसें पृथ्वी से ऊष्मा को पृथ्वी के वायुमंडल के बाहर जाने से रोकती हैं। वायुमंडल में विद्यमान इस प्रकार की गैसों की वृद्धि संसार के औसत तापमान को बढ़ा सकती है। इस प्रकार के प्रभाव को **ग्रीन हाउस प्रभाव** कहते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड भी इसी प्रकार की एक ग्रीन हाउस गैस है। वायुमंडल में विद्यमान कार्बन डाइऑक्साइड में वृद्धि से वायुमंडल में ऊष्मा

की वृद्धि होगी। इस प्रकार के कारणों द्वारा वैश्विक ऊष्मीकरण (Global warming) की स्थिति उत्पन्न हो रही है।

13.8 ओज़ोन परत

तत्वीय ऑक्सीजन मूल रूप में सामान्यतः द्विपरमाण्विक अणु के रूप में पाई जाती है। यद्यपि, वायुमंडल के ऊपरी भाग में ऑक्सीजन के तीन परमाणु वाले अणु भी पाए जाते हैं। इसका सूत्र O_3 होता है तथा इसे ओज़ोन कहते हैं। ऑक्सीजन के सामान्य द्विपरमाण्विक अणु के विपरीत ओज़ोन विषैला होता है। हम भाग्यशाली हैं कि ओज़ोन पृथ्वी की सतह के नजदीक स्थिर नहीं रह पाता है। यह सूर्य से आने वाले हानिकारक विकिरणों को अवशोषित करती है। इस प्रकार यह उन हानिकारक विकिरणों को पृथ्वी की सतह पर पहुँचने से रोकती है जो कि कई जीवरूपों को हानि पहुँचा सकते हैं।

हाल ही में यह पता चला कि ओज़ोन परत का ह्रास (अवक्षय) होता जा रहा है। मनुष्य के द्वारा बनाए गए विभिन्न प्रकार के यौगिक जैसे क्लोरो–फ्लोरो कार्बन CFC वायुमंडल में स्थिर अवस्था में उपस्थित हो जाते हैं। CFC क्लोरीन तथा फ्लोरीन युक्त कार्बन यौगिक हैं। ये बहुत स्थायी होते हैं तथा किसी जैव–प्रक्रिया द्वारा भी विघटित नहीं होते हैं। एक बार जब वे ओज़ोन परत के समीप पहुँचते हैं, तो ओज़ोन अणुओं के साथ प्रतिक्रिया करते हैं। इसके परिणामस्वरूप ओज़ोन की परत में कमी आई और हाल ही में अंटार्कटिका के ऊपर ओज़ोन परत में छिद्र पाया गया। ओज़ोन परत के और भी अधिक क्षीण होने के कारण पृथ्वी पर जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों के विषय में कल्पना करना भी कठिन है। अतः बहुत लोगों के विचार में ओज़ोन की परत के क्षीण होने की प्रक्रिया को रोकने के प्रयास आवश्यक हैं।

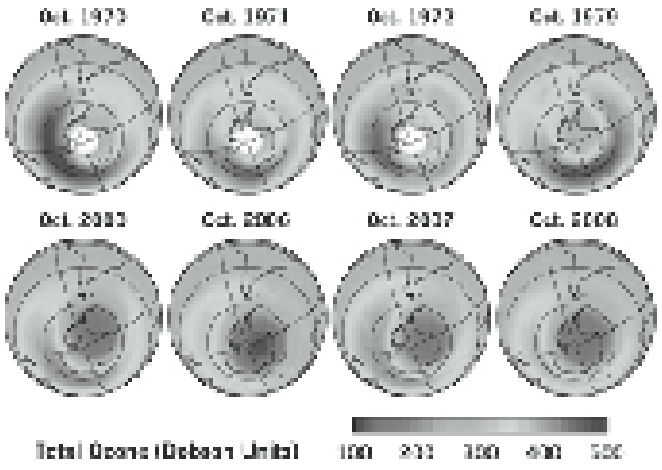

चित्र 13.5 अंटार्कटिका के ऊपर ओज़ोन की परत में छिद्र (मैजेंटा रंग) को दिखाते उपग्रह चित्र

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. पर्यावरण एक ''जीवन अवलंब तंत्र (Life Support System) है, क्योंकि जैव–मण्डल (Biosphere) के सभी घटक जीवधारियों का अस्तित्व एवं सातत्य (Perpetuation) इसी पर निर्भर है।
2. किसी विशेष स्थान और समय में एक जीवधारी का अस्तित्व और सातत्य उसकी (जीवधारी) परिवर्तनीय (बदलने वाली) आवश्यकताओं तथा पर्यावरण की गति के बीच समाकलन पर निर्भर है।
3. विगत शताब्दी की वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिक क्रान्तियों द्वारा लाए गए परिवर्तनों के कारण आज पर्यावरण के जैव तथा अजैव घटकों में बड़े पैमाने पर रूपान्तरण किए जा रहे हैं।
4. पर्यावरण को जीव मण्डल (Biosphere) भी कहते हैं, इसमें जल मण्डल, (Hydrosphere) वायुमण्डल (Atmosphere) एवं स्थल मण्डल (Lithosphere) आते हैं।
5. पर्यावरण के अंतर्गत (i) जैविक घटक (Biotic component) एवं (ii) अजैविक घटक (Abiotic component) आते हैं।
6. प्रदूषण वायु, जल, मृदा, जीवजात आदि की भौतिक, रासायनिक और/या जैविक विशेषताओं में अवांछित परिवर्तन है, जो संसाधनों के कच्चे माल का निम्नीकरण करता है।
7. मानवजनित वायु प्रदूषण निम्नलिखित हैं : औद्योगिक उत्सर्ग, मोटर वाहन उत्सर्ग, घरेलू उत्सर्ग, जीवाश्म ईंधनों के जलने से उत्पन्न पदार्थ, युद्ध में प्रयुक्त विस्फोटक सामग्री एवं अन्य रसायन आदि, कृषि में प्रयुक्त पदार्थ एवं कृषि क्रियाएँ।
8. जल–प्रदूषण की वर्तमान समस्या आधुनिक औद्योगिक सभ्यता की गतिविधियों की देन है।
9. जल प्रदूषण से उत्पन्न खतरों से पार पाने के लिए एकीकृत जल एवं उत्सर्ग प्रबन्ध (Integrated water and waste management) के कार्यक्रमों की आवश्यकता है।
10. मृदा में विभिन्न प्रकार के तथा विभिन्न अनुपातों में एक साथ जुड़े हुए कण पाए जाते हैं। इसमें वायु अथवा जल से भरे हुए स्थान या अन्तराल पाए जाते हैं।
11. विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने एक शहर के लिए 45 dB को सुरक्षित शोर स्तर तय किया है।

12. किसी प्राकृतिक जलराशि में गर्म बहिःस्राव मिलाने पर उस जलराशि का ताप बढ़ने से तापीय प्रदूषण होता है। इससे जल की गुणवत्ता में गिरावट आती है और जलीय तथा स्थलीय जीवजात की हानि होती है।
13. **अर्नेस्ट हेकल** (Ernst Haeckel, 1868) के अनुसार पारिस्थितिकी "सजीवों का इनके जैविक एवं अजैविक पर्यावरण (Biotic and abiotic environment) के साथ होने वाला पारस्परिक सम्बन्ध है।
14. सजीवों को जीवित रहने के लिए जिन पदार्थों की आवश्यकता होती हैं उन्हें संसाधन (Resource) कहते हैं। वे सभी पदार्थ जो पर्यावरण में उपस्थित है एवं सजीवों के जीवन प्रवाह के लिए आवश्यक है उन्हें प्राकृतिक संसाधन (Natural resource) कहते हैं।
15. पारिस्थितिक तंत्र, पारिस्थितिकी की मूलभूत इकाई हैं जिसमें उपस्थित जैविक एवं अजैविक घटक एक दूसरे से अंतःक्रिया करते हैं एवं दोनों घटक जीवन के सातत्य के लिए महत्वपूर्ण हैं।
16. **अपघटक (Decomposer)** – इसमें मुख्य रूप से जीवाणु (Bacteria) एवं कवक (Fungi) आते हैं। पारिस्थितिक तंत्र में सामान्यतया बैक्टीरिया जन्तु ऊतकों पर जबकि कवक, पादप ऊतकों पर क्रिया करते हैं।
17. **कृत्रिम पारिस्थितिक तंत्र (Artificial ecosystem)** – ये तंत्र पूर्ण रूप से मनुष्य द्वारा नियंत्रित होते हैं। जैसे–शस्यभूमि (Crop land) जिसमें गेहूँ, बाजरा एवं चावल इत्यादि के क्षेत्र आते है।
18. वायुमंडल से ऑक्सीजन का उपयोग तीन प्रक्रियाओं में होता है, जिनके नाम हैं: श्वसन, दहन तथा नाइट्रोजन के ऑक्साइड के निर्माण में।
19. 'नाइट्रोजन स्थिरीकरण' करने वाले बैक्टीरिया या तो स्वतंत्र रूप से रहते हैं या द्विबीजपत्री पौधों की कुछ जातियों के साथ पाए जाते हैं। साधारणतः ये नाइट्रोजन को स्थिर करने वाले बैक्टीरिया फलीदार पौधों की जड़ों में एक विशेष प्रकार की संरचना (मूल ग्रंथिका) में पाए जाते हैं।
20. कुछ गैसें पृथ्वी से ऊष्मा को पृथ्वी के वायुमंडल के बाहर जाने से रोकती हैं। वायुमंडल में विद्यमान इस प्रकार की गैसों की वृद्धि संसार के औसत तापमान को बढ़ा सकती है। इस प्रकार के प्रभाव को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते हैं। कार्बन डाइऑक्साइड भी इसी प्रकार की एक ग्रीन हाउस गैस है।
21. मनुष्य के द्वारा बनाए गए विभिन्न प्रकार के यौगिक जैसे क्लोरो–फ्लोरो कार्बन CFC वायुमंडल में स्थिर अवस्था में उपस्थित हो जाते हैं। CFC क्लोरीन तथा फ्लोरीन युक्त कार्बन यौगिक हैं। ये बहुत स्थायी होते हैं तथा किसी जैव–प्रक्रिया द्वारा भी विघटित नहीं होते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. निम्न में से वायु प्रदूषक नहीं है–
   (अ) कच्छीय गैसे (ब) SO_2
   (स) CO_2 (द) DDT
2. पारिस्थितिकी तंत्र शब्द की रचना किसने की–
   (अ) ओडम (ब) टैन्सले
   (स) हीकल (द) हैबर
3. हरित गृह प्रभाव की प्रमुख गैस है–
   (अ) CO_2 (ब) SO_2
   (स) NO_2 (द) CO
4. निम्न में कृत्रिम पारितन्त्र कौनसा है–
   (अ) वन (ब) घास के मैदान
   (स) रेगिस्तान (द) शस्य
5. अधिशोषण, अवशोषण, संघनन आदि किस प्रदूषण प्रकार के नियंत्रण में उपयोगी हैं।
   (अ) वायु (ब) जल
   (स) तापीय (द) मृदा

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न :

6. पारिस्थितिकी शब्द को परिभाषित करें।
7. दो प्रमुख गैसीय प्रदूषकों के नाम लिखें।
8. अपघटक क्या हैं?
9. ध्वनि प्रदूषण को परिभाषित करें।
10. तापीय प्रदूषण से उत्पन्न रासायनिक दशाऐं बताऐं।

लघूत्तरात्मक प्रश्न :

11. पारिस्थितिकी तंत्र के अजैविक घटकों के नाम व उदाहरण लिखें।
12. वैष्विक उष्मीकरण क्या हैं?
13. कृत्रिम पारिस्थितिकी तंत्र क्या हैं? उदाहरण दीजिए।

निबन्धात्मक प्रश्न :

14. वायु प्रदूषण के कारण व प्रभावों को समझाऐं।
15. नाइट्रोजन चक्र का आरेखीय वर्णन करें।

उत्तरमाला

(1) द, (2) ब, (3) अ, (4) द, (5) अ

◆◆◆

अध्याय – 14
स्वास्थ्य, रोग एवं योग
(Health, Disease and Yoga)

14.1 स्वास्थ्य से तात्पर्य (Meaning of Health)

''पहला सुख निरोगी काया'' तथा ''स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास होता है (Healthy mind resides in healthy body)।'' यह कहावत काफी पुरानी एवं प्रचलित होने के साथ–साथ शत प्रतिशत सही है। स्वास्थ्य सभी के लिये अनिवार्य एवं आवश्यक है। एक स्वस्थ व्यक्ति ही किसी भी प्रकार के कार्य को सुचारू रूप से कुशलतापूर्वक कर सकता है।

14.2 स्वास्थ्य का महत्व (Significance of Health)

सुखमय जीवन व्यतीत करने के लिए स्वस्थ होने की आवश्यकता होती है। स्वस्थ होने पर हम शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक रूप से अपनी क्षमताओं का अधिकाधिक उपयोग कर सकते हैं। स्वस्थ रहकर हम सुखी जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

निरोगी होना हमारे अच्छे स्वास्थ्य का प्रमुख लक्षण है। स्वस्थ व्यक्ति ही स्वस्थ और मजबूत राष्ट्र का निर्माण कर सकता है। हमारे देश में स्वास्थ्य सुधार पर अधिक बल दिया जा रहा है।

साधारणतः स्वस्थ व्यक्ति का अर्थ होता है वह व्यक्ति जिसका शरीर स्वस्थ हो, मन एवं मस्तिष्क स्वस्थ हो, परिवार स्वस्थ हो तथा स्वस्थ वातावरण में रहता हो।

किसी भी कार्य को सुचारू रूप से कुशलतापूर्वक करने के लिए व्यक्ति का स्वस्थ रहना अत्यन्त आवश्यक है। एक प्रसन्नचित्त, निरोग एवं स्वस्थ व्यक्ति ही किसी भी कार्य को कुशलतापूर्वक सम्पन्न करने की क्षमता रखता है। अतः जीवन की गुणवत्ता को समुन्नत करने के लिए सम्पूर्ण अवस्था जिसमें कार्यकुशलता, शारीरिक स्फूर्ति, मानसिक संतोष तथा सुख–चैन पर विशेष बल देने की आवश्यकता है।

14.3 सन्तुलित भोजन एवं उसके अवयव (Balanced Diet and its Components)

सन्तुलित आहार वह है जिसमें समस्त पोषक तत्व (कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, जल तथा खनिज लवण) उचित मात्रा में विद्यमान हो (सारणी–1)। कार्बोहाइड्रेट व वसा शरीर को ऊर्जा प्रदान करते हैं। प्रोटीन कोशिकीय अवयवों की वृद्धि एवं निर्माण के लिए जरूरी है। खनिज तथा विटामिन कोशिकाओं एवं ऊतकों में जैव अभिक्रियाओं के लिए आवश्यक है। जल कोशिकीय एवं जैव प्रकार्यों जैसे पाचन, उत्सर्जन तथा परिवहन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन सबके साथ–साथ पाचन के लिए कुछ रूक्षांश (Roughage) की भी आवश्यकता होती है। रूक्षांश में मुख्यतः न पचने वाला सेलुलोस होता है जो पानी को सोखकर भोजन के परिमाण को बढ़ा देता है जिससे कब्ज नहीं होती है (चित्र 14.1)।

चित्र 14.1 : सन्तुलित आहार

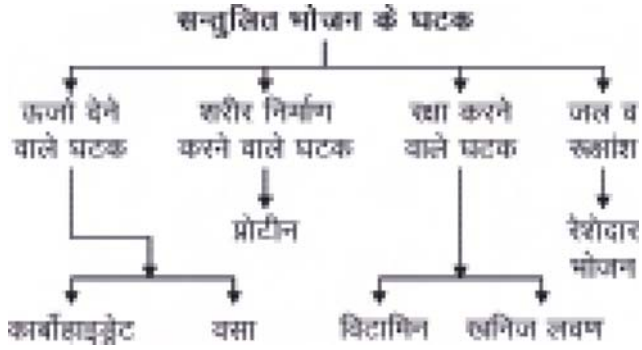

सन्तुलित भोजन के घटक

सन्तुलित भोजन के प्रमुख घटक निम्न है :–

(1) कार्बोहाइड्रेट

कार्बोहाइड्रेट (स्टार्च तथा शर्करा) हमारे शरीर के लिए प्रमुख ऊर्जा स्त्रोत है। यद्यपि ये बहुत समृद्ध स्त्रोत नहीं है किन्तु ये ऊर्जा के सबसे सस्ते स्त्रोत है। सामान्यतः कार्बोहाइड्रेट हमारे आहार में निहित कुल भोजन ऊर्जा का 60% से 80% अंश प्रदान करते हैं।

जब हम फल, सब्जियां तथा अन्य वनस्पति पदार्थ खाते हैं, तब हम बहुत मात्रा में वनस्पति कोशिकाएं ग्रहण करते हैं जिनकी कोशिका भित्तियां, एक कार्बोहाइड्रेट, सेलुलोस से बनी होती हैं। इन पदार्थों के पाचन हेतु आवश्यक एन्जाइम हमारे शरीर में नहीं होते। इसलिए ये केवल रूक्षांश के रूप में कार्य करते हैं।

(2) वसा

वसा ऑक्सीकरण में कार्बोहाइड्रेट की तुलना में दुगुनी ऊर्जा प्रदान करते हैं। इसका कारण यह है कि वसा अणुओं में कम ऑक्सीजन होती है। ऊर्जा प्रदान करने के अतिरिक्त वे कोशिकाओं एवं ऊतकों के संरचनात्मक पदार्थों को बनाने में सहायता करते हैं जैसे कि कोशिका झिल्ली तथा अन्य अंगक। वसा शरीर द्वारा बाद में उपयोग हेतु संचयित भी की जाती है। यदि हम भोजन की इतनी अधिक मात्रा लें कि उससे उत्पन्न समस्त ऊर्जा का शरीर द्वारा किये गये कार्यों में उपयोग न हो सके तो अतिरिक्त ऊर्जा हमारी त्वचा के नीचे सःत्वचीय वसा के रूप में संचयित हो जाती है। हमें वसा मक्खन, घी, पनीर, दूध, अण्डे की जर्दी, गिरी, मांस तथा सभी खाद्य तेलों से प्राप्त होती है।

(3) प्रोटीन

प्रोटीन उस पोषक वर्ग के सदस्य है जिनसे कि हमारा शरीर प्रमुखतया बना है। जीवद्रव्य में जल के अलावा शेष भाग अधिकांशतः प्रोटीन ही है। हमारे शरीर को जिन एमीनो अम्लों की आवश्यकता होती है, उन्हें चयन कर पुनः संयोजित कर विशिष्ट प्रोटीन बनाता है। प्रोटीन का पाचन क्षुद्रांत्र में होता है तथा इस प्रक्रिया में उत्पन्न एमीनो अम्लों का आंत्र द्वारा अवशोषण हो जाता है। तत्पश्चात् वे नवीन समूहों में आबद्ध होकर शरीर कोशिकाओं में विशेष प्रोटीनों का निर्माण करती हैं जिससे कोशिकाएं तथा ऊतक विकसित होते हैं। जैसे त्वचा पेशियां, रक्त तथा अस्थियां। कार्बोहाइड्रेट तथा वसा की भांति ही प्रोटीन, कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन के यौगिक हैं किन्तु इनमें कुछ अन्य तत्व भी होते हैं जैसे नाइट्रोजन तथा सल्फर जो अनेक जैविक प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यद्यपि कुछ ऐसे भी प्रोटीन हैं जिनको हम सीधे ही भोजन से प्राप्त करते हैं। समस्त पौधों में कुछ मात्रा में प्रोटीन होता है किन्तु मूंगफली, बीन, अन्न (मक्का तथा गेहूं) तथा दालें प्रोटीन के लिये सबसे अच्छे वनस्पति स्त्रोत हैं। मांस, मछली, अण्डे, दूध तथा पनीर जन्तु प्रोटीन के स्त्रोत हैं।

(4) जल तथा रूक्षांश

सन्तुलित आहार में जल तथा रूक्षांश का बराबर महत्व है। जल, कोशिका–द्रव्य, रुधिर प्लाज्मा तथा ऊतकों के अन्तःकोशिकीय द्रव्य में उपस्थित होता है। यह अनेक प्रक्रियाओं में विलायक के रूप में भी उपस्थित होता है। जल हमारे शरीर के ताप को स्वेदन (पसीना) तथा वाष्पण द्वारा नियंत्रित करता है और इस तरह शरीर के अपशिष्ट पदार्थों के उत्सर्जन हेतु एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमारे शरीर के लिये आवश्यक अधिकांश जल की आपूर्ति हमारे द्वारा पीये गये पानी तथा अन्य पेय पदार्थों जैसे चाय, कॉफी, फलों के रस या दूध आदि से होती है। कुछ जल ऑक्सीकरण तथा अन्य अभिक्रियाओं में सहउत्पाद के रूप में भी उत्पन्न होता है।

सलाद, सब्जियां तथा फल जिनमें तना, छिलका तथा रेशा अधिक होता है। वे हमारे भोजन में प्रमुख रूक्षांश प्रदान करते हैं। वे पाचन के लिए उत्तम हैं तथा मल गतिक्रमों में सहायता करते हैं। भुट्टा तथा दलिया अन्य पोषक तत्वों के अतिरिक्त अच्छा रूक्षांश भी प्रदान करते हैं।

(5) खनिज लवण

हमें लोहा (Fe), जिंक (Zn), आयोडीन (I), नमक (NaCl), कैल्सियम फास्फेट ($Ca_3(PO_4)_2$) जैसे अनेक अन्य धातुओं तथा लवणों की आवश्यकता अपने शरीर की विभिन्न अभिक्रियाओं के लिये होती है। इन सबको सम्मिलित रूप से खनिज कहते हैं। आपने अवश्य ध्यान दिया होगा कि गर्मियों में, पसीने के कारण अक्सर आपके कपड़ों पर सफेद दाग लग जाते हैं। यह मुख्यतः सोडियम क्लोराइड (NaCl) यानि नमक है। कैल्सियम के लवण ($CaPO_4$) भी हमारे शरीर में हड्डियों तथा दांतों को दृढ़ता प्रदान करने में तथा रक्त जमने में मदद करने के लिये आवश्यक हैं। सोडियम (Na) तथा पोटेशियम (K) के लवण कोशिकाओं तथा ऊतक द्रव्यों के परासरणी सन्तुलन के लिए आवश्यक है। थॉयरॉयड हार्मोन के निर्माण हेतु बहुत लघु मात्रा में आयोडीन भी आवश्यक

सारणी 1: कुछ सामान्य खाद्य पदार्थों में प्रमुख पोषक तत्व

कार्बोहाइड्रेट	वसा	प्रोटीन	खनिज
चावल, इडली रोटी (गेहूं, ज्वार, बाजरा), पूरी, कसावा, सामान्य शक्कर, शहद, गुड़, डबलरोटी भूमिगत कंद जैसे आलू, अरबी, शकरकंद, मीठे रसीले फल	मक्खन, मूंगफली, घी, वनस्पति तेल (सरसों, मूंगफली, सूरजमुखी), गिरी, मांस से प्राप्त जन्तु वसा	अण्डे, मांस, मछली, दूध, पनीर, चीज, मूंगफली, दालें, मटर, सोयाबीन	कैल्सियम : दूध, दही, हरी सब्जियां, रागी। लोहा : कलेजी, अण्डा, मांस, मटर, सूखे मेवे, हरी पत्तेदार सब्जियां, गुड़। फास्फोरस : दूध, दही, हरी पत्तेदार सब्जियां। सल्फर : अण्डे की जर्दी, हरी पत्तेदार सब्जियां। आयोडीन : समुद्री भोजन।

है। प्रोटीन हीमोग्लोबिन के निर्माण के लिए लोहे की आवश्यकता होती है। यह हीमोग्लोबिन ही ऊतकों तक ऑक्सीजन का परिवहन करता है। फास्फोरस, क्लोरीन, तांबा, मैग्नीशियम तथा जिंक के अनेक यौगिक भी हमारे शरीर में महत्वपूर्ण अभिक्रियाओं के नियंत्रण के लिए तथा सामान्य स्वास्थ्य एवं वृद्धि के लिए आवश्यक है।

(6) विटामिन

विटामिन हमारे पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। उपापचय में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। शरीर वृद्धि एवं शरीर परिवर्धन में यह तत्व सहायक है। खाद्य पदार्थों में यह बहुत ही सूक्ष्म मात्रा में पाये जाते हैं। लेकिन इनकी उपस्थिति अनिवार्य है (सारणी – 2)।

14.4 त्वरित भोजन (फास्ट फूड) (Fast Food)

त्वरित भोजन (फास्ट फूड) आज के भौतिक युग में हमारे भोजन का सबसे बड़ा विकल्प बन गया है। परन्तु यह शरीर को स्वस्थ रहने के लिए पोषक तत्वों की जरूरत को पूरा नहीं करता है। जिसके कारण मनुष्य हर समय थकान महसूस करता है और दैनिक कार्यों को पूरा करने में भी सक्षम नहीं रहता है। हमारे देश में फास्ट फूड से बेहतर पौष्टिक देशी आहार रोजमर्रा जीवन में मौजूद है जैसे पोहा, पकौड़े, इडली, डोसा, अंकुरित अनाज, फल, अण्डे, उपमा, गजक, तिलपट्टी, गुड़, सांगरी, मठरी आदि जिनके उपयोग से हमारे शरीर को कोई नुकसान नहीं पहुंचता है। फास्ट फूड के नियमित उपभोग से मोटापा, कई गंभीर बीमारियां, हाइपरटेंशन आदि बीमारियां हो जाती है। ''स्वस्थ शरीर में स्वस्थ दिमाग एवं स्वस्थ मानसिकता निवास करती है।'' परन्तु फास्ट फूड जैसे पिज्ज़ा, बर्गर, नुडल्स आदि हमें स्वस्थ शरीर नहीं देते क्योंकि इनमें प्रोटीन और अच्छी कार्बोहाइड्रेट की पर्याप्त मात्रा शामिल नहीं है और वसा की बड़ी मात्रा होती है जो शरीर में जम कर वजन बढ़ता है यही वजन दिल के दौरे, रक्तचाप, गुर्दे, गठिया, मधुमेह आदि रोग को निमंत्रण देता है इस कारण ना स्वस्थ शरीर और न ही स्वस्थ मानसिकता मिलती है। ग्रसित मानसिकता कई अपराधों के लिए जिम्मेदार होती है। मानव में आम तौर पर स्वस्थ रहने हेतु किशोरावस्था में लगभग 1800–2600 कैलोरी, वयस्क महिलाओं को 2200 तथा वयस्क पुरुष को 2000–3200 कैलोरी की आवश्यकता होती है। किसी भी आहार से प्राप्त कैलोरी में कम मात्रा में संतृप्त वसा, ट्रांस वसा, कोलेस्ट्रॉल, नमक, शक्कर आदि होने चाहिये। परन्तु फास्ट फूड में इन सभी की मात्रा अत्यधिक होती है जो हमारे शरीर को नुकसान करता है एवं धीरे–धीरे गंभीर बीमारियाँ उत्पन्न करता है। यही कारण है आज स्कूल के बच्चों में मोटापा, विकृत एवं कमजोर मानसिकता होती जा रही है और वे कई सारे अपराधों को भी अंजाम देते हैं साथ ही शारीरिक रूप से भी गंभीर बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं। फास्ट फूड में अक्सर बहुत अधिक कैलोरी व बहुत कम पोषण होता है। अलग–अलग स्वाद व आसानी से मिल जाने के कारण हर प्रकार का आयु वर्ग इसकी ओर खिंचा जा रहा है जिससे सेहत सम्बन्धी कई परेशानियों के विरुद्ध हमें संघर्ष करना पड़ रहा है। जिसके हम नियमित तौर पर कई घातक परिणाम देख रहे हैं।

14.5 सिन्थेटिक फूड पेय का प्रभाव (Effects of Synthetic Food Beverages)

आज के युग में कृत्रिम (सिन्थेटिक) पेय पदार्थों का चलन बहुत बढ़ गया है। यह सिन्थेटिक पेय पदार्थ आज कई बीमारियों

सारणी – 2

मनुष्यों के लिये उपयोगी विटामिनों का विवरण।

	विटामिन	स्त्रोत	मुख्य रोग	प्रभाव
1.	विटामिन A (रेटिनॉल) वसा में घुलनशील	हरी पत्तेदार सब्जियां, गाजर, मछली, लिवर, तेल, कलेजी	रतौंधी (Night blindness)	रात्रि में दिखाई नहीं देना
2.	विटामिन B जल में घुलनशील	दूध, समुद्री भोजन, सोयाबीन, साबुत अन्न, हरी सब्जियां, अंकुरित दालें, मांस, आलू	बेरी–बेरी (Beri beri)	भूख में कमी, कमजोरी, पेशियों की निष्क्रियता, सिरदर्द, पक्षाघात
3.	विटामिन C (एस्कार्बिक अम्ल) जल में घुलनशील	रसदार फल विशेषकर आंवला, नींबू, संतरा, अमरूद	स्कर्वी (Scurvy)	मसूड़ों से रक्त आना, त्वचा पर लाल धब्बे, चकते
4.	विटामिन D (कैल्सीफेरोल) वसा में घुलनशील	दूध, मछली, लिवर तेल, अण्डा; सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में शरीर स्वयं भी निर्मित करता है।	रिकेट्स (Rickets)	बच्चों का सूखा रोग व अस्थियों में असामान्यता व दांतों की वृद्धि में रूकावट
5.	विटामिन E (टोकोफिरोल) वसा में घुलनशील	हरी पत्तेदार सब्जियां, दूध, मक्खन, टमाटर, यकृत, सोयाबीन	बन्ध्यता व पक्षाघात (Sterlity and Paralysis)	इसकी कमी से जनन उपकला क्षतिग्रस्त हो जाती है व बन्धयता उत्पन्न होती है। तंत्रिका पेशीय डिस्ट्रोफी द्वारा पक्षाघात होता है।
6.	विटामिन K (फाइलोक्विनॉन) वसा में घुलनशील	दूध, उत्पाद, बादाम, पालक, सूर्यमुखी के बीज, सोयाबीन, टमाटर, हरी सब्जियां	हेमरेज (Haemmorrhage)	रक्त का थक्का नहीं जमना व रक्त का अविरल बहना

में अपना योगदान दे रहे हैं। इन पेय पदार्थों में फॉस्फेट का उच्च स्तर पाया जाता है जिससे शरीर में कैल्शियम की तुलना में फॉस्फेट की अधिक मात्रा होने से यह हमारे स्वास्थ्य पर बहुत हानिकारक प्रभाव डालता है। किशोरावस्था के दौरान शरीर को अत्यधिक कैल्शियम की आवश्यकता होती है जो हमें दूध, अण्डों आदि से मिलती है परन्तु सिन्थेटिड पेय पदार्थों के बढ़ते चलन के कारण किशोरों की वृद्धि सम्पूर्ण प्रकार से नहीं हो पा रही है जिसके कई दुष्परिणाम हमारे सामने है। पेय पदार्थों में बहुत अधिक मात्रा में शक्कर इस्तेमाल की जाती है। जिससे शरीर में उसे नियंत्रित करने हेतु अधिक इन्सुलिन का स्त्रावण होता है जो बाद में मधुमेह (डायबिटीज) रोग तथा पेय पदार्थों से उपस्थित कोलेस्ट्रॉल हृदय रोगों के लिए जिम्मेदार होते हैं (चित्र 14.2)।

कृत्रिम (सिन्थेटिक) पेय पदार्थ शरीर की उपापचयी क्रियाओं को उचित प्रकार से नहीं करने देता है जिससे शरीर में तनाव की अवस्था आती है जो मस्तिष्क कैंसर, मानसिक व भावनात्मक विकारों को जन्म देता है। इन पेय पदार्थों के सेवन से शरीर में अम्ल की मात्रा अधिक हो जाती है जो हमारे पाचन तंत्र को भी धीरे–धीरे विकृत करता है। कृत्रिम (सिन्थेटिक) पेय पदार्थ एक अप्राकृतिक पदार्थ है जो हमें पोषण नहीं देता है बल्कि इसके सेवन से कई नकारात्मक परिणामों से आज की पीढ़ी को संघर्ष करना पड़ रहा है। इन पेय पदार्थों में उच्च शक्कर, सोडियम और

चित्र 14.2 : सिन्थेटिक फूड पेय व फास्ट फूड का शरीर पर प्रभाव

कैफीन होती है जो शरीर निर्जलीकरण (Dehydration) का कारण बनती है और मोटापा तथा कई रोग देती है। मोटापे के कारण आज किशोरों में मानसिक विकार बढ़ता जा रहा है जो आज होने वाले कई अपराधों को बढ़ावा देता है। इन सभी दुष्परिणामों के बचाव के लिए किशोरों को इनके बजाय नारियल पानी, नींबू पानी, फलों के ज्यूस, शेक आदि को लेने के लिए बढ़ावा देना चाहिये।

14.6 कुपोषण (Malnutrition)

कुपोषण से अभिप्राय संतुलित आहार न मिलने से है। आहार में एक या अधिक पोषक तत्वों की कमी से होने वाले रोग को कुपोषण या हीनताजन्य रोग कहते हैं। मनुष्य के संतुलित विकास के लिये भोजन में संतुलित मात्रा में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, खनिज लवण एवं अन्य सूक्ष्म तत्वों का होना आवश्यक है।

हमारे देश तथा विकासशील देशों में बड़ी संख्या में लोग कुपोषण से ग्रसित हैं क्योंकि वे पर्याप्त संतुलित भोजन नहीं लेते हैं।

14.6.1 कुपोषण के कारण (Types of Malnutrition)

(1) गरीबी व अज्ञानता

(2) बेरोजगारी एवं बढ़ती आबादी

(3) खाद्यान्नों का अभाव एवं खाद्य सामग्री में मिलावट

(4) भोजन सम्बन्धी हमारी आदतें

(5) मानसिक वेदना तथा चिन्ता

(6) मिथ्या धारणायें।

14.6.2 कुपोषण के कारण होने वाले रोग, लक्षण एवं कारक

(Symptoms, Causal organism and Diseases due to Malnutrition)

(A) प्रोटीन की कमी से होने वाले रोग

(a) क्वाशियोरकोर रोग **(b)** मैरेस्मस रोग

चित्र 14.3 : प्रोटीन की कमी से होने वाले रोग (**a & b**)

मनुष्य के शारीरिक विकास के लिये प्रोटीन की आवश्यकता बहुत जरूरी है। बच्चों में प्रोटीन की कमी से सर्वाधिक कुपोषण होता है। जिससे दो मुख्य रोग होते हैं (चित्र 14.3) –

(1) क्वाशियोरकोर (Kwashiorkor) – प्रोटीन की कमी के कारण होने वाला रोग है। इसके मुख्य लक्षण जैसे – भूख कम लगना, शरीर सूज कर फूलना, त्वचा पीली व शुष्क होना और चिड़चिड़ा होना।

(2) मैरेस्मस (Marasmus) – यह रोग भोजन में प्रोटीन व कैलोरी दोनों की कमी से होता है। इसमें शरीर सूखने लगता है रोगी दुबला–पतला, चेहरा दुर्बल तथा आंखें कांतिहीन और अन्दर धंसी–सी हो जाती है।

(B) कार्बोहाइड्रेट की कमी से होने वाले रोग

संतुलित भोजन में कार्बोहाइड्रेट ऊर्जा का प्रमुख स्त्रोत होता है इस कारण इसकी कमी से कई सारे गंभीर रोग हो जाते हैं।

हाइपोग्लाईसीमिया – कार्बोहाइड्रेट की कमी से ग्लूकोज की शरीर में अनुपलब्धता से रक्त शर्करा के स्तर में गिरावट हो जाती है। रक्त में ग्लूकोज की कमी से चक्कर आना, थकान व ऊर्जा में कमी आदि लक्षण नजर आते हैं।

(C) खनिज लवणों की कमी से होने वाले रोग

खनिज वे पदार्थ है जो हड्डियों, ऊतकों व दांतों को मजबूत

(a) आयोडीन की कमी से गलगण्ड रोग

(b) दांतों में पीलापन

(c) शरीर पर चकते

(d) नाखूनों का कटे–फटे होना

चित्र 14.4 : खनिज लवणों की कमी से होने वाले रोग

बनाकर स्वस्थ शरीर का निर्माण करते हैं। महत्वपूर्ण खनिजों की कमी से शरीर में कई रोग उत्पन्न होते हैं जो निम्न हैं (चित्र 14.4)-

(1) कैल्शियम और विटामिन 'डी' – हड्डियों के घनत्व को बनाये रखने के लिये आवश्यक है। कैल्शियम की कमी से हड्डियों, पेशियों में दर्द एवं ऐंठन जैसे लक्षण दिखते हैं जिसके कारण बार–बार फ्रेक्चर की शिकायत रहती है। वयस्क शरीर में ऊर्जा के स्तर को बनाये रखने के लिये महत्वपूर्ण है कि मैग्नीशियम का स्तर भलीभांति हो क्योंकि इसकी कमी से पोटेशियम, सोडियम तथा कैल्शियम में कमी आ जाती है जिससे झटके, ऐंठन तथा मितली आदि लक्षण दिखाई देते हैं। पोटेशियम मांसपेशियों को सुचारू रूप से कार्य करने में मदद करता है। आयरन की कमी से शरीर में हीमोग्लोबिन की कमी हो जाती है जिससे एनीमिया रोग उत्पन्न होता है। जिंक मानसिक विकास तथा प्रतिरक्षा तंत्र के लिए महत्वपूर्ण है।

(2) गलगण्ड रोग – आयोडीन हमारे शरीर की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। यद्यपि इसकी बहुत कम मात्रा भी पर्याप्त होती है। आयोडीन की मदद से थायराइड ग्रंथि से थायरॉक्सिन हार्मोन स्त्रावित होता है जो उपापचयी क्रियाओं को नियंत्रित करता है। आयोडीन के अभाव में कई विकार उत्पन्न होते हैं जिससे मानसिक व शारीरिक वृद्धि विकार उत्पन्न होते हैं। इसके कारण थायराइड ग्रंथि का आकार बढ़ जाता है जिसे गलगण्ड या घेंघा रोग कहते हैं।

(D) विटामिन की कमी से होने वाले रोग

विटामिन का निर्माण मनुष्य के शरीर में नहीं होता है अतः इसकी आपूर्ति भोजन द्वारा की जाती है।

(1) रतौंधी (Night blindness) – यह रोग विटामिन 'A' की कमी से उत्पन्न होता है। जिसके कारण रोगी को रात में दिखाई नहीं देता है।

(2) बैरी–बैरी (Beri-beri) – यह रोग विटामिन 'B_1' की कमी से होता है जो सीधे तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है जिससे रोगी के भूख में कमी, शरीर में कमजोरी, पेशियों में निष्क्रियता के लक्षण रहते है।

(3) स्कर्वी (Scurvy) – यह रोग विटामिन 'C' की कमी से होता है। इसके कारण त्वचा पर चकते बनना, मसूड़ों से रक्त बहना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। इसकी कमी से शरीर की

रोगों से लड़ने की क्षमता में कमी आ जाती है।

(4) रिकेट्स **(Rickets)** – विटामिन 'D' के अभाव में बच्चों में रिकेट्स नामक रोग हो जाता है तथा वयस्कों में इसे ओस्टीयोपोरोसिस कहते हैं। इस रोग से अस्थि विकलांगता उत्पन्न होती है जिससे टांगें धनुषाकार, कबूतरनुमा वक्ष तथा दांतों में इनेमल का क्षय होना प्रारंभ हो जाता है।

(5) बन्ध्यता (Sterlity) – विटामिन 'E' की कमी से शरीर में नपुसंकता आ जाती है।

(6) हेमरेज (Haemorrhage) – यह रोग विटामिन 'K' की कमी से होता है। अतः चोट लगने पर रक्त का बहाव बंद नहीं होता है एवं सारा रक्त शरीर से बह जाता है और रक्त की कमी से मनुष्य की मृत्यु हो जाती है।

14.7 रोग (Disease)

वातावरण में उपस्थित विभिन्न रोगाणु शरीर में प्रवेश करके शरीर को रोगग्रस्त कर देते हैं। श्वेत रक्त कणिकायें (WBC) शरीर में प्रविष्ट रोगाणुओं को मार डालती है। कई परिस्थितियों में WBC अगर रोगाणु को नष्ट नहीं कर पाती है तो ये शरीर में विभिन्न अंगों को क्षतिग्रस्त करते हैं फलस्वरूप स्वस्थ व्यक्ति रोगी हो जाता है।

शरीर या शरीर के किसी भाग की सामान्य क्रियाओं में असामान्यता का उत्पन्न होना रोग कहलाता है।

14.7.1 रोग की उत्पत्ति के कारक (Causes of Disease)

(1) जैविक कारक (Biological agent) – ऐसे जीव जो रोग की उत्पत्ति का कारण बनते हैं उन्हें रोगजनक (Pathogen) कहते हैं। जैसे – वाइरस, जीवाणु, माइकोप्लाज्मा, फंजाई, प्रोटोजोअन्स, हेल्मीन्थीज आदि।

(2) रासायनिक कारक (Chemical agent) – ऐसे रासायनिक पदार्थ जो शरीर में रोग उत्पन्न करते है। जैसे – प्रदूषक, बीजाणु एवं परागकण शरीर में उत्पन्न होने वाले यूरिया तथा यूरिक अम्ल आदि।

(3) पोषण कारक (Nutritional agent) – पोषी पदार्थों की अधिकता या कमी से रोगजनक कारक की तरह कार्य करती है। जैसे – खनिज, वसा, प्रोटीन, विटामिन तथा कार्बोहाइड्रेट आदि।

(4) यांत्रिक कारक (Mechanical agent) – यांत्रिक रोगजनक को यांत्रिक कारक कहते हैं जैसे – घर्षण, चोट लगना, घाव होना, हड्डियों में फ्रेक्चर, पेशियों में खिंचाव या मोच आदि।

(5) भौतिक कारक (Physical agents) – गर्मी, सर्दी, आर्द्रता, विद्युत करंट, ध्वनि या विकिरणों द्वारा रोग उत्पन्न होना।

(6) पदार्थों की कमी या अधिकता – हार्मोन तथा एन्जाइम्स की अधिकता या कमी से रोग।

14.8 संक्रामक एवं असंक्रामक रोग (Communicable and Non-communicable diseases)

रोग को उनकी प्रकृति तथा कारकों के आधार पर दो भागों में वर्गीकृत किया गया है – (A) संक्रामक रोग (Communicable diseases) तथा (B) असंक्रामक रोग (Non-communicable diseases)।

(A) संक्रामक रोग (Communicable diseases) – रोग जो विभिन्न जीवित कारक जैसे – जीवाणु, वायरस, प्रोटोजोआ द्वारा उत्पन्न होते हैं। इनका संचरण एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में होता है तो इसे संक्रामक रोग कहते हैं।

14.8.1 वायरस जनित रोग (Viral Diseases)

(i) चिकन पोक्स (Chicken pox)

चिकन पोक्स को सामान्यतया छोटी माता के नाम से भी जाना जाता है।

रोगजनक – हर्पीज वायरस

लक्षण – बुखार, खांसी, कमर व पीठ में तीव्र दर्द होना,

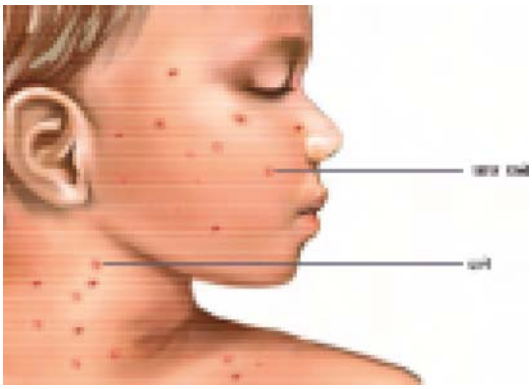

चित्र 14.5 : चिकन पॉक्स (छोटी माता) से पीड़ित

शरीर पर गुलाबी रंग के दाने निकलना, दाने त्वचा पर निशान नहीं छोड़ते (चित्र 14.5)।

उपचार – संक्रमित रोगी की उपयोगी की गई वस्तुओं को विसंक्रमित करना चाहिये, रोगी को समय पर स्वास्थ्य केन्द्र ले जाना चाहिये। रोकथाम हेतु एण्टीबायोटिक का उपयोग करना चाहिये।

(ii) पोलियोमाइलिटिस (Poliomyelitis)

रोगजनक – एन्टेरोवायरस

यह सबसे छोटा वायरस है।

लक्षण – गर्दन अकड़ना, रोगी का बिना हिले–डुले पड़े रहना, हाथ–पैरों में कमजोरी लगना, तंत्रिका तंत्र व मांसपेशियां भी प्रभावित होना, रोग की तीव्रता की स्थिति में विकलांगता आना।

उपचार – पल्स पोलियो अभियान के तहत शिशुओं को ओरल पोलियो वैक्सीन देना।

(iii) एड्स

(AIDS- Acquired Immuno Deficiency Syndrome)

रोगजनक – एच.आई.वी. वायरस (HIV- Human immuno deficiency virus)

लक्षण – शरीर का वजन कम हो जाना, अधिक दिनों तक

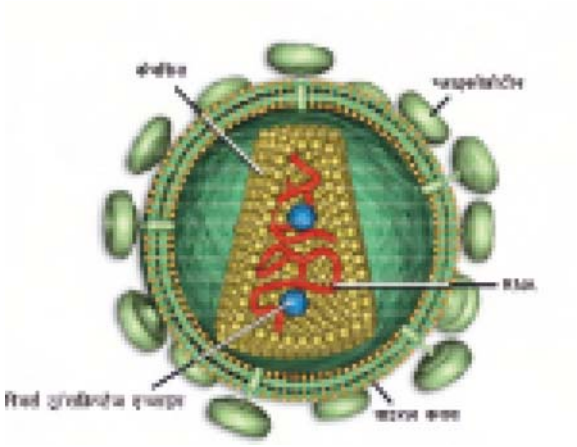

चित्र 14.6 : **HIV** वाइरस

बुखार रहना, दस्त लगना, गले में छाले, रोगों से लड़ने की क्षमता समाप्त होना, त्वचा पर खुजली और सूजन होना, लसिका ग्रंथियां प्रभावित होना (चित्र 14.6)।

रोग का प्रसार – HIV संक्रमित व्यक्ति से यौन सम्बन्ध से, संक्रमित व्यक्ति के रक्त के सम्पर्क में आने से, संक्रमित माता से पैदा होने वाली संतानों से, संक्रमित सुई के उपयोग से।

उपचार – निर्जलीकृत सुई का उपयोग, संक्रमित व्यक्ति से सम्बन्ध या विवाह नहीं करना, संक्रमित महिला को गर्भ धारण नहीं करना चाहिये, यौन सम्बन्ध के समय निरोध का प्रयोग करना।

(iv) डेंगू (Dengue)

हड्डी तोड़ बुखार भी कहते हैं। यह रोग एडीज इजिप्टी मादा मच्छर के काटने से होता है। जिसमें डेंगू वायरस होता है।

लक्षण – बुखार आना, ठण्ड लगना मांसपेशी व जोड़ों में दर्द, कमजोरी महसूस करना, भूख न लगना, चक्कर आना, रक्त में प्लेटलेट्स की संख्या कम होना, नब्ज कमजोर चलना, मृत्यु की संभावना रहना (चित्र 14.7)।

उपचार – डेंगू बुखार में माइकोफेनोलिक एसिड तथा रिबाविरिन का प्रयोग करने से डेंगू विषाणु की वृद्धि रूक जाती है। मच्छरों पर नियंत्रण हेतु तालाब, टंकी में गैम्बुसिया मछली डालना। इसकी विशेष दवा या वैक्सीन नहीं है।

14.8.2 जीवाणुजनित रोग (Bacterial diseases)

जीवाणु द्वारा उत्पन्न होने वाले रोग जीवाणुजनित रोग कहलाते हैं। जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं–

(i) तपेदिक या क्षय रोग (Tuberculosis or TB)

इसे सामान्यतया टीबी कहते हैं।

रोगजनक – *माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस*

लक्षण – थकान लगना, शरीर का वजन कम होना, कफ के साथ रक्त आना, जुकाम तथा बुखार होना, छाती में दर्द रहना, आवाज भारी होना।

रोग का प्रसार – टीबी रोगी के साथ सोने, बैठने, उठने, खाने–पीने से, कुपोषण से, संक्रमित पशु (गाय, बकरी) का दूध पीने से, संक्रमित व्यक्ति की उपयोग की गई वस्तुओं के उपयोग से, धूम्रपान, हुक्कापान व तम्बाकू सेवन से।

उपचार – उपचार हेतु स्ट्रेप्टोमाइसिन, विटामिन बी–कॉम्प्लेक्स तथा आइसोनिएजिड उपयोगी औषधियां हैं। बचाव के लिये (BCG - Bacile calmette guerin) का टीका नवजात शिशु को लगाया जाता है।

(ii) डिप्थीरिया (Diptheria)

शिशुओं में होने वाला भयानक रोग है, साथ ही वयस्कों में भी होता है।

रोगजनक – *कोरनिबैक्टीरियम डिप्थीरिआई*

लक्षण – यह जीवाणु कंठ या गले (Throat) को प्रभावित करता है। बच्चों में आलस व सुस्ती आना, भूख कम लगना, बुखार आना, सिर दर्द, चक्कर आना, शरीर में तंत्रिका तंत्र, हृदय व फेफड़ों को प्रभावित करना, नाक के स्त्राव के साथ रक्त आना, श्वासरोध के कारण मृत्यु भी होती है।

रोग का प्रसार – सामान्यतया रोगी व्यक्ति से सीधे सम्पर्क द्वारा, रोगी व्यक्ति के साथ खाने, पीने, सोने, चूमने से, मक्खियों द्वारा, रोगी के छींकने, खांसने व थूकने से वातावरण में जीवाणु फैलते हैं।

उपचार – शिशुओं में डीपीटी का टीका लगाया जाता है जो डिप्थीरिया, काली खांसी व टिटेनस से सुरक्षा प्रदान करता है। एन्टीबायोटिक्स दवाईयां जैसे – पेनिसिलीन, एरिथ्रोमाइसिन

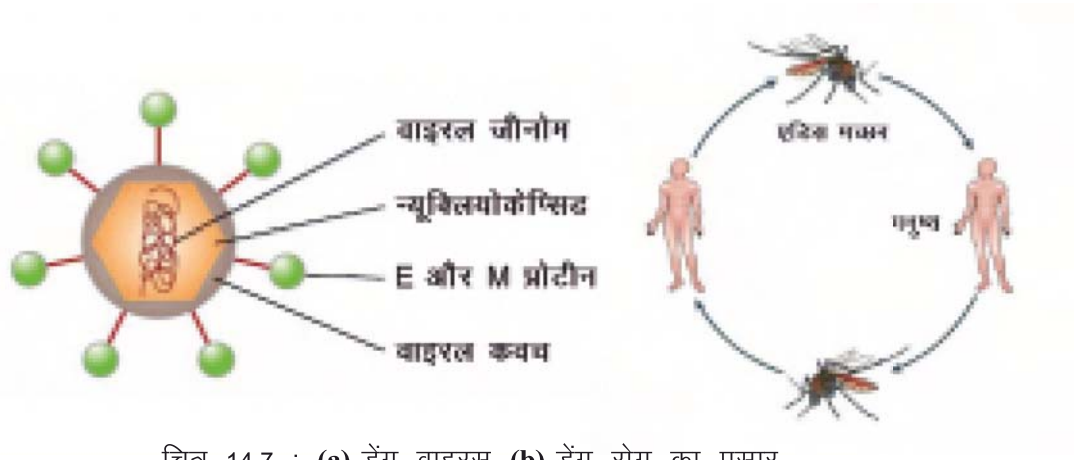

चित्र 14.7 : **(a)** डेंगू वाइरस **(b)** डेंगू रोग का प्रसार

आदि देनी चाहिये।

(iii) पीलिया (Jaundice)

इस रोग के कारण यकृत रोगग्रस्त (लीवर सिरोसिस) हो जाता है। जिसे हिपेटाइटिस रोग भी कहते हैं। इस रोग से व्यक्ति गंभीर रूप से पीलिया ग्रस्त हो जाता है।

रोगजनक – लैप्टोस्पाइरा जीवाणु

लक्षण – यकृत अक्रिय होना, रक्त व ऊतकों में पित्त वर्णकों में वृद्धि होना, शरीर में कमजोरी आना, त्वचा पीली होना तथा यकृत रोगग्रस्त (लीवर सिरोसिस) हो जाता है।

रोग प्रसार – यह संदूषित जल के उपयोग के कारण यह रोग उत्पन्न होता है।

उपचार – न्यू लिवफीट दवा दिन में दो बार लेना चाहिये। हेपेटाइटिस B & C के टीके लगवाने चाहिये।

(iv) कुष्ठ रोग (Leprosy)

रोगजनक – *माइक्रोबेक्टीरियम लेप्री*

लक्षण – त्वचा की संवेदनशीलता समाप्त होना, त्वचा पर रंगहीन धब्बे होना, संक्रमित स्थान की त्वचा मोटी होना, त्वचा का गलना, इसका प्रभाव तंत्रिका, त्वचा, अंगुलियों व पंजों पर पड़ता है।

रोग का प्रसार – संक्रमित व्यक्ति के साथ लम्बे समय तक रहने से।

उपचार – इसका निदान लेप्रोमीन टेस्ट द्वारा किया जाता है। कुष्ठ निवारण केन्द्रों पर रोगी का उपचार किया जाता है।

14.8.3 प्रोटोजोआ जनित रोग (Protozoan Disease)

(i) अमीबाएसिस (Amoebiasis)

रोगजनक – *एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका* ***(Entamoeba histolitica)***

लक्षण – ग्रसित व्यक्ति के मल के साथ म्यूकस व रक्त निकलता है। आंतों में ऐंठन होती है। बड़ी आंतों (कोलन) में अल्सर हो जाता है। यकृत को प्रभावित करता है जिससे अमीबीय हिपेटाइटिस हो जाता है।

बचाव – सब्जियों को भली–भांति धोकर उपयोग में लेना। अमीबीय पुटिकाओं को क्लोरीन, फीनॉल, क्रीसोल द्वारा नष्ट किया जाना चाहिये। प्रतिजैविक पदार्थों जैसा टेट्रासाइक्लीन, टेरामाइसीन का उपचार में उपयोग।

(ii) मलेरिया (Malaria)

मलेरिया मनुष्य में मादा एनाफिलीज मच्छर के काटने से फैलता है। मच्छर की लार में प्लाज्मोडियम रोगजनक उपस्थित होता है।

रोगजनक – प्लाज्मोडियम की चार जातियाँ निम्नलिखित हैं–

1. *प्लाज्मोडियम वाइवेक्स*
2. *प्लाज्मोडियम ऑवेल*
3. *प्लाज्मोडियम मलैरी*
4. *प्लाज्मोडियम फैल्सीफेरम*

लक्षण – रोगी को शरीर दर्द, हाथ–पैरों में ऐंठन, सिरदर्द, तीव्र सर्दी लगना, बदन का कांपना, भूख कम लगना, रक्त की कमी होना, रोगी का कमजोर होना, सुस्त व चिड़चिड़ा होना।

उपचार – मच्छर खत्म करने के लिये कीटनाशी का छिड़काव करवाना चाहिये। गड्ढों में जमा पानी को साफ करना चाहिये। मच्छरदानी का उपयोग करना चाहिये। कुछ मुख्य दवाइयाँ जैसे – कुनैन व क्लोरोक्वीन का उपयोग किया जाना चाहिये।

(B) असंक्रामक रोग (Non-communicable diseases)

रोग जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में स्थानान्तरित नहीं होते हैं उन्हें असंक्रामक रोग कहते हैं। यह केवल रोगी तक

सीमित रहने वाले रोग हैं।

(i) मधुमेह (Diabetes)

इसे शुगर या शक्कर की बीमारी भी कहते हैं। यह अग्नाशय में इन्सुलिन हार्मोन का पर्याप्त स्त्राव न होने के कारण होता है। जिससे रक्त व मूत्र में शर्करा की मात्रा अधिक होती है। इसमें अधिकतर कमजोरी, थकान लगती है। उपचार हेतु बाह्य स्त्रोत से इन्सुलिन दिये जाते हैं।

(ii) कैंसर (Cancer)

कैंसर शरीर के किसी भी भागों में हो सकता है। यह रोग अनेक कारणों से हो सकता है जैसे धूम्रपान, रसायन, कॉर्सिनोजेनिक कारक (जैसे X-ray, UV-विकिरण) आदि। इसमें कोशिकाओं की अनियमित वृद्धि व विभाजन होता है। बाद में कोशिकाएं ट्यूमर का निर्माण करती है। जिसे कैंसर कहते हैं।

लक्षण – शरीर के वजन में कमी आना, शरीर में गांठ होना, घाव न भरना, सिरदर्द, पेट दर्द, वृषण कोष/स्तन ग्रंथियों की आकृति में परिवर्तन, मूत्र में रक्त निकलना।

उपचार – रोग ग्रस्त भाग को शल्य क्रिया द्वारा निकाला जाता है। कैंसर कोशिकाओं को विकिरण तथा दवाइयों द्वारा नष्ट करके एण्टीबायोटिक्स, एल्केलॉयड्स के प्रयोग से तथा रेडियोथैरेपी द्वारा शल्यक्रिया या अस्थिमज्जा (Bone marrow) का प्रत्यार्पण करके। औषधियां – विनक्रिस्टिन तथा विनब्लास्टिन।

14.9 पतंजलि (Patanjali)

योग परम्परा में महर्षि पतंजलि का नाम बहुत श्रद्धापूर्वक लिया जाता है। इन्हें 'योग का पिता' भी कहा जाता है। महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग का पथ कोई मत, धर्म, पथ या सम्प्रदाय नहीं है बल्कि जीवन जीने की सम्पूर्ण पद्धति है। योग परम्परा बहुत पुरानी है जिसका जिक्र महाभारत के युग से सुनते चले आ रहे हैं। योग विचलित व भटके हुए मन को केन्द्रण या फोकस प्रदान करता है साथ ही विचारों के संघर्ष अर्थात् मानसिक उतार–चढ़ाव की समाप्ति करता है। योग हमें कई प्रकार के गुणों को जीवन में उतारने में मदद करता है जैसे– संयम, सत्य, अहिंसा, स्वाध्याय, संतोष, अनुशासन, ध्यान, एकाग्रता, भावना नियंत्रण, समर्पण आदि जिससे मानव शरीर में सकारात्मक ऊर्जा व सोच का संचार होता है जो आज की व भावी पीढ़ी के लिए बहुत जरूरी है। क्योंकि आज की पीढ़ी में इन सभी गुणों का अभाव है। योग के इन सभी लाभों के कारण 'पतंजलि' ने मनुष्यों को देने का निर्णय किया। योग द्वारा आज हम कई सारे असाध्य रोग पर विजय प्राप्त कर चुके हैं (चित्र 14.8)।

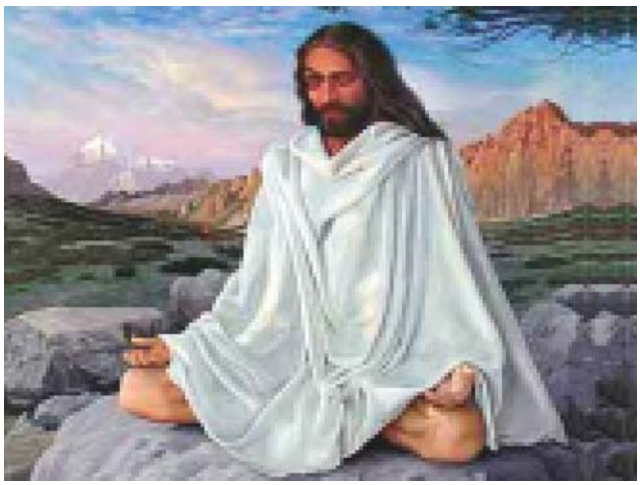

चित्र 14.8 : महर्षि पतंजलि

14.10 योग का स्वास्थ्य पर प्रभाव (Effects of Yoga on Health)

आज तनाव से भरी ज़िन्दगी में योग ''जीवनदायिनी अमृत'' की तरह उभर कर आया है। योग के मुख्यतः दो पहलू है एक शारीरिक योग दूसरा आध्यात्मिक, दार्शनिक, भावनात्मक। शरीर की स्वस्थता से लेकर समाधि की सिद्धि तक योग की यात्रा बहुत ही सरल, सहज, वैज्ञानिक, प्रमाणिक, व्यवहारिक व सार्वभौमिक है। जीवन के तीन मूल तत्व माने जाते हैं विचार, भावनाएं एवं क्रियाएं। योग करने से व्यक्ति के जीवन में ये मूल तत्व तथा कई मूलभूत परिवर्तन या रूपान्तरण आते हैं जो जीवन के लिये आवश्यक है। योग करने वाला व्यक्ति सात्विक व अहिंसक प्रवृत्ति से युक्त होता है अर्थात् राजसिक, तामसिक व हिंसक समृद्धि में विश्वास नहीं रखता है। योग व्यक्ति व समष्टि (Population) में संतुलन बनाये रखता है। योग से व्यक्ति के जीवन में आध्यात्मिक व विवेकपूर्ण विचारधाराओं का प्रवाह करता है।

योग एक गूढ़, अत्यन्त, उपयोगी व व्यावहारिक विषय है। यह रूपांतरण का विज्ञान (Science of Transformation) है। योग केवल साधु, संतों व ऋषि मुनियों के लिये ही नहीं बल्कि प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह व्यापारी, किसान, नौकरीपेशा व्यक्ति, मजदूर एवं विद्यार्थी हो, सभी के उत्कृष्ट देन है।

योग एक अत्यन्त प्राचीन भारतीय जीवन शैली है योग शिक्षा से शरीर निरोग और चुस्त बनता है तथा योग द्वारा व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है। 21 जून 2015 को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाया गया। दुनिया के अधिकतर देशों ने योग के महत्व को समझा है।

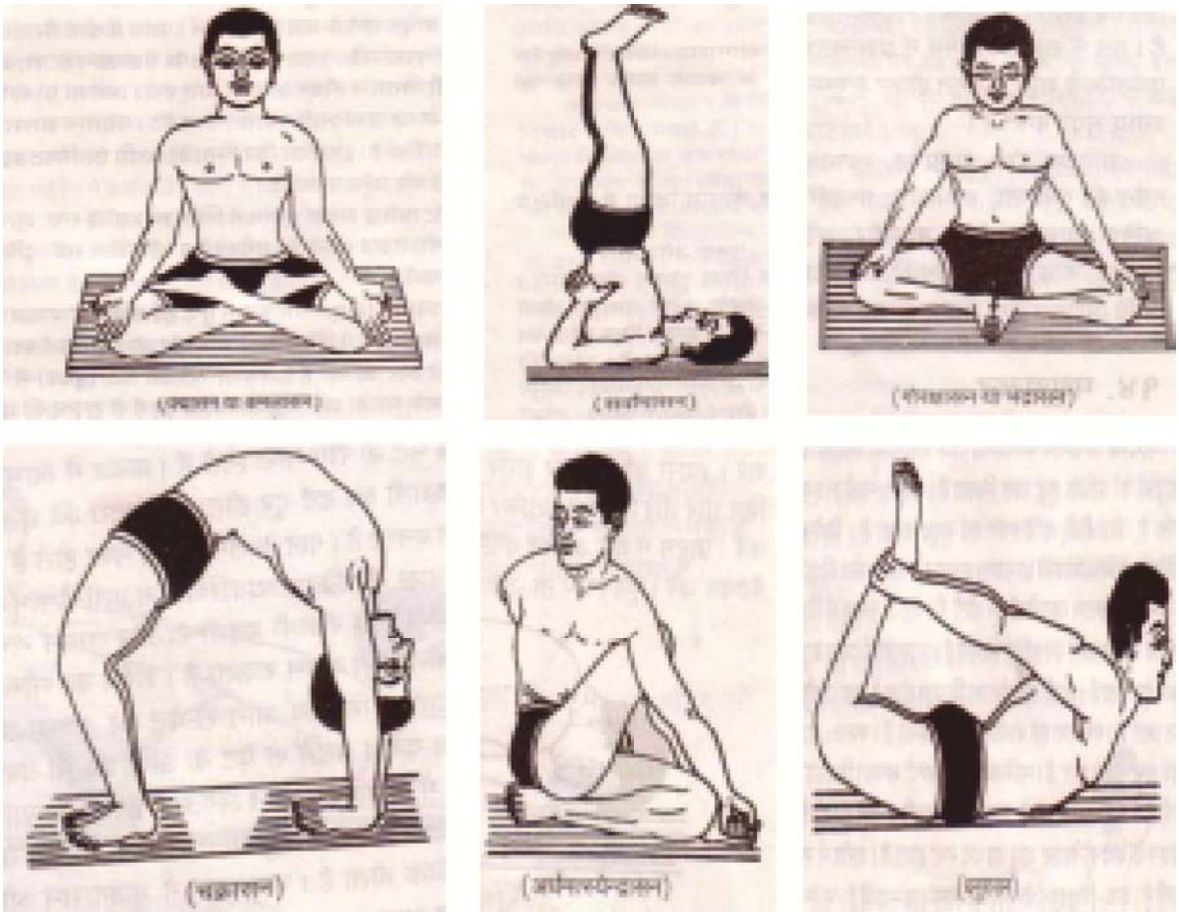

चित्र 14.9 : विभिन्न प्रकार योगासन

अष्टांग योग

महर्षि पातंजलि ने शरीर, मन और आत्मा की शुद्धि के लिये योग के आठ चरण बताये हैं। जिन्हें हम अष्टांग योग के नाम से जानते हैं। अष्टांग योग निम्न हैं–

(1) यम – (सामाजिक अनुशासन) – यम अष्टांग योग का प्रथम तत्व है इसे अपनाने से इन्द्रियों एवं मन को हिंसादि जैसे अशुभ भावों से हटाकार आत्मकेन्द्रित किया जाता है, इसे यम कहते हैं।

(2) नियम – (व्यक्तिगत अनुशासन) – नियम द्वारा व्यक्ति जीवन में अनुशासन का तौर–तरीका सीखता है और इसे अपनाने से व्यक्ति के अच्छे चरित्र का निर्माण होता है।

(3) आसन – किसी भी आसन में स्थिरता और सुखपूर्वक बैठना ही आसन कहलाता है (चित्र 14.9)।

(4) प्राणायाम – (सांस का नियंत्रण व नियमन) – शरीर में रहने वाली आवश्यक शक्ति (Vital force) को उत्प्रेरित, नियमित व संतुलित बनाना ही प्राणायाम का उद्देश्य है।

(5) प्रत्यहार – (इन्द्रियों पर अनुशासन) – बाह्य वातावरण से विमुख होकर मन और इन्द्रियों को अन्तर्मुखी करना ही प्रत्यहार है। प्रत्यहार के द्वारा ही साधक का इन्द्रियों पर पूर्ण अधिकार हो जाता है।

(6) धारणा – (एकाग्रता) – नाभिचक्र, हृदय–पुण्डरीक, भूमध्य, बहारन्ध, नासिकांग आदि शारीरिक प्रदेशों में से किसी एक स्थान पर मन का निग्रह या एकाग्र होना धारणा कहलाता है।

प्रत्यहार द्वारा जब इन्द्रियां एवं मन अन्तर्मुख होने लगे तब उनको किसी स्थान विशेष पर स्थिर करने का नाम ही धारणा है।

(7) ध्यान – (साधना) – जब व्यक्ति समय और सीमा के बंधन से मुक्त होकर अपना ध्यान केन्द्रित करता है तब वह ध्यान (साधना) कहलाता है।

(8) समाधि – (आत्म–अनुभूति) – इसमें व्यक्ति की पहचान, आन्तरिक और बाह्य रूप से ध्यान में खो जाती है। सुख–दुख या दरिद्रता से मुक्त होकर सर्वोच्च आनन्द की अनुभूति होती है। ध्यान की पराकाष्ठा समाधि है।

योग के द्वारा स्वास्थ्य पर प्रभाव :–

1. योग के द्वारा ऑक्सीजन युक्त रक्त प्रवाह निरन्तर बना रहता है जिससे आज की होने वाले कई रोग जैसे गठिया, सूजन, प्लेटलेट्स की कमी आदि को सही करने में मददगार होता है।

2. योग से व्यक्ति का शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य में विकास होता है।

3. योग से व्यक्ति के अन्तर्मन के अवसाद खत्म होते हैं जिससे अपराधिक मानसिकता में कमी होने लगती है।

4. नियमित रूप से योग करने से वृद्धावस्था में भी शारीरिक संतुलन बना रहता है।

5. योग करने से बालकों में स्वाध्याय, सहजता, व्यवहारिकता, भावनात्मकता, दृढ़निश्चयता व एकाग्रता आदि गुण विकसित होते हैं।

6. योग या प्राणायाम तंत्रिका तंत्र की उत्तेजना को शांत करता है जिससे आज की तनाव भरी ज़िन्दगी से छुटकारा मिलता है।

7. योग से प्रतिरक्षा तंत्र की प्रणाली की कार्यक्षमता बढ़ जाती है जिससे हमारा शरीर रोगों से बेहतर तरह से लड़ सकता है।

8. योग के द्वारा व्यक्ति को सही कार्य करने का मार्गदर्शन मिलता है। जिससे सकारात्मक स्वास्थ्य का बढ़ावा मिलता है।

9. योग और ध्यान के द्वारा व्यक्ति में जागरूकता का निर्माण होता है जिससे आज के प्रतिस्पर्धा वाले वातावरण में बालकों का क्रोध, विनाशकारी भावनाओं से मुक्त होता है तथा उन्हें सुविचारित दृष्टिकोण मिलता है।

10. योग द्वारा प्राप्त स्वस्थ शरीर से व्यक्ति में कर्म योग की भावना जागृत होती है। जिससे वह दूसरों व देश की सेवा करने में इच्छा रखता है।

11. योग द्वारा शरीर के भीतरी अंगों के पर्याप्त व्यायाम होते हैं। योग करने से व्यक्ति अच्छा स्वास्थ्य व दीर्घायु प्राप्त करता है।

12. योग से शरीर की प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है।

13. शरीर अधिक लचीला बनता है।

14. मन को शांत करने तथा इन्द्रियों को काबू करने के लिये योगासन शारीरिक व मानसिक शक्तियों का विकास करता है।

15. विभिन्न योगासनों द्वारा रक्त शुद्ध होता है।

16. योग 'अहिंसक गतिविधि' है। इससे व्यक्ति में नैतिक मूल्यों का विकास होता है।

17. योग शरीर की ग्रंथियों को उत्कृष्ट करता है जिससे शरीर का संतुलित विकास होता है।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि योग द्वारा व्यक्ति का सर्वांगीण विकास व आजीवन निरोग रहता है।

14.11 नागार्जुन का जीवन परिचय

(Life History of Nagarjuna)

नागार्जुन प्राचीन भारत के रसायन–शास्त्र के एक प्रख्यात विद्वान थे। उनका जन्म सोमनाथ के निकट गुजरात में दैहक नामक जिले में हुआ। उनका समय सातवीं–आठवीं शताब्दी के आस–पास माना जाता है। यही समय आयुर्वेद धातुवाद का है। नागार्जुन एक रसायनज्ञ अर्थात् कीमियागर थे। नागार्जुन द्वारा लिखित ग्रंथ 'रस रत्नाकर' एवं 'रसेन्द्र मंगल' अत्यधिक प्रसिद्ध हैं।

'रस रत्नाकर' में धातुओं के संशोधन और उनके गुण–दोषों का निरूपण है, जिसमें पारे का उल्लेख (पारद प्रयोग) सबसे महत्वपूर्ण है। इसमें लिखित रासायनिक क्रियाएं आज भी वैज्ञानिकों को आश्चर्य में डाल देती हैं। इसमें रस (पारे के यौगिक) बनाने के प्रयोग दिये गए हैं एवं देश में धातुकर्म और कीमियागरी के स्तर का सर्वेक्षण भी दिया गया है। इस ग्रंथ में चांदी, सोना, टिन आदि धातुओं को शुद्ध करने के तरीकों का वर्णन भी किया गया है।

पारे से संजीवनी एवं अन्य पदार्थ बनाने के लिये नागार्जुन ने पशुओं, वनस्पति तत्वों, अम्ल एवं खनिजों का भी इस्तेमाल किया। कई धातुओं को घोलने के लिये उन्होंने वनस्पति से निर्मित तेजाबों का भी सुझाव दिया। बहुत से वैज्ञानिकों ने नागार्जुन के ग्रंथों से रसायन विज्ञान का विशेष ज्ञान प्राप्त किया। नागार्जुन ने अपनी पुस्तक में कई महत्वपूर्ण रासायनिक प्रक्रियाओं का वर्णन किया जैसे– आसवन (डिस्टीलेशन), ऊर्ध्वपातन (सब्ली मेशन), द्रवण (लिक्वीफेक्शन) आदि। ये सभी प्रक्रियाएं आज रसायन विज्ञान में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। कई धातुओं से सोना या सोने के समान पीली चमक वाली धातुओं को बनाने की विधियों का वर्णन भी नागार्जुन ने अपनी पुस्तक में किया है। इन सभी तथ्यों से यह स्पष्ट है कि नागार्जुन को विभिन्न वस्तुओं के रासायनिक गुणों का अद्भुत ज्ञान था। कीमियागरी से ही आधुनिक रसायन विज्ञान का जन्म हुआ। इसलिए भारत में नागार्जुन को धातुवाद का प्रवर्तक माना गया है। नागार्जुन ने पारे की भस्म तैयार करने की विधि का भी वर्णन किया एवं इस विधि द्वारा पारे के प्रयोग से शरीर दीर्घकाल तक निरोग रह सकता है।

नागार्जुन ने 'सुश्रुत संहिता' नामक पुस्तक का संपादन किया तथा सुश्रुत संहिता में 'उत्तर तंत्र' नामक नया अध्याय जोड़ा। इसमें औषधियां बनाने के तरीके दिये गए हैं। नागार्जुन ने आयुर्वेद की 'आरोग्य मंजरी', 'योगसार', 'योगाष्टक' आदि ग्रंथों की भी रचना की। एक अनुभवी रसायन शास्त्री होने के कारण कई वैज्ञानिकों ने अपनी खोजों में उनके ज्ञान का सहारा लिया।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. सन्तुलित आहार वह है जिसमें समस्त पोषक तत्व (कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, जल तथा खनिज लवण) उचित मात्रा में विद्यमान हो।

2. फास्ट फूड व सिन्थेटिक पेय पदार्थ हमारे शरीर को नुकसान पहुंचाते हैं एवं धीरे–धीरे गंभीर बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं।

3. कुपोषण से अभिप्राय संतुलित आहार न मिलने से है। आहार में एक या अधिक पोषक तत्वों की कमी से होने वाले रोग को कुपोषण या हीनताजन्य रोग कहते हैं।

4. प्रोटीन की कमी से क्वाशियोरकोर व मैरेस्मस रोग हो जाते हैं।

5. कैल्शियम की कमी से हड्डियों, पेशियों में दर्द एवं ऐंठन जैसे लक्षण दिखते हैं जिसके कारण बार–बार फ्रेक्चर की शिकायत रहती है।

6. आयोडीन की कमी से गलगंड या घेंघा रोग हो जाता है।

7. विटामिन 'B_1' की कमी से बैरी–बैरी रोग होता है। विटामिन 'C' की कमी से स्कर्वी रोग होता है।

8. रोग जो विभिन्न जीवित कारक जैसे – जीवाणु, वायरस, प्रोटोजोआ द्वारा उत्पन्न होते हैं। इनका संचरण एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में होता है तो इसे संक्रामक रोग कहते हैं। उदाहरण – एड्स, पीलिया, क्षयरोग आदि।

9. एड्स बीमारी एच.आई.वी. वायरस द्वारा फैलती है।

10. रोग जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में स्थानान्तरित नहीं होते हैं उन्हें असंक्रामक रोग कहते हैं। यह केवल रोगी तक सीमित रहने वाले रोग हैं। उदाहरण – मधुमेह व कैंसर आदि।

11. योग से व्यक्ति का शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य में विकास होता है।

12. महर्षि पातंजलि को 'योग के पिता' कहा जाता है।

13. नागार्जुन प्राचीन भारत के रसायन–शास्त्र के प्रख्यात विद्वान थे।

14. नागार्जुन ने 'सुश्रुत संहिता' नामक पुस्तक का संपादन किया तथा सुश्रुत संहिता में 'उत्तर तंत्र' नामक नया अध्याय जोड़ा।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. क्वाशियोरकोर रोग किस भोजन अवयव की कमी से होने वालो रोग है–
   (अ) कार्बोहाइड्रेट (ब) प्रोटीन
   (स) वसा (द) खनिज लवण

2. निम्न में से जन्मजात रोग नहीं है–
   (अ) कुष्ठ रोग (ब) टिटेनस
   (स) मलेरिया (द) चिकन पोक्स
   (य) कोई नहीं

3. भोजन का वह घटक जिसको ऊर्जा का प्रमुख स्त्रोत माना गया है?
   (अ) वसा (ब) कार्बोहाइड्रेट
   (स) प्रोटीन (द) जल

4. विटामिन 'डी' की कमी से होने वाला रोग है–
   (अ) कुष्ठ रोग (ब) टिटेनस
   (स) मलेरिया (द) चिकन पोक्स
   (य) कोई नहीं

5. एड्स रोग का प्रसार नहीं होता है–
   (अ) रक्त द्वारा (ब) माता से संतानों को
   (स) स्पर्श द्वारा (द) यौन सम्बन्ध द्वारा

6. योग द्वारा व्यक्ति में कौनसा लक्षण निर्मित होता है–
   (अ) स्वाध्याय (ब) सकारात्मक दृष्टिकोण
   (स) अनुशासन (द) उपरोक्त सभी

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

7. संतुलित भोजन के घटक व मुख्य स्त्रोत क्या है?
8. शरीर के लिए आवश्यक विटामिन्स के नाम बताइये।
9. आयोडीन की कमी से होने वाले रोग का नाम दीजिये।
10. वायरस जनित किन्हीं दो रोगों के नाम बताइये।
11. डेंगू रोग के लक्षण व उपचार क्या है?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

12. फास्ट फूड से शरीर पर होने वाले प्रभाव को समझाइये।
13. कुपोषण किसे कहते हैं इसके कारण व इससे होने वाले किन्हीं दो रोगों का नाम दीजिये।
14. संतुलित भोजन किसे कहते हैं? खनिज लवण की संतुलित भोजन में क्या भूमिका है तथा इसकी कमी से होने वाले रोगों का वर्णन कीजिये।

निबंधात्मक प्रश्न

15. रोग कितने प्रकार के होते हैं? संक्रामक व असंक्रामक

रोगों में सउदाहरण अन्तर स्पष्ट कीजिये। रोगों की उत्पत्ति के कारकों को भी समझाइए।

16. योग क्या है? कुछ महत्वपूर्ण योगों के नाम देते हुए योग का स्वास्थ्य पर प्रभाव की व्याख्या कीजिये।
17. पातंजलि व नागार्जुन के जीवन परिचय को समझाइये।

उत्तर सारणी

प्रश्न	1	2	3	4	5	6
उत्तर	ब	य	ब	य	स	द

अध्याय 15

प्राकृतिक सम्पदा एवं कृषि
(Natural Resources and Agriculture)

हम जानते हैं कि पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है जहाँ जीवन विद्यमान है। जीवन के लिये ताप, जल तथा भोजन की आवश्यकता होती है। पृथ्वी पर उपलब्ध सभी प्रकार के जीवों की मूल आवश्यकता की पूर्ति के लिये सूर्य से उर्जा तथा पृथ्वी पर उपलब्ध सम्पदा की आवश्यकता होती है। हम हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति प्रकृति से प्राप्त वायु, जल, मृदा, पेड़, प्राणी आदि से करते हैं। प्रकृति से प्राप्त इन वरदानों का मनुष्य संसाधन के रूप में उपयोग करता है। वास्तव में मनुष्य भी संसाधन है क्योंकि मनुष्य अपने ज्ञान के उपयोग से अन्य संसाधनों को विकसित करता हैं। कोई भी भौतिक पदार्थ उस स्थिति में संसाधन बन जाते हैं, जब मनुष्य उसे उपयोगी समझता है एवं उसमें कुछ मूल्य जुड़ जाता है। मूल्य आर्थिक, नैतिक एवं सौदर्न्ययुक्त हो सकते हैं। कोई भी पदार्थ जो प्रकृति से प्राप्त होता है एवं जिसका उपयोग मनुष्य के साथ–साथ सभी सजीव करते हैं, प्राकृतिक संसाधन या प्राकृतिक सम्पदा कहलाते हैं, जिनमें मुख्यतः वायु, जल, मृदा, खनिज, जीवाश्म ईधन, पादप व जन्तु हैं।

15.1 वायु, जल व मृदा का महत्व (Significance of Air, Water And Soil) :– पृथ्वी के चारों ओर वायुमण्डल का एक मोटा आवरण है। यह भूमि सतह से 300 किमी. ऊँचाई तक फैला हुआ है। इसकी 92% वायु 20 किमी. ऊँचाई तक वितरित है।

इस आवरण में विभिन्न अनुपात में विभिन्न गैसें पायी जाती हैं। वायुमण्डल में आयतन के अनुसार नाइट्रोजन78.09%, ऑक्सीजन 20.95%, कार्बन डाई–ऑक्साइड 0.03% व हाइड्रोजन 0.00006% पायी जाती है। इन गैसों के अतिरिक्त वायुमण्डल में आर्गन, नियोन, हीलियम आदि गैसें पायी जाती हैं।

वायुमण्डल में उपस्थित गैसें पादपों व प्राणियों के लिये परम आवश्यक हैं। प्रकृति में ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन डाइ–ऑक्साइड का चक्र वायुमण्डल और मृदा व सजीवों के मध्य चलता है, जिससे प्रकृति में सन्तुलन बना रहता है। प्रत्येक जीवधारी श्वसन क्रिया में वायुमण्डल की ऑक्सीजन का उपयोग करता है। पौधे सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में वायुमण्डल की कार्बन डाइ–ऑक्साइड का उपयोग

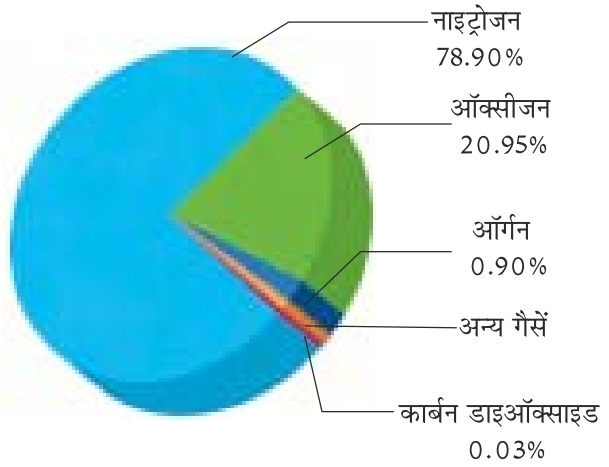

चित्र 15.1 वायु का संगठन

प्रकाशसंश्लेषण की क्रिया द्वारा भोजन बनाने में करते हैं। इसी प्रकार नाइट्रोजन पौधों के लिये आवश्यक है। नाइट्रोजन का मृदा तथा वनस्पति ऊतकों में पाये जाने वाले जीवाणु व शैवाल स्थिरीकरण करके मृदा की उर्वरता बढ़ाने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। वायुमण्डल पृथ्वी को कंबल के समान ढ़के हुए है। हम जानते है कि वायुमण्डल उष्मा का कुचालक है। यह पृथ्वी के औसत तापमान को नियत रखता है।

पृथ्वी तल पर पाये जाने वाले पदार्थो मे सर्वाधिक बाहुल्य जल का है। पृथ्वी तल का 70% से अधिक भाग जल–निमग्न है। पृथ्वी की सतह पर पाया जाने वाला अधिकतर जल समुद्र और महासागरों में है। यह जल लवणीय होता है। अलवणीय जल बर्फ के रूप में ध्रुवों पर, भूमिगत जल, नदियों, झीलों और तालाबों में पाया जाता है। जल जीवित कोशिकाओं के जीवद्रव्य का एक आवश्यक घटक है। जल एक सार्वत्रिक विलायक भी है, जिसमें सभी पोषक तत्व घुलकर पादप शरीर में प्रवेश करते हैं। कोशिका में होने वाली समस्त उपापचयी क्रियाएँ द्रव माध्यम में सम्पन्न होती हैं। इस प्रकार जीव की समस्त जीवन क्रियाएँ जल पर निर्भर करती हैं। इसके अतिरिक्त वृद्धि, पादप समुदायों के प्रकार तथा वितरण को नियन्त्रित करने में जल एक महत्वपूर्ण कारक है।

मृदा भूमि सतह की ऊपरी उपजाऊ परत है तथा इसका निर्माण चट्टानों के अपक्षय से हुआ है। पौधों व जन्तुओं के अवशेषों का सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटन होने से जो कार्बनिक

पदार्थ बनते हैं वे इन चट्टानों के कणों से मिश्रित होकर वास्तविक मृदा का निर्माण करते हैं। मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों द्वारा पौधों व जन्तुओं के मृत भागों के अपघटन के पश्चात् एक काले रंग के कार्बनिक पदार्थ का निर्माण होता है, जिसे ह्यूमस **(Humus)** कहते हैं। ह्यूमस पादप पोषकों का भण्डार है। पौधों को N, P, K, Ca व अन्य खनिज व लवण मृदा से ही प्राप्त होते हैं।

15.2 वायु की गति (Movement of Air)

वायुमण्डलीय कारकों में पवन एक महत्वपूर्ण कारक है जो मुख्यतः मैदानी भागों, समुद्री किनारों तथा ऊँचें पर्वतों पर जीवों को प्रभावित करती है। पृथ्वी के धरातल पर वायुदाब की भिन्नता के कारण वायु में गति उत्पन्न होती है, जिसे पवन कहते हैं। वायुदाब की भिन्नता का कारण असमान तापन है। विषुवतरेखीय क्षेत्र उत्तरी तथा दक्षिणी क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक उष्मा उत्पन्न करते हैं, फलस्वरूप विषुवतरेखीय क्षेत्रों में अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा वायुदाब कम होता है। अतः पवन सामान्यतः ध्रुवों से विषुवत रेखा की ओर बहती है। पवन की गति स्थानानुसार अनेक कारकों जैसे भौगोलिक स्थिति, स्थलाकृति, ऊँचाई, समुद्र किनारे से दूरी तथा वनस्पति संहति आदि पर निर्भर करती है। पवन पादप जीवन को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से प्रभावित करती है।

तेज गति से चलने वाली पवन के कारण पादपों में विशेषकर वृक्षों की शाखायें टूट जाती है। सदैव एक ही दिशा में तेज गति की पवन, पौधों की मूल आकृति में स्थायी परिवर्तन कर देती है। तेज गति से चलने वाली पवन भूमि की ऊपरी उपजाऊ मृदा को उड़ा ले जाती है। वायु की गति का मापन एनिमोमीटर (Anemometer) या पवन वेगमापी से करते है।

15.3 प्रदूषण (Pollution)

जनसम्पर्क माध्यमों जैसे टेलीविजन, समाचार–पत्रों, सम्मेलनों, विज्ञान व अन्य पत्रिकाओं सभी में 'पर्यावरण प्रदूषण, 'आधुनिक युग का एक बहुचर्चित विषय व आधुनिक सभ्यता द्वारा उत्पन्न एक गम्भीर व भयावह समस्या है। अतः यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन गयी है।

शब्दकोष में प्रदूषण (Pollution) शब्द का अर्थ 'गंदा या अस्वच्छ करना', 'अपवित्र करना', 'दूषित करना' है। एक सरल परिभाषा के अनुसार ''प्रदूषण वायु, जल व मृदा के रासायनिक, भौतिक व जैविक गुणों में होने वाला ऐसा अवांछनीय परिर्वतन है, जो कि मानव जीवन, जीवन की परिस्थितियों व प्राकृतिक धरोहर के लिए अत्यन्त हानिकारक है।

मानव द्वारा निर्मित, उपयोग करने के बाद फेंक दिये गये पदार्थ ही प्रदूषक (**Pollutants**) है। गत्ते, धातु, प्लास्टिक की थैलियाँ, इमारतों के बनने के बाद बचे पत्थर, कंकर, चूना, विभिन्न प्रकार के कारखानों से निकले रेशें, लकड़ी का बुरादा, लोहे की छीलन, उपयोग में लाये गये पीड़कनाशियों (Pesticides) व शाकनाशियों (Herbicides), स्वचालित वाहनों के रेचन (exhaust), औद्योगिक अपशिष्ट– ये सभी, मानव क्रियाओं के उप–उत्पादों के रूप में प्रदूषक हैं।

प्रदूषण निम्नांकित प्रकार के होते हैं।

15.3.1 वायु प्रदूषण (Air Pollution) :– वायु में ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा, प्रकाशसंश्लेषी क्रियाविधि के विकास का ही परिणाम है। शुष्क वायु में लगभग 79% नाइट्रोजन, 20.9% ऑक्सीजन 0.03% कार्बन डाई–ऑक्साइड व शेष भाग में अन्य गैसें निओन, हीलियम, क्रिप्टॉन आदि होती है। जीवों के श्वसन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन तथा प्रकाश संश्लेषण के लिये आवश्यक CO_2 (कार्बन डाईऑक्साइड) का मुख्य स्रोत वायुमण्डल ही है। वायुमण्डलीय प्रदूषण का मुख्य कारण मानव है। कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन मिश्रण व वायु मे निलंबित सूक्ष्म कालिख, धुंआ व धूल के कण वायु के मुख्य प्रदूषक है। इन सभी प्रदूषकों का स्रोत उद्योगों व घरों में कोयला, पेट्रोल, गैसों का भट्टियों,चूल्हों व अंगीठियों तथा स्वचालित वाहनों में जलना है।

चित्र – 15.2 वायु प्रदूषण

(अ) धुआँ (**Smoke**) :– कोयले व अन्य प्राकृतिक ईधनों के जलने से निकलने वाले धुएँ के साथ सल्फर (गंधक) के कई ऑक्साइड निकलते हैं। सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2) एक हानिकारक प्रदूषक है यह नेत्र, फुफ्फुस व गले की श्लेष्मा झिल्ली को प्रभावित कर कई रोग पैदा करती है। SO_2 पौधों में रंध्रों द्वारा प्रवेश कर जल के साथ H_2SO_4 बनाता है। यह अम्ल पर्णहरित को विघटित करता है। लाइकेन व ब्रायोफाइट पादप SO_2 से शीघ्र प्रभावित होते हैं। यह गैस इन्हें मार देती

है। लाइकेन को इस प्रदूषक का 'सूचक' (**Indicator**) माना जाता है।

धुआँ, कुहरे के साथ मिलकर धूम–कुहरा (Smog) बनाता है। इसमें SO_2, O_2 से अभिक्रिया कर SO_4 बनाती है जो जल के साथ H_2SO_4 (गंधक का अम्ल) बन जाता है। यह अम्ल इमारतों के पत्थरों व दीवारों को संक्षारित (Corrode) करता है। मथुरा में पैट्रोल शोधन कारखाने के स्थापित होने से इस अम्ल से ताजमहल के संगमरमर (Marble) के संक्षारित होने की आशंका बढ़ गयी है।

प्राकृतिक ईधनों के जलने से निकली NO_2 गैस ऑक्सीकृत हो NO_3 बनाती है। यह NO_3 जल के साथ मिलकर हानिकारक HNO_3 (नाइट्रिक अम्ल) बनाती है जो वर्षा के जल के साथ भूमि पर आ जाता है। यह वर्षा 'अम्लीय वर्षा' (**Acid rain**) होती है। अम्लीय वर्षा से मृदा की अम्लीयता बढ़ जाती है जो मृदा के उपजाऊपन को नष्ट करती है। यह इमारतों, रेल–पटरियों, स्मारकों, मूर्तियों को संक्षारित कर क्षति पहुँचाती है। ईधन के अपूर्ण दहन से CO (कार्बन मोनो–ऑक्साइड) बनती है। वायुमण्डलीय कुल प्रदूषकों का लगभग 50% CO है। श्वास के साथ यह विषाक्त गैस मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर रूधिर के हीमोग्लोबिन से संयोजित हो जाती है। इस संयोजन की दर हीमोग्लोबिन ऑक्सीजन संयोजन की दर से 210 गुना अधिक है। परिणामतः मनुष्य के शरीर में O_2 की कमी हो जाती है।

धुएँ के अन्य कणीय अंश जैसे कि कालिख (Soot), टार, धूलकण आदि प्रकाश को कम कर देते है। ये भूमि पर धीरे–धीरे जमते है और पशु व मनुष्य के शरीर में, श्वसन द्वारा जाकर श्वासनली व फेंफड़ों के रोग पैदा करते हैं। ये धातु, पेन्ट की हुई सतहों, वस्त्रों, कागज व चमड़े को क्षति पहुँचाते हैं।

(ब) स्वचालित वाहन रेचन (**Automobile Exhaust**) :– वाहनों में पेट्रोल व डीजल के जलने से निकलने वाली वे सभी गैसें है जिनका अध्ययन हमने धुएँ के अन्तर्गत किया है। वायु प्रदूषण के 60 प्रतिशत प्रदूषण के लिय यही विरेचक उत्तरदायी है। औसत 1000 गैलन पैट्रोल के जलने से लगभग 3200 पांउड CO, 200–400 पाउंड कार्बनिक–वाष्प, 20.75 पाउंड नाइट्रोजन के ऑक्साइड, 2 पाउंड कार्बनिक अम्ल, 2 पाउंड अमोनिया व 0.3 पाउंड ठोस कार्बन कण निकलते हैं।

हाईड्रोकार्बन के अपूर्ण दहन से बनने वाला 3–4 बैन्जिपायरिन, फुफ्फस कैन्सर का कारण है। नाइट्रोजन के ऑक्साइड आँखों में जलन, नाक व श्वास नली के रोग उत्पन्न करते हैं।

15.3.2 जल प्रदूषण (**Water Pollution**) :–

जलाशय, मीठे जल के बड़े तालाब, झीलें तथा नदियाँ मानव व जन्तुओं के लिये पेयजल के मुख्य स्रोत हैं। अधिकांश कस्बे, बड़े शहर व औद्योगिक नगर भी इन्ही जल स्रोतों के निकटवर्ती क्षेत्रों में बसे हुए है। घरेलू अपशिष्ट व औद्योगिक अपशिष्ट इन्हीं जल स्त्रोतों में प्रवाहित किये जाते हैं। जल प्रदूषण विकासशील व विकसित राष्ट्रों में अब एक गम्भीर समस्या बन गयी है। इन स्रोतों का प्रदूषण विभिन्न प्रदूषकों जैसे वाहित मल (Sewage), कार्बनिक अपमार्जकों (Detergents), जल में विलयित पीड़कनाशी व कीटनाशी, औद्योगिक द्रव अपशिष्ट में घुले कार्बनिक व अकार्बनिक रसायनों, हानिकारक सूक्ष्मजीव, नदी–नालों के साथ बहकर आने वाले मृदा अवसाद (Soil sediment) के कारण होता हैं।

चित्र – 15.3 जल प्रदूषण

(अ) वाहित मल (**Sewage**) :–यह अधिकांशतः कार्बनिक पदार्थ होते हैं जो सूक्ष्मजीवों द्वारा CO_2 व जल में ऑक्सीकृत कर दिये जाते हैं। अतः जल स्रोत में विसर्जित वाहित मल का अनुपात यदि कम है तो जल प्रदूषित नहीं हो पायेगा। जैव विघटन द्वारा अधिकांश अपशिष्ट ऑक्सीकृत हो जाते हैं। लेकिन यदि झील या नदी में अधिक वाहित मल को विसर्जित किया जाता है, तो सूक्ष्मजीवों की आबादी बहुत बढ़ जायेगी और उनकी श्वसन क्रिया में जल में घुलित ऑक्सीजन समाप्त हो जायेगी तथा उसी अनुपात में जल में CO_2 की मात्रा बढ़ जायेगी। O_2 के अभाव में मछलियाँ व अन्य जलीय जन्तु व पौधे मर जायेंगे और नदी या झील एक बदबूदार जलाशय बन जायेगा।

एक इकाई आयतन जल में निर्धारित समय में O_2 के उपयोग की मात्रा ज्ञात करके कार्बनिक प्रदूषकों की मात्रा का

अनुमान लगा लेते हैं। इस प्रकार के मापन को जैवरासायनिक आवश्यक ऑक्सीजन (**Biological Oxygen Demand - BOD**) कहते हैं।

चमड़े के कारखानों, पशु वधशालाओं, यात्री जहाजों व नौकाओं द्वारा विसर्जित वाहित मल में अनेक संक्रामक जीवाणु होते हैं जो मानव व जन्तुओं में कई रोगों (जैसे– हैजा, टायफॉयड, पीलिया) के कारक हैं। वाहित मल जलीय जीवों के पोषक है और जलाशयों को अधिक उर्वर या सुपोषी (Eutrophic) बनाते हैं। सुपोषकों से शैवालों की वृद्धि तेजी से होती है और अल्प काल में ही जलाशय, झील, नदी आदि शैवालों की सघन फूली हुई वृद्धि से भर जाती है। इसे 'शैवाल ब्लूम' **(Algal bloom)** कहते हैं। शैवालों के मरते रहने से इनका जीवाणुओं द्वारा अपघटन भी होता जाता है, जिससे जल में O_2 की कमी हो जाती है। साथ ही साथ प्रदूषण बढ़ता जाता है। ऐसी अवायवीय परिस्थितियों में अनेक जलीय पौधे व मछलियाँ मर जाती हैं।

(ब) विभिन्न उद्योगों द्वारा द्रव अपशिष्ट विसर्जन : विभिन्न उद्योगों जैसे पेट्रो–रसायन, उर्वरक, तेल शोधन,औषधि, रेशे, रबर, प्लास्टिक आदि के कारखानों से निकला द्रव– अपशिष्ट नदियों के लिये गम्भीर प्रदूषक है। इन कारखानों मे से निकलने वाले अपशिष्टों में अनेक विषाक्त रसायन व अम्ल घुले रहते हैं। ये जल को दूषित करते हैं तथा भूमि में रिसकर, भूमि तल के जल को भी प्रदूषित कर देते हैं। इन द्रव अपशिष्टों के कारण झीलों का जल विषाक्त हो जाता है और इनमें रहने वाले पेड़ पौधे मर जाते हैं। जन्तुओं तथा मनुष्यों द्वारा इस जल को पीने से अनेक गम्भीर रोग हो जाते हैं। ये विषाक्त पदार्थ एक जीव से दूसरे जीव में खाद्य श्रृंखला द्वारा स्थानान्तरित हो जाते हैं। रसायन उद्योग व पारा खनन द्वारा पारा, द्रव अपशिष्ट के रूप में नदियों और फिर समुद्री जल में पहुँच जाता है। स्वचालित नौकाओं के विरेचन में भी पारा व सीसा होता है और जल में मिलता जाता है। यह अत्यन्त विषाक्त मिथाइल पारा बनाता है जो जलीय जन्तुओं के तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है। जल का दूसरा धातु प्रदूषक सीसा (Lead) है। यह सीसा खनन व स्वचालित जलवाहन रेचकों द्वारा जल में पहुंचता है तथा जन्तुओं में खाद्य श्रृंखला द्वारा पहुँचकर, विषाक्त प्रभाव दिखाता है।

(स) प्रदूषक के रूप में रासायनिक उर्वरक :– कृषि उत्पादन में वृद्धि करने हेतु रासायनिक उर्वरकों जैसे यूरिया, पोटाश, डाइअमोनियम फास्फेट आदि का उपयोग किया जाता है। ये उर्वरक जल के साथ बहकर जलाशयों में आ जाते हैं। इस कारण 'शैवाल ब्लूम' **(Algal bloom)** बनते हैं।

(द) पीड़कनाशी व कीटनाशी :– फसल के रोगाणुओं व कीटों का नाश करने हेतु पीड़कनाशियों व कीटनाशियों का उपयोग बड़े पैमाने पर किया जाता है। पीड़कनाशक DDT का उपयोग कृषि में नाशक जीवों को नष्ट करने व मच्छरों का नाश करने में किया जाता है। इसका अधिक उपयोग अब एक गम्भीर मृदा व जल प्रदूषक बन गया है।

ये सभी अविघटनीय कार्बनिक यौगिक हैं। इनके लगातार उपयोग से मृदा व जल में इनकी सांद्रता बढ़ती जाती है। ये रसायन 'जैविक आवर्धन' (**Biological magnification**) भी प्रदर्शित करते हैं। इन हानिकारक रसायनों की सांद्रता उत्तरोतर पोषस्तरों में बढ़ती जाती है। जब पादप शरीर में DDT की सांद्रता बढ़ती जाती है तब इन पर निर्भर शाकाहारी कीटों, मछलियों द्वारा, इन पादपों का भक्षण, इन उपभोक्ताओं में DDT की सांद्रता को और अधिक बढ़ा देता है। इसी क्रम में खाद्य श्रृंखला के अंतिम मांसाहारी उपभोक्ताओं में DDT सांद्रता का वृद्धि होना हानिप्रद हो जाता है। मानव द्वारा इन मछलियों को खाने से उनका स्वास्थ्य गम्भीर रूप से प्रभावित हेाता है। प्रदूषित जल पीने योग्य नहीं होता है। इसमें प्रायः एक विशिष्ट प्रकार की दुर्गन्ध आती है। यह नहाने–धोने के लिये भी उपयुक्त नहीं होता है। इसमें अनेक रोगों (टायफायड, हैजा,व पीलिया आदि) के रोगाणु होते हैं। ये रोग प्रदूषित जल के पीने से ही फैलते हैं।

15.3.3 ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)

कई प्रकार के कार्यों में जो हम करते हैं उनमें ध्वनि उत्पन्न होती है। वार्ता व संगीत ध्वनि कर्णप्रिय होती है और हम इनका आनन्द लेते हैं। जब कहीं अनचाही, अवांछनीय ध्वनि उत्पन्न होती है हम इसे शोर (Noise) कहते हैं। ध्वनि की प्रबलता जब इतनी बढ़ जाती है कि यह हमें प्रकोपित करने लगे तो ऐसे शोर को हम ध्वनि प्रदूषण **(Noise Pollution)** कहते हैं। धीमी मर्मर ध्वनि (Whisper) और वायुयान के इंजन द्वारा उत्पन्न शोर में ध्वनि प्रबलता का ही अंतर है। अतः इन दोनों ध्वनियों को अभिव्यक्त करने के लिये ध्वनि ही मापक इकाई होती है। इसे डेसिबल (**Decibel**) कहते हैं। इस मापक इकाई को प्रसिद्ध वैज्ञानिक ग्रेहम बेल (**Graham bell**) ने प्रस्तुत किया था। इसे **db** द्वारा व्यक्त किया जाता हैं। शून्य स्तर की ध्वनि से प्रारम्भ होकर, शान्त स्थलों जैसे पुस्तकालय, रेडियो–ध्वनि, अभिलेखन कक्ष आदि

में ध्वनि 30db होती है। घरों में शांत अध्ययन कक्ष में, हल्के वाहनों की आती ध्वनि लगभग 50db होती है। सामान्य वार्तालाप में यह 50db होती है। ट्रकों व बसों के द्वारा उत्पन्न ध्वनि 90db होती है। कारखानों में मशीनों द्वारा उत्पन्न ध्वनि 100db तथा जैट वायुयान के चलने पर 180db की ध्वनि उत्पन्न होता है।

चित्र – 15.4 ध्वनि प्रदूषण

80db से अधिक की कोई भी ध्वनि एक प्रदषक है जो हमारी श्रवण क्षमता के लिये हानिकारक है। 100db के शोर में हम विचलन व बैचेनी अनुभव करने लगते है और 120db से अधिक का शोर सिर में वेदना उत्पन्न करता है। प्रबल शोर हमारे भौतिक–पर्यावरण को क्षति पहुँचाता है। ध्वनि गति से भी तेज चलने वाले सुपरसोनिक जेट अपने पीछे ध्वनि तरंगों को छोड़ता जाता है। इन्हें 'ध्वनि बूम' (**Sonic boom**) कहते है। ध्वनि बूमों के भूमि सतह से टकराने पर, यह इमारतों को कमजोर करता है।

शोर वार्तालाप अवरोधक होता है। यह हमारी श्रवण क्षमता को कम करता है और मानसिक शांति को विक्षोभित करता है। घनी जनसंख्या वाले शहरों व औद्योगिक नगरों के शोर–शराबे में रहने वाले नागरिकों को अपेक्षाकृत कम आयु में ही कम सुनाई देता है। शोर मानसिक तनाव तथा हृदय गति को बढ़ाता है। अत्यधिक शोर यकृत व मस्तिष्क के कार्यों के लिये हानिकारक होता है। अचानक होने वाली प्रबल ध्वनि स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त हानिकारक होती है। इससे श्रवण शक्ति समाप्त हो जाती है या फिर मनुष्य मूर्छित भी हो सकता है।

शोर मानव शरीर में कई हानिकारक शरीर क्रियात्मक प्रभावों का कारण है। अधिक प्रबल शोर से नेत्र–पुतलियाँ प्रसारित हो जाती है, त्वचा पीली पड़ जाती है, ऐच्छिक पेशियाँ संकुचित होती हैं, जठर–रसों का स्रवण अवरूद्ध हो जाता है,रूधिर दाब बढ़ जाता है और रूधिर में एड्रिनेलीन हार्मोन की मात्रा बढ़ जाती है तो तंत्रिका–पेशीय तनाव व चिन्ता तथा बेचैनी बढ़ाता है।

15.3.4 मृदा प्रदूषण (**Soil Pollution**)

मृदा प्रदूषण में भूमि की ऊपरी सतह, जिसे मृदा (Soil) कहते हैं, अत्यधिक प्रभावित होती है। खनिज पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ, मृदा जल तथा सूक्ष्म जीव, मिलकर मृदा निर्माण करते है। भिन्न–भिन्न प्रकार की मृदाओं में इन घटकों का अनुपात भी भिन्न–भिन्न होता हैं। प्रत्येक मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुण निश्चित होते हैं। अतः मृदा के गुणों में अंवाछनीय परिवर्तन मृदा प्रदूषण कहलाता हैं।

मृदा प्रदूषण के स्रोत (**Sources of Soil Pollution**)

1. उद्योग **(Industry)** – विभिन्न उद्योगों में कागज व लुगदी बनाने, तेल शोधन, गलाने वाले, विभिन्न प्रकार के रसायन तैयार करने वाले, वनस्पति घी, शक्कर, शराब बनाने तथा उर्जा संयंत्र मृदा प्रदूषण के मुख्य स्रोत हैं। अधिकांश औद्योगिक भट्टियां राख उत्पन्न करती हैं। इसका मृदा प्रदूषण में काफी योगदान है।

2. खनन (**Mining**)– विभिन्न खनन प्रक्रियाओं मे धरातलीय प्रदूषण के साथ–साथ मृदा की ऊपरिमृदा (Topsoil) तथा अवमृदा (Subsoil) हट जाती है तथा पृथ्वी में गहरे गड्ढे बन जाते हैं।

3. कृषि **(Agriculture)** – रसायन विज्ञान के क्षेत्र में हुई क्रांति का सीधा प्रभाव कृषि के क्षेत्र में पड़ता है। कृषि से अधिक उत्पादन के लिये सिंचाई, उन्नत बीजों का उपयोग, उर्वरकों, पीड़कनाशी, कवकनाशी, शाकनाशी, रसायनों आदि का बहुतायत से प्रयोग किया जाता है। इन रसायनों का अत्यधिक उपयोग मृदा को गम्भीर रूप से प्रदूषित करता है।

4. घरेलू कचरा (**Garbage**) – घरेलू कचरे के अन्तर्गत कागज, कांच व कपड़े, लोहे व एल्युमिनियम के डिब्बे, प्लास्टिक डिब्बे, पॉलिथीन थैलियाँ, रबर, चमड़े की कतरन, पशु खांद, भवन निर्माण के अपशिष्ट आदि आते हैं। भूमि प्रदूषण में सबसे अधिक योगदान घरेलू कचरे का है।

5. रेडियोधर्मी पदार्थ (**Radioactive substance**) – रेडियोधर्मी पदार्थों के विघटन से एल्फा या गामा किरणें निकलती रहती है। परमाणु परीक्षण से निकलने वाले रेडियोधर्मी तत्व भूमि में प्रवेश कर जाते हैं।

6. मृतजीव (**Dead Organism**) – मृदा का प्रदूषण,

पशुओं एवं पक्षियों व अन्य जीवों के मृत शरीर से भी होता है।

मृदा प्रदूषण के प्रभाव (**Effects of Soil pollution**)

1. तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न समस्या को हल करने के लिए सीमित कृषि भूमि से अधिक उत्पादन आवश्यक है। इसके लिए भूमि में रासायनिक खाद तथा फसल को विभिन्न कीटों एवं रोगों से बचाने के लिए विभिन्न, कवकनाशी, पीड़कनाशी रसायनों का उपयोग किया जाता है। ये विषैले रसायन मृदा के लाभदायक सूक्ष्म जीवों को भी नष्ट कर देते हैं। जिससे मृदा निर्माण की प्रक्रिया रूक जाती है।

2. कीटनाशी, शाकनाशी, कवकनाशी रसायनों के छिड़काव से पौधों में प्रकाश संश्लेषण क्रिया मन्द हो जाती है।

3. निरन्तर सिंचाई तथा उर्वरकों के उपयोग से भूमि में लवणता बढ़ती है तथा अनेक अवांछित खनिजों की मृदा मे बहुलता हो जाती है फलस्वरूप भूमि की उर्वरता नष्ट हो जाती है।

4. क्लोरिन युक्त हाईड्रोकार्बन जैसे DDT, 2, 4-D, 2,4,5-T का अपघटन नहीं होने से मृदा मे एकत्रित होते रहते हैं। जल एवं खनिजों के अवशोषण के साथ–साथ ये प्रदूषक भी पौधों द्वारा अवशोषित हो, खाद्य श्रृंखला (Food chain) में प्रवेश कर जाते है एवं विभिन्न पोषण स्तरों को विषाक्त बना देते है।

5. कचरा (Garbage) भूमि के धरातल की सुन्दरता को तो नष्ट करता ही है साथ ही अत्यधिक कचरे के ढेर से निकलने वाली बदबू वायुमण्डल को प्रदूषित करती है।

6. खनन प्रक्रमों में किये जाने वाले विस्फोटों से क्षेत्र विशेष की कृषि उत्पादन क्षमता नष्ट हो जाती है।

7. परमाणु परीक्षण से रेडियोधर्मी तत्व वायुमण्डल की ऊपरी परतों में एकत्रित हो जाते हैं। जो वर्षा के जल के साथ भूमि अथवा जल में प्रवेश कर जाते हैं।

प्रदूषण प्रबन्ध
(**MANAGEMENT OF POLLUTION**)

निःसंदेह वातारण में प्रदूषण दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। वातावरणीय प्रदूषण को कम करने व इसकी नियमित व्यवस्था करने के लिये निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं।

(1) समाज के सभी स्तरों पर जनसाधारण को प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के बारे में, रूचिकर माध्यमों, चित्रयुक्त पुस्तकों, पोस्टरों, फिल्मों, विडियो कैसटों, लेखों, टी.वी. प्रोग्रामों व पर्यावरण प्रदूषण व संसाधन संरक्षण पर आधारित नृत्य–नाटिकाओं, ड्रामों द्वारा शिक्षित कर उनको इस समस्या के प्रति जागरूक करना होगा। इसके लिये प्रदूषण, सम्मेलनों, संसाधन संरक्षण समारोह आयोजित करने होगें। इस कार्य में देश के युवकों को महत्वपूर्ण योगदान देना चाहिए।

(2) विद्यालय व महाविद्यालय स्तर पर प्रदूषण नियमन व्यवस्था व प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर निर्धारित पाठ्यक्रमानुसार सभी कक्षाओं में अनिवार्य करना चाहिए।

(3) प्रत्येक देश को वातावरण के सभी पहलूओं की नियंत्रित देखभाल करते रहना चाहिए। ताकि नव प्रदूषकों को ज्ञात कर, उन्हें नियंत्रित करने के लिये अविलम्ब कार्यवाही की जा सके।

(4) ज्वलनशील ठोस अपशिष्टों को इस कार्य हेतु बनी विशिष्ट भट्टियों में जला कर भस्म कर देना चाहिये। भस्म करने की क्रियाओं में निकलने वाली गैसों को वातावरण में जाने देने से पूर्व विशिष्ट रासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा इन्हें हानिरहित करना चाहिए।

(5) ठोस प्रदूषक जैसे मल, विष्ठा, पादप व जंतु जीवांशों को शहर से दूर बड़े गढ़ों में डालकर उनको मिट्टी के मोटे आवरण से ढक देना चाहिये। कालांतर में यह अपघटित हो, खाद में परिवर्तित हो जाते है जिसका उपयोग खेतों में किया जाना चाहिए।

(6) अज्वलनशील ठोस अपशिष्ट जैसे राख, कांच, पी.वी.सी. धातु आदि की अनुपयोगी वस्तुओं को छोटे खण्डों मे खण्डित करके ऊसर भूमि में गड्ढों को भरने में प्रयुक्त करने चाहिए।

(7) ऐसे स्वचालित वाहनों के उपयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए जो पेट्रोल, डीजल से नही चलते हों। पेट्रोल, डीजल आदि से चलने वाले वाहनों में प्रति–धूम्र कुहरा संयंत्र लगाने चाहिये। कारखानों की चिमनियों में भी प्रदूषकों को रोकने वाली विभिन्न प्रयुक्तियाँ जैसे मार्जक (स्क्रबर), चक्रावात पृथक्कारी (Cyclone separators) स्थिर वैद्युत अवक्षेपित्र लगाने चाहिये।

(8) उर्वक, पीड़कनाशियों व कीटनाशियों के विवेकहीन दुरूपयोग पर रोक लगानी चाहिए।

(9) ईंधन के लिये लकड़ी का उपयोग पूर्णतया प्रतिबंधित करना चाहिये। वन वृक्षों को अनावश्यक रूप से काटने पर कड़े दण्ड की व्यवस्था होनी चाहिये।

(10) कागज कप, कागज प्लेट, गत्ते के बने डिब्बों पर

पूर्ण प्रतिबंध होना चाहिये।

(11) अपमार्जकों के उत्पादन को घटाकर, कपड़े धोने के साबुन का उपयोग बढ़ाना चाहिए।

(12) प्लास्टिक थैलियों के उत्पादन को प्रतिबंधित करना तथा प्लास्टिक डिब्बों, बोतलों आदि के पुनः उपयोग की व्यवस्था अपनानी चाहिये।

(13) शहरों व उद्योगों से निकलने वाले ठोस व द्रव अपशिष्टों का विसर्जन जल स्रोतों में नहीं करना चाहिए।

(14) स्वचालित वाहनों द्वारा हॉर्न का अनावश्यक उपयोग नहीं करना चाहिए। ध्वनि प्रबलता को बढ़ाने वाले व उसे दूर तक प्रसारित करने वाले संयंत्रों को प्रतिबंधित करना चाहिए। सभागारों में ध्वनि अवशोषक लगाने चाहिए व कारखानों के श्रमिकों को कर्ण–प्लग का उपयोग अनिवार्य करना चाहिए।

15.4 प्रकाश व विकिरण (Light and Radiation)

प्रकाश जीवों के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसके द्वारा अनेक पादप कार्यिकीय प्रक्रम (Plant Physiological Processes)जैसे वाष्पोत्सर्जन, प्रकाशसंश्लेषण, पादप गति आदि प्रत्यक्ष रूप से तथा श्वसन, अवशोषण, वृद्धि, पादप हार्मोन आदि अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हैं। वनस्पति के विकास एवं विस्तार तथा जातीय संगठन (Species composition) को नियन्त्रित करने में भी प्रकाश की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। सूर्य का प्रकाश ही प्रकृति में ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। हरे पौधे सूर्य के प्रकाश की सहायता से प्रकाशसंश्ले ाण द्वारा भोजन का निर्माण करते हैं। यही भोजन जैव मण्डल (Bio-sphere) में जैविक ऊर्जा का आधार है। सूर्य की विकिरण ऊर्जा (Radiation engrgy) या विद्युत चुम्बकीय किरणों (Electromagnetic rays) का वह भाग जो दृश्यमान स्पेक्ट्रम (Visible spectrum) का निर्माण करता है दृश्य प्रकाश (**Visible light**) कहलाता है। सूर्य से पृथ्वी पर पहुँचने वाले विकिरण 300nmसे 1000nm तक तरंगदैर्ध्य के होते है। इन विकिरणों में से केवल 390nm से 760nm तक के विकिरण को ही आँख से देख सकते हैं। अतः 390nm से 760nm तक के तरंग दैर्ध्य के विकिरणों को दृश्य प्रकाश कहते हैं। दृश्य प्रकाश जब किसी प्रिज्म में से निकलता है तो यह विभिन्न रंगों के प्रकाश में प्रसारित हो जाता है, जिनमें प्रत्येक की तरंगदैर्ध्य निश्चित होती है जैसे बैंगनी (390nm-430nm), नीला (430nm-470nm), नीला हरा (470nm-500nm), हरा

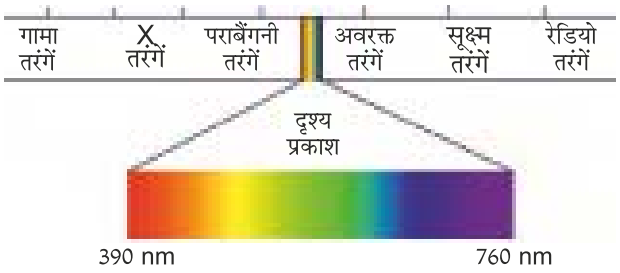

चित्र – 15.5 प्रकाशीय विकिरण

(500nm-580nm), पीला (580nm-600nm), नारंगी (600nm-650nm) तथा लाल (650nm-760nm)। बैंगनी रंग की तरंग दैर्ध्य से कम तरंग दैर्ध्य वाली तंरगों के प्रकाश को पराबैंगनी (**Ultra - violet**) तथा लाल विकिरणों की तरंग दैर्ध्य से अधिक वाले प्रकाश को अवरक्त (**Infra- red**) कहते है। जिन प्रकाश विकिरणों की तरंग दैर्ध्य कम होती है उनमें क्वांटम ऊर्जा अधिक होती है एवं जिनकी तरंग दैर्ध्य अधिक हेाती है उनमें उर्जा की मात्रा कम होती है।

15.5 खाद व उर्वरक (Manure and Fertilizer)

जिस प्रकार मनुष्य के विकास, वृद्धि तथा स्वस्थ रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार पौधों को भी वृद्धि के लिए पोषक पदार्थों की आवश्यकता होती है। पौधों को पोषक पदार्थ हवा, पानी तथा मृदा से प्राप्त होते हैं। पौधों के लिए 16 पोषक पदार्थ आवश्यक है। वायु से कार्बन तथा ऑक्सीजन, पानी से हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन एवं शेष 13 पोषक पदार्थ मृदा से प्राप्त होते हैं। इन 13 पोषकों में से 6 पोषकों की आवश्यकता अधिक मात्रा में चाहिए इसलिए इन्हें वृहत पोषक (Macro nutrients) कहते है। शेष 7 पोषकों की आवश्यकता कम मात्रा में होती है। इसलिए इन्हें सूक्ष्म–पोषक (Micro nutrients) कहते हैं। इन पोषकों की कमी के कारण पौधों की शारीरिक प्रक्रियाओं सहित जनन, वृद्धि तथा रोगों के प्रति प्रतिरोध पर प्रभाव पड़ता है। अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए मिट्टी में खाद तथा उर्वरक के रूप में इन पोषकों को मिलाना आवश्यक है। हवा पानी व मृदा से प्राप्त होने वाले विभिन्न पोषक तत्व निम्न है

वायु – कार्बन, ऑक्सीजन

पानी – हाइड्रोजन, ऑक्सीजन

मृदा – (i) वृहद पोषक :– नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, कैल्सियम,

मैग्नीशियम, सल्फर,

(ii) सूक्ष्म पोषक :– आयरन, मैगनीज, बोरॉन, जिंक, कॉपर, मॉलिब्डेनम, क्लोरीन,

15.5.1 खाद (Manure)

खाद में कार्बनिक पदार्थो की मात्रा अधिक होती है। खाद को जंतुओं के अपशिष्ट तथा पौधों के मृत भागों के अपघटन से तैयार किया जाता है। खाद मिट्टी को पोषकों तथा कार्बनिक पदार्थों से परिपूर्ण करती है और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती है। खाद में काबर्निक पदार्थों की अधिक मात्रा मिट्टी की संरचना में सुधार करती है। खाद के बनाने में हम जैविक कचरे का उपयोग करते हैं। इससे उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग की आवश्यकता नहीं होगी तथा इस प्रकार से पर्यावरण संरक्षण में सहयोग मिलेगा। खाद बनाने की प्रक्रिया में विभिन्न जैव पदार्थों के उपयोग के आधार पर खाद को निम्न वर्गों में विभाजित किया जाता है :

(i) कंपोस्ट तथा वर्मी– कंपोस्ट : कंपोस्टीकरण प्रक्रिया में कृषि अपशिष्ट पदार्थ, जैसे पशुओं का मलमूत्र (गोबर आदि), सब्जी के छिलके एवं कचरा, घरेलू कचरा खरपतवार आदि को गड्ढों में डालते हैं। इन कृषि अपशिष्ट व पशु अपशिष्ट का सुक्ष्म जीवों द्वारा अपघटन हो जाता हैं। यह अपघटित पदार्थ खाद के रूप में उपयोग किया जाता है। कंपोस्ट में कार्बनिक पदार्थ तथा पोषक बहुत अधिक मात्रा में होते हैं। वर्मी–कंपोस्ट को केंचुओं द्वारा पौधें तथा पशुओं के अपशिष्ट पदार्थों के शीघ्र निम्नीकरण की प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है।

(ii) हरी खाद : फसल उगाने से पहले खेतों में कुछ फलीदार शिम्बी पौधे; जैसे– पटसन, मूँग अथवा ग्वार आदि उगा देते हैं। उचित बढ़वार के पश्चात् उन पर हल चलाकर खेत की मिट्टी में मिला दिया जाता है। ये पौधे हरी खाद में परिवर्तित हो जाते हैं, जो मृदा को नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस की आपूर्ति करते हैं।

15.5.2 उर्वरक (Fertilizer)

उर्वरक व्यावसायिक रूप में तैयार पादप पोषक है। उर्वरक, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पौटैशियम प्रदान करते हैं। इनके उपयोग से अच्छी कायिक वृद्धि होती है और स्वस्थ पौधों की प्राप्ति होती है। अधिक उत्पादन के लिए उर्वरकों का उपयोग किया जाता है। उर्वरक का उपयोग बड़े ध्यान से करना चाहिए। कभी–कभी उर्वरक अधिक सिंचाई के कारण पानी में बह जाते है और पौधे उसका पूरा अवशोषण नहीं कर पाते। उर्वरक की यह अधिक मात्रा जल व मृदा प्रदूषण का कारण होती है। उर्वरक का सतत् प्रयोग मिट्टी की उर्वरता को घटाता है। इससे सूक्ष्म जीवों एवं भूमिगत जीवों का जीवन चक्र प्रभावित हो जाता है। उर्वरकों के उपयोग द्वारा फसलों का अधिक उत्पादन कम समय में प्राप्त हो सकता है; परंतु यह मृदा की उर्वरता को कुछ समय पश्चात् हानि पहुँचाते हैं। जबकि खाद के उपयोग के लाभ दीर्घ अवधि तक रहते हैं। कार्बनिक खेती, खेती करने की वह पद्धति है जिसमें रासायनिक उर्वरक, पीड़कनाशी, शाकनाशी रसायनों का उपयोग बहुत कम या बिलकुल नहीं होता। इस पद्धति में कार्बनिक खाद, कृषि–अपशिष्ट तथा पशुधन अपशिष्ट का पुनर्चक्रण, जैविक–कारक जैसे कि नील–हरित शैवाल का संवर्धन, जैविक उर्वरक बनाने में उपयोग किया जाता है। नीम की पत्तियों तथा हल्दी का विशेष रूप से जैव कीटनाशकों के रूप में, खाद्य संग्रहण में प्रयोग किया जाता है।

15.6 फसल (Crop)

उर्जा की आवश्यकता के लिए अनाज; जैसे –गेहूँ, चावल, मक्का, बाजरा तथा ज्वार से कार्बोहाइड्रेट प्राप्त होता है। दालें जैसे चना, मटर, उड़द, मूँग, अरहर, मसूर से प्रोटीन प्राप्त होता है और तेल वाले बीजों; जैसे सोयाबीन, मूँगफली, तिल, अरंड, सरसों, अलसी, तथा सूरजमुखी से हमें आवश्यक वसा प्राप्त होती है। सब्जियाँ, मसाले तथा फलों से हमें विटामिन तथा खनिज लवण, कुछ मात्रा में प्रोटीन, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट भी प्राप्त होते है। चारा फसले; जैसे – वर्सीम, जई, घास का उत्पादन पशुओं के चारे के रूप में किया जाता है। एक विशाल जनसंख्या को भोजन प्रदान करने के लिए इनका नियमित उत्पादन, उचित प्रबंधन एवं वितरण आवश्यक है।

भारत एक विशाल देश है। यहाँ ताप, आर्द्रता और वर्षा जैसी जलवायवीय परिस्थितियाँ, एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में भिन्न है। अतः देश के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं। फसलों को ऋतु के आधार पर दो वर्गों में बांटा जा सकता है। वे इस प्रकार है :–

(i) खरीफ फसल : वह फसल जिसे वर्षा ऋतु में बोया जाता है, खरीफ फसल कहलाती है। भारत में वर्षा

ऋतु सामान्यतः जून से सितम्बर तक होती है। धान, मक्का, सोयाबीन, मूँगफली, मूंग इत्यादि खरीफ फसलें हैं।

(ii) रबी फसल : शीत ऋतु में उगाई जाने वाली फसलें रबी फसलें कहलाती है। गैहूँ, चना, मटर, सरसों तथा अलसी आदि मुख्य रबी फसले है।

15.7 फसल की किस्में (Varieties of Crop)

फसलों का उत्पादन अच्छा हो, यह प्रयास फसलों की किस्मों के चयन पर निर्भर करता है। फसल की किस्मों के लिए विभिन्न उपयोगी गुणों (जैसे रोग प्रतिरोधक क्षमता, उर्वरक के प्रति अनुरूपता, उत्पादन की गुणवता तथा उच्च उत्पादन) का चयन प्रजनन द्वारा कर सकते है। फसल की किस्मों में ऐच्छिक गुणों को संकरण द्वारा सम्मिलित जा सकता है। संकरण विधि में विभिन्न आनुवंशिक गुणों वाले पौधे में संकरण करवाते हैं। फसल सुधार की दूसरी विधि है ऐच्छिक गुणों वाले जीन का स्थानान्तरण करना। इसके परिणामस्वरूप आनुवंशिकीय रूपांतरित किस्म प्राप्त होती है। नई किस्म को अपनाने से पहले यह आवश्यक है कि फसल की किस्म विभिन्न परिस्थितियों में, जो विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न होती है, अच्छा उत्पादन दे सके। किसानों को अच्छी गुणवता वाले विशेष बीज उपलब्ध होने चाहिए अर्थात् बीज उसी किस्म के होने चाहिए जो अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित हो सके।

फसल उत्पादन मौसम व मिट्टी की गुणवता तथा पानी की उपलब्धता पर निर्भर करते हैं। चूँकि मौसम की परिस्थितियाँ, जैसे सूखा तथा बाढ़ का पूर्वानुमान कठिन होता है इसलिए ऐसी किस्में अधिक उपयोगी है जो विविध जलवायु परिस्थितियों में भी उग सकें। इसी प्रकार ऐसी किस्में बनाई गई हैं, जो उच्च लवणीय मिट्टी में भी उग सकें। किस्मों में सुधार के निम्न उद्देष्य है।

(1) उच्च उत्पादन : प्रति एकड़ की उत्पादकता बढ़ाना।

(2) उन्नत किस्में : फसल उत्पाद की गुणवत्ता, प्रत्येक फसल में भिन्न होती है। जैसे दाल में प्रोटीन की गुणवता, तिलहन में तेल की गुणवता और फल तथा सब्जियों में खनिजों व विटामिन की उच्च मात्रा महत्वपूर्ण है।

(3) जैविक तथा अजैविक प्रतिरोधकता : जैविक (रोग, कीट) तथा अजैविक (सूखा, क्षारता, जलाक्रांति, गरमी, ठंड तथा पाला) परिस्थितियों के कारण फसल उत्पादन कम हो सकता है। इन परिस्थितियों को सहन कर सकने वाली किस्में फसल उत्पादन में सुधार कर सकती हैं।

(4) परिपक्वन काल में परिवर्तन : फसल को उगाने से लेकर कटाई तक कम से कम समय लगना आर्थिक दृष्टि से अच्छा है। इससे किसान प्रतिवर्ष अपने खेतों में कई फसलें उगा सकते हैं। कम समय होने के कारण फसल उत्पादन में धन भी कम खर्च होता है। समान परिपक्वन कटाई के दौरान होने वाली फसल की हानि कम हो जाती है।

(5) व्यापक अनुकूलताः व्यापक अनुकूलता वाली किस्मों का विकास करना विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में फसल उत्पादन को स्थायी करने में सहायक होगा। एक ही किस्म को विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न जलवायु में उगाया जा सकता है।

(6) ऐच्छिक शस्य विज्ञान गुणः चारे वाली फसलों के लिए लंबी तथा सघन शाखाएँ ऐच्छिक गुण हैं। ताकि इन फसलों को उगाने के लिए कम पोषकों की आवश्कता हो। इस प्रकार शस्य विज्ञान वाली किस्में अधिक उत्पादन प्राप्त करने में सहायक होती है।

15.8 फसल पैटर्न (Crop Pattern)

अधिक उत्पादन व रोगों से सुरक्षा के लिये रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशियों व रोगाणुनाशियों का अत्यधिक प्रयोग करने से भूमि बंजर होने लगती है इसलिये ऐसी कृषि की आवश्कयता अनुभव की गई जो प्राकृतिक संसाधनों को हानि पहुँचाए बिना निरन्तर की जा सके। इसे दीर्घकालीन कृषि कहते हैं।

दीर्घकालिन कृषि के लिये मिश्रित कृषि, मिश्रित फसल, व फसल चक्र जैसी विधियों का उपयोग किया जाता है।

(क) मिश्रित कृषि (Mixed Farming) छोटे–छोटे खेतों में फसल उगाने पर किसान की आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पाती। ऐसे में वह खेती के साथ–साथ पशुपालन, मछलीपालन, वृक्ष उत्पादन व फसल उत्पादन आदि विधियों को भी अपनाता है। जिससे किसान की आय में वृद्धि होती है तथा भूमि की क्षमता का अधिकतम उपयेाग हो जाता है। एक ही भूमि पर कृषि के साथ–साथ कृषि आधारित अन्य कृषि विधियों के उपयोग को ही मिश्रित कृषि कहते हैं।

(ख) मिश्रित फसल (Mixed Cropping) जब कृषक द्वारा एक बड़े क्षेत्र में एक ही फसल को उगाया जाता है तो फसल के इन पौधों की आवश्यकताएं एक समान होने से

मृदा से कुछ पोषक तत्व अधिक मात्रा में काम आते हैं तथा कुछ पोषक तत्वों का उपयोग ही नहीं होता है। ऐसी स्थिति में आजकल एक क्षेत्र में दो या अधिक प्रकार की फसलें एक साथ उगायी जाती है ऐसी फसल को मिश्रित फसल कहते हैं। जैसे कि गेहूँ + चना, गेहूँ+ सरसों तथा मूँगफली + सूरजमुखी। मौसम के प्रकोप अथवा अन्य कारणों से यदि एक फसल नष्ट हो जाती है, तो दूसरी फसल से उत्पादन प्राप्त हो जाता है।

मिश्रित फसल के लिये फसलों का चुनाव करते समय निम्न बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए।

1. एक फसल लम्बी अवधि की व दूसरी छोटी अवधि की होनी चाहिए।

2. एक फसल लम्बी व दूसरी बौनी होनी चाहिए।

3. एक फसल गहरी जड़ों वाली व दूसरी सतही जड़ों वाली होनी चाहिए।

(ग) फसल चक्र (**Crop Rotation**) :– एक भू–भाग पर निरन्तर एक ही फसल बौने से मृदा की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है तथा उस फसल द्वारा उपयोग में लाये जाने वाले पोषक तत्वों की मृदा में कमी होने से फसल के उत्पादन में कमी होती है। इसलिये एक ही भूमि से अधिक उत्पादन बनाए रखने हेतु फसल चक्र को अपनाया जाता है। भूमि के किसी भाग पर योजनाबद्ध रूप से बदल–बदल कर फसल प्राप्त करना फसल चक्र कहलाता है।

फसल चक्र में अनाज की फसलों का चक्रण फलीदार फसलों से किया जाना चाहिये ताकि मृदा में नाइट्रोजन की आपूर्ति होती रहे।

15.9 फसल सुरक्षा

खेतों में फसल खरपतवार, कीट, पीड़क तथा रोगों से प्रभावित होती है। यदि समय रहते खरपतवार तथा पीड़को को नियन्त्रित नहीं किया जाए तो वे फसलों को बहुत हानि पहुँचाते हैं।

खरपतवार फसली पौधों के साथ उगे अनावश्यक पौधे होते है उदाहरणतः विलायती गोखरू (*जैथियम*), गाजरघास *(पारथेनियम)*, व मोथा *(साइप्रस रोटेंडस)*। ये खरपतवार भोजन, स्थान तथा प्रकाश के लिए स्पर्धा करते हैं। खरपतवार पोषक तत्व भी लेते हैं जिससे फसलों की वृद्धि कम हो जाती है। इसलिए अच्छी पैदावार के लिए फसली पौधों से प्रारंभिक अवस्था में ही खरपतवार को खेतों में से निकाल देना चाहिए।

प्रायः कीट–पीड़क तीन प्रकार से पौधों पर आक्रमण करते हैं : (1) ये मूल, तने तथा पत्तियों को काट देते हैं (2) ये पौधे के विभिन्न भागों से कोशिकीय रस चूस लेते हैं तथा (3) ये तनें तथा फलों में छिद्र कर देते हैं। इस प्रकार ये फसल को खराब कर देते हैं और फसल उत्पादन कम हो जाता है। पौधों में रोग जीवाणु, कवक तथा वाइरस जैसे रोग कारकों द्वारा होता है। ये मिट्टी, पानी तथा हवा में उपस्थित रहते है, और इन माध्यमों द्वारा ही पौधों में फैलते हैं। खरपतवार, कीट तथा रोगों पर नियंत्रण कई विधियों द्वारा किया जा सकता है। इनमें से सर्वाधिक प्रचलित विधि पीड़कनाशी रसायन का उपयोग है। इसके अन्तर्गत शाकनाशी, कीटनाशी तथा कवकनाशी रसायन आते हैं। इन रसायनों का फसल के पौधों पर छिड़काव करते हैं अथवा बीज और मिट्टी के उपचार के लिए उपयोग करते हैं। लेकिन इनके अधिकाधिक उपयोग से बहुत सी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है। ये रसायन पौधों तथा जानवरों के लिए विषैले हो सकते हैं और पर्यावरण प्रदूषण के कारण बन जाते हैं। यांत्रिक विधि द्वारा खर–पतवारों को हटाना भी एक विधि है। निरोधक विधियों; जैसे समय पर फसल उगाना, उचित क्यारियाँ तैयार करना, अंतराफसलीकरण तथा फसल चक्र खरपतवार को नियंत्रित करने में सहायक होती है। पीड़कों पर नियंत्रण पाने के लिए प्रतिरोध क्षमता वाली किस्मों का उपयोग तथा ग्रीष्म में हल से जुताई कुछ निरोधक विधियाँ है। इस विधि में खरपतवार तथा पीड़कों को नष्ट करने के लिए गर्मी के मौसम में गहराई तक हल चलाया जाता है।

15.10 सिंचाई के तरीके

जीवित रहने के लिए प्रत्येक जीव को जल की आवश्यकता होती है। पौधे के फूल, फल एवं बीज की वृद्धि एवं परिवर्धन के लिए जल का विशेष महत्त्व है। पौधों की जड़ों द्वारा जल का अवशोषण होता है जिसके साथ खनिजों और उर्वरकों का भी अवशोषण होता है। पौधों में लगभग 90% जल होता है। जल आवश्यक है, क्योकि बीजों का अंकुरण शुष्क स्थिति में नहीं हो सकता। जल में घुले हुए पोषकों का स्थानांतरण पौधे के प्रत्येक भाग में होता है। यह फसल की पाले एवं गर्म हवा से रक्षा करता है। स्वस्थ फसल वृद्धि के लिए खेत में नियमित रूप से जल देना आवश्यक

है। विभिन्न अंतराल पर खेत में जल देना सिंचाई कहलाता है। सिंचाई का समय एवं बारम्बारता फसलों, मिट्टी एवं ऋतु अनुसार भिन्न–भिन्न होती है। गर्मी में पानी देने की बारम्बारता अपेक्षाकृत अधिक होती है।

सिचाई के स्रोत : कुएँ, जलकूप, तालाब, झील, नदियाँ, बाँध एवं नहर इत्यादि जल के स्रोत हैं। कुओं, झीलों एवं नहरों में उपलब्ध जल को खेतों तक पहुँचाने के तरीके भिन्न क्षेत्रों में भिन्न –भिन्न हैं।

इन विधियों में मवेशी अथवा मजदूर किए जाते हैं। ये सस्ते हैं, परन्तु यह कम दक्ष है। विभिन्न पारम्परिक तरीके निम्न है : (i) मोट (घिरनी), (ii) चैन पम्प, (iii) ढेकली, (iv) रहट (उत्तोलक)

जल को ऊपर खींचने के लिए सामान्यत : पम्प का उपयोग किया जाता है। पम्प चलाने के लिए डीजल, बायोगैस, विद्युत एवं सौर ऊर्जा का उपयोग किया जाता है।

सिंचाई की आधुनिक विधियाँ : सिंचाई की आधुनिक विधियों :द्वारा हम जल का उपयोग मितव्ययता से कर सकते है। ये विधियाँ निम्न है :

(i) छिड़काव तंत्र (**Sprinkler System**) : इस विधि का उपयोग असमतल भूमि के लिए किया जाता है तथा जहां पर जल कम मात्रा में उपलब्ध होता है। उर्ध्व पाइपों के ऊपरी सिरों पर घूमने वाले नोजल लगे होते हैं। ये पाइप निश्चित दूरी पर मुख्य पाइप से जुड़े होते हैं। जब पाइप की सहायता जल उर्ध्व पाइप में भेजा जाता है तो वह घूमते हुए नोजल से बाहर निकलता है। इसका छिड़काव पौधों पर इस प्रकार होता है जैसे वर्षा हो रही हो।

चित्र – 15.6 फव्वारा सिंचाई

(ii) ड्रिप तंत्र (**Drip System**): इस विधि में जल बूँद–बूँद करके पौधों की जड़ों में गिरता है। अतः इसे ड्रिप तंत्र कहते हैं। फलदार पौधों, बगीचों एवं वृक्षों को पानी देने का यह सर्वोत्तम तरीका है। इससे पौधे को बूँद–बूँद करके जल प्राप्त होता है। इस विधि मे जल व्यर्थ नहीं होता। अतः यह जल की कमी वाले क्षेत्रों के लिए एक वरदान है।

चित्र – 15.7 ड्रिप तंत्र

15.11 कृषि (**Agriculture**)

आधुनिक कृषि कला, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का समन्वित प्रयास है। इसमें विज्ञान व आनुवंशिक अभियान्त्रिकी के सिद्धान्त के बल पर मनचाहे लक्षणों वाली फसलें प्राप्त करना सम्भव हो पाया है। जिससे तेजी से बढ़ती मानव जनसंख्या को रोटी, कपड़ा और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है।

आधुनिक कृषि के चरण :–

1. उन्नत बीज :– अधिक उत्पादन, रोग प्रतिरोधक क्षमता, परिपक्वता समय में एकरूपता तथा विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में अनुकूलता बढ़ाने आदि उद्देश्यों की पूर्ति हेतु बीजों की गुणवता में सुधार किया जाता है।

2. फसलों को खनिज पोषण :– फसली पादपों को भोजन बनाने व वृद्धि के लिये विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। पादप पोषक तत्व हवा जल व मृदा से प्राप्त करते हैं। इन पोषक तत्वों की आपूर्ति हेतु मृदा में विभिन्न प्रकार की खाद व उर्वरक का उपयोग किया जाता है। खाद के रूप में गोबर खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मी कम्पोस्ट तथा हरी खाद का उपयोग किया जाता है। उर्वरक के रूप में यूरिया, डाइअमोनियम फास्फेट, सुपर फास्फेट, अमोनियम

सल्फेट व कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट का उपयोग किया जाता है।

3. खरपतवार (**Weeds**):– किसान मृदा में फसली पादपों के बीज बोता है, मगर मृदा में उपस्थित कई अन्य बीज भी फसल के बीजों के साथ अंकुरित होकर पौधे उत्पन्न कर देते हैं। खेतों में फसली पादपों के साथ उगे अवांछित पादपों को खरपतवार कहते हैं।

फसली पादपों व खरपतवार में जल, खनिज लवणों हेतु प्रतिस्पर्धा होती है, जिससे फसली पादपों को पर्याप्त जल व खनिज लवण उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। खरपतवार फसली पादपों को ढ़क लेती हैं जिससे फसली पादपों को पर्याप्त सूर्य का प्रकाश ग्रहण करने में बाधा उत्पन्न होती है। कुछ खरपतवार जड़ों से निरोधक रसायनों का स्रावण कर फसल की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव डालती हैं। खरपतवार जीवाणु, विषाणु व रोगाणुओं का आश्रय स्थल होने से फसलों में रोगों की सम्भावना बढ़ती है। खरपतवार नष्ट करने हेतु अतिरिक्त श्रम की आवश्यकता होने से फसल की लागत बढ़ जाती है। खरपतवार नियंत्रण हेतु हाथों से उखाड़ कर, रासायनिक व जैविक विधियों का उपयोग किया जाता है।

4. पादप रोग :– पादप या उसके किसी भाग के असामान्य रूप से कार्य करने की स्थिति को पादप रोग कहते हैं। पादप में रोग विषाणु, जीवाणु व कवक आदि सूक्ष्म जीवों के कारण होते हैं। फसलों में रोग नियन्त्रण के लिये रोग प्रतिरोधी किस्मों का उपयेाग तथा पीड़कनाशियों का छिड़काव किया जाता हैं।

15.12 पशुपालन (Animal Husbandry)

पशुपालन कृषि का पूरक व्यवसाय है। प्राचीन काल से ही मनुष्य पशुओं का पालन करके उनका उपयोग करता रहा है। आधुनिक युग में मशीनीकरण के कारण मानव की पशुओं पर निर्भरता कम होती जा रही है, फिर भी पशुलपालन आज भी जनसंख्या के एक बड़े भाग को रोजगार उपलब्ध करवा रहा है। अन्य देशों की तुलना में भारत में सर्वाधिक पालतु पशु है तथा वर्तमान में भारत विश्व में दुग्ध उत्पादन करने वाला प्रथम बड़ा राष्ट्र है। पशुपालन के अन्तर्गत गाय, भैंस, ऊँट, बकरी, भेड़, घोड़ा आदि का पालन कर उनसे दूध, मांस, ऊन, चमड़ा गोबर प्राप्त किया जाता है तथा इनका उपयोग कृषि कार्यों में भी किया जाता है।

15.12.1 दुग्ध– दुग्ध उत्पाद :– दुग्ध उत्पादन खाद्य उत्पाद व्यवसाय का मुख्य भाग है। पशुओं की स्तनग्रन्थियों से शिशुओं हेतु स्रावित दूध का उपयोग मानव प्राचीन काल से करता आ रहा है। दूध देने वाले पशुओं से शिशु के जन्म के तुरन्त बाद स्तन से निकलने वाले दूध को खीस (**Colostrum**) कहते हैं। औसत दूध में 87.3% जल, 4.5% वसा, 4.6 % कार्बोहाइड्रेट, 3.5% प्रोटीन, 0.75 % खनिज लवण, 0.85% वसा रहित ठोस पदार्थ पाये जाते हैं। भेड़ के दूध में सर्वाधिक प्रोटीन 6.25% तथा गाय के दूध में 3.21% पायी जाती है। दुग्ध से दही, क्रीम, मक्खन, मावा, घी, दूध पाउडर आदि उत्पाद बनाये जाते हैं।

दुग्ध की उच्च पोष्टिकता के कारण इसमें जीवाणु तेजी से बढ़ते है, तथा यह जल्दी खराब हो जाता है। दूध को पाश्चरीकरण व शीतलीकरण द्वारा कई दिनों तक भण्डारण किया जा सकता है।

15.12.2 पशु नस्ल :– दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से गाय, भैंस, बकरी आदि का पालन, किया जाता है। दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से गाय की साहीवाल, सिन्ध, गिर, देवली, हरियाणवी आदि देशी तथा रेडडेन, हॉल्सटीन, जर्सी आदि विदेशी नस्लें हैं। भैंस की मुर्रा, जाफराबादी, सुरती, आदि अधिक दुग्ध देने वाली नस्लें हैं। बकरी की जमानापारी, बारबरी, सिरोही आदि नस्लें हैं।

15.12.3 पशु आहार :– दुधारू पशुओं व गर्भवती पशुओं को सामान्य आहार के साथ–साथ अतिरिक्त पशु आहार दिया जाना चाहिये। पशु को दो–तिहाई भाग सूखा चारा व एक–तिहाई भाग हरे चारे के रूप में देना चाहिए। प्रत्येक पशु के दाने के मिश्रण में 40%, अनाज, 40% खली, व 20 % चौकर देना चाहिए, इसके अतिरिक्त प्रत्येक पशु को प्रतिदिन 50gm. नमक तथा 30gm. खनिज चूर्ण देना चाहिए।

15.12.4 पशु स्वास्थ्य :– पशु का स्वस्थ रहना आवश्यक है। पशु के रोग होने पर दुग्ध उत्पादन कम हो जाता है। रोगों के बचाव के लिये पशुओं का समय–समय पर टीकाकरण करवाना चाहिए तथा पशु आवास व पशुओं की सफाई रखनी चाहिये। पशुओं में वाइरस, जीवाणु, कवक व कृमि जनित रोग हो जाते हैं। पशुओं के प्रमुख रोग उनके टीके तथा टीकाकरण का समय निम्न प्रकार है।

क्र.सं.	रोग	टीका	समय
1.	खुरपका, मुँहपका	पॉलीवैक्सीन	प्रतिवर्ष
2.	गलघोंटू	एच.एस. आयल, एडज्यूवेन्ट वेक्सीन	प्रतिवर्ष
3.	गिल्टी रोग	एंथ्रेक्स स्पोर वेक्सीन	प्रतिवर्ष
4.	तपेदिक	बी.सी.जी. वेक्सीन	प्रति 3 वर्ष बाद
5.	चैचक	आर.पी. टिश्यू वेक्सीन	प्रति 3 वर्ष बाद

15.13 मुर्गीपालन (**Poultry**)

मुर्गीपालन का प्रमुख उद्देश्य अण्डे व मांस प्राप्त करना है, इसके अतिरिक्त पंख, खाद, रक्त आदि उप–उत्पाद भी प्राप्त होते हैं। अण्डों व मांस के रूप में मुर्गीपालन उद्योग देश की प्रोटीन आवश्यकता के एक बड़े अंश की पूर्ति करता है।

15.13.1 मुर्गी की नस्ले :– भारतीय मूल की मुर्गी की नस्लें जैसे लाल जंगली मुर्गी, असील, चटगांव, हागस, बुस्त्रा आदि है। इनका पालन मुख्यतः मांस प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाता है। विदेशी नस्लें जैसे रोडे आइलैण्ड रेड, प्लाईमाउथ, रॉक लैंग्सहॉर्न, व्हाइट लेगहॉर्न प्रमुख है। व्हाइट लेगहॉर्न सर्वाधिक अण्डे देने वाली मुर्गी की नस्ल है।

15.13.2 आवास तथा भोजन :– मुर्गियों की अच्छी वृद्धि एवं स्वस्थ रखने हेतु सुरक्षित आवास व पौष्टिक भोजन की व्यवस्था होनी चाहिये। आवास किसी ऊँचाई वाले स्थान पर होना चाहिए। आवास के आस–पास पानी एकत्रित नहीं होना चाहिए तथा आवास में हवा, प्रकाश की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

भोजन के रूप में पीली मक्का, जौ, मूंगफली की खल, गेहूं की चापड़, चावल का कुन्दा, ज्वार, मछली का चूरा, चूना युक्त कंकर, लवण आदि देने चाहिए।

15.13.3 स्वास्थ्य :– मुर्गियों मे संक्रामक खासी, मैरेक्स, रानीखेत, प्लेग, शीतला, आदि प्रमुख वाइरस जनित रोग होते हैं। इन रोगो से बचाव के लिये उचित टीकाकरण करवाना चाहिए।

15.14. मधुमक्खी पालन (**Apiculture**)

मधुमक्खी से प्राप्त शहद का उपयोग मानव प्राचीन काल से करता आ रहा है। शहद उच्च उर्जा युक्त खाद्य पदार्थ है। शहद में ग्लुकोज, फ्रक्टोज, सुक्रोज, खनिज लवण आदि उपस्थित होते हैं। इसका उपयोग औषधियों तथा परिरक्षक के रूप में भी किया जाता है। मधुमक्खी के छत्तों से प्राप्त मोम को मधुमोम (Bees wax) कहते हैं। इस मोम का उपयोग क्रीम, फर्श पॉलिश, बूट पॉलिश व मूर्तिकला में किया जाता है। वर्तमान में कृत्रिम मधुमक्खी पालन कर शहद प्राप्त किया जाता है।

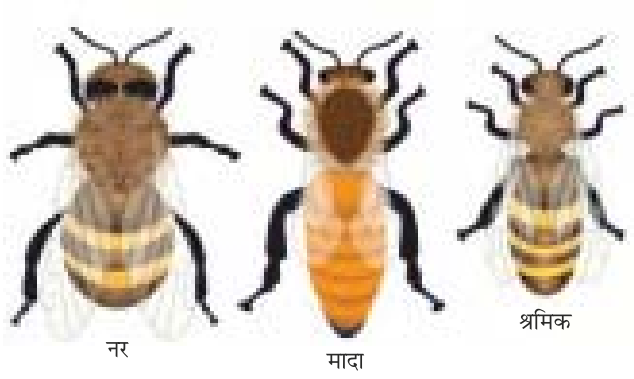

चित्र – 15.7 मधुमक्खियाँ

15.14.1 सामाजिक कीट–मधुमक्खी :– मधुमक्खी के रूप व कार्य में भिन्नता पाई जाती है। मधुमक्खी के छत्ते में रानी, नर व श्रमिक तीन प्रकार की मक्खियाँ होती है। रानी मक्खी को लम्बे उदर के कारण तथा नर को बड़ी–बड़ी आँखों के कारण पहचाना जाता है। छत्ते में रानी मक्खी का ही प्रभुत्व चलता है। रानी गन्धयुक्त पदार्थ के स्रवण द्वारा छत्ते का नियन्त्रण करती है। रानी मक्खी हमेशा छत्ते में ही रहती है। रानी मक्खी के साथ एक बार मैथुनी उड़ान भर कर नर मक्खियाँ रानी मक्खी को जीवन काल तक के लिये शुक्राणु प्रदान कर देती है। इसके बाद नर मक्खियाँ स्वतः ही मर जाती है या उन्हे छत्ते से बाहर कर दिया जाता है। रानी मक्खी दो प्रकार के अण्डे देती है। निषेचित अण्डों से श्रमिक या रानी का बनना पोषक के अन्तर पर निर्भर करता है।

जिन लार्वा को रॉयल जैली नामक पोषक पदार्थ खिलाया जाता है वे रानी मक्खियों में परिवर्धित हो जाती है। सर्वप्रथम बनने वाली रानी मक्खी शेष परिवर्धित होती रानी मक्खियों को मार डालती है। अर्थात् एक छत्ते में एक ही रानी मक्खी बन पाती है। अनिषेचित अण्डों से नर बनते हैं।

15.14.2 कृत्रिम मधुमक्खी पालन :– मधुमक्खी की मुख्य जातियाँ *एपिस मैलीफेरा, एपिस डोरसेटा, एपिस फ्लोरी* तथा *एपिस इन्डिका* है। इनमे से मधुमक्खी पालन हेतु *एपिस मैलीफेरा* का उपयोग किया जाता है। इस मधुमक्खी के छत्ते बड़े व मधुमक्खियाँ अधिक होती है तथा अधिक शहद प्राप्त होता है। *एपिस डोरसेटा* डंक वाली मधुमक्खी है।

कृत्रिम मधुमक्खी पालन हेतु बन्द बक्सों के आकार के कृत्रिम छत्ते बनाये जाते हैं। कृत्रिम छत्तों में बड़े अण्ड कक्ष तथा धातु या प्लास्टिक की प्लेटें होती है। प्लेटों पर मोम की परत होती है तथा ये छत्ते के निर्माण हेतु आधार का कार्य करती है। बन्द बक्से मे कई छिद्र होते है, जिनमें सेमधुमक्खियाँ आ जा सकती है।

मधुमक्खियों के कृत्रिम छत्तों को किसी उद्यान या खेतों के आस–पास रखा जाता है, जहाँ उन्हें मकरन्द प्राप्त हो सके। श्रमिक मधुमक्खियाँ फूलों से मकरन्द एकत्रित करती है तथा उसे शहद में बदल देती है। शहद छत्ते के कोष्ठकों में एकत्रित होने पर छत्ते से प्लेटों को निकाल कर शहद प्राप्त कर लिया जाता है।

15.15 मत्स्य पालन (**Fishery**)

मछली मानव पोषण का अच्छा स्रोत होने के कारण यह एक व्यवसाय के रूप में स्थापित हो चुका है। मछली को प्रमुख रूप से खाद्य पदार्थ के रूप में उपयोग में लिया जाता है। परन्तु विटामिन युक्त तेल, प्रोटीन, वसा, फिन, त्वचा, शल्क आदि मछली से प्राप्त होने वाले उप–उत्पाद हैं। मछली पालन कृषि एवं पशुपालन दोनों का सम्मिलित रूप है। क्योंकि मछली पालन एक प्रकार का पशुपालन है तथा मछलियों हेतु जलाशय में भोजन उत्पन्न करना एक कृषि कार्य है।

मत्स्य पालन के पद

15.15.1. आवासः– मत्स्य पालन प्राकृतिक जल स्रोत जैसे समुद्र, तालाब, झील व नदियों में किया जाता है, मगर कृत्रिम जलाशयों में भी मछलियों का पालन एवं उत्पादन किया जाता है। चिकनी मिट्टी वाले स्थान को जलाशय निर्माण की दृष्टि से अच्छा माना जाता है।

15.15.2 मछली की जातियाँ :– मछलियों का उत्पादन खारे जल की तुलना में अलवणीय जल में अधिक होता है। अलवणीय जल में मछली पालन हेतु रोहू, मृगला, कतला आदि देशी मछलियों का पालन किया जाता है, इसके साथ ही कॉमनकॉर्प, सिल्वरकॉर्प आदि विदेशी मछलियों का पालन भी किया जाता है।

15.15.3. मछलियों का भोजनः– प्राकृतिक जलाशयों में मछलियों का भोजन सूक्ष्म जलीय पादप एवं सूक्ष्म जीव होते हैं। कृत्रिम जलाशयों में चावल की भूसी, अनाज के टुकड़े, गेहूँ की चापड़, बादाम की खली एवं सोयाबीन भोजन के रूप में दिये जाते हैं।

15.15.4. मत्स्य उत्पादन :– मछलियों के बीज नदियों के प्रजनन स्थलों से जाल की सहायता से एकत्रित किये जाते हैं। बीजों से अण्डे उत्पन्न होते हैं। अण्डों से निकली छोटी मछलियों को जीरा कहते हैं। जीरा कुछ समय बाद अंगुलिकाओं में बदल जाता है। अंगुलिकाओं को मछली पालन हेतु निर्मित जलाशयों में पहुँचाया जाता है। अंगुलिकाओं के संक्रामक जीवाणुओं के नष्ट करने के लिये इन्हे जीवाणुनाशक पदार्थों जैसे कॉपर सल्फेट, फार्मेलिन, पोटेशियम परमेंग्नेट या नमक से उपचारित किया जाता है।

15.15.5. मछली संग्रहण :– जब मछलियाँ पर्याप्त बड़ी हो जाती है तो इन्हें जाल की सहायता से अथवा जलाशय में विद्युत प्रवाह करके संग्रह किया जाता है।

15.15.6. मछली का परिरक्षण :– मछलियों को सड़ने से बचाव के लिये इन्हे बर्फ में दबा कर परिरक्षण किया जाता है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. वे पदार्थ जो प्रकृति से प्राप्त होते है तथा जिसका उपयोग मनुष्य के साथ–साथ सभी सजीव करते है, प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं।
2. सजीव श्वसन के लिये ऑक्सीजन का उपयोग करते है तथा पादप प्रकाशसंश्लेषण की प्रक्रिया में कार्बन डाईऑक्साइड का उपयोग करते हैं।
3. पृथ्वी का 70% भाग जल निमग्न हैं।
4. पृथ्वी सतह की ऊपरी उपजाऊ परत को मृदा कहते

हैं।

5. पौधों के लिये आवश्यक मुख्य पोषक तत्व N, P, K हैं।
6. पृथ्वी के धरातल पर वायुदाब में अन्तर के कारण वायु में गति उत्पन्न होती हैं।
7. वायु की गति का मापन एनिमोमीटर द्वारा किया जाता हैं।
8. वायु, जल, व मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में अंवाछनीय परिवर्तन प्रदूषण कहलाता है।
9. कार्बन मोनोऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन, धुआ व धूल आदि प्रमुख वायु प्रदूषक हैं।
10. नाइट्रिक अम्ल, गन्धक का अम्ल के वर्षा के जल में घुल कर पृथ्वी पर आने से अम्लीय वर्षा होती है।
11. कार्बन मोनोऑक्साइड की हीमोग्लोबिन से संयोजन की दर ऑक्सीजन की तुलना में बहुत अधिक होती है।
12. वाहितमल, अपमार्जक, पीड़कनाशी, कीटनाशी, औद्योगिक अपशिष्ट आदि प्रमुख जल प्रदूषक हैं।
13. जलाशयों में शैवालों की अत्यधिक वृद्धि होना शैवाल ब्लूम कहलाता है।
14. ध्वनि की मापन इकाई डेसिबल है।
15. दृश्य प्रकाश का तरंगदैध्य 390nm से 760nm होता है।
16. एक ही किस्म के पौधे किसी स्थान पर बड़े पैमाने पर उगाये जाते है तो इसे फसल कहते है।
17. वर्षा ऋतु में बोयी जाने वाली फसलें खरीफ फसल व शीत ऋतु में बोयी जाने वाली फसलें रबी फसल कहलाती हैं।
18. किसी खेत में नियोजित कार्यक्रम के अनुसार विभिन्न फसलों के उगाने को फसल चक्र कहते हैं।
19. फसली पादपों के साथ उगे अवांछित पादपों को खरपतवार कहते हैं।
20. भेड़ के दूध में सर्वाधिक प्रोटीन 6.25 प्रतिशत होता है।
21. व्हाइट लेगहॉर्न सर्वाधिक अण्डे देने वाली मुर्गी की नस्ल है।
22. मधुमक्खी एक सामाजिक कीट है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. किसी खेत में नियोजित कार्यक्रम के अनुसार फसलों को बदल–बदल कर बोना कहलाता हैः–
   (अ) मिश्रित फसल (ब) मिश्रित कृषि
   (स) फसल चक्र (द) अन्तराफसल
2. वायुमण्डल में आयतन के अनुसार कार्बन डाइऑक्साइड पायी जाती है।
   (अ) 0.03% (ब) 0.003%
   (स) 0.0003% (द) 0.3%
3. अम्लीय वर्षा निम्न में से किसका परिणाम है
   (अ) वायु प्रदूषण (ब) जल प्रदूषण
   (स) मृदा प्रदूषण (द) ध्वनि प्रदूषण
4. निम्न में से पौधों को मृदा से प्राप्त होने वाला पोषक तत्व है–
   (अ) कार्बन (ब) हाइड्रोजन
   (स) ऑक्सीजन (द) नाइट्रोजन
5. निम्न में से खरीफ की फसल है।
   (अ) सोयाबीन (ब) गेहूँ
   (स) चना (द) मटर

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

6. वायु की गति मापने वाले उपकरण का नाम लिखों।
7. प्रदूषण किसे कहते हैं ?
8. प्राकृतिक संसाधन किसे कहते हैं ?
9. शैवाल ब्लूम क्या है ?
10. ध्वनि बूम क्या है ?
11. मिश्रित कृषि किसे कहते हैं ?
12. वायुमण्डल में सबसे अधिक पायी जाने वाली गैस का क्या नाम हैं ?
13. पादप श्वसन क्रिया में किस गैस का उपयोग करते हैं ?
14. वायु की गति का क्या कारण है ?
15. सबसे अधिक अण्डे देने वाली मुर्गी की नस्ल का नाम लिखों।

लघूतरात्मक प्रश्न

1. ह्यूमस क्या है ? ह्यूमस से क्या लाभ है ?
2. अम्लीय वर्षा कैसे होती है ? अम्लीय वर्षा के दुष्प्रभाव

लिखो।

3. जैव रासायनिक आवश्यक ऑक्सीजन (BOD) क्या है?
4. वायु प्रदूषण के दुष्प्रभावों का वर्णन कीजिये।
5. जैविक आवर्धन क्या है ? समझाइये।
6. ध्वनि प्रदूषण क्या है ? ध्वनि प्रदूषण के दुष्प्रभाव समझाइये।
7. मृदा प्रदूषण के कोई चार कारण लिखो।
8. वायु प्रदूषण की रोकधाम के कोई चार उपाय लिखो।
9. खाद व उर्वरक में क्या अन्तर है ?
10. वर्मी कम्पोस्ट खाद कैसे बनायी जाती है ?
11. कार्बनिक कृषि क्या है ? समझाइये ।
12. कृत्रिम मधुमक्खी पालन कैसे किया जाता हैं ?
13. गाय व भैस की अधिक दूध देने वाली नस्लों के नाम लिखो।
14. पशुओं में होने वाले रोगों के नाम लिखो।
15. मिश्रित फसल क्या है? इससे क्या–क्या लाभ है?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. दीर्घकालीन कृषि क्या है ? दीर्घकालीन कृषि की विभिन्न विधियों का वर्णन कीजिए।
2. मत्स्य पालन के उत्पादों के नाम लिखो तथा मत्स्य पालन के पदों का वर्णन कीजिए।
3. सिंचाई किसे कहते है ? सिंचाई की आधुनिक विधियों का वर्णन कीजिए।
4. फसली पादपों की किस्मों में सुधार के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
5. जल प्रदूषण क्या है ? जल प्रदूषण के कारणो व दुष्प्रभावों का वर्णन कीजिए।

उत्तरमाला

1. स, 2. अ, 3. अ, 4.द, 5. अ

◆◆◆

सड़क सुरक्षा शिक्षा

कक्षा IX

गति एवं समय

उद्देश्य : गति के नियम किसी दुर्घटना के विश्लेषण का आधार बनाते हैं। गति के समीकरणों का उपयोग करते हुए सुरक्षित ड्राइविंग के लिए रुकने तथा पीछा करने की दूरी की गणना आसानी से की जा सकती है।

विषयवस्तु :

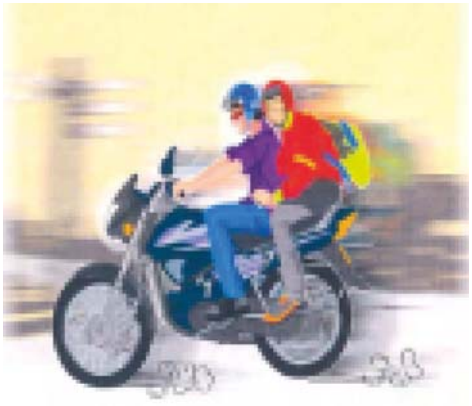

सड़क पर वाहन की गति इतनी हो कि दूरी से सड़क पर किसी वस्तु को स्पष्ट देखकर हम वाहन को रोक सकें। वाहन वास्तव में रुकने से पूर्व प्रतिक्रिया (Reaction) दूरी एवं मन्दन (Breaking) दूरी को तय करता है। प्रतिक्रिया दूरी वह दूरी है जब ड्राइवर खतरा महसूस कर मन्दन (Breaking) क्रिया प्रारंभ करने से पूर्व तय करता है। मन्दन दूरी वह दूरी है, जो ड्राइवर मन्दन क्रिया प्रारंभ करने और ठहरने के बीच तय करता है।

प्रतिक्रिया दूरी की गणना

इस दूरी को तय करने का समय 0.6 से 1 सैकण्ड का होता है, जो ड्राइवर की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति तथा उसके चौकन्नेपन पर निर्भर करता है।

उदाहरण के लिए – प्रतिक्रिया समय = 1 सैकण्ड

$$\text{चाल किमी/घण्टा} = 10 \text{ किमी/घण्टा} = = 10 \times \frac{5}{18} = \frac{50}{18} = \frac{25}{9} \text{ मी/सैकण्ड}$$

$$\text{प्रतिक्रिया दूरी} = \text{चाल} \times \text{समय} = \frac{25}{9} \times 1 = 2.77 = \text{लगभग 3 मीटर}$$

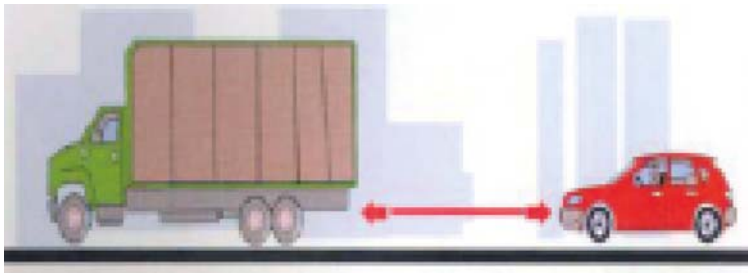

दुर्घटनाओं से बचने के लिए वाहनों को एक निर्धारित दूरी बनाए रखनी चाहिए।

मन्दन (Breaking) दूरी की गणना :

मन्दन दूरी निम्नांकित कारकों पर निर्भर करती है :–

(i) सड़क की स्थिति (ii) मौसम

(iii) वाहन के टायर तथा ब्रेक

(iv) सामान्य सड़क की स्थिति में अच्छे ब्रेक होने पर 4.4 मी/सै.^{2} की दर से मन्दन उत्पन्न होता है

अंतिम वेग (v) = 0

प्रारम्भिक वेग (u) = 10 किमी/घंटा $= 10 \times \frac{5}{18} = \frac{50}{18} = \frac{25}{9}$ मी/सै.

मन्दन (a) = –4.4 मी/सै.^{2}

अतः गति के समीकरण $v^2 - u^2 = 2as$ का प्रयोग करने पर

$$0 - \left(\frac{25}{9}\right)^2 = 2 \times (-4.4) \times s$$

$$\therefore \text{ मन्दन दूरी } \quad s = \frac{625}{81} \times \frac{1}{2 \times 4.4} = 0.88 \text{ मीटर} = \text{लगभग 1 मीटर}$$

अतः ठहरने की दूरी = प्रतिक्रिया दूरी + मन्दन दूरी

पूर्ण ठहरने की दूरी = 3 + 1 = 4 मीटर

ट्रक व कार में सीधी टक्कर

उपर्युक्त उदाहरण के आधार पर निम्न सारणी की पूर्ति कीजिए–

चाल (किमी/घंटा)	प्रतिक्रिया दूरी (मी)	मन्दन दूरी (मी)	पूर्ण ठहरने की दूरी (मी)
20			
30			
40			
50			
60			
70			
80			
90			
100			

कम चाल की अपेक्षा अधिक चाल होने पर दुर्घटना के अवसर क्यों बढ़ जाते हैं?

पीछा करने की दूरी (Following distance) की गणना इस प्रकार से की जाए कि आगे वाले वाहन की चाल कम करने पर या अचानक ब्रेक लगाने पर भी वाहनों की टक्कर न हों।

फॉर्मूला–1 रेस ट्रैक

अभ्यास :

(i) एक भारी ट्रक एवं कार दोनों समान गति से चल रहे हैं तथा परस्पर सामने से टकराते हैं और दोनों वाहन रुक जाते हैं। यदि दोनों वाहनों के संवेग में परिवर्तन समान है तो बताइए, ट्रक की तुलना में कार अधिक क्षतिग्रस्त क्यों होती है?

(ii) F-I कार रेस का ट्रैक विशेष रूप से डिजाइन करना आवश्यक है, आप इसे समझ सकते हैं, क्यों?

(iii) आपके आगे चल रहे वाहन का अवलोकन करें। जब वह सड़क पर स्थिर वस्तु को पार करती हैं (यथा पेड़, खम्भा) तो उस निश्चित वस्तु तक आप द्वारा पहुंचने में लिए गए सैकण्डों की गिनती करें। यदि आप पहले पहुंच जाते हैं तो गति कम करें, यदि देर से पहुंचते है तो गति बढ़ावें। क्या आप सुझाव दे सकते हैं कि ड्राइविंग के दौरान सैकण्डों की गिनती आप किस विधि से करेंगे?

(iv) निम्न सारणी की पूर्ति करें –

चाल (किमी / घंटा)	कुल रुकने की दूरी (मी)	प्रतिक्रिया दूरी (मी)	पीछा करने की दूरी का समय (सै)
30	18	9	2
60	54		3
90		27	4

उपर्युक्त दूरियाँ गीली सड़क पर किस प्रकार परिवर्तित होंगी ?

गतिविधि :

मन्दन दूरी एवं पूर्ण रुकने की दूरी की गणना करते हुए वाहनों के मध्य विभिन्न दुर्घटनाओं का अध्ययन करें।

मोटर वेहीकल एक्ट सेक्शन 112–183 के तहत गंभीर दुर्घटना होने पर या तेज ड्राइविंग पाए जाने पर ड्राइवर पर 1000 रु. जुर्माना तथा/या 6 माह के कारावास का प्रावधान है।

बल

उद्देष्य : यह पाठ न्यूटन के गति के नियमों पर आधारित है। इसमें वाहन के सामान्य एवं विपरीत परिस्थितियों में वाहन चालन में सुरक्षा पर चर्चा की जाएगी।

विषयवस्तु : कार तथा अन्य वाहनों में सीट बैल्ट का प्रयोग अनिवार्य है। यह न केवल ड्राइवर तथा आगे बैठने वाले व्यक्ति पर ही लागू होता है, अपितु पिछली सीट पर बैठने वाले व्यक्तियों पर भी लागू है। यदि वाहन दुर्घटनाग्रस्त होता है, तो सेफ्टी बैल्ट व्यक्ति को जकड़े (पकड़े) रखता है तथा दुर्घटना के समय सिर का विंड स्क्रीन से टकराने से बचाव करता है। कारों में लगे एयर बैग का कार्य भी इसी प्रकार का है, जो टक्कर के समय खुल जाता है तथा टक्कर के प्रभाव को कम करता है जिससे चोट लगने से व्यक्ति की सुरक्षा होती हैं।

सीट बैल्ट जीवन की सुरक्षा करता हैं

एयर बैग टक्कर के प्रभाव को कम करते हैं।

राजमार्ग पर वाहनों की चाल शहरों में निर्धारित चाल से अधिक होती है। राजमार्गों पर दुर्घटनाओं के मुख्य कारण– उचित प्रकाश का अभाव, डिवाइडर नहीं होना, आबादी क्षेत्र में संकेतों का नहीं होना, स्पीड ब्रेकरों का होना, गलत साइड से वाहनों को ओवर टेक करना तथा अन्य कई कारण हैं।

वर्षा होने पर सड़क पर धूल, वर्षा (नमी) के साथ मिलकर एक गीली धूल की परत बनाती है, जिससे सड़क पर फिसलन पाई जाती है। इस कारण से चलते वाहन के फिसलने से दुघर्टना होती है। अतः वर्षा के दौरान ड्राइविंग करते समय सावधानी जरूरी है। हमेशा वाहन धीमा चलाएँ। इसी प्रकार पहाड़ी सड़कों पर भी (जो बर्फ से ढकी है) वाहन चलाते समय विशेष सावधानी की आवश्यकता है।

राजमार्ग पर दुर्घटना

टायर की धारियाँ (treads)

आप देखेंगे कि जब कार पहाड़ी की चढ़ाई पर चलती है तो वाहन की चाल कम होगी। ब्रेक स्वस्थ कार्य करने की स्थिति में होने चाहिए। यदि वाहन को चढ़ाई की ओर रोकना (पार्क करना) हो तो हैण्ड ब्रेक का प्रयोग करना चाहिए तथा एक छोटा पत्थर या ईंट वाहन के पिछले टायर के पास रखकर वाहन को लुढ़कने से रोकना चाहिए। टायर पर बनी धारियों (treads) से घर्षण उत्पन्न होता है जिससे वाहन अपनी स्थिति में रहता है। टायरों में हवा का दबाव उपयुक्त होना चाहिए। मोटर वाहन जो चढ़ाई पर गति करते हैं उन्हें सदैव पहाड़ी सड़क पर सही रास्ते पर चलना चाहिए ताकि वे पीछे लुढ़कने से बच सकें।

अभ्यास :

(i) टायरों पर धारियाँ (treads) क्यों बनाई जाती हैं?

(ii) प्रत्येक वाहन टायर में विशिष्ट प्रकार की धारियाँ (treads) पायी जाती हैं। ये दुघर्टना की स्थिति में किस प्रकार मददगार होती हैं।

(iii) टायर में हवा निर्धारित सीमा से न तो कम होनी चाहिए और न ही अधिक, क्यों?

(iv) वाहनों में ईंधन तेल का प्रयोग क्यों करते हैं?

(v) जब वाहन किसी स्थिर वस्तु से टकराता है तो वाहन पीछे की ओर क्यों उछलता है?

(vi) एक ट्रक तथा एक कार के टकराने पर दोनों में से किस पर अधिक बल कार्य करता है, अपना उत्तर स्पष्ट कीजिए।

(Vii) जब आप घुमावदार रास्ते पर गतिशील है तो किस प्रकार का बल आपके शरीर पर कार्य करता है, बताइए ?

(Viii) गोल या घुमावदार पथ पर सीमा से अधिक गति पर प्रतिबंध है, कारण बताइए ?

(ix) सुरक्षित ड्राइविंग हेतु ब्रेक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। ब्रेक लगाने पर वाहन क्यों रुक जाता है? ब्रेक की कार्यप्रणाली समझाइए ?

(x) एयर बैग क्या है? वाहन में दुघर्टना के समय चोट लगने से ये कैसे सुरक्षा करते हैं, बताइए।

सुझावात्मक गतिविधि :

1. आप निम्न रुचिकर प्रोजेक्ट ले सकते हैं। जब कभी आप घर से विद्यालय की ओर जा रहे हों या अन्यत्र बाहर जा रहे हों तो आप वाहन के टायरों का अवलोकन करें। इस विभिन्न प्रकार के टायरों का अवलोकन कर रिकार्ड की पूर्ति करें।

कार सीट पर गर्दन को सहारा

बच्चा घर जाता हुआ

वाहन	प्रयोग में लिए गए टायरों की संख्या	टायरों का व्यास (लगभग)	टायर पर पाये जाने वाली धारियाँ (treads) का प्रकार	लदा हुआ भार (लगभग)	वाहन की गति (लगभग)

विभिन्न कारकों के कारण घर्षण बल के बारे में निकर्ष निकालें कि यह बढ़ता है या घटता है। हवाई जहाज और रेसिंग कार के टायर आकार में छोटे क्यों होते हैं? कारण बताइए। (सिनेमा एवं टी.वी. के दृश्यों का प्रत्यास्मरण)

हवाई जहाज के टायर

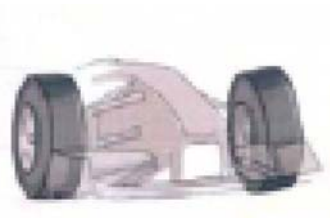

रेसिंग कार के टायर

2. 4–5 मित्र एवं 2 वयस्क व्यक्ति का समूह बनाकर हाइवे पर 1 किमी का चयन करें तथा सुरक्षित दूरी से निम्न बिन्दुओं पर अध्ययन करें–

1. सड़क पर प्रदर्शित संकेतों के प्रकार के चित्र बनाकर अर्थ बताएँ।

2. कटाव (Intersection) की संख्या ज्ञात करें।
3. वाहन की चाल का अवलोकन कर अनुमान लगाएँ।
4. विभिन्न प्रकार के वाहनों को वर्गीकृत करें।
5. हाइवे पर वाहनों के पार्किंग की व्यवस्था को देखें।
6. ऐसे कारकों का पता लगाएं जिनके कारण वाहनों की गति कम होती है।
   (a) गति अवरोधक (b) जेबरा क्रासिंग
   (c) सड़क की स्थिति (d) कम गति वाले वाहनों में रुकावट
   (e) गोल घुमाव (f) शहर में प्रवेश पर ट्रैफिक लाईट
7. पब्लिक/सार्वजनिक सुविधाएँ आपातकालीन सेवा, एवं टेलिफोन बूथ की स्थिति

आपके निरीक्षणों का रिकॉर्ड बनाकर हाइवे पर सुरक्षा सम्बंधी रिपोर्ट तैयार करें।

एक आदर्श हाइवे

कार्य एवं ऊर्जा

उद्देश्य : इस अध्याय में संवेग तथा गतिज ऊर्जा की परस्पर सम्बन्धता तथा दो वस्तुओं के टकराने पर द्रव्यमान तथा वेग के प्रभाव के सम्बंध में निष्कर्ष निकाले गए हैं।

भीषण टक्कर होने पर वाहन में आग लगना

अभ्यास :

1. एक ट्रक 2500 किग्रा का भार ढोते हुए 30 किमी/घंटा की गति से गतिशील है। रास्ते में वह एक फैक्ट्री के पास रुकता है तथा 500 किग्रा का अतिरिक्त भार उस पर रखा जाता है। पुनः वह 30 किमी/घंटा की गति से चलता है। बताइए कि इसकी गतिज ऊर्जा में कितना परिवर्तन होगा तथा कितना कार्य सम्पन्न होगा ?

द्रव्यमान के बढ़ाने या कम करने पर गतिज ऊर्जा में होने वाले परिवर्तन के सम्बंध में निष्कर्ष निकालें। क्या आप सोचते है कि इससे संवेग में भी परिवर्तन होगा? यदि हां तो कितना?

2. गतिशील वाहन में टकराने पर गतिज ऊर्जा की ऊष्मा ऊर्जा में कैस परिवर्तन होती है, बताइए?

3. प्रत्यास्थ एवं अप्रत्यास्थ टक्कर में अंतर बताइए।

सुझावात्मक गतिविधियाँ :

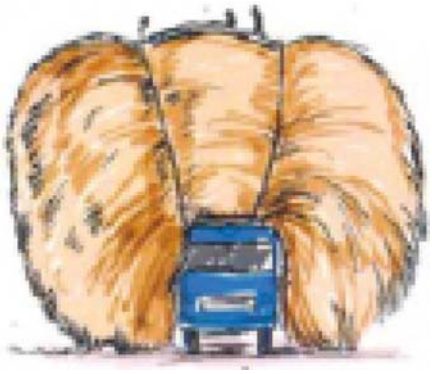

1. 1000 किग्रा की एक कार 60 किमी/घंटा के वेग से गतिशील है। वह लाल सिग्नल पर रुकती है। ड्राईवर गाड़ी को बन्द नहीं करता है। 2 मिनट बाद वह पुनः उसी गति से चलना प्रारम्भ करती है। गणना करें–

(i) गतिशील अवस्था में कार्य

(ii) लाल सिग्नल के समय कार्य

(iii) गतिज ऊर्जा (गतिशील स्थिति में)

2. गणना कर बताइए कि गाड़ियों का संवेग समान होने पर भी गतिज ऊर्जा अलग–अलग होती है –

द्रव्यमान	वेग	संवेग	गतिज ऊर्जा

Section MMVR 202177 मोटर वेहीकल एक्ट के अनुसार वस्तुओं को असुरक्षित ले जाने पर ड्राइवर पर 100 रू. तक का जुर्माना किया जा सकता है।

ध्वनि

उद्देश्य : वाहनों की संख्या में वृद्धि के कारण निर्धारित सीमा से अधिक ध्वनि प्रदूषण बढ़ चुका है। ध्वनिप्रदूषण को कम करने के लिए उठाये गये कदमों की जानकारी देना

विषयवस्तु :

1. हॉर्न वाहन का आवश्यक हिस्सा है, जो सड़क पर चलते वाहन/व्यक्ति को सड़क पर वाहन की उपस्थिति दर्शाता है।
2. मानव के सुनने की सीमा 20 से 20000 हर्ट्ज है।
3. कर्कश, तीखी तथा अत्यधिक तेज ध्वनि वाले हॉर्न के उपयोग पर कानूनी प्रतिबन्ध है।
4. सड़क पर वाहनों की संख्या में वृद्धि के कारण ध्वनि प्रदूषण में वृद्धि हुई है। हॉर्न का अनावश्यक उपयोग इसमें और वृद्धि कर रहा है ।
5. अस्पताल, शैक्षिक संस्थाएँ, राजकीय कार्यालय एवं धार्मिक स्थलों को शान्ति क्षेत्र (No Horn Zone) घोषित किया है अर्थात् उक्त स्थानों पर हॉर्न का प्रयोग वर्जित है।

सेक्शन 21(iii) RRR 177 मोटर एक्ट के अनुसार शान्ति क्षेत्र (No Horn Zone) में हॉर्न का प्रयोग करने पर 100 रु. तक का जुर्माना हो सकता है।

शान्ति क्षेत्र

विद्यालय

धार्मिक स्थल

अभ्यास :

1. सड़क पर वह संकेत बताइए, जहाँ हॉर्न का प्रयोग वर्जित है।
   (क) सड़क संकेत में वृत्त क्या दर्शाता है?
   (ख) लाल गोला किस प्रकार का निर्देश देता है ?
2. सड़क पर ध्वनि प्रदूषण कम करने के सुझाव दीजिए।

गतिविधि :

अपनी कॉलोनी/मौहल्ले में चक्कर लगाइए तथा पांच विभिन्न सड़क संकेतों को चिह्नित कीजिए क्या आपको ऐसा चिह्न (संकेत) मिला जो शान्ति क्षेत्र दर्शाता है? यदि हाँ तो उसकी स्थिति दर्शाइए।

पेड़ ध्वनि प्रदूषण को रोकने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

शब्दावली (Glossary)

अभिकेन्द्र बल	– Centrifugal force	वाहित मल	– Sewage
अनुसंधान	– Research	विकिरण	– Radiation
औसत वेग	– Average Velocity	वर्णीलवक	– Chromoplast
आकाश गंगा	– Galaxy	विदलन	– Cleavage
अपवर्तन	– Refraction	विषाणु	– Virus
अंश	– Degree	विभज्योतक	– Meristematic
अदिश	– Scalar	वाहिनिका	– Tracheid
अभिलक्षण	– Characteristics	वाहिका	– Vessel
आवृत्ति	– Frequency	वैज्ञानिक	– Scientist
आवर्तकाल	– Time Period	वायुमण्डल	– Atmosphere
आयाम	– Amplitude	वैद्युत अपघटन	– Electrolysis
अनुरणन	– Reverberation	विषाक्त	– Toxic
अपश्रव्य	– Infra	क्रांति पथ	– Revolution Path
अम्लीय वर्षा	– Acid Rain	कक्षा	– Orbit
अपमार्जक	– Detergent	कृत्रिम उपग्रह	– Artificial Satellite
अवरक्त	– Infra-red	क्वथनांक	– Boiling Point
आधात्री	– Matrix	कक्ष	– Orbit
आत्मघाती थैलिया	– Suicidal bags	कोश	– Shell
अन्तर्द्रव्यी जालिका	– Endoplasmic reticulum	कीटनाशी	– Insecticide
अन्तरावस्था	– Interphase	कवकनाशी	– Fungicide
अन्त्यावस्था	– Telophase	कोशिका	– Cell
आवृतबीजी	– Angiosperm	कोशिका विज्ञान	– Cytology
अनुकूलन	– Adaptation	कोशिका कला	– Cell Memberane
अजैविक	– Abiotic	कोशिका द्रव्य	– Cytoplasm
आर्द्रता	– Humidity	केन्द्रक	– Nucleus
अधिशोषण	– Adsorption	कोशिका भित्ति	– Cell Wall
अवशोषण	– Absorption	कशाभिका	– Flagella
अपघटक	– Decomposer	कोशिकारस	– Cell Sap
आपेक्षिक	– Relative	केन्द्रकद्रव्य	– Nucleoplasm
वृत्ताकार गति	– Circular Motion	केन्द्रिक	– Nucleolus
विषुवत रेखा	– The global line	कोशिका चक्र	– Cell Cycle
वायु प्रतिरोध	– Air Resistance	केन्द्रक विभाजन	– Karyokinesis
विस्थापन	– Displacement	कोशिका द्रव्य विभाजन	– Cyto Kinesis
वेग	– Velocity	क्लोम	– Gill
विरलन	– Rarefaction	खगोलविद्	– Astronomer
विदलन	– Cleavage	खगोल भौतिकी	– Astrophysics
विज्ञान	– Science	खरपतवार	– Weed
वैज्ञानिक विधि	– Scientific Method	गति के नियम	– Law of Motion
वर्णक्रम	– Spectrum	गुरूत्व	– Gravity
विद्युत विसर्जन नलिका	– Electric Discharge Tube	गुरूत्वीय बल	– Gravitational Force

ग्रह	– Planets	प्रकाश वर्ष	– Light Year
गतिविधि	– Activity	पराबैंगनी	– Ultraviolet
गति	– Motion	प्राकृतिक उपग्रह	– Natural Satellite
गुणसूत्र	– Chromosome	प्रबलता	– Loudness
ज्वारभाटा	– Tides	परावर्तन कोण	– Angle of Reflection
जड़त्व	– Inertia	प्रतिध्वनि	– Echo
जैविक आवर्धन	– Biological Magnification	पराश्रृव्य	– Ultra
जीवाणु	– Bacteria	पक्ष्माभ	– Cilia
जल अपघटनी एन्जाइम	– Hydrolytic Enzyme	पृष्ठवंशी	– Chordata
जन्तु कोशिका	– Animal Cell	पूर्णिमा	– Full moon day
जनन	– Reproduction	प्रणोद	– Thrust
जरायुज	– Vivipary	परमाणु सिद्धान्त	– Atomic Theory
जीवन चक्र	– Life Cycle	पुरावनस्पति शास्त्री	– Paliobotanist
जीवाणुभोजी	– Bacteriophage	परखनली शिशु	– Testtube Baby
जीन विनिमय	– Crossing Over	परमाणुकता	– Atomicity
जैवविविधता	– Biodiversity	परमाणु भार	– Atomic weight
जलोद्भिद	– Hydrophyte	पर्यावरण	– Environment
जैविक	– Biotic	प्रदूषण	– Pollution
जीवाश्म	– Fossil	प्रदूषक	– Pollutant
जल मण्डल	– Hydrosphere	पारिस्थितिक तंत्र	– Ecosystem
जीव मण्डल	– Biosphere	परिस्थितिकी	– Ecology
घर्षण बल	– Friction Force	प्रक्षेपण	– Launching
घर्षण	– Friction	पीठिका	– Stroma
घरेलू कचरा	– Garbage	पूर्व केन्द्रकीय कोशिका	– Prokaryotic Cell
घनत्व	– Density	पश्चावस्था	– Anaphase
घटक	– Component	तनाव	– Tension
द्रव्यमान	– Mass	तारामण्डल	– Constellations
दूरी	– Distance	तुल्यकालन	– Synchronisation
दोलित्र	– Oscillator	तारे	– Stars
दाब	– Pressure	त्वरण	– Acceleration
द्वि बीजपत्री	– Dicot	तरंगदैर्ध्य	– Wavelength
दृढ़ोतक	– Sclerenchyma	तारककाय	– Centrosome
भार	– Weight	तारक केन्द्र	– Centriole
मात्रक	– Unit	तीव्रता	– Intersity
मृदूतक	– Parenchyma	तंत्रिका ऊतक	– Nervous Tissue
भारहीनता	– Weight lessness	मुक्त पतन	– Free Fall
प्रतिक्रिया	– Reaction	मधुमक्खी पालन	– Apiculture
पाठ्यांक	– Reading	उल्काश्म	– Bolide
पोष स्तर	– Tropic level	उल्का	– Meteors
प्राकृतिक विज्ञान	– Natural Science	ऊतक	– Tissue
परावर्तन	– Reflection	उल्कापिण्ड	– Meteorites
परावर्तित किरण	– Reflected Rays	उर्वरक	– Fertilizer
पादप कोशिका	– Plant Cell	उत्प्लावकता	– Buoyancy

ऊष्मागतिकी – Thermodynamics
उत्परिवर्तन – Mutation
उभयचर – Gill
उपापचयी – Metabolic
उत्पादक – Producer
उपभोक्ता – Consumer
राशिचक्र – Zodiac
राशि – Sign of Zodiac
चन्द्रमा की कलाएँ – Phases of moon
चालनी पट्टिका – Sieve plate
धूमकेतु – Comets
धातु कर्म – Metallurgy
ध्रुवतारा – Pole Star
धुआँ – Smoke
धूम–कुहरा – Smog
ध्वनि – Sound
ध्वनि बूम – Sonic boom
धात्विक त्रिज्या – Metallic radius
समस्थानिक – Isotope
सममारिक – Isobar
सप्तर्षि – Ursa Major
सौर परिवार – Solar System
सुपाषी – Eutrophic
सरीसृप – Reptile
सार्वत्रिक नियम – Univershal Law
सदिश – Vector
सम्पीड्यता – Compressibility
सापेक्षतावाद – Relativity
संवहन ऊतक – Vascular Tissue
सहजीविता – Symbiosis
सूचक – Indicator
संचरण – Propagation
सुकेन्द्रकीय कोशिका – Eukaryotic Cell
सहकोशिका – Comapanion Cell
संपीड़न – Compression
संवेग – Momentum
स्नेहक – Lubricant
स्थूलकोण ऊतक – Collenchyma
स्थल मण्डल – Lithosphere
स्थनधारी – Mammalia
स्फीत – Turgid
सूक्ष्मकाय – Microbody
सहसंयोजक त्रिज्या – Covalent Radius
सर्पी – Sliding
संसाधन – Resource
क्षुद्र ग्रह – Asteroids
बल – Force
बहुकोशिक जीव – Multi Cellular Ogranism
लोटनी – Rolling
लवक – Plastid
लवणमदोद्भिद – Halophyte
श्रव्य – Audible
राडार – Radar
रासायनिक संयोग – Chemical Combination
रिक्तिका – Vacuole
मांडुलटेर – Modulator
मण्ड – Starch
मातृ कोशिका – Mother Cell
मूलगोप – Root Cap
मूल रोम – Root hair
मृतजीवी – Saprophyte
मूलाभास – Rhizoido
मत्स्य – Pisces
निर्वात – Vaccum
शैवाल ब्लूम – Algal bloom
शीतोद्भिद – Cryophyte
शाकनाशी – Herbicide
श्वसन – Respiration
शक्ति गृह – Power House
एककोशिक जीव – Unicellular Organism
एक बीजी पत्री – Monocot
नीले–हरे शैवाल – Blue Green Algae
हरित लवक – Choroplast
युग्मनज – Zygote
युग्मक – Gamete
यांत्रिक ऊतक – Mechanical Tissue
जीव–विकास – Evolution
जीव–जनन वाद – Theory of Biogenesis
स्वतः जनन वाद – Theory of spontaneous generation
ब्रह्माण्ड – Universe
आकाशगंगाएं – Milky ways
ग्रह – Planet
बुध ग्रह – Mercury
शुक्र ग्रह – Venus
मंगल ग्रह – Mars

पोषण	–	Nutrition
पाचन	–	Digestion
कार्बोहाइड्रेट	–	Carbohydrate
वसा	–	Fat
प्रोटीन	–	Protein
खनिज लवण	–	Mineral
विटामिन	–	Vitamin
जल	–	Water
रूक्षांश	–	Roughage
मांसाहारी	–	Carnivores
मुखगुहा	–	Buccal cavity
स्वपोषी	–	Autotrophs
परपोषी	–	Heterotrophs
सर्वाहारी	–	Omnivorous
परजीवी	–	Parasites
अवायवीय श्वसन या अनॉक्सीश्वसन	–	Anaerobic respiration
अंतःपरजीवी	–	Endoparasite
आमाशय	–	Stomach
आहारनाल	–	Alimentary canal
जठर रस	–	Gastric juice
आंशिक परजीवी	–	Partial parasites
ऑक्सीश्वसन	–	Aerobic respiration
स्थायी परजीवी	–	Permanant parasite
बाह्य परजीवी	–	Ectoparasite
रसायन–संश्लेषी	–	Chemoautotrophs
प्राणीसमभोजीपोषी जन्तु	–	Holozoic organism
शाकाहारी	–	Herbivores
ग्रसनी	–	Oesophagus
मलाशय	–	Rectum
खमीरीकरण	–	Fermentation
समपोषी	–	Halophytic
नासाछिद्र	–	Nostril
नासामार्ग	–	Nasal passage
नासागुहा	–	Nasal chamber
श्वासनली	–	Trachea
स्वरयंत्र	–	Larynx
श्वसनी	–	Bronchi
श्वसनीकाएं	–	Bronchioles
परिसंचरण	–	Circulation
वायुकोष	–	Airsac or Alveoli
उच्छवास	–	Exhalation
फेफड़े	–	Lungs
लाल रूधिर कणिका	–	Red Blood Corpuscles or RBC
श्वेत रक्त कणिका	–	White Blood Corpuscles or WBC
रक्त क्षीणता	–	Anemia
आलिन्द	–	Auricle
धमनी	–	Arteries
शिराएं	–	Veins
रूधिर दाब	–	Blood Pressure
दोहरा परिसंचरण तंत्र	–	Double circulation system
हृदय	–	Heart
अर्न्तआलिन्दीय पट	–	Inter auricular septum
अन्तर्निलयी पट	–	Inter ventricular septum
अपघटनी या अपचयी	–	Catabolic
उपचयी या संश्लेषी	–	Anabolic
मूत्राशय	–	Urinary bladder
वृक्क	–	Kidney
मूत्रवाहिनियां	–	Ureter
परानिस्यंदन	–	Ultrafiltration
मूत्र नलिकायें	–	Uriferous tubules or Nephrons
जनन	–	Reproduction
पुनरुद्भवन	–	Regeneration
अलैंगिक जनन	–	Asexual reproduction
लैंगिक जनन	–	Sexual reproduction
द्विविखण्डन	–	Binary fission
तंत्रिका तंत्र	–	Nervous System
प्रतिवर्ती क्रिया	–	Reflex action
प्रतिवर्ती चाप	–	Reflex arch
नियमन	–	Regulation
तंत्रिकाक्ष	–	Axon
द्रुमाश्म	–	Dendrite
अन्तःस्त्रावी तंत्र	–	Endocrine System
अन्तःस्त्रावी ग्रंथियों	–	Endocrine glands
गलगण्ड	–	Goiter
स्वास्थ्य	–	Health
रोग	–	Disease
योग	–	Yoga
जैविक कारक	–	Biological agent
रोगजनक	–	Pathogen
हृदय रोग	–	Heart disease

◆◆◆